धन्यवाद

ज्ञान वर्धक और आत्म भावों का प्रकाशक इस ग्रंथ के प्रकाशन में जिन दातारों ने हमें आर्थिक सहायता दी है उनके हम हृदय से आभारी हैं इसलिये हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

१०००) श्री. स्व. सेठ गुलाबसाजी मोहनसाजी की पुण्य स्मृति में दिये श्री. सेठानी राधाबाईजी धर्म पत्नी—
स्व० सेठ गुलाबसाजी पोरवाल मलकापुर (बरार) ने

५००) श्री. सेठ गेंदजी छगनलालजी सुसारी (इन्दौर)

२००) स्व. ब्र. उदेचंदजी (लम्पुनी) करीटोरन (झांसी) वाले की ओर से ब्र. दुलीचंदजी उदासीनाश्रम इंदौर ने दिये

१००) श्री. सेठ चम्पालालजी काला, (बड़नगर)

१००) श्री. सेठ मोहनभाई कांजी घीया, राजकोट

१००) श्री. सेठानी प्यारकुंवर बाईजी धर्म पत्नी श्री. दा. वी. ग. व. रा. भू. स्व. सेठ कल्याणमलजी रईस इन्दौर

१००) श्री. दानशीला केशर बाईजी साहब बड़वाह ने सोलह कारण व्रत उद्यापन के उपलक्ष में दिये।

१००) श्री. सौभाग्यवती सुभद्राबाईजी धर्म पत्नी सेठ नवलचन्दजी साहब बड़वाह नें तत्वार्थ सूत्र व्रत उद्यापन के उपलक्षमें दिये.

१००) श्री. सेठानी भुरीबाईजी धर्म पत्नी स्व. सेठ जवरचंदजी साहब महू की छावणी

१०-) श्री. सौभाग्यवती मांगीबाईजी धर्म पत्नी सेठ मूलचन्दजी पाटनी (फर्म-सेठ फतेचन्दजी मूलचन्दजी इन्दौर.

२४००) टोटल रुपया चोविससौ उक्त दातारों से कुल आये और पंचीससौ इस ग्रंथ प्रकाशन में लगे हैं।

नोटः—उपरोक्त दातारों के द्रव्य की सहायता से इस ग्रंथ की १०००) प्रतियां प्रकाशित की हैं जिसमें ७५०) प्रति बिना मूल्य वितरण की जावेगी और २५०) प्रति लागत मात्र मूल्य से दी जावेगी। जिसकी आय जो होगी वह अन्य ग्रंथ प्रकाशन में लगाई जावेगी

भ० प्रकाशक—

सूचनाः—मंदिर और वाचनालय को यह ग्रंथ पोष्टेज खर्च एक रुपया आनें पर बिना मूल्य भेजा जावेगा।

ग्रंथ मिलने का पता—श्री दिगम्बर जैन उदासीनाश्रम
तुकोगंज—इन्दौर.

भूमिका।

ग्रंथ विषयक परिचय

इस ग्रंथ का भाव दीपिका नाम सार्थक है, क्योंकि अपने नाम से ही अपने गुणों को प्रगट कर रहा है। ग्रंथ का जैसा नाम है उसके अनुसार ही उसमें विषय का भी प्रतिपादन है। यह वस्तु स्वभाव को प्रकाशन करनें में दीपक के समान है, जैसे-घट पटादि पदार्थों को दीपक प्रकाशित करता है। वैसे ही यह ग्रंथ वस्तु स्वरूप को सर्वांग प्रकाशित करने वाला है। इस ग्रंथ में मुख्य यह बतलाया गया है कि सात तत्वों में मुख्य जीव तत्व है क्योंकि यही एक चैतन्य है सर्व को जानने वाला है, शेष सर्व तत्व अचेतन जड है। इसलिये ही प्रभु नें सर्व तत्वों में सार जीव तत्व को जानकर सब से प्रथम जीव तत्व का वर्णन किया है और यही बात उपर्युक्त आशय को लिये ग्रंथकर्त्ता नें इस ग्रंथ के आदि मंगला चरण में भी बतलाई है। पूर्व ऋषियों के ग्रंथ सस्कृत प्राकृत भाषा में उक्त विषय के अनेक लिखित मोजूद है किन्तु उनसे विद्वान लोग ही लाभ उठा सकते है। मंद ज्ञानी साधारण जन उन्हे नहीं समझ सकते इसलिये साधारण जन मंद ज्ञानी जीवों के लाभ अर्थ-ग्रंथकर्त्ता नें अपनी सरल भाषा में जीव के स्वरूप का ज्ञान व उसकी सर्व अवस्थाओं का दिग्दर्शन स्वभाव तथा शुद्ध-भाव व विभावों के द्वारा भेद प्रभेद (मूल उपसमादि पंच भाव और इन्हीं के विशेष उत्तर त्रेपन भाव) करके कराया है।

मोह भावों का वर्णन मिथ्यात्व तथा योग सहित कषायों की प्रत्येक चौकड़ी के उदय की तरतमता के भेद में लेश्याओं के बहतर भेद करके शुभाशुभ परिणामों के भेद से लोक विरुद्ध, राज विरुद्ध और धर्म विरुद्ध जीवों की प्रवृत्तियों का सोदाहरण सविस्तार वर्णन किया है। विभाव भाव संसार के कारण हैं और स्वभाव भाव मुक्ति के कारण हैं तथा शुद्ध भाव मोक्ष स्वरूप है। इन तीनों प्रकार के भावों का भले प्रकार भेद ज्ञान हुये बिना जीव मोक्ष मार्गी नहीं हो सकता इसलिये उपर्युक्त भावों के जाननें के लिये ग्रंथ कर्ता महाशय नें इस ग्रंथ में स्वभाव भाव व शुद्ध भाव और विभाव भाव तथा विभाव भाव के निमित्त कारण रूप पुद्गलादि द्रव्य कर्म व नोकर्मों का सविस्तार वर्णन किया है। यह ग्रंथ स्वभाव विभाव तथा परभावों को जाननें को परमोपयोगी है। प्रिय पाठक गण उक्त भावों का स्वरूप भले प्रकार जानकर विभाव तथा पर भावों से मुर्छा त्याग करना चाहिये और स्वभाव को जानकर शुद्ध भावों की सिद्धिका साधनकर आत्म कल्याण करना उचित है। बन्धुओं प्रत्येक विषय को ध्यान मे मनन पूर्वक पढें जिसके अध्ययन से परिणामों की विशुद्धि हो आत्म ज्ञान व परमानंद का लाभ हो और जिससे ग्रंथ कर्ता व प्रकाशक का श्रम भी सफल हो।

भवदीय—

ब्र. दुलीचंद.

ग्रंथ कर्ता का और उनकी कृति का सामान्य परिचय

इस ग्रंथ के कर्ता विद्वद्वर अध्यात्म प्रेमी पं. दीपचन्दजी शाह मालूम होते हैं इन्होंने ग्रंथ में अपना नाम प्रगट तो किया नहीं है किन्तु इस ग्रंथ के अन्त में एक दोहा है उससे ध्वनीत होता है।

दोहा—स्वपर भाव विभाव को, शुद्ध भाव जुत सोय । करि प्रकाश प्रगट किया, भाव दीपए दोय ॥

ग्रंथ के नाम के साथ ही अपना नाम गुप्त रूप में बतलाया है ऐसा जान पढता है इन्हों की कृति भावदीपिका के सिवाय (आन्य) उपलब्ध अनुभव प्रकाश, आत्मावलोकन, चिद्विलास, परमात्मपुराण, उपदेश रत्नमाला, ज्ञान दर्पण, ग्रंथ है इन रचनाओं से भी अनुमान होता है कि यह ग्रंथ रचना आपकी ही है । आप सांगानेर (जैपुर) निवासी है । आपकी जाति खंडेलवाल और गोत्र काशलीवाल था, अठारवीं शताब्दी के प्रतिभाशाली विद्वान हुए हैं। इतना परिचय पाटनी ग्रंथमाला मदनगंज (किसनगढ) से अनुभव प्रकाश नामा ग्रंथ प्रकाशित हुआ है जिसमे ज्ञात हुआ है इससे और अधिक परिचय आपका नहीं प्राप्त हो सका । आप अच्छे भावदर्शी विद्वान हुए हैं इनकी भाउकता का पता पाठकों को स्वयं इनकी कृति मे ही मालुम होगा कि इनके रचित ग्रंथ कितने भाव पूर्ण हैं । विशेष परिचय करानें की आवश्यकता नहीं है ।

—: आभार :—

इस ग्रंथ के प्रकाशन में निम्न लिखित दातारों नें अपनी उदारता से आर्थिक महायता दी है विषय सूचि और संशोधन कार्य में सहयोग जिन जिन महानुभावों ने दिया है उन सर्व मज्जनों का में आभारी हूं । श्री पं० बन्सीधरजी साहब सिद्धान्त शास्त्री ने इस ग्रंथ की विषय सूचि बड़े ही उत्तम रीति से लिखदी है जो कि ग्रंथ को सर्वांग दिखानें के लिये दर्पण के समान है तथा श्रीयुत् पं० मुन्नालालजी माहब काव्यतीर्थ नें प्रुफ सशोधन किया है जिममें उनकी द्रष्टि दोष तथा प्रमाद से जो भी अशुद्धिया रह गई है । उन्हें ग्रंथ छप जाने के बाद हमने संशोधन किया हैं उसमें ब्र० कुंजीलालजी आदि नें हमें सहयोग दिया है जिनकी सहायता मे प्रस्तुत ग्रंथों को इस रूप में पाटकों के समक्ष रख सका हू । इस ग्रंथ में जो अशुद्धियां रह गई है उसका शुद्धि अशुद्धि पत्र ग्रंथ के अन्त में लगा है उससे प्रथम ग्रंथ शुद्ध करके बाद स्वत्ध्याय प्रेमी स्वाध्याय करें और हमारी दृष्टि से भी त्रुटियां रहना संभव है उसको भी शुद्ध कर पढें और हमें सूचित करें ।

भ० प्रकाशक—



❀ संपादकीय वक्तव्य ❀

ग्रंथ के विषय में भूमिका में काफी दिगदर्शन करा दिया गया है। संसार बढाने वाले विषय को पुष्ट करने वाले ग्रंथोंकी संसार में कमी नही है। सामान्य जनता तो उन्हीं ग्रंथों को अधिक पसंद करती है जिनमें शृंगारादि रस पुष्ट किये गये हों परन्तु संसार के भ्रमण से उत्पन्न दुःखों से भयभीत ऐसे भी व्यक्ति हैं जो अपनी होनहार के अनुसार ऐसे आध्यात्मिक ग्रथों के अनुमनन करने में दत्तचित्त रहना पसंद करते हैं सो ठीक है। जिनके संसार का अन्त होने वाला होता है उन्हीं का चित्त ऐसे ग्रंथों के मनन करने में लय होता है यह। ग्रंथ आत्म हितैषियों के लिये ही हैं हमारी खुद की भावना तो यही है कि भारतवर्ष का हरएक आत्मा अपने आपका उद्धार पाने के लिये इस ग्रंथ का जरूर मनन करें।

छपते समय बहुत अशुद्धियां रह गई उसका कारण बहुत अंश में ये है कि मुझे गया हुआ करेक्शन वापिस देखने को नही मिला जिससे मालूम हो सकता कि करेक्शन का सुधार हुआ या नहीं और न छपा हुआ फार्म ही आज तक देखने को मिला जब पूज्य ब्रह्मचारी दुलीचंदजी साहब ने सुधार कर मुझे बतलाया तब तो मैं दंग रह गया अब तो छप ही चुका इससे पाठक महानुभावों से विनम्र निवेदन है कि पहिले शुद्धि अशुद्धि पत्र को देखकर ग्रंथ का संशोधन करलें पीछे स्वाध्याय करें जिससे भाव समझने में भ्रम न हो।

समाज का अनुचर—

मुन्नालाल जैन इन्दौर

धन्यवाद

ज्ञान वर्धक और आत्म भावों का प्रकाशक इस ग्रंथ के प्रकाशन में जिन दातारों ने हमें आर्थिक सहायता दी है उनके हम हृदय से आभारी हैं इसलिये हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

१०००) श्री. स्व. सेठ गुलाबसाजी मोहनसाजी की पुण्य स्मृति में दिये श्री. सेठानी राधाबाईजी धर्म पत्नी—
स्व० सेठ गुलाबसाजी पोरवाल मलकापुर (बरार) ने

५००) श्री. सेठ रोडजी छगनलालजी सुसारी (इन्दौर)

२००) स्व. ब्र. उदेचंदजी (लम्पुजी) करीटोरन (झांसी) वाले की ओर से ब्र. दुलीचंदजी उदासीनाश्रम इंदौर ने दिये

१००) श्री. सेठ चम्पालालजी काला, (बड़नगर)

१००) श्री. सेठ मोहनभाई कांजी घीया, राजकोट

१००) श्री. सेठानी प्यारकुंवर बाईजी धर्म पत्नी श्री. दा. वी. ग. व. रा. भू. स्व. सेठ कल्याणमलजी रईस इन्दौर

१००) श्री. दानशीला केशर बाईजी साहब बड़वाह ने सोलह कारण व्रत उद्यापन के उपलक्ष में दिये।

१००) श्री. सौभाग्यवती सुभद्राबाईजी धर्म पत्नी सेठ नवलचन्दजी साहब बड़वाह ने तत्वार्थ सूत्र व्रत उद्यापन के उपलक्षमें दिये.

१००) श्री. सेठानी भुरीबाईजी धर्म पत्नी स्व. सेठ जवरचंदजी साहब महू की छावणी

१०) श्री. सौभाग्यवती मांगीबाईजी धर्म पत्नी सेठ मूलचन्दजी पाटनी (फर्म-सेठ फतेचन्दजी मूलचन्दजी इन्दौर.

२४००) टोटल रुपया चोबिससौ उक्त दातारों से कुल आये और पंचीससौ इस ग्रंथ प्रकाशन में लगे हैं।

नोटः—उपरोक्त दातारों के द्रव्य की सहायता से इस ग्रंथ की १०००) प्रतियां प्रकाशित की है जिसमें ७५०) प्रति बिना मूल्य वितरण की जावेगी और २५०) प्रति लागत मात्र मूल्य से दी जावेगी। जिसकी आय जो होगी वह अन्य ग्रंथ प्रकाशन में लगाई जावेगी

भ० प्रकाशक—

सूचनाः—मंदिर और वाचनालय को यह ग्रंथ पोस्टेज खर्च एक रुपया आनें पर बिना मूल्य भेजा जावेगा।

ग्रंथ मिलने का पता—श्री दिगम्बर जैन उदासीनाश्रम
तुकोगंज—इन्दौर.

३६	१०	पूजाहींतें	पूजा करने हींतें
३७	१	थावर की दया- पालने हीं से	दो बार छपा है
,,	१०	संहित	सहित
,,	१४	एकन्त	एकान्त
४१	१८	सम्यकुमात	सम्यकूज्ञान
४४	१	कपाय	कषाय
,,	११	अपथार्थका	अयथार्थका
४६	१७	किंचिदून	किंचिदूऊन
४९	१६	अनतग्नुबंधी	अनतानुबंधी
५०	११	सकल	सकल
,,	१२	सयम	सयन
५१	२	रागनिरुद्ध	राजविरुद्ध
५१	१५	गुप	गुरु
५४	१३	प्रकृति	प्रवृति
५६	६	धरनेधारने	धारनें पारनें
,,	१७	आजविका	अजीविका
५८	२	सत्य अरहत देवादिकके अर्थि न खरचना वाहुल्यता रहित थोड़ा खरचना—दो बार छपा है	
६०	१	जानाजातिभी	जाताजानि भी
,,	११	व्यसनानिविषै	व्यसननिविषै
,,	१२	कपाय	विषय कपाय
६७	४	भंनार	भर्तार
६८	१२	निरूपणगम्	निरूपणगम्
६९	३	आर्थि	अर्थि
७२	९	क्षुक्ष्म	सूक्ष्म
७३	१३	अन्टत	अनृत
८४	६	अनंतानुबंधी वा-अप्रत्याख्यान	अनतानुबंधी चारित्रमोह के
,,	,,	तहां क्रोधादि	तहां अप्रत्याख्यान,
८७	११	वजित	वर्जित
,,	१४	भान	मान
९३		पृष्ठ नंबर अक्रम है देखकर क्रमसे पढ़ें ९३-०३-०६-९४	
९४	२	सम्यक्त ३	सम्यक्त ६
९७	७	एक (अ) मयमभाव	ए अमंयमभाव
,,	९	मिथ्यत्व	मिथ्यात्व
,,	,,	,,	,,
९९	६	चतुर्थगति	चतुर्गति
१०३	६	श्रुनाज्ञानावर्णी	श्रुतज्ञानावर्णी
१०७	४	श्रावकाचार	श्रावकाचार का
,,	११	वा झूंठीकी	वा मूठीकी
१२३	२	असख्यत	असख्यात
१२४	२	विशुद्ध है	विशुद्धतर है
१२५	४	चक्षुदर्शना	चक्षुदर्शन
१२७	१७	दानादिक	दानादिक
१२९	५	अपने केतेक जिनमंदिर	अपने कराये जिनमंदिर
१३८	८	दवोंका	देवेका
१४०		पृ. १४०	१४४ होना चाहिये

धन्यवाद

ज्ञान वर्धक और आत्म भावों का प्रकाशक इस ग्रंथ के प्रकाशन में जिन दातारों ने हमें आर्थिक सहायता दी है उनके हम हृदय से आभारी हैं इसलिये हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

१०००) श्री. स्व. सेठ गुलाबसाजी मोहनसाजी की पुण्य स्मृति में दिये श्री. सेठानी राधाबाईजी धर्म पत्नी—
स्व० सेठ गुलाबसाजी पोड़वाल मलकापुर (बरार) ने

५००) श्री. सेठ गेंडजी छगनलालजी सुसारी (इन्दौर)

२००) स्व. ब्र. उदेचंदजी (लम्पुजी) करीटोरन (झांसी) वाले की ओर से ब्र. दुलीचंदजी उदासीनाश्रम इंदौर ने दिये

१००) श्री. सेठ चम्पालालजी काला, (बड़नगर)

१००) श्री. सेठ मोहनभाई कांजी घीया, राजकोट

१००) श्री. सेठानी प्यारकुंवर बाईजी धर्म पत्नी श्री. दा. वी. रा. ब. रा. भू. स्व. सेठ कल्याणमलजी रईस इन्दौर

१००) श्री. दानशीला केशर बाईजी साहब बड़वाह ने सोलह कारण व्रत उद्यापन के उपलक्ष में दिये।

१००) श्री. सौभाग्यवती सुभद्राबाईजी धर्म पत्नी सेठ नवलचन्दजी साहब बड़वाह ने तत्वार्थ सूत्र व्रत उद्यापन के उपलक्षमें दिये.

१००) श्री. सेठानी भुरीबाईजी धर्म पत्नी स्व. सेठ जवरचंदजी साहब महू की छावणी

१०) श्री. सौभाग्यवती मांगीबाईजी धर्म पत्नी सेठ मूलचन्दजी पाटनी (फर्म–सेठ फतेचन्दजी मूलचन्दजी इन्दौर.

२४००) टोटल रुपया चोबिससौ उक्त दातारों से कुल आये और पंचीससौ इस ग्रंथ प्रकाशन में लगे है।

नोटः—उपरोक्त दातारों के द्रव्य की सहायता से इस ग्रंथ की १०००) प्रतियां प्रकाशित की हैं जिसमें ७५०) प्रति बिना मूल्य वितरण की जावेगी और २५०) प्रति लागत मात्र मूल्य से दी जावेगी। जिसकी आय जो होगी वह अन्य ग्रथ प्रकाशन में लगाई जावेगी

भ० प्रकाशक—

सूचना.—मंदिर और वाचनालय को यह ग्रंथ पोष्टेज खर्च एक रुपया आने पर बिना मूल्य भेजा जावेगा।

ग्रथ मिलने का पता—श्री दिगम्बर जैन उदासीनाश्रम
तुकोगंज—इन्दौर.

१६	१०	पूजाहोतें	पूजा करने होतें
१७	१	थावर की दया- पालने ही से	दो बार छपा है
,,	१०	संहित	सहित
,,	१४	एकन्त	एकान्त
४१	१८	सम्यक्मात	सम्यक्ज्ञान
४४	१	कपाय	कषाय
,,	११	अपयार्थका	अयथार्थका
४६	१७	किंचिदून	किंचिदूऊन
४९	१६	अनतनुबंधी	अनतानुबंधी
५०	११	सकल	सकल
,,	१२	सयम	सयन
५१	२	रागविरुद्ध	राजविरुद्ध
५१	१५	गुप	गुरु
५४	१३	प्रकृति	प्रवृति
५६	६	धरनेधारने	धारनें पारनें
,,	१७	आजविका	अजीविका
५८	२	सत्य अरहत देवादिकके अर्थि न खरचना बाहुल्यता रहित थोड़ा खरचना-दो बार छपा है	
६०	१	जाताजातिभी	जाताजानि मी
,,	११	व्यसनानिविषै	व्यसननिविषै
,,	१२	कषाय	विषय कषाय
६७	४	भंतार	भर्तार
६८	१२	निरूपणगम्	निरूपणगम्
६९	३	आर्थि	अर्थि

७२	६	क्षक्ष्म	सूक्ष्म
७३	१३	अन्टत	अनृत
८४	६	अनतानुवधी वा- अप्रत्याख्यान	अनतानुबंधी चारित्रमोह के
,,	,,	तहां क्रोधादि	तहा अप्रत्याख्यान
८७	११	वजित	वर्जित
,,	१४	भान	मान
९३		पृष्ठ नंबर अक्रम है देखकर क्रमसे पढ़ें ९३-०६-०६-९४	
९४	२	सम्यक्त ३	सम्यक्त ६
९७	७	एक (अ) सयमभाव	ए असंयमभाव
,,	९	मिथ्यत्व	मिथ्यात्व
,,	,,	,,	,,
९९	६	चतुर्थगति	चतुर्गति
१०३	६	श्रुताज्ञानावर्णी	श्रुतज्ञानावर्णी
१०७	४	श्रावकाचार	श्रावकाचार का
,,	११	वा झूंठीकी	वा मूठीकी
१२३	२	असख्यत	असख्यात
१२४	२	विशुद्ध है	विशुद्धतर है
१२५	४	चक्षुदर्शना	चक्षुदर्शन
१२७	१७	दानदिक	दानादिक
१२९	५	अपने केनेक जिनमदिर	अपने कराये जिनमंदिर
१३८	८	दवोंका	देवेका
१४०		पृ १४०	१४४ होना चाहिये

शुद्धाशुद्धि-पत्र

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
१	१४	भापदीप	भावदीप
२	६	छुडावे	छुडावे
२	७	स्वभाप	स्वभाव
३	९	सम्यक्त्व	सम्यकत्व
४	१५	औद्धविक	औदयिक
९	७	परिणमि	परिणामि
११	३	जाग्रत, होय वचना लांभकरे फेर सोय जाय	दो वार छपा है
१२	५	धारणन	धारकन
"	११	मदतमाया	मदतरमाया
"	१७	जुगुप्ता	जुगुप्सा
१३	८	अनुभव- न	अनुभवन
"	९	अनुभव- न	अनुभवन
१६	१	तिर्थंचं	तिर्यंच
"	२	बावना	बधन
"	६	तिर्थंच	तिर्यंच
"	७	स्फाटिक	स्फाटिक
"	९	"	"
१९	११	स्थिर नामक कर्न	स्थिर नाम कर्म
"	१२	अथि	आस्थि
"	"	शूक्र	शुक्र
"	१३	नामक	नाम

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
१९	१४	नानक	नाम
२०	"	नियंचगति	तियंचगति
२३	११	उपदेय	उपादेय
२४	१०	"	"
२५	१	सग्रह	यह शब्द नहीं चाहिये
२६	१८	योगमन	योगमन के
२७	१	"	"
"	१४	"	"
२८	६	मिथ्या तत्व	मिथ्यात्व
"	७	त्वत	तत्व
"	१०	मिथ्यात्वहोय है	मिथ्यात्वभाव होय है
२९	१	विषैं	विषैं
"	१७	येमें	एव
३०	१	सपूर्णा	सपूर्ण
"	३	जग जीव	जगत के जीव
"	१०	स्वरूप	स्वरूप
३२	८	तौ पशभी	तौ पणभी
३३	५	पिपै	विषैं
३४	१०	होनाहोसो	होना सो
"	१७	चारित्र	चारित्र
"	१८	माक्ष	मोक्ष
३५	१८	मोट	मोट

२०४	६	वर्ग-णिविषै	वर्गनिविषै
२१०	१२	जैसे इच्छा	जैसें बिना इच्छा
२१२	७	संमेटने	समेटनें
२१४	७	अपर्यप्त	अपर्याप्त
,,	१८	निरजर	निरजन
२१५	६	अवृति	अनिवृत्ति
२१८	१२	परिणमनिकों	परिणामनिको
२१९	११	प्रशदय	प्रदेश उदय
२२०	४	जाव भावनका	जीव भावनका
,,	७	उदय वली	उदयावली
,,	१७	अतिभाव	अरतिभाव
२२१	७	उदणा	उदीरणा
२२३	१०	शास्त्रादि	शस्त्रादि
,,	११	मरणाको	मरणकों
२२६	६	मध्य	मध्यम
२२८	३	मनुष्यति	मनुष्यगति
२२९	१६	काममार्गणा	कायमार्गणा
,,	२	लेश्या शुभ ३	लेश्या अशुभ ३
,,	१८	क्षायिक क	क्षायिक के

पृष्ठ २३०, २३३ लाइन ७, ८, ० में और का यों चाहिये

२३२	२	लेश्या शुभ ३	लेश्या अशुभ ३
२३३	८	तीन कुज्ञान विषै १	तीन कुज्ञान तीन सुज्ञान
			तीन सुज्ञान विषै १ तीन दर्शन विषै १
			तीन दर्शन विषै १
,,	१२	छह ज्ञान विषै ३	छ ज्ञान तीन दर्शन विषै १
			१ दर्शन विषै
,,	१४	सम्याक्त्व	सम्यक्त्व
२३४	१७	इनकी	इन
२३८	४	मनिपद	मुनिपद
,,	११	निथ्याप्रवृत्तिनैं	मिथ्याप्रवृत्ति है
२३९	१	चादनीकारि	चांदनीकरि
२४०	३	सम्यक्कूज्ञानी	सम्यक्ज्ञानी
,,	६	दुर्हीतजे है	दुर्हीततजे है
२४१	५	अकल्याण	कल्याण
२४१	७	प्राकरूप	प्राक्तनरूप
२४३	८	जो की	जो मोक्ष की
,,	,,	दिढया	दिढ्या
,,	१२	भावदीको	भावदीपको
,,	१६	समाप्पोऽसं	समाप्तोऽयं
,,	,,	श्लोक सख्या ५५००	६२००

क्षमा—याचना

जैसी प्रति पाई हती, तैसी दई उतार। शुद्ध शुद्धि जो होवहीं, सो जाने ले (ख) करतार॥
जो आपनको निर्दोष कहत है, ये है उनकी भूल। दृष्टिदोष सबनतें होत है, गुणिधर हो या निर्मूल॥
हमने तो जैसी पाई हती, उतनो करो सुधार। भूल चूक जो होवहीं, सो वाचक लीजो समार॥
प्रेसनमें अज्ञानी करत हैं, काव्य—साहित्यको काम। इतनी शुद्धि लावे कहांतें, ये है विद्वद्वरको काम॥

स्वाध्याय वृन्द, इस ग्रन्थ की भूमिका से लेकर पृष्ठ १६ तक सपादकजी महोदयने अपने विश्वसनीय प्रेसों में छपवाया है। उसके बाद १ प्रूफ संशोधन करनेपर भी छपने उपरात पचासों गलतिया और रहगयी हैं—अतः गलतिया स्वाभाविक है।

—मुद्रक

१४१	१३	दाति	दत्ति
१४७	१५	अपध्यन	अप यान
१५२	१८	बैठे	०
१५९	९	कहि	कहिये
"	"	अभ्यरत	अभ्यनर
१६०	३	अर गजादि	अगगजादिं
"	१	मडय द्रिक	मूडपादिक
"	१४	०	रोगनिरोग
१६२	११	परात्ति	परार्त्ति
१६३	१०	०	१६ वा श्लोक छुटगया है
१६५	१३	टाखादिक	डाबादिक
१६६	३	धमोपकरण	धर्मोपकरण
"	९	भरायो	भण्यो
"	११	कप य	कप यन्ना
"	१७	काहिय	कहिये
१६७	२	मनतनका	मनन
"	१८	सहित	रहित
१७१	४	सदान	मशाय
"	११	तेकहिये	तेहिंदयकहिये
१७२	१६	अब प्रकार	अब चारप्रकार
१७३	७	आंयेके	आयुके
"	७	कान	काय
"	१५	यान	ध्यान
१७५	१	सटना	सहना
"	५	नम्राप्त	नम्राप्त होना

१७७	१५	सापद्य	सावद्य
१७९	९	प्रमाद	प्रमाद
"	११	काहये	कहिये
१८०	४	क्षे	क्षेत्र
"	१५	ततधातु	सप्तधातु
१८१	२	नइको	इनको
१८२	६	सपूर्णभय	सपूर्णभाव
१८५	३	प्राति	प्राप्ति
"	९	नारकादि	नरकादि
"	१८	तवें	सातवें
१८७	१६	करै	धरै
१८८	९	समस्तपर्ते	समस्तपनें
"	१५	०	सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्वरूप
१९२	७	०	अनुभाग कांडकघात
"	१६	होनहै	होय है
१९३	१	सूक्ष्य सापराय	सूक्ष्मसांपराय
"	९	स्पर्धकनके	स्पर्धकनके
"	१६	उपशांत कषाय	उपशात कषाय
२०१	१३	(नि) वृत्ति	अ (नि) वृत्तिकरण
२०३	पृष्ठ नं	२०१–२०४	२०२–२०३
"	७	स्थितिवध	स्थितिबंध
"	१०	निद्रानिदा	निद्रानिद्रा
"	१५	प्रकृतिन	प्रकृतिन विषै
२०८	१०	केवलज्ञाल	केवलज्ञान
"	१३	अ यबाव	अव्याबाध

भावदीपिका की विषयानुक्रमणिका ।

१४१	१३	दाति	दात्ति
१४७	१६	अप-यन	अप यान
१५२	१८	वैठे	०
१५९	९	कहि	कहिये
"	"	अभ्यरत	अभ्यन्तर
१६०	३	अर गजादि	अग्गजादि
"	१	मडय दिक	मडपादिक
"	१४	०	रोगनिरोग
१६२	११	पराति	परार्त्ति
१६३	१०	०	१६ वा दोष छुटगया है
१६६	१३	टालादिक	डारादिक
१६६	३	धमोपकरण	धर्मोपकरण
"	६	मरायो	भण्यो
"	११	कप य	कषायन्गा
"	१७	काहेय	कहिये
१६७	२	मनत्वका	मनत्व
"	१८	सहित	रहित
१७१	४	सशान	सशाय
"	११	तेकहिये	तेशिदयकहिये
१७२	१६	अव प्रकार	अब चारप्रकार
१७३	७	आयेके	आयुके
"	७	कान	काय
"	१५	यान	ध्यान
१७५	१	सटना	सहना
"	५	नप्रास	नप्राप्त होना

१७७	१५	सापय	सारथ
१७९	६	प्रमाद	प्रमाद
"	११	काहये	कहिये
१८०	४	क्षे	क्षेत्र
"	१५	तप्तधातु	सप्तधातु
१८१	२	नइको	इनको
१८२	६	सपूर्गभय	सपूर्णभाव
१८५	३	प्राति	प्राप्ति
"	५	नारकादि	नरकादि
"	१८	तवें	सातवें
१८७	१६	करें	धरें
१८८	०	सनस्तपतें	सनंत्तपनें
"	१५	०	सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्वरूप
१९२	७	०	अनुभाग काण्डकघात
"	१६	होनहें	होय हैं
१९३	१	सूक्ष्य सापराय	सूक्ष्मसांपराय
"	०	स्पर्धकनके	स्पर्धकनके
"	१६	उपशांत कपाय	उपशात कषाय
२०१	१३	(निं) वृत्ति	अ (निं) वृत्तिकरण
२०३	पृष्ठ	नं २०३—२०४	२०२—२०३
"	७	स्थितिवन्ध	स्थितिबंध
"	१०	निद्रानिद्रा	निद्रानिद्रा
"	१५	प्रकृतिन	प्रकृतिन विषै
२०८	१०	केवलज्ञाल	केवलज्ञान
"	१३	अव्यबाध	अव्याबाध

भावदीपिका की विषयानुक्रमणिका ।













॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

भाषा वचनिका सहित

भाव–दीपिका



॥ मंगलाचरण ॥

भाव,[1] विभाव,[2] परभाव[3] को, ज्ञाता सम्यक् ज्ञान ।
ताका धारक तासु पुनि, नमूं चित्त धरि ध्यान ॥१॥
ताका धारक पंच गुरु, अरहंत सिद्ध अरु सूर ।
उपाध्याय सब साधुपद, नमत होय अघ चूर ॥२॥
सप्त तत्व मधि जीव ही, सुख दुख वेदन हार ।
और तत्व जड़ भाव हैं, ज्ञान सहित जिउ (जीव) सार ॥४॥
नमूं वीर जिन जगत गुरू, गणधर गौतम धीर ।
तिन दरसाये तत्व सब, स्वपरभाव जुत वीर ॥३॥
जीव भाव त्रेपन कहे, पंच भाव सामान्य ।
तिनिका वरनन धरत है, भापदीप श्रुत जान्य ॥५॥

---

१ स्वभाव २ विकारीभाव ३ दूसरे पदार्थों के स्वभाव.

सर्व तत्व के ज्ञाता, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी ऐसे श्री वर्धमान, अंतिम तीर्थंकर, तिनकरि दर्शाये अर तिनके अनुसार कथन करनहारे, चार ज्ञान के धारक, सप्त ऋद्धिकरि युक्त ऐसे श्री गौतम गणधर करि कहे जीव के सामान्य पंच भाव अर विशेष त्रेपन भाव अरु तिनके विशेष अनेक भाव हैं सो तिनिका वर्णन कछु संक्षेपता करि, तिनके चरणारविन्द को नमस्कार करि तिनके अनुसार कहता हूँ। जातैं जीव कों स्वीयभाव की पहिचान होत संते परभावकी पहिचान होय तब परभाव तैं आपकूँ छुडावैं।

बहुरि स्वीयभाव दो प्रकार का है, एक तो स्वभाव-स्वीयभाव, अरु दूजा विभाव-स्वीयभाव। इनकी पहिचान होय तब विभाव भाव को छोडि स्वभाम भाव विषैं तिष्ठै, तब सम्पूर्ण कल्याणरूप जो मोक्ष ताकी सिद्धि होय। संसार रूप दुःख-समुद्र तैं निकलने का उपाय स्वभाव, विभाव, व परभाव का जानना ही है। भगवान करि भाखे जे सप्त तत्व (जीव तत्व, अजीव तत्व, आश्रव तत्व, बंध तत्व, संवर तत्व, निर्जरा तत्व, मोक्ष तत्व,) हैं तिनमें चेतना स्वरूप जीव तत्व है ताको पहिचानि आप मानना कि यह जीव तत्व जो है सो मैं हूँ। बहुरि चेतना रहित जड़ स्वरूप अजीव तत्व ताको पहिचानि शरीरादिकनि कूं आप तैं पर मानना।

आश्रव तत्व दोय प्रकार का है। एक भावाश्रव दूजा द्रव्याश्रव। तहां मिथ्यात्व अरु कषाय भाव रूप जो जीव का परिणाम सो भावाश्रव जानना। जातैं (चूंकि) ये भाव दर्शनमोह अरु चारित्रमोह के उदय ते होय, तातैं विभाव भाव हैं। बहुरि जीव के रागादिक कषाय भावन को निमित्त पाय पुद्गल कर्मवर्गणा (का), कर्मत्व शक्ति को धारि योग द्वार होय आवना सो द्रव्याश्रव है। सो इन दोनों ही प्रकार (के) आश्रव को हेय जानि इनका अभाव त्याग करना (चाहिये)।

बहुरि **बंध तत्व** भी दोयप्रकारका है, एक भाव बंध दूजा द्रव्य बंध। तहां भाव बंध तो आत्मा का रागादिरूप सचिक्कण भाव, सो विभाव भाव जानना अरु जो योग द्वार करि आई कर्म वर्गणा, तिनकी प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश रूप चार प्रकार बंधभाव को धरि आत्मा के प्रदेशन सौं एक क्षेत्र अवगाहरूप होना सो द्रव्यबंध कहिये। सो ये पौद्गलिक

पर भाव जानना । इन दोनों ही प्रकार के बंध को अहित जानि न करना ।

बहुरि संवर तत्व भी दोय प्रकार का है, एक भाव संवर दूजा द्रव्य संवर । तहां रागादिक भावन का निरोध कहिये न करना सो भाव संबर है । अरु रागादिकन का निरोध होने तें कर्माश्रव का निरोध होना—रुकना—सो द्रव्य संवर है । जेता काल भाव संवर तेता काल ही द्रव्य संवर जानना । भाव संवर स्वभाव भाव है अरु द्रव्य संवर पर भाव है ।

बहुरि निर्जरा तत्व भी दोय प्रकार का है, एक भाव निर्जरा दूजी द्रव्य निर्जरा । तहां रागादिकन का अविभाग-प्रतिच्छेद समय समय क्षीण होना सो भाव निर्जरा है, अरु ज्ञानावरणादि कर्मों (का) समय समय कर्मत्व शक्ति को छोड़ि जीव के प्रदेशों से छूटना सो द्रव्य निर्जरा है । तहां द्रव्य निर्जरा के दो भेद—एक सविपाक निर्जरा, दूजी अविपाक निर्जरा । जो अपनी स्थिति पूरी करि कर्मों का समय समय उदय होय अरु रस देय कर्मत्व शक्ति को छोड़ि जीव के प्रदेशन सों छूटना सो सविपाक निर्जरा कहिये । बहुरि सम्यकत्व चारित्र के बल थकी समय समय असंख्यात असंख्यात समय प्रबद्ध की बिना रस दिये ही गुण श्रेणि निर्जरा होय सो अविपाक निर्जरा कहिये, सो सविपाक निर्जरा तो सर्व संसारी जीवों के होय है अरु अविपाक निर्जरा सम्यग्दर्शनादिक तें ही होय है । सो संवर और निर्जरा कों हित का कारण जानि ग्रहण करना (चाहिये)

बहुरि मोक्ष भी दोय प्रकार है, एक भाव मोक्ष दूजा द्रव्य मोक्ष । तहां ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनयि, अंतराय इन चार घातिया कर्मों के अभाव तें अनंत चतुष्टय का प्रकट होना, अरहंत पद को प्राप्त होना सो भाव मोक्ष है तथा सर्व कर्म तें छूटि, सर्व परद्रव्यन सों अलहदा कहिये भिन्न होना, सिद्ध क्षेत्र विषे तिष्ठना सो द्रव्य मोक्ष है । सो मोक्षतत्व को अपना परम हित जानना चाहिये । ऐसे सप्त तत्व कहे । तिन विषें जीव तत्व तो आप जानने के अर्थ कह्या अरु अजीव तत्व पर जानने के अर्थि कह्या अरु बाकी पंच तत्व स्वीयभाव, परभाव, विभावभाव जानने के अर्थि कह्या । अरु जानकरि स्वभाव का ग्रहण करना, परभाव तथा विभाव भाव को छोडने के अर्थ कह्या । तातें जीव अजीव इन दोय सामान्य तत्वन

ही को जानि आपापर के ज्ञानकरि संतुष्ट होय अरु जीव अजीव के पांच आश्रवादि विशेष भाव तत्व को न जानैं कुछ भी सिद्ध न होय, तातैं भाव ही का जानना कार्यकारी है। यह ग्रंथ भावन का प्रकाशक है तातैं याका नाम भावदीपक सार्थक है।

भावों का निरूपण

तहां जीव के सामान्य भाव तो पांच हैं—१ परिणामिक २ औदयिक ३ क्षयोपशम ४ उपशम ५ क्षायक। जो कर्म की कोई भी अपेक्षा करि नाहीं ऐसा स्वकीय अन्वयि परमभाव अनादि अनन्त जीव का स्वरूप सो परिणामिक भाव कहिये।

बहुरि कर्म का उदय ही है कारण जाकूं ताकरि निपज्ये जो जीव के भाव सो औदयिक भाव कहिये।

बहुरि जीव के गुणन के घातक-प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम तें जो आत्मा विषैं एकदेशगुण की प्रगटता होय सो क्षयोपशमभाव कहिये। जहां गुण के प्रतिपक्षी कर्म के सर्वघाती स्पर्द्धकन के उदय का तो अभाव होय अरु उपरिसत्ता में तिष्ठता प्रतिपक्षी कर्म का उपशान्त करण होय, जाकी उदीरणा होय उदय में आवे नहीं अरु गुण के प्रतिपक्षी कर्म का देशघाती स्पर्धकों का उदय होय ऐसा होतेसंते जो गुण प्रकट होय सो क्षयोपशम भाव कहिये।

बहुरि जीव के गुणन के घातक प्रतिपक्षी कर्म के सत्ता मे उपशम होने से जो भाव प्रगट होय सो उपशम भाव कहिये।

बहुरि जीव के गुणन के घातक प्रतिपक्षी कर्म के क्षय तें जीव विषै जो गुण प्रगट होय सो क्षायक भाव कहिये।

ऐसे ये पंच भाव सामान्य जानना। अब इन पंच भावन के विशेष त्रेपन भाव कहिये हैं। तहां **पारिणामिक भाव के भेद ३**—जीवत्व १, भव्यत्व २, अभव्यत्व ३. **औदयिक भाव के भेद २१**—गति ४, कषाय ४, वेद ३, लेश्या ६, मिथ्यात्व १, अज्ञान १, असंयम १, असिद्धत्व १, ऐसैं २१ भेद हुए। **क्षयोपशम भाव के भेद १८**—तहां उपयोग १० (कुमतिज्ञान १, कुश्रुतज्ञान १, कुअवधिज्ञान १, ए तीन तौ कुज्ञान, बहुरि चार सुज्ञान, मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्ययज्ञान ४, बहुरि दर्शन तीन—चक्षु दर्शन १, अचक्षु दर्शन २, अवधि दर्शन ३) बहुरि क्षयोपशम

लब्धि ५—दान १, लाभ २, भोग ३, उपभोग ४, वीर्य ५, बहुरि क्षयोपशमसम्यक्त्व १, क्षयोपशमचारित्र २, देशसंयम ३, ऐसे १८ भेद हुए। बहुरि **उपशमभावके भेद** २—उपशमसम्यक्त्व १, उपशमचारित्र २। बहुरि **क्षायिकभावके भेद** ९—केवलदर्शन १, केवलज्ञान २, क्षायिकसम्यक्त्व ३, क्षायिकचारित्र ४, बहुरि क्षायिकलब्धि ५— दान १ लाभ २, भोग ३, उपभोग ४, वीर्य ५ ऐसे ९ भेद हुए। इति विशेष भाव।

बहुरि इनके विशेष अनेक भाव हैं—असंख्यात लोक प्रमाण हैं। सो ये जीवके स्वभाव हैं, इन बिना और समस्त परभाव हैं। परभाव कैसे हैं? सो ही कहिये है :—

प्रथम पुद्गलके भाव कहिये हैं—स्पर्श १, रस २, गंध ३, वर्ण ४, ये तो पुद्गलके मूल गुण हैं। बहुरि इनके उत्तरगुण बीस हैं, तहां स्पर्शके ८, रसके ५, गंधके २, वर्णके ५, सो ये तो पुद्गलके शक्तिरूप गुण हैं। गुणका जो परिणमन कहिये अवस्थारूप होना सो पर्याय है। स्पर्श गुणकरि पुद्गल द्रव्य आठ प्रकार परिणमें है—शीतरूप १, उष्णरूप २, स्निग्धरूप ३, रूक्षरूप ४, कोमलरूप ५, कठोररूप ६, हलकारूप ७, भारीरूप ८। बहुरि रस गुणकरि पुद्गल द्रव्य पांच प्रकार परिणमें है—कड़वा १, मीठा २, चिरपरा ३, कषायला ४, खारा ५, बहुरि वर्ण गुणकरि पुद्गल द्रव्य पांच प्रकार परिणमें है—शुक्लरूप १, कृष्णरूप २, पीतरूप ३, रक्तरूप ४, हरितरूप ५, बहुरि गंध गुणकरि पुद्गल द्रव्य दोय भेद रूप परिणमें है— सुगन्ध १, दुर्गन्ध २। ये बीस प्रकार तो स्वभाव पर्यायभाव हैं। बहुरि शब्द १, बंध २, सूक्ष्म ३, स्थौल्य (स्थूल) ४, संस्थान ५, भेद ६, तम ७, छाया ८, आतप ९, उद्योत १०, ये दश, इनके अनेक विशेष हैं, ते विभावपर्यायभाव हैं, कारण कि शब्दादि दश पर्याय स्कंध विषैं ही होय हैं, अकेले परमाणु विषैं न होय हैं।

बहुरि धर्मद्रव्यके गतिहेतुत्वादि १, अधर्मद्रव्यके स्थितिहेतुत्वादि १, कालद्रव्यके वर्त्तनाहेतुत्वादि १, आकाश द्रव्यके अवगाहनहेतुत्वादि १, इत्यादि। ये सब ही परभाव हैं। इनको अपने स्वभाव न जानना। अरु जे जीवके त्रेपन भाव कहे हैं ते स्वभाव जानना। तिन विषैं विभावभावनकों तो हेय जानना, कारण कि ये संसारके कारण हैं। तहां प्रथम ही

पारिणामिकभाव निरूपिये है—

जो अन्य कर्मादिककी अपेक्षा रहित वस्तुका स्वकीय भाव सो पारिणामिकभाव कहिये। विभावभावका त्याग करना अरु स्वभावभाव कूं उपादेय जानि तिनको ग्रहण करना, ताकरि शुद्ध भावनकी सिद्धि करनी चाहिये। अब स्वभाव भाव १, विभाव भाव २, व शुद्ध भाव ३, इनका स्वरूप, इनकी प्रवृत्ति, इनका स्वामी, इनका फल इत्यादिका वर्णन करिये है।

॥ इति भावदीपिकाका प्रथम सामान्याधिकार समाप्त हुआ ॥

द्वितीयाधिकार।

मंगलाचरण—

दोहा:—वंदू वीर जिनंद कूं, सकल सिद्धि दातार।
कहूँ भाव परिणामके, रचना भेद प्रकार॥

ता पारिणामिकभावके तीन भेद हैं—जीवत्व १, भव्यत्व २, अभव्यत्व ३।

जीवत्वभावका निरूपण—

तहां प्रथम ही जीवत्वभावको निरूपिये है—जीवत्वभाव कहिये चेतनाभाव, ज्ञानभाव कहिये जाननभाव। सामान्यतया जानपनो सो जीवको स्वरूप है, अन्वयीभाव है। चेतना बिना तीनों काल विषैं जीव नाहीं, जीव बिना चेतना नाहीं। बहुरि वह कर्मजन्य नाहीं, वस्तुका स्वभाव है। बहुरि कैसा है चेतनाभाव? स्व-पर-प्रकाशी है, आपकूं भी जानैं तथा परकूं भी जानैं। बहुरि कैसा है चेतनाभाव? शाश्वता (सदा बना रहनेवाला) है, ताका कोई काल विषैं अभाव नाहीं।

बहुरि कैसा है ज्ञानभाव ? जीवका स्वरूप है, जीवकी पहिचान करावनहारा, अन्य द्रव्यनि विषैं न पाइये, ऐसा असमान गुण है। बहुरि कैसा है ज्ञानभाव ? जीवका प्राण है, याही तें जीवकूं प्राणी कहिये। बहुरि कैसा है चेतनाभाव ? सर्व अवस्था विषैं व्यापी है। संसार अवस्था तथा सिद्ध अवस्था दोनों अवस्था विषैं पाइये है। सो चेतनाभाव दोय प्रकार है— १ सामान्य चेतना और २ विशेष चेतना। सामान्य वस्तुको जाने सो सामान्य चेतना, अरु वस्तुको विशेष सहित जानैं सो विशेष चेतना। बहुरि सामान्य विशेष चेतना भी दोय प्रकार है— एक शुद्ध चेतना, दूजी अशुद्ध चेतना। स्व-परका सामान्य विशेष जानना मात्र ही जानना सो शुद्ध चेतना कहिये। अरु परका निमित्त पाय राग द्वेष रूप जानना सो अशुद्ध चेतना कहिये। जातैं कर्मको निमित्त पाय रागादिकरूप होई परिणमे है सो चेतना भी चेतनाभावकी निज उपादान शक्ति है, कर्म जन्य नाहीं। जो यामें रागादिरूप परिणमनकी उपादानशक्ति न होती तो कर्म निमित्त तैं रागादिरूप न परणमता। जैसें शुद्ध स्फटिकमणि विषैं शुद्ध स्वभाव है सो पारिणामिक भाव है, कोईकर जन्य नाहीं, सो दोनों ही शक्तिको धारै है। शुद्धभावरूप भी परिणमें है अरु हरित पीत कृष्णादि डंकको निमित्त पाय हरित पीतादि रूप भी परिणमें। जो यामें परिणमन रूप उपादान शक्ति न होती तो डंकको निमित्त पाय हरित पीतादिरूप न परिणमतो, अन्य पाषाणादिकके समान। अन्य पाषाणादि विषैं उपादानशक्ति नाहीं सो डंकका निमित्त पाय भी हरित पीतादिरूप न परिणमै। जातैं बाह्य निमित्त-कारण तो परिणमताने परिणमाय सके, अरु न परिणमताने न परिणमाय सकै। तैसे जीवमें कर्मको निमित्त पाय रागादिरूप परिणमनकी स्वयंशक्ति है तातैं परिणमे है। ताही शक्तिका माहात्म्य करि कर्मके निमित्त तें यह जीव रागी द्वेषी होय अशुद्ध चेतनाभावको प्राप्त भया है। शुद्ध चेतनाभाव जो दृष्टा ज्ञाता भाव ताकूं नाहि संभालि सकै है, ताकूं विसरि रह्यो है। ताही तें संसारी होय संसार विषै भ्रमण करत संतो अनादिकालको दुखी है, कोई शरण नाहीं, इस घोर संसारमें अपने पद तें च्युत भये जे जीव तिनमें कोई महाभाग जीवकों काललब्धिके वश थकी जिन धर्मके धारक जे अरहन्तादिक तिनका शरण मिले, याका छूट रह्या जो अपना परमशुद्ध जीवत्वभाव कहिये चेतनाभाव, ता विषैं स्थापित करै तब यह संसार तें छूटि

सुखी होय। तातैं जिनधर्मका शरण पकड़ि अपने जीवत्वभावका जानना श्रद्धान करना योग्य है। ऐसा जीवत्व पारिणामिकभाव दिखावनेका तात्पर्य है। ऐसे जीवत्वभावका निरूपण किया।

ऐसैं जीवत्वभावको धारै है ताहीतैं याका जीव नाम कहिये है। अशुद्ध जीवत्वपारिणामिकभाव तौ चतुरगति संसारको कारण है। अरु वर्तमान संसारिक सुखदुःखका कारण है। शुद्ध जीवत्व पारिणामिकभाव वर्तमान सुखका कारण है अरु आगामी मोक्षका कारण है।

भव्यत्व अभव्यत्वभावका निरूपण—

आगैं भव्यत्व अभव्यत्व पारिणामिकभाव कहिये है—जो मोक्षभाव परिणमनकी योग्यताकूं धरै सो भव्यत्वभाव कहिये। अर जो मोक्षभावके परिणमनकी योग्यताकूं न धरै सो अभव्यत्वभाव कहिये। जो भविष्यत कालविषैं जिस भावके परिणमनका बाह्यनिमित्त पाय तिसभावरूप परिणमेगा सो भव्यत्वभाव कहिये। अर जिस भावके परिणमनका बाह्य निमित्त पाय भी तिस भावरूप न परिणमेगा सो अभव्यत्वभाव कहिये। ऐसा इनका स्वरूप जानना।

सो जड़ वर्णादिक जे परभाव तिन रूप तो निश्चयतैं सर्व ही जीव अतीतकालविषैं न परिणमे अर अनागत कालविषैं न परिणमेंगे, वर्तमानकालविषैं न परिणमें हैं तातैं परभाव तो सर्व ही जीवनके अयोग्यता रूप है। तातैं अभव्यत्वभाव है। अर जो जीवके त्रेपन स्वभावनविषैं तिन भावन रूप भविष्यतकालविषैं निमित्त पाय परिणमेगा, अतीतकाल विषैं परिणया, वर्तमान कालविषैं परिणमै है, ते तौ तिस जीवके भव्यत्वभाव हैं। अर त्रेपन भावनविषैं तिन भावनरूप न परिणया, न परिणमेगा, न परिणमै है, ते तिस जीवके अभव्यत्व भाव हैं। ताहीतैं जे सर्व त्रेपन भावनविषैं अभव्यत्व भाव विना अवशेष बावनभाव रूप बाह्य निमित्तकारणके मिलत संते परिणमेंगे ते तो भव्य जीव कहिये। अर जे त्रेपन भावन विषैं एक तो भव्यत्व पारिणामिकभाव अर क्षयोपशमभावविषैं मतिज्ञान १ श्रुतज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्ययज्ञान ४ ये चार तो ज्ञान अर अवधिदर्शन, क्षयोपशमसम्यक्त्व, क्षयोपशमचारित्र, देशसंयम, ये आठ भाव अर

उपशमभाव दोनों अर नव क्षायिकभाव, इन मोक्षके कारण बीस भावनरूप बाह्यनिमित्त मिलतें भी न परिणमेंगे ते अभव्य जीव कहे। जैसैं घोरडु मूंग सहज ही ऐसी शक्तिकूं धारै है कि सीझनेके कारण जलअग्न्यादिक बाह्यकारण मिलतें भी न सीझै, तैसें अभव्यजीव सहज ही ऐसी शक्तिको धारै है कि जो सम्यक्त्वादिक बीस मोक्षके कारणभाव हैं तिनके कारण देव गुरु धर्मादिक मिलतें भी तिन रूप सर्वदा-सदा कालविषैं भी न परिणमेंगे, ते अभव्यजीव कहिये, ताहीतें शास्त्रविषैं ऐसा कहिये हैः—जे जीव भविष्यतकालविषैं सम्यग्दर्शनादिरूप परिणमेंगे ते भव्यजीव कहिये। अर जे सम्यग्दर्शनादि रूप भविष्यतकालविषैं कदा काल भी न परिणमेंगे ते अभव्यजीव कहिये। तहां भव्यभाव तो चतुर्गति संसारका भी कारण है और मोक्षका भी कारण है, अर अभव्यभाव संसारका ही कारण है। सम्यक्त्वरूप परिणमि जे संसारके पार होंगे ते भव्य-जीव कहिये। अर सम्यग्दर्शनादिभावरूप जे भविष्यतकालविषैं कदाकाल भी न परिणमेंगे ते अभव्यजीव कहिये। तातैं मोक्षकूं कदाकाल भी न प्राप्त होंय।

अब ए तीन पारिणामिकभाव जिस २ गुणस्थान अर मार्गणास्थानविषैं पाइये है सो दिखाइये है—

जीवत्वभाव तो सर्वगुणस्थान अर सर्व मार्गणास्थानविषैं वा सिद्धभगवानपर्यंत पाइये है। अर भव्यत्वभाव सर्व गुणस्थान तथा सर्व मार्गणास्थानविषैं पाइये है। अर अभव्यत्वभाव गुणस्थान तो प्रथमगुणस्थानविषैं ही पाइये है। मार्गणा-स्थानविषैं योगमार्गणाविषैं तो आहारकद्विक अर ज्ञानमार्गणाविषैं अवधि, मनःपर्यय, केवल ये तीन ज्ञान, अर संयममार्गणा-विषैं असंयमविना छह संयम, अर दर्शनमार्गणाविषैं अवधि अर केवल ये दोय दर्शन, अर भव्य अर सम्यक्त्वमार्गणाविषैं मिथ्यात्व विना पांच सम्यक्त्व इन उगणीस १९ स्थानकनविषैं तो न पाइये अवशेष सर्वमार्गणास्थानकनविषैं अभव्यत्वभाव पाइये है।

इति श्रीभावदीपिकाका पारिणामिक भावाधिकार दूसरा पूर्ण भया।

अथानंतर कर्माधिकार लिखिये है—

जाते अब कहेंगे जे पचासभाव ते सर्व कर्मकी सापेक्षतें उत्पन्न हैं, तातें कर्मनिका किछुयक कथन करिये है—

दोहा—कर्म (ज) भाव अभाव करि सिद्ध कियो स्वैभाव। तिनपद नमि विध कथनकों करूं चित्त धरि चाव ॥

सामान्यकर्मके मूलभेद आठ ८ हैं अर उत्तरभेद १४८ वा असंख्यात लोकप्रमाण हैं सो ही कहिये है—

जीवको विशेषजाननरूप जो ज्ञानभाव ताकों आवरै–घातै–अभाव करै सो ज्ञानावरणकर्म है १। बहुरि सामान्य अवलोकनरूप जो जीवको दर्शनभाव ताकों घातै सो दर्शनावरणकर्म है २। बहुरि जीवके श्रद्धान चारित्रगुणकों घातै सो मोह कर्म है ३। बहुरि जीवके उत्साह-वीर्य-पराक्रमकों घातै सो अंतरायकर्म है ४। ये चार कर्म तो जीवके गुणकों घातै हैं तातें घातिया कहिये। अवशेष चार कर्म ऐसें जीवके गुणकों नाहीं घातैं हैं, तातैं अघातिया कहिये। बहुरि सुखदुःखकी कारण बाह्यसामग्री मिलावै सो वेदनीय कर्म है ५। बहुरि प्राप्त भई गतिविषैं अवस्थान राखै सो आयुकर्म है ६। गतिजाति शरीरादि निपजावै सो नामकर्म है ७। बहुरि उच्चनीचकुलविषैं धरै सो गोत्रकर्म है ८। ऐसें कर्मनकी मूलप्रकृति तो आठ हैं। अब उत्तर प्रकृति कहिये है—ज्ञानावरणकी ५—जो जीवके मतिज्ञानकों आवरै सो मतिज्ञानावरण कहिये १। अर जो श्रुतज्ञानकों आवरै सो श्रुतज्ञानावरण कहिये २ अर जो अवधिज्ञानकों घातै सो अवधिज्ञानावरण कहिये ३ अर जो मनःपर्ययज्ञानका अभाव करै सो मनःपर्ययज्ञानावरण कहिये ४ अर जाके उदयतें केवलज्ञानका अभाव रहै सो केवलज्ञानावरण कहिये ५। अब दर्शनावरणकी नवप्रकृतिनकूं कहिये है—तहाँ ५ तो निद्राकर्म, स्त्यानगृद्धिकर्मके उदय होतें जीवके स्त्यानगृद्धिनिद्रा होय ताकरि जीव सूता ही जागतासा कार्य करै, विशेष वीर्य होय, निद्राका अभाव होतें, किये कार्यका स्मरण न होय १। निद्रानिद्राकर्मके उदय होतें जीवकैं निद्रापै निद्रा आया ही करै, अनेक प्रकार यह निद्रावान जीव जागृत भया चाहै, परन्तु निद्राका परिहार न कर सकै, कर्मका अभाव भयेंही जागृत होय २। बहुरि प्रचलाप्रचलाकर्मके उदय होतें जीवकों प्रचलाप्रचला निद्रा होय, ताकरि जीव दुःखी होय. हस्तपाद पटकवो करै, समस्त अंग चलायमान रहैं, मुख थकी लार बहै इत्यादि चिन्हसहित होय सो यह निद्रा

शोकसंतापादिकंविषैं उपजे हैं ३। निद्राकर्मके उदय होतें जीव चालताही सोवै, खड़ा रहजाय, बैठा ही सोवे, दीर्घ उच्छ्वास लेय इत्यादिं चिन्हसहित होय ४। बहुरि प्रचलानामा कर्मके उदयते जीव सोता भी जाय जागता भी जाय, कार्य करै, फेर सोय जाय, जागृत होय बचनालाप करै, फेर सोय जाय, जागृत होय बचनालाप करे, फेर सोय जाय इत्यादि चेष्टासहित है ५। बहुरि चक्षुदर्शनावरणकर्मके उदयतें चक्षुदर्शनका अभाव होय, नेत्रेन्द्रियके द्वार सामान्यज्ञानका अभाव करै ६। अर अचक्षुदर्शनावरणकर्मके उदयतें अचक्षुदर्शनका अभाव होय, स्पर्शन-रसन-घ्राण-श्रोत्र इन चार इन्द्रियनके द्वार सामान्यज्ञानका अभाव करे ७ अर अवधिदर्शनावरणकर्मके उदयतें अवधिदर्शनका अभाव होय ८ अर केवलदर्शनावरणकर्मके उदय होते केवल दर्शनका अभाव होय ९ इति।

आगैं मोहकर्म दोय प्रकार है—दर्शनमोह १ चारित्रमोह २। तहां दर्शनमोहकर्म तीन प्रकार है—मिथ्यात्व १ सम्यङ्मिथ्यात्व २ सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्व ३। मिथ्यात्वकर्मके उदयतें जीवकें अन्यथा अभिप्राय होय, जीवादितत्त्वनका स्वरूप अन्यथा श्रद्धान करै, यथास्वरूप श्रद्धान न करै। सम्यङ्मिथ्यात्वकर्मके उदय होतें जीवकें यथार्थश्रद्धान वा मिथ्याश्रद्धान दोनों मिले हुए होंय, अर सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्वके उदय होतें जीवकें श्रद्धान तो यथार्थ होय। परन्तु श्रद्धानविषैं चल मल अगाढ़ दोष की उत्पत्ति हुवा करै। अर मिथ्यात्वकर निर्मल श्रद्धान न रहै।

अथ चारित्रमोहकर्म पचीस प्रकार है। तहां अनंतानुबंधी क्रोधकर्मके उदय होतैं जीवकें अन्यथा अन्याय क्रोध होय १ अर अनंतानुबंधीमानकर्मके उदय होतैं जीवके अन्यथा अन्याय मान होय २ अनंतानुबंधी मायाकर्मके उदय होतैं जीवकें अन्यथा अन्याय मायामोह होय ३ अनंतानुबंधी लोभकर्मके उदय होतें जीवकें अन्यथा अन्याय लोभ होय ४। इन अनंतानुबंधीकर्मनका तीव्र उदय होतैं जीवादितत्त्वनका सांचा स्वरूपाचरण न होय, अपने हितअहितकों न समझै, विषयकषायके कार्यनकी अमर्यादीक वांछा होय, विषयकषायके कार्यनविषैं स्वच्छन्द प्रवर्त्तै, धर्मप्रवृत्तिकी वांछा न होय, अर जो होय तो अन्यथा धर्मप्रवृत्ति करै।

बहुरि अप्रत्याख्यानकर्मके उदय होतैं चारों ही कषायभावनरूप प्रवर्त्तैं परन्तु द्रव्यक्षेत्रकालके विचारसहित न्यायरूप प्रवर्त्तैं। अर अप्रत्याख्यानक्रोधकर्मके उदय होतैं जीवके न्यायरूप मर्यादीकक्रोध होय ५ अर अप्रत्याख्यानमानकर्मके उदय होतैं जीवकें न्यायरूप मर्यादीकमान होय ६ अर अप्रत्याख्यानमायाकर्मके उदय होतैं जीवके न्यायरूप मर्यादीकमाया होय ७ अर अप्रत्याख्यानलोभकर्मके उदय होतैं जीवके न्यायरूप मर्यादीकलोभ होय ८ अर अप्रत्याख्यानकर्मनके उदय होतैं एकदेश संयम भी नाहीं धर सकै परन्तु धर्मविषैं रुचि होय, धर्म अरु धर्मके धारणनविषैं भक्ति होय, प्रीति होय, सांचा स्वरूपाचरण होय।

बहुरि प्रत्याख्यान क्रोधकर्मके उदय होतैं जीवकें तुच्छसा न्यायरूप क्रोध होय ९ अर प्रत्याख्यान मानकर्मके उदय होतैं जीवकें तुच्छसा मान होय १० अर प्रत्याख्यान मायाकर्मके उदय होतैं जीवकें तुच्छसी माया होय ११ अर प्रत्याख्यान लोभकर्मके उदय होतैं जीवके तुच्छसा लोभ होय १२ बहुरि प्रत्याख्यानकर्मनके उदय होतैं सकलचारित्र तो न धर सकै परंन्तु देशसंयमके सकल भेदनकों प्राप्त होय। बहुरि संज्वलन क्रोधकर्मके उदय होतैं जीवके अबुद्धिपूर्वक कार्यरहित मंदतर क्रोध होय १३। अरु संज्वलन मानकर्मके उदय होतैं जीवकैं अबुद्धिपूर्वक कार्यरहित मंदतर मान होय १४। अरु संज्वलन माया-कर्मके उदय होतैं जीवकें अबुद्धिपूर्वक कार्यरहित मंदतरमाया होय १५। अरु संज्वलन लोभकर्मके उदय होतैं जीवकें अबुद्धि-पूर्वक कार्यरहित मंदतर लोभ होय १६। अर संज्वलन मोहकर्मके उदयतैं सकलचारित्र तो धरै परन्तु उत्तरगुणनमें दोष लाग्या करै, यथाख्यातचारित्रका अभाव है।

बहुरि हास्यकर्मके उदय होतैं जीव प्रफुल्लित हास्यसहित होय १७। बहुरि रतिकर्मके उदय होतैं जीव इष्ट पदार्थन विषैं रति करै, आसक्तिता धरै १८। अरु अरतिकर्मके उदय होतैं जीव अन्य अनिष्टपदार्थनविषैं अरुचि धरै, छोड्यो चाहे १९। शोककर्मके उदय होतैं जीव निरुद्यमी हुआ चिंता करै, शोक करै सो शोक कहिये तिस सहित होय २०। अरु भयकर्मके उदय होतैं जीव इष्ट वस्तुकूं छिपावै, प्राण सकंप होय २१। अरु जुगुप्साकर्मके उदय होतैं जीव पदार्थनकों ग्लानि करै, सुमरै अहोठा (घृणा) भाव करै २२। अरु पुरुष वेदकर्मके उदय होतैं जीव स्त्रीनसों रमनेकी वाञ्छा करै २३। अरु स्त्री वेदकर्मके

उदय होतें जीव पुरुषसों रमनका भाव करै २४। बहुरि नपुंसक वेदकर्मके उदय होते जीव स्त्री पुरुष दोनोंसों रमनेका भाव करै२५।

अंतरायकर्मके पांच प्रकार—

दानान्तरायकर्मके उदय होतें जीव दान धर्म न कर सकै १। अरु लाभान्तरायकर्मके उदय होतें जीवके अनेक लाभनके उपाय निरर्थक होंय, लाभ न होय सकै २। अरु भोगान्तरायकर्मके उदय होतें जीव खानपानादि भोग न कर सकै ३। अरु उपभोगान्तरायकर्मके उदय होतें जीव वस्त्र, आभूषण, स्त्री, मंदिर आदि उपभोग सामग्री न भोग सकै ४। अरु वीर्यान्तरायकर्मके उदय होतें जीवके बल, वीर्यकी हानि होय ५।

वेदनीयकर्मके दो प्रकार—

सुखके कारण बाह्य पदार्थनका जीवकों अनुभव न करावै सो सातावेदनीयकर्म है १। बहुरि दुःखके कारण बाह्य पदार्थनका जीवकों अनुभव न करावै सो असातावेदनीय कर्म है २।

आयुकर्म चार प्रकारका कहिये है—

जो नरकगति विषैं जीवकौं अवस्थान राखै सो नरकनामा आयुकर्म है १। जो तिर्यंचगति विषैं जीवकौ अवस्थान राखै सो तिर्यंचनामा आयुकर्म है २। अरु जो मनुष्यगति विषैं जीवकौं अवस्थान राखै सो मनुष्यायुनामाकर्म है ३। अरु जो देवगति विषैं जीवकौं अवस्थान राखै सो देवायुनामाकर्म है ४।

नामकर्मकी एकसौ तेरह प्रकृतियां—

तहां गतिनामकर्मके भेद ४— नर्कगतिनामकर्मके उदयतें जीव नर्क विषैं उपजै है। अरु नर्कगति संबंधी सर्व (नरक) व्यवहार योग्य भाव होय हैं। प्रथम नरकके प्रथम पाथड़े (नरक) सूं लगाय सप्तम नरकके अंत पाथड़े पर्यंत उनचास पाथड़ेमें जहां जहां उपजे है तिस ही व्यवहारयोग्य भावको धरे है १। बहुरि तिर्यंचगतिनाम कर्मके उदयतें जीव

तिर्यंचगतिविषैं उपजे है, तहां अनेक प्रकार तिर्यंचयोनि एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय संबंधी वृक्ष कीट, भ्रमर, स्वान, मार्जारादि जिस योनिविषैं उपजै हैं, तिसही संबंधी सर्व व्यवहारयोग्य भावनकों प्राप्त होय २। बहुरि मनुष्यगति नामकर्मके उदयतें जीव मनुष्यगतिविषैं उपजै हैं, तहां अनेकप्रकार मनुष्यगति संबंधी कर्मभूमियां, आर्य, म्लेच्छ, विद्याधरादि व भोगभूमियां, कुभोगभूमियां, व लब्धिपर्याप्तादि अनेक भेदनविषैं जो जो व्यवहार हैं, तिस योग्य भावनकों प्राप्त होय हैं ३। बहुरि देवगति नामकर्मके उदयतें जीव देवगतिविषैं उपजै है, तहां भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क, कल्पवासी च्यारि प्रकार देवन संबंधी अनेक भेद, तहां जिस भेद विषैं उपजै है, तिस भेद संबंधी जो जो व्यवहार हैं, तिस ही योग्य भावनकों प्राप्त होय हैं ४।

बहुरि जाति नामकर्म पांच प्रकार है—तहां एकेन्द्रिय जाति नामकर्मके उदयतें जीव एकेन्द्रिय होय है १। अरु बेंद्रिय जातिकर्मके उदयतें जीव बेन्द्रिय होय हैं २। अरु तेन्द्रिय जातिकर्मके उदयतें जीव तेन्द्रिय होय हैं ३। अरु चौन्द्रिय जातिकर्मके उदयतें जीव चौन्द्रिय होय हैं ४। अरु पंचेन्द्रिय जातिनामकर्मके उदयतें जीव पंचेन्द्रिय होय हैं ५।

बहुरि शरीर नामकर्म पांच प्रकार है—औदारिक शरीरनामकर्मके उदयतें जीवकें मनुष्य तिर्यंचगतिविषैं, औदारिक शरीर निपजै है १। अरु वैक्रयिकशरीर नामकर्मके उदयतें जीवकें देव व नरकगतिविषैं वैक्रयिक शरीर निपजै है २। अरु आहारकशरीर नामकर्मके उदयतें जीवकें षष्ठमगुणस्थानवर्ती महामुनिकें आहारक शरीर निपजै है ३। अरु तैजस शरीरनामकर्मके उदयतें सर्व जीवोंके तैजस शरीर निपजै है ४। अरु कार्माण शरीर नामकर्मके उदयतें सर्व जीवनकें ज्ञानावरणादि कर्मनकौ पिंड कार्माण शरीर निपजे है ५।

आंगोपांगनामकर्म तीन प्रकार है—औदारिक आंगोपांग नामकर्मके उदयतें बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यकैं अपने अपने योग्य औदारिक आंगोपांग होय है १। अरु वैक्रयिक आंगोपांग नामकर्मके उदयतें देव नारकी कैं अपने अपने योग्य वैक्रयिक आंगोपांग होय हैं २। अरु आहारक आंगोपांगनामकर्मके उदयतें आहारकशरीरके योग्य

आहारक आंगोपांग होय है ३।

संस्थान नामकर्म पट् प्रकार है—संस्थान नाम आकारका है। जैसा संस्थानकर्मका उदय होय, तैसा ही शरीरका आकार होय। समचतुरस्रसंस्थान नामकर्मके उदयतैं पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य देवके शरीरका आकार समचतुरसंस्थान शोभायमान होय है १ अर न्यग्रोधपरिमंडल संस्थान नामकर्मके उदयतै पंचेन्द्रिय कर्मभूमियां तिर्यंच मनुष्य शरीरका आकार न्यग्रोधपरिमंडलाकार होय है, न्यग्रोधपरिमंडल नाम वटवृक्षका है, जैसे वटवृक्ष नीचेतै पतला अरु ऊपर मोटा होय, तैसैं शरीरका आकार नीचे पतला अरु ऊपर मोटा होय, सो न्यग्रोधपरिमंडल कहिये २। बहुरि स्वातिकसंस्थान नामकर्मके उदयतैं कर्मभूमियां मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंचके शरीरका आकार सांतक होय, सांतकनाम बांवईका है, जैसे बांवई नीचेतैं मोटी ऊपरतैं पतली होय, तैसें शरीरका नीचला भाग मोटा होय, ऊपरका भाग पतला होय, ऐसा सांतक आकार होय है ३। बहुरि कुब्जकसंस्थान नामकर्मके उदयतैं, कर्मभूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीरका कुब्जक आकार होय है, पीछेसे ऊंचा अर आगेसे नीचा होय ४। बहुरि वामन संस्थाननामकर्मके उदयंत कर्मभूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीरका वामन आकार होय है, अपने २ सजातीय शरीरनतें ठिंगना शरीर होय, सो वामन आकार जानना ५। बहुरि हुंडकसंस्थान नामकर्मके उदयतैं एकेन्द्रिय बेंद्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय पंचेन्द्रिय कर्मभूमियां तिर्यंच मनुष्य वा नारकीके शरीरका हुंडक आकार होय है। पूर्वोक्त कहे जे शरीरके पंच आकार तिनसौं रहित अन्य सकल शरीरके आकार हुंडक संस्थान जानने ६। संस्थानके मूलभेद तौ ऐसैं कहे। अर इनके विशेष भेद असंख्यात हैं। सो ही संस्थाननामकर्मके मूलभेद तो छह हैं, अर विशेष भेद असंख्यात हैं। जैसा जैसा कर्मका उदय होय, तैसा तैसा ही शरीरका आकार होय है इति।

अब संहनननामकर्म छह प्रकार है सो ही कहिये है—संहनननाम हाड़नका है, बज्रवृषभनाराचसंहनननामकर्मके उदयतें भोगभूमियां मनुष्य तिर्यंचके वा कर्मभूमियां पंचेन्द्रिय संज्ञी तिर्यंच मनुष्यके शरीरविषैं बज्रका हाड़ होय अर बज्रका ही ऋषभ कहिये बांधण होय। तिनकरि हाड़ बंध्या होय, अर बज्रकी कीलि करि कीलित होय, ऐसा वज्रवृषभनाराचसंहनन

होय १ बहुरि बज्रनाराचसंहनन नाम कर्मके उदयतैं कर्मभूमियांसंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीरविषैं वज्र का हाड़ होय हाड़नका बांधना सादा होय ताकरि हाड़ बंधा होय अर वज्रकी कीलिकरि कीलित होय ऐसा वज्रनाराचसंहनन होय २। बहुरि नाराचसंहनन नामकर्मके उदयतैं कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीरविषैं हाड़ तो वज्रका होय अर सामान्य कीलिनकरि कीलित होय ऐसा नाराचसंहनन होय ३। बहुरि अर्द्धनाराचसंहनन नामकर्मके उदयतैं कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीर विषैं वज्रका हाड़ होय अर सामान्य कीलिनकरि आधा तो कीलित होय अर आधा बिना कीलित होय ऐसा अर्द्धनाराच संहनन होय ४। बहुरि कीलित संहनन नामकर्मके उदयतैं कर्मभूमियांसंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके शरीर विषैं सामान्य हाड़ होय अर सामान्य कीलिकरि कीलित होय ऐसा कीलित संहनन होय ५। बहुरि स्फटिकसंहनन नामकर्मके उदयतैं कर्मभूमियां विषैं बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चोइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी तिर्यंचके अर मनुष्यके सर्प शरीरवत् जुदा जुदा हाड़ होय, अर नसांकरि बंधा होय कीलिनकरि रहित होय ऐसा स्फटिक संहनन होय ६। इन छहूं कर्मनके भी विशेष भेद असंख्यात हैं ताहीतैं संहननके भेद भी असंख्यात जानने।

बहुरि बंधन नामकर्म पांच प्रकार है। पंच प्रकार शरीर नामकर्मके उदयतैं आये योगद्वार होय पंचशरीर योग्य पुद्गल कर्मवर्गणा तिनका परस्पर बंधाण करै सो बंधन नामकर्म जानना। औदारिक बंधननाम कर्मके उदयतैं औदारिक शरीर योग्य कर्मपरमाणूंका १। अर वैक्रियिक बंधन नामकर्मके उदयतैं वैक्रेयिक शरीरयोग्य कर्मपरमाणूंका २। अर आहारक बंधननामकर्मके उदयतैं आहारक शरीरयोग्य कर्मपरमाणूंका ३। अर तैजस बंधन नामकर्मके उदयतैं तैजस शरीरयोग्य कर्मपरमाणूंका ४। अर कार्माणबंधन नामकर्मके उदयतैं कार्माणयोग्य कर्मपरमाणूंका ५। परस्पर बंधाण करै सो पंचप्रकार बंधन नामकर्म है।

बहुरि संघात नामकर्म पांच प्रकार है। बंधरूप भया जो पंचप्रकार शरीरयोग्य कर्म परमाणूं, तिनकूं परस्पर गाढ़ा-छिद्र रहित करै, सो पंचप्रकार संघात नामकर्म जानना। औदारिक संघात नामकर्म १। वैक्रियिक संघात नामकर्म २। आहारक संघात नामकर्म ३। तैजस संघात नामकर्म ४। कार्माणसंघात नामकर्म ५ इति।

आगे स्पर्श नामकर्म आठ प्रकार है। हलका स्पर्श नामकर्मके उदयतैं हलका शरीर पावै १। भाऱ्या स्पर्श नाम कर्मके उदयतैं भाऱ्याशरीर पावै २। कोमल स्पर्श नामकर्मके उदयतैं कोमल शरीर पावै ३। कर्कश स्पर्शनाम कर्मके उदय तैं कर्कश (कठोर) शरीर पावै ४। अरु स्निग्ध स्पर्श नामकर्मके उदयतैं साचिक्कण शरीर पावे ५। रूक्ष स्पर्शनाम कर्मके उदयतैं रूखा शरीर पावै ६। शीतस्पर्श नामकर्मके उदयतैं शीतल शरीर पावै। ७ उष्णस्पर्श नामकर्मके उदयतैं उष्ण स्पर्श पावै ८।

रस नामकर्म पांच प्रकार है। मिष्ठरस नामकर्मके उदयतैं शरीर विषैं मिष्ठरस होय १, आम्लरस नामकर्मके उदय तैं शरीर विषैं खाटा रस होय २, कटुकरस नामकर्मके उदयतैं शरीर विषैं कडुवो रस होय ३, कषायलारस नामकर्मके उदयतैं शरीरविषैं कषायलो रस होय ४, तिक्तरस नामकर्मके उदयतैं शरीर विषैं चरपरो रस होय ५।

गंध नामकर्म दोय प्रकार है। सुगन्ध नामकर्मके उदयतैं शरीरमें सुगन्ध होय १, दुर्गंध नामकर्मके उदयतैं शरीरमें दुर्गंध होय २।

वर्ण नामकर्म पांच प्रकार है। शुक्ल नामकर्मके उदयतैं शरीर शुक्ल होय १, कृष्ण नामकर्मके उदयतैं शरीर कृष्ण होय २, रक्त नामकर्मके उदयतैं शरीर रक्त होय ३, हरितवर्ण नामकर्मके उदयतैं हरित शरीर होय है ४, पीतवर्ण नामकर्म के उदयतैं पीरो शरीर होय है ५।

कहे जे स्पर्शादि वीस कर्म सो शुभ अशुभ भेदकरि चालीस कर्मके भेद होय है। शुभ स्पर्श रस गन्ध वर्णनाम के उदयतैं शरीर विषैं स्पर्शादि शुभ होय, अशुभ स्पर्श रस गन्ध वर्णनामके उदयतैं शरीर विषैं स्पर्शादिक अशुभ होय।

बहुरि विहायोगति नामकर्म दोय प्रकार है। शुभ विहायोगति नामकर्मके उदयतैं शुभ-सुहावनी-मनोज्ञ चाल होय सो शुभ विहायोगति नाम कर्मका उदयतैं संज्ञी पंचेन्द्रिय भोगभूमियां, कर्मभूमियां, तिर्यंच मनुष्य विषैं वा सर्व देवन विषैं है १। अर अशुभ विहायोगतिनाम कर्मका उदय वेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, असैनी पंचेद्रिय सर्वके है, अर कर्म-

भूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्यके भी होय ताकर अशुभ-असुहावनी चाल होय।

आगै आनुपूर्वी नामकर्म चार प्रकार है। पाई नवीन पर्यायके कार्माणका काल, एक समय तथा दोय समय तथा तीन समय है तिन विषैं पूर्वपर्यायका आकार जैसाका तैसा राखै। बहुरि जिस क्षेत्र संबंधी आनुपूर्वी कर्मका बंध किया था तिसही क्षेत्र विषैं उदयकाल विषैं जीव उपजे है। ऐसा इस कर्म का कार्य है ताही तैं याकूं क्षेत्रविपाकी कर्म कह्या है। नरकगत्यानुपूर्वी १, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी २, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ३, देवगत्यानुपूर्वी ४ ऐसें ४ प्रकार है।

बहुरि अगुरुलघु नामकर्मके उदयतैं पाया शरीर जीवकौं हलका भारी न लागै १, अर उपघात नामकर्मके उदय तैं अपने ही शरीर विषैं अपने ही घातके कारण सींग, नख, दांत इत्यादि अवयव होय २। अर परघातनामकर्म के उदय तैं पैलाके घातका कारण अपने शरीर विषैं अवयव होय ३। अर श्वासोच्छ्वास नामकर्मके उदयतैं शरीर विषैं श्वासोच्छ्वासकी शक्ति होय ४। अर आतापनाम कर्मके उदयतैं सूर्य-विमानके लागैं ऐसा पर्याप्त पृथ्वी कायजीव तिनविषै उपजै है तिनहीके शरीरमें आतापरूप प्रकाश होय है और कोई भी जीव कैं या प्रकृतिका उदय नाहीं सो आपतो. शीतल है अर पैला (दूसरे) कूं आताप करै है। बहुरि उद्योतनाम कर्मके उदय होतैं एकेन्द्रिय पृथ्वीकाय अपकाय वनस्पतिकायके अर बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्रिय भोगभूमियां कर्मभूमियां तिर्यंचन को शरीर शीतल प्रकाश सहित होय ६। अर तीर्थंकर नामकर्मके उदयतैं जीव सर्वपूज्य तीर्थंकर पद पावै ७। आगे निर्माणनाम कर्म दोय प्रकार है, स्थान, प्रमाण। स्थान नामकर्मके उदयतैं सर्व आंगोपांग शरीर विषैं यथास्थानक होय। अर प्रमाण नामकर्मके उदय तैं आंगोपांग यथायोग्य जैसे प्रमाणको धर्‍या जैता चाहिये तैता प्रमाणकूं धर्‍यां ही होय ८। अर त्रस नाम कर्मके उदयतैं जीव बेइंद्रिय तेइंद्रिय चौइंद्रिय पंचेन्द्रिय चार प्रकार त्रस काय विषै उपजे है, शरीर हलनचलनादिकी शक्ति सहित होय ९। स्थावर नाम कर्मके उदयतैं जीव एकेन्द्रिय थावरकाय विषै उपजै शरीर हलनचलनादिककी शक्ति रहित होय १०। बादर नाम कर्मके उदयतैं जीव बादर शरीर पावै। बादर शरीर आप पैलाके आधार रहै और अन्य बादर शरीर को आप आधार होय ११।

अर सूक्ष्म नामकर्मके उदयतें जीव सूक्ष्मशरीर युक्त होय। निराधार आकाश विपैं रहेहै किसीके आधार रहे नाहीं, और कों आधार होय नाहीं। वज्र पर्वत मेरु आदिकनतें अटकै नाही किसी भी प्रकार अग्नि शस्त्रादिकतें कदली घात मरण नाही। अपनी आयुके अंत समयही मरै आप कोई को मारै नाहीं तथा अन्यका मान्या आप मरै नाहीं १२। बहुरि पर्याप्त नामकर्म के उदयतें जीव अपने योग्य चार वा पांच वा छह पर्याप्ति पूर्ण करै अपूर्णकाल में मरै नाहीं १३। अपर्याप्त नामकर्मके उदय तें जीव अपने योग्य पर्याप्ति पूर्ण न करै, शरीर पर्याप्ति (दूसरी) पूर्ण न कर सकै बीचमें ही मरण को प्राप्त होय सो लब्धि अपर्याप्त जीव कहिये १४। अर सुस्वरनाम कर्म के उदयतें संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवन के सुहावनो शब्द होय, वचन-परिणतिमनोज्ञ होय १५। अर दुस्वर नामकर्मके उदयते बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय पंचेन्द्रिय चारप्रकार त्रस जीवनके असुहावनो शब्द होय वचन परिणति अमनोज्ञ होय १६। अर प्रत्येक शरीर नामकर्मके उदयते जीव प्रत्येक शरीर पावे, एक शरीरका स्वामी एकही जीव होय सो प्रत्येक शरीर कहियै १७ अर साधारण शरीर नामकर्म के उदयतै जीव साधारण शरीर पावे जो अनंतजीवन का एक शरीर होय सो साधारण शरीर कहिये १८ सों ऐसा शरीर साधारण वनस्पति कायनिगोद जीवनकें होय है साधारण शरीर नामकर्म का उदय इनहीकें है औरके नहीं। स्थिर नामक कर्म के उदयतै शरीरविषैं रस--रुधिर--मांस--मेद--मज्जा--अथि-- शूक्र ए सप्तधातु अर वात--पित्त--कफ--शिरा--स्नायु--चर्म--उदराग्नि ये सप्त उपधातु यथास्थानं स्थिर रहें १९ अर अथिरनामक कर्म के उदयतैं धातु उपधातु यथाठिकाने स्थिर न रहैं तब जीव दुःखीहोय २० अर असुभ नामक कर्म के उदयतैं मस्तक, मुख, पेट, नेत्र, नासिका, कर्ण, हस्त, पाद, हृदय, गुदा, पींठ आदि सर्व अङ्गोपाङ्ग शरीर विपै असुन्दर होंय २२ सुभग नामकर्मके उदयतैं जीव, सर्वकों सुहावनो लागै असुन्दर शरीर वा पापका उदय होते भी सर्वजन प्रीति करैं २३ अर दुर्भगनाम कर्मके उदयतैं जीव सर्वको असुहावनो लागै, सुन्दरशरीर वो पुण्यका उदय होतैं भी सर्वजन अप्रीति करैं २४ अर आदेय नामकर्मके उदयतै शरीर, प्रभाकांति (कांति)करि युक्त होय, सर्व आनन्द मानैं, आदर करैं, सत्कार करैं, २५ अर अनादेय नामकर्मके उदयतैं शरीर प्रभा-कांति रहित होय, कोई भी आनन्द न

मानैं, आदर सन्मान न पावै २६ अर यशस्कीर्ति नामकर्मके उदयतैं जगतविषैं जश (यश) होय २७ अर अयशस्कीर्ति-नामकर्मके उदयतैं, जगतमें पुण्य उदय होतैं भी अयश होय २८।

बहुरिगोत्र कर्म दोय प्रकार है। उच्चगोत्र कर्मके उदयतैं जीव, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य कर्मभूमियां मनुष्य वा भोग-भूमियां मनुष्य वा समस्तदेव उच्चकुल विषैं उपजैं हैं। नीच गोत्र कर्मके उदयतैं जीव, तीन कुलरहित कर्मभूमियां मनुष्य वा तिर्यंच वा सर्व नारकी पर्याय विषैं उपजैं हैं २। ऐसा कर्मनका विधान जानना।

अब जे कर्मनकी प्रकृति १६८ कहीं, तिन विषैं चार घातिकर्मनकी प्रकृतिज्ञानावरणीकी ५ दर्शनावरणीकी ९ मोहनीयकी २८ अंतरायकी ५ सर्वसैंतालीस। तिनमें सर्वघाती प्रकृति २१ः—केवलज्ञानावरणी १ केवलदर्शनावरणी १ निद्रा ५ मोहनीयकी १४ (मिथ्यात्व १ सम्यक्मिथ्यात्व १ अनंतानुबन्धी चतुष्टय ४ अप्रत्यख्यान चतुष्टय ४ प्रत्याख्यान चतुष्टय ४। एवं इकवीस २१ बहुरि देशघाति प्रकृति २६ः—मतिज्ञानावरणी १ श्रुतज्ञानावरणी १ अवधिज्ञानावरणी १ मनः पर्ययज्ञानावरणी १ चक्षुदर्शनावरणी १ अचक्षुदर्शनावरणी १ अवधिदर्शनावरणी १ बहुरि दर्शनमोहकी सम्यक्त्वमोहनीय १ संज्वलन चतुष्क ४ हास्य १ रति १ अरति १ शोक १ भय १ जुगुप्सा १ पुरुषवेद १ स्त्रीवेद १ नपुसंकवेद १ बहुरि अंतरायकी ५ दानान्तराय १ लाभान्तराय १ भोगान्तराय १ उपभोगान्तराय १ वीर्यान्तराय १ एवं छब्बीस। ऐसे सर्वघाती देशघाती प्रकृति जाननी।

बहुरि इन एकसौ अड़सठ (१६८) प्रकृतिन विषैं पाप प्रकृति १००—घातियाकी ४७ असातावेदनीय १ नीचगोत्र १ नरकायु १ नामकर्मकी ५०—नरकगति १ तिर्यंचगति १ जाति ४ (एकेन्द्रिय १ बेइन्द्रिय १ तेइंद्रिय १ चौइन्द्रिय १) संस्थान ५ (न्यग्रोधपरिमण्डल १ सांतक-स्वाति १ कुब्जक १ वामन १ हुंडक १) संहनन ५ (वज्रनाराच १ नाराच १ अर्धनाराच १ कीलक १ स्फाटिक १) बीस असुभस्पर्शादिक २०—स्पर्श८ रस ५ गंध २ वर्ण ५-अप्रशस्तविहायोगति १ नरकगत्यानुपूर्वी १ तिर्यंचगत्यानुपूर्वी १ अपघात १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ दुःस्वर १ साधारण १ असुभ १ अस्थिर १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ एवं १००।

बहुरि पुण्य प्रकृति ६८–साता वेदनीय १ उच्चगोत्र १ देवायु १ मनुष्यायु १ तिर्यंचायु १ बहुरि नामकर्मकी ६३ देवगति १ मनुष्यगति १ पंचेन्द्रिय जाति १ शरीर ५ बन्धन ५ संघात ५ आंगोपांग ३ समचतुरस्रसंस्थान १ वज्रवृषभनाराच-संहनन १ सुभस्पर्शादिक २०–स्पर्श ८ रस ५ गंध २ वर्ण ५। प्रशस्तविहायोगति १ देवगत्यानुपूर्वी १ मनुष्यगत्यानुपूर्वी १ अगुरुलघु १ परघात १ उच्छवास १ आतप १ उद्योत १ तीर्थंकर १ निर्माण १ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ सुस्वर १ प्रत्येक १ सुभ १ स्थिर १ सुभग १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ एवं ६८। बहुरि इन विषैं बंध योग्य प्रकृति एक सौ बीस १२० हैं। मिश्रमोहनीय १ सम्यक्त्व मोहनीय १ बन्धन ५ संघात ५ वर्णादि १६ इन अट्ठाईस प्रकृतिनका बन्ध होय नाहीं।

बंध योग्य जो एकसौ बीस प्रकृति हैं उनमेंसे अप्रतिपक्षी प्रकृति तौ ५८ हैं—ज्ञानावरणी ५ दर्शनावरणी ९ अन्तराय ५ मोहनीय १९–मिथ्यात्व १ कषाय १६ भय १ जुगुप्सा १। नामकर्मकी १६–अगुरुलघु १ निर्माण १ तैजस १ कार्माण १ स्पर्श १ रस १ गंध १ वर्ण १ अपघात १ परघात १ उश्वास १ आताप १ उद्योत १ तीर्थंकर १ आहारकद्विक २ आयु ४ एवं अंठावन प्रकृति अप्रातिपक्षी हैं। इनका लार ही बंध होय और लार ही बंध नहीं होय, ऐसा कोउ नियम नाहीं। बहुरि प्रतिपक्षी प्रकृति बासठ ६२ हैं–वेदनीय २ गोत्र २ मोहनीय ७–हास्य १ रति १ अरति १ शोक १ वेद ३। नामकर्मकी ५०—गति ४ जाति ५ शरीर २ आंगोपांग २ संस्थान ६ संहनन ६ विहायोगति २ आनुपूर्वी ४ बादर १ सूक्ष्म १ त्रस १ स्थावर १ पर्याप्त १ अपर्याप्त १ सुस्वर १ दुःस्वर १ प्रत्येक १ साधारण १ सुभ १ असुभ १ स्थिर १ अस्थिर १ सुभग १ दुर्भग १ आदेय १ अनादेय १ यशस्कीर्ति १ अयशस्कीर्ति १ एवं ६२। इन विषै वेदनीय गोत्र, रति, अरति, हास्य, शोक, तीन वेद, गति, जाति, शरीर, आंगोपांग, संस्थान, संहनन, विहायोगति, आनुपूर्वी अरु दशद्विक इन विषैं एक-एक ही का बंध होय तातैं प्रतिपक्षी कहिये।

बहुरि एकसौ अड़सठ प्रकृतिन विषैं जीवविपाकी वा पुद्गलविपाकी दोय प्रकार हैं। तहां जीवविपाकी प्रकृति ७८ हैं–तिनविषैं घातियाकी तो सर्व ४७, वेदनीयकी २ गोत्रकी २ नामकर्मकी २७—गति ४ जाति ५ विहायोगति २

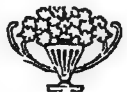
श्वासोच्छ्वास १ तीर्थंकर १ त्रस १ स्थावर १ बादर १ सूक्ष्म १ पर्याप्त १ अपर्याप्त १ सुस्वर १ दुःस्वर १ सुभग १ दुर्भग १ आदेय १ अनादेय १ यशस्कीर्ति १ अयशस्कीर्ति १ एवं ७८ इनको उदय जीवकी अवस्था विषै होय तातैं जीवविपाकी कहिये।

बहुरि पुद्गलविपाकी प्रकृति ८२ हैं—शरीर ५ आंगोपांग ३ बंधन ५ संघात ५ संस्थान ६ संहनन ६ सुभासुभ-वर्णादिक ४० अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ आताप १ उद्योत १ निर्माण १ प्रत्येक १ साधारण १ स्थिर १ अस्थिर १ सुभ १ असुभ १ एवं बियासी प्रकृति पुद्गलविपाकी हैं। इनके उदय विषै जीव सम्बन्धी पुद्गल ही परणवै है। तातै इनकों पुद्गलविपाकी कहिये है। इन कर्मनके उदयतैं शरीरादिक परभाव निपजै है, ऐसा जानना।

बहुरि आयु कर्म चार प्रकार है सो भवविपाकी है। इनका उदय भवविषै ही है।

बहुरि आनुपूर्वी चार प्रकार की है सो क्षेत्रविपाकी है। इनका उदय क्षेत्र विषै ही है ऐसा इन कर्मनका जीव पुद्गल विषै भावउपजावने का नेम (नियम) जानना।

—इति भावदीपिकायां कर्म्माधिकारः समाप्तः—




—: अथ औदायिक भाव प्रारम्भ :—

दोहा—

कर्मोदयजन्य भावकौ, कर अभाव बड़भाग ।
निजस्वभाव परगट कियौ, नमों तासि धरि राग ॥

कर्मके उदयतैं जो आत्मा विषैं भाव उपजे हैं सो औदायिक भाव कहिये। सो भाव इक्कीस प्रकार २१—गतिभाव ४ कषायभाव ४ मिथ्यातत्व १ वेद ३ लेश्या ६ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ एवं २१। तिनमें प्रथमही चार गतिभावाधिकार लिखिये है—गतिभाव चार प्रकार है—मनुष्यगतिभाव १ तिर्यन्चगतिभाव २ देवगतिभाव ३ नरकगतिभाव ४। गति नामकर्मके उदय तैं आत्मा विषैं जो भाव निपजै सो गतिभाव कहिये है। जो जीव जैसी गति पावै ताहीं संबंधी सर्वभाव ताही गतिके अनुसार होय हैं। तहां प्रथम ही मनुष्यगति कहिये है—मनुष्यगति नामकर्मके उदयतैं जीव मनुष्यगति पावै है। तहां सर्वभाव मनुष्य कैसेहोय है, दृढ़ उपयोगी होय, धारणाज्ञान बहुत होय, स्वपरकी प्रवृत्ति जानपनेमें आपके घनेकाल की याद रहै, हेय उपदेयका ज्ञान रहै, सम्यक्त्व व्रत-तप चारित्र धरनेकी शक्ति होय, मैथुनादि क्रिया ढकी होय, अन्नपान मेवा मिष्ठान्न दुग्धादिक नानाप्रकार स्वादपूर्वक जाके खानपान होय, हस्तथकी मुखमें कवलाहार करे, अग्न्यादिकर पच्या जाके द्रव्य क्षेत्र-काल भावकी मर्यादा लियां भोजनादिकका भक्षण होय, सोवना, बैठना, खड़ाहोना, चालना, भय आयें छिपजाना-भागजाना, इत्यादि शारीरिक क्रिया मनुष्यकी क्रिया समान होय, अर जाके अक्षर सहित वचन होय, गुणदोषका विचार, अतीतकालका याद करना, अनागतकालविषैं याद राखना, इत्यादि मनकी क्रियायुक्त होय। बहुरि भयादिकके आयें अनेक प्रकार छुप जानेके उपाययुक्त होय, परिग्रह संग्रह करनेकी इच्छाकरि युक्त-होय, वस्त्राभूषण शृंगारादि मण्डित होनेकी इच्छासहित होय पांच इंद्रियनके विषय सेवनेकी इच्छाकरि पूर्ण होय, वर, मंडप, मन्दिरादिकनमें रहो, चाहे माता, पिता, भ्राता, स्त्री, पुत्रादिकनके

सम्बन्धमें रहो, चाहै तिनसों सदाकाल स्नेह मोहकरि युक्त होय, शास्त्रादि पढने सुनने वा धारण करनेकी शक्तियुक्त होय, शिल्पादि अनेक चातुर्यताकी शक्तियुक्त होय, माता पिताकरि उत्पत्ति होय, सर्व कषायनके स्थानक रूप होनेकी शक्ति होय, जीवनका मारना न मारना पुण्यको जानना इत्यादि विचार सहित होय, उपशमश्रेणी क्षपकश्रेणी विषैं आरूढ होय, कर्मको नाशकरि मुक्त होनेकी शक्तियुक्त होय इत्यादि भाव जीवके मनुष्यगति सम्बन्धी नामा नामकर्मके उदय होतैं होंय हैं ।ये मनुष्यगतिभाव चारौं गति विषैं कारण हैं अर पंचमगति जे मोक्षगति ताका भी कारण है, वर्तमान सुख दुःख दोऊके कारण हैं ।

इति मनुष्यभावः

अथ तिर्यंचभाव प्रारम्भः-तिर्यंचगति नामकर्मके उदयतैं जीव तिर्यंचगति पावे हैं । तहां सर्वभाव तिर्यंच कैसे होते हैं, शिथिल उपयोगी होय, धारणाज्ञानकरि हीन होय, स्वपरके मनवचनकायकी प्रवृत्ति घनाकाल पर्यन्त स्पष्ट याद न रहै, किंचित्काल किंचित्सी अस्पष्ट याद रहै, हेय उपदेय गुणदोषके ज्ञानरहित होय, शास्त्रपढ़ने व अक्षर सहित शब्द बोलने की शक्तिरहित होय, तथा विवेक रहित होय, मैथुनादिसंज्ञा जिनके उघाड़ी होय, घास, काष्ठ, कड़वी, पत्रादि वा मांस, मल, मूत्रादि खानेकी यथायोग्य इच्छा होय, मुखथकी मुखमें कवलहार करैं, किंचित् शास्त्रसुननेकी, अर्थधरनेकी, किंचित् विशेष सहित जीवादिक तत्वनका श्रद्धानरूप सम्यक्त्व वा देशसंयमधारनेकी शक्ति होय, वा एकेन्द्रियादिक कें लेपाहार भी है, मर्यादा रहित है आहारजिनके, प्रभाक्रांति पांचों इन्द्रियनके सुखकरि रहित होय, भय आये भयादिकके मिटावने का उपायकरि रहित होय, सोवना बैठना, चलना, शब्दकरना, कामसेवना इत्यादि सर्व शरीरकी क्रिया यथायोग्य तिर्यंच की सी होय, मनका विकल्प, श्रवण, धारण, सर्व ही हीन होय, परिग्रह-संग्रह वा वस्त्राभूषण, शृंगारादिककी इच्छा

विचार करि रहित होय, घर मंडपादिक संग्रह विषैं रहनेकी इच्छाकरि रहित होय, माता पितादिकतैं भी वा माता पिता बिना सन्मूर्च्छन उत्पत्ति होय, अर यथायोग्य तिनकै कषाय होय, जीवनका मारना न मारना तिनकै विचार रहित होय, पर्यायके वश थकी तिनकै जीवनका मारना न मारना होय है, जैसी पर्याय पावै तैसा ही भाव होय, थावरकाय विषैं, चलने, बोलने की वा स्पर्शनेकी इंद्रिय बिना चार इंद्रिय ज्ञानकी शक्ति रहित होय, इत्यादि भावजीवके तिर्यंचगति सम्बन्धी तिर्यंचगति नामकर्मके उदयतैं होय हैं ए तिर्यंचगति भाव, वर्तमान तो किंचित सुख अर महादुःख देनेका कारण है अर आगामी चारोंगतिका कारण है। इति तिर्यंचगति भाववर्णनम् ॥

अथ नरकगति भाव प्रारंभः—नरकगति नामकर्मके उदयतैं जीवनको नरकगतिकी प्राप्ति होय है। तहां सर्वभाव नर्क कैसे होय है। द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव-सम्बन्ध विषैं अरतिभाव होय, द्रव्य तो अति घिणावणो, दुर्गन्ध; महाकुवर्ण, कर्कश, शीत, उष्ण, आदि खोटा स्पर्श कूं धर्‍यां, महाकटु रस करि युक्त, सर्व रोग करि सम्पूर्ण, ऐसा तो शरीर, ताविषैं अरतिभाव, वा नारकीनके खानेकी मांटी महादुर्गन्ध खोटे रसकूं धर्‍यां, कुवर्णीक क्षार, दुर्गंध जल इत्यादि नरकके द्रव्य थकी अरतिभाव करैं। अरु नरककी भूमि महादुर्गंध, महाउष्ण वा महाशीत वा महाकर्कश स्पर्शकूं धरयां, पृथ्वी क्षेत्र ताविषै, अरतिभाव। बहुरि अपनी जेती सागरादिक प्रमाणकूं धरयां आयु ऐसा जो काल ताविषैं अरतिभाव। बहुरि अति प्रचण्ड कषायकूं धरयां, स्वपरकूं दु;खके कारण, ऐसे भाव तिन विषैं अरतिभाव बहुरि महाकठोर चित्तकूं धरे, दुर्जन दयारहित मार-मार करते अनेक प्रकार दुःखके देन हारे, सज्जनता रहित, ऐसे नारकीनसों सम्बन्ध तिनविषैं अरतिभाव। ऐसे पंच-स्थानकन विषैं अरतिभाव सदा परस्पर लडने मारनेका भाव, व प्रवृत्ति निरन्तर दुःखी, क्षणमात्र भी सुखकी प्राप्ति नाहीं, माता पिता बिना ही है। उत्पादजन्म जिनका, सर्व कुटुम्ब वस्त्राभूषण रहित उत्कृष्ट हुंडक संस्थानकूं धरयां शरीरका खोटा आकार सर्व पांचों इन्द्रियनके विषय सुख रहित अर सर्व कषायभाव ज्ञानभाव पांचों इन्द्रियनके विषय अवधि इत्यादि भाव नरकगति योग्य होंय। इत्यादि भाव जीवके नरकगति नामा नामकर्मके उदयतैं होय हैं। ए नरकगति भाव, वर्तमान तो

महादुखके कारण हैं अर आगाभी मनुष्य तिर्यंच दोय गतिके कारण हैं । इति नरकगति भाव वर्णनम् ॥

अथ देवगति भाव प्रारम्भः—देवगति नामा नामकर्मके उदयतैं जीव देवगति पावै है । तहां सर्व ही भाव देव कैसे होंय हैं । सर्व द्रव्य क्षेत्र-काल-भाव-सम्बन्धि रतिके कारण हैं तिन विषैं रतिभाव धरै हैं । तहां द्रव्य तो सप्त धातु रहित, समचतुरस्र संस्थान, आकारको धर्‍या, भलौ है वर्ण अर क्रांति जिनकी, प्रभा सहित, महासुगन्ध, भला स्पर्शके भेदकूं धर्‍यां, आनन्दको भर्‍यो, सुन्दर दैदीप्यमान सुभग मनोग्य जो शरीर, ताविषैं रतिभाव धरैं । बहुरि वस्त्राभरण शय्या आसन मन्दिर बन इत्यादि सर्व मनोग्य सामग्री तिन विषैं रतिभाव । बहुरि स्वर्गादि क्षेत्र वा द्वीप समुद्रादि रमण करने के क्षेत्र तिन विषैं रतिभाव, वा अपनी आयु प्रमाण सागरादि प्रमाण कूं धर्‍यां सुख रूप काल तिन विषैं रतिभाव, बहुरि द्वीप समुद्रादि विषै क्रीडा करना, हर्ष करना, मद करना, कामरत रहना, इत्यादि भावन विषैं रतिभाव । महासुन्दर भेषकूं धरैं । ऐसी देवांगना वा देव तिनका सम्बन्ध तिन विषैं रतिभाव । अवधिज्ञान सहित इन्द्रिय ज्ञानका है बडा विषय जिनकों, महाचातुर्यताकूं धरैं, योग्य मनोग्य स्थानक विषैं, अपरिछिन्न (प्रच्छन्न—गुप्त) है मैथुन संज्ञा जिनकें, किंचित् सी कदा कालमें है भयसंज्ञा जिनके, अर दिव्य परिग्रह अर पवित्र हैं सर्व वस्त्राभरणादि परिग्रह जिनके, विवेकी हेयोपादेय ज्ञान करि सहित है, तथा सम्यक गुण धारणैकों समर्थ हैं, निद्रा रोग इष्टवियोग अनिष्टसंयोग करि उत्पन्न भाव करि रहित हैं, शृंगार रसके भरै सर्व पांचों इन्द्रियनके सम्पूर्ण विषय सुखनके भोगनहारे हैं, शास्त्र पढनेकी, सुननेकी धारणै की है बडी शक्ति जिनके, बहुरि वचन बोलना, चालना शय्या आसन सारी क्रिया देवनकीसी होय, इत्यादि भाव जीवके देवगति सम्बन्धी देवगति नामकर्मके उदयतैं होंय हैं । ये देवगति भाव वर्तमान तो सुखके कारण हैं अर आगामी मनुष्य तिर्यंच दोय गतिके कारण हैं ।

ये चार गतिभाव, ते जिस जिस गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं सो दिखावैं हैं—मनुष्य गतिभाव, सर्व गुणस्थान विषैं पाइये है, अर मार्गणास्थान विषै गति तौ—मनुष्य विषैं १ जाति-पंचेन्द्रिय १ काय-त्रस १ योग-मन ४

वचन ४, औदारिक काय १ औदारिक मिश्र १ आहारक काय १ आहारक मिश्र १ कार्माण १ ऐसे तेरह योग, वेद ३ कषायसर्व २५ ज्ञानसर्व ८ संयमसर्व ७ दर्शनसर्व ४ लेश्यासर्व ६ भव्यत्व अभव्यत्व दोनो सम्यक्त्वसर्व ६ संज्ञी आहारक-अनाहारक दोनों इन मार्गणास्थानकन विषैं मनुष्यभाव वर्त्तै है। तिर्यंच गतिभावः गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक देश संयम पर्यंत, पांच विषैं, अर मार्गणास्थान विषैं **गति**–तिर्यंच १ **जाति**–सर्वपांचौ ५ **काय**-सर्व ६ **योग**-मनके ४ वचन ४ औदारिक २ (औदारिकाय–औदारिकमिश्र) कार्माण १ ऐसे ग्यारह ११, वेदसर्व ३, **कषायसर्व** २५, **ज्ञान**–कुज्ञान ३ सुज्ञान ३ (मति, श्रुति, अवधि) ऐसे ६, बहुरिसंयम २ असंयम, देशसंयम ए दोय, **दर्शन** चक्षु अचक्षु अवधि एवं ३, **लेश्यासर्व** ६ **भव्य** २ भव्य, अभव्य ये दोय **सम्यक्त्वसर्व** ६ **संज्ञी**–संज्ञी, असंज्ञी ए २ **आहार**–आहारक, अनाहारक ए दोय २ इन मार्गणा-स्थानकन विषैं तिर्यंचभाव प्रवर्तै है। अथ देवगतिभाव प्रारम्भः–गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक असंयत पर्यंत चार विषैं अर मार्गणा स्थानकन विषैं **गति**- देव १ **जाति**- पंचेन्द्रिय १ **काय**–त्रस १ **योग** मन ४ वचन ४ वैक्रियिक वैक्रियिकमिश्र २ और कार्माण १ ऐसे ग्यारह, **वेद**-पुरुष, स्त्री दोय **कषाय**–नपुंसक वेद बिना २४ **ज्ञान**–कुज्ञान ३ सुज्ञान ३ एवं ६ **संयम**-असंयम १ **दर्शन**–चक्षु अचक्षु अवधि एवं ३ **लेश्या**–सर्व ६ **भव्य**–भव्य, अभव्य दोय २ **सम्यक्त्व**–सैव ६ **संज्ञी**-संज्ञी १ **आहारक**–आहारक, अनाहारक दोनो, इन मार्गणास्थाकन विषैं देवगति प्रवर्तै है। अथ नरकगति प्रारम्भः—गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक असंयत पर्यंत ४ इन विषै, अर मार्गणास्थानकन विषैं **गति**–नरक १ **जाति**–पंचेन्द्रिय १ **काय**–त्रस १ **योग**–मन ४ वचन ४ वैक्रियिक २ कार्माण १ ऐसे ग्यारह ११ **वेद**–नपुंसक १ **कषाय**–दोय वेदविना २३ **ज्ञान**-कुज्ञान ३ सुज्ञान ३ ऐसे छह ६ **संयम**–असंयम १ **दर्शन**–चक्षु, अचक्षु, अवधि ऐ तीन **लेश्या**–कृष्ण, नील, कापोत ए तीन ३ **भव्य**–भव्य, अभव्य ऐ दोनों २ **सम्यक्त्व**–सर्व ६ **संज्ञी**–संज्ञी १ **आहारक**–आहारक, अनाहारक ऐ दोनों २ इन मार्गणास्थानकन विषैं नरकगतिभाव प्रवर्तै है।

—: इति औदायिकभाव विषे गतिभावाधिकार प्रथम समाप्त भया :—

आगैं मिथ्यात्वाधिकार कहिये है:—

दोहा—

दर्शनमोह विध्वंसकरि निजगत सम्यकभाव—
जये घातिया चारविधि नमूं मर्हत जिनराज (व)

दर्शनमोह कर्मके उदयतैं जीवके मिथ्यात्वभाव होय है, तातैं याकूं औदयिक मिथ्यात्वभाव कहिये है। विपरीताभिनिवेश सो मिथ्यातत्वभाव कहिये। विपरीताभिनिवेश कहिये अन्यथा अभिप्राय–अन्यत्वश्रद्धानुरूपभाव, "तस्य भावस्तत्वं" जाका जो भाव सोही ताका त्वत अर जाका जो भाव नाहीं अन्यथा भाव मानना सो अतत्वश्रद्धान कहिये। ताहीं तत्वतैं जीवादि पदार्थ अपने अपने जिस भावरूप तिष्ठैं हैं तिस ही भाव कहिये स्वरूप सहित जानना सो तत्वार्थश्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनभाव है अर जिस भावरूप नाहीं तिस भावरूप मानना सो अतत्वश्रद्धानरूप मिथ्यात्व होय है। सो मिथ्यात्वभाव दोय प्रकार है एक अगृहीत दूसरा गृहीत, तहां पर गुण परद्रव्य परपर्याय विषैं अहंकार ममकार बुद्धि वा दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायन विषैं द्रव्य बुद्धि अदृष्टिगोचर द्रव्य गुण पर्यायन विषैं अभावबुद्धि सो अगृहीत मिथ्यात्वभाव है। परद्रव्य जो शरीर पुद्गलपिंड ताविषैं जो अहंबुद्धि सो यह मैं हूं सो यह परद्रव्य विषैं अहंबुद्धि मिथ्यात्वभाव है। बहुरि जैसे पुद्गलके स्पर्शादि भाव तिन विषैं अहंबुद्धि—जो मैं हूं ताता मैं, शीरा (ठण्डा) मैं कोमल मैं, कर्कश मैं, साचिकण मैं, सूक्ष्म मैं, हलका मैं, भारया मैं, गोरा मैं, काला मैं, आरक्त मैं, हरित मैं, पीत मैं, सुगन्ध मैं, दुर्गंध मैं, मीठा मैं, खाटा मैं, कटुक मैं, कषायला मैं, चिरपिरा मैं, इत्यादि परगुणविषैं जो अहंबुद्धि सो मिथ्यात्वभाव है। बहुरि मै देव, मैं नारकी, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच अर इनके अनके

विशेष तिन विषैं अहंबुद्धि सो पर्यायविषैं अहंबुद्धि मिथ्यात्वभाव है । ऐसा परद्रव्यादि विषैं अहंभाव मिथ्यात्वरूप जानना । बहुरि यह मेराधन, यह मेरा मंदिर, ये मेरे आभूषण, ये मेरे वस्त्र, ये मेरे धान्यादिक पदार्थ इत्यादि वस्तुन विषैं ममकार सो परद्रव्यनविषै ममत्वबुद्धिरूप अगृहितमिथ्यात्वभाव है । शरीर का बलवीर्य एसा मानना यह मेरा बल ऐसा है अनेकपराक्रमकरूं यह मेरा शब्द, यह मेरी चाल, यह अनेक कार्यनविषैं मेरी प्रवृत्ति इत्यादि परगुणविषैं ममबुद्धि रूप अगृहीतमिथ्यात्वभाव है । बहुरि ये मेरे पुत्र, ये मेरी स्त्री, ये मेरी माता, ये मेरा पिता, ये मेरा भ्राता इत्यादि वा ये मेरे सामंत, ये मेरी सैन्या, ये मेरी रैय्यत, ये मेरे हाथी, ये मेरे घोड़े, रथपालकी गोधन इत्यादिवस्तनविषैं ममकारबुद्धि सो परपर्यायनविषैं ममकारबुद्धिरूप अगृहीत मिथ्यात्वभाव है । बहुरि दृष्टिविषै जेती घटपटादि पुद्गलकी पर्याय आवै हैं तिनकूं जुदा जुदा द्रव्य माने है। ये घट है, ये स्वर्ण है, ये पाषाण है, ये पर्वत है, ये वृक्ष है, ये मनुष्य है, ये हाथी है, ये घोड़ा है, ये काक है, ये चिड़िया है, ये स्याल है, ये सिंह है, ये सूर्य है, ये चन्द्रमा है, इत्यादि पर्यायन विषैं द्रव्यबुध्दि धारैं हैं तिनका सत्वमानैं है अर जे दृष्टिगोचर नाहीं एसी जे दूरक्षेत्रवर्ती वा होयकर विनसि गई वा अनागतकालविषै होयगीं वा इन्द्रियनते अगोचर सूक्ष्मपर्याय इत्यादि जे अपनी अर परकी तिनकों अभावरूप माने हैं, इनका सत्त्व हुवा वा होगया वा वर्तमानविषैं है नाहीं माने है। इत्यादिभाव तो अगृहीतमिथ्यात्व रूप जानना । ये अगृहीतमिथ्यात्व तो जीव के अनादिभाव हैं, अर परभाव योग्य सर्वपर्याय सदाकाल सर्वक्षेत्र मे जीवके प्रवर्तें हैं। कोई करि कदाचित् उपदेशित नाहीं तातैं नैसार्गिक कहिये ।

आगे गृहीतमिथ्यात्व का स्वरूप कहिये है ।

मिथ्यात्वस्वरूपकों धरया ऐसा यह घोर संसारी जीवकों सर्वथा अहितका कारण ताविषैं जीवका हित जो मोक्ष (मोक्ष कहिये सर्वकर्मनका अभाव कहिये संसार सूं छूट जाना) ताके कारणभूत छह पदार्थ हैं देव १ गुरु २ धर्म ३ आप्त ४ आगम ५ पदार्थ ६ येमें ये मोक्षमार्गके कारण छह तत्व है ।

अब इनका स्वरूप कथन करिये हैं—" निर्दोषो देवः " सम्पूर्णसमस्त दोषनकरि रहित जो जीव होय सो देव कहिये । दोष अज्ञान अर कषाय तैं होयहैं, तहाँ कर्मके आवरण सहित जो ज्ञान सो अज्ञान कहिये, अर राग, द्वेष भाव सो कषाय कहिये, जातैं जो अज्ञानी कषायी जीव स्वपरके हित कूं नाहीं कर सकैं तब पूज्य पद विषैं कैसे स्थापित होय जातैं जग-जीव पूजै हैं सो अपने हितके वास्ते पूजे हैं, जिस जीवसौं हित नाहीं होय सकै तिसकूं काहेकूं पूजैं। जातैं जे हितके कारण नाहीं, ते पूज्य भी नाहीं, पूज्य नाहीं ते देवभी नाहीं । तातैं जे समस्त ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्मके नाशहोतैं प्रगट भया है । अनंतज्ञान १ अनंतदर्शन १ अरु समस्त दर्शन चारित्रमोहके अभाव होतें मिटगये हैं मिथ्यात्व अरु कषायभाव ताकरि उत्पन्नभया है अपना सहज स्वभाव अनंतसुख १ अरु अंतराय कर्मके अभाव होतें प्रगट भया है अनंतवीर्य १ ऐसे अनंत चतुष्टय के धारक परमदेव हैं । जातैं अपने हितकी तौ भईहै सिद्धि जिनके अरु पर जीवन के हित करने विषैं परम शक्ति को धारैं हैं, तातैं पूज्य पद विषैं तिष्ठै हैं, तातैं देव हैं । बहुरि जे सर्वकर्म का अभावकरि परद्रव्य तें सर्वथा छूटि लोक के शिखरतिष्ठैं, सर्वप्रकार भई है अपने स्वस्वरूप की सिद्धि जिनकैं, सम्यक्त्वादि अष्टगुण युक्त ऐसे परमदेव सिद्ध भगवान ते देव हैं, पूज्य हैं, जिनके स्वरूप चिंतनमात्रतैं ही सुखकी प्राप्ति होय है । ऐसा परमदेव का स्वरूप है ।

अब गुरु का स्वरूप कहियेः—गुरु नाम बड़े का है, जे अहित तैं बचाय जीवन कों हित विषैं प्रवर्त्तावने के कारण तातैं बड़े कहिये सो ही गुरु, ते गुरु दोय प्रकार हैं—एक धर्मगुरु १ दूजै उपकारी गुरु २ जे अठाईस मूलगुण संयुक्त, बाह्याभ्यन्तर परिग्रह के त्यागी, नग्नमुद्रा के धारक, शुद्ध रत्नत्रय रूप है प्रवृति जिनकी, परम दशलाक्षणीक धर्मरूप है मूर्ति जिनकी, बाह्याभ्यन्तर द्वादश प्रकार तप विषैं आरूढ़ परम दिगम्बर ते धर्मगुरु जानने । अब उपकारी गुरु दोय प्रकार हैं:—एक धर्मउपकारी गुरु अरु दूजा लौकिक उपकारी गुरु । तहां धर्मउपकारी गुरु तीन प्रकार हैं—दीक्षागुरु १ शिक्षागुरु २ विद्यागुरु ३ । अणुव्रत तथा महाव्रत के आचरावण हारे (आचरण करानेवाले) ग्रहण करावनहारे ऐसे जे चतुर्विध संघ में बड़े महामुनि ते दीक्षागुरु कहिये । जिन प्रणीत मार्गके उपदेश देनेहारे ते शिक्षागुरु अरु जिनप्रणीत-

शास्त्र के पढ़ावनहारे ते विद्यागुरु ।

अब लौकिकगुरु पंच प्रकार कहिये है—कुलगुरु—माता, पिता, पितामह, दादी, बड़ाभ्राता, भातृवधू, काका, काकी, बड़ीभगनी, भर्तार, नाना, नानी, मामा, मामी, पिताभगनी, फूफा, माताभगनी, मौसा इत्यादि कुलगुरु हैं १ । जिस बस्ती में रहे तिसका स्वामी राजादिक ते रक्षागुरु हैं २ । अरु लौकिक विद्याका सिखावन हारा जाकरि जीविका होय ऐसी शस्त्र-विद्या वा शास्त्रविद्या वा अनेक प्रकारकी सब, ते विद्यागुरु ३, आजाविकाका दैनहारा ते आजीविका गुरु ४ लौकिक भली शिक्षाका देनहारा ते शिक्षागुरु ५ । ये कहे जे गुरु तिनकूं यथायोग्य पूजना, विनय करना, नमस्कारादिकरना । इन बिना औरकूं गुरुमानिविनय करना सो मिथ्यात्वभाव है अरु लौकिक प्रयोजनजानि किसीका यथायोग्य विनय करना सो मिथ्यात्व नाहीं । तहां धर्मगुरु की अष्ट द्रव्य करि पूजा करनी, हाथ जोड़ि अष्टांग नमस्कार करना वा पंचाग नमस्कार करना, महाभक्तिपूर्वक चार प्रकार दान देना, सर्वोपरि सत्कार करना, विनय करना, बहुरि लौकिक गुरु की यथायोग्य भेंट करनी. विनय पूर्वक हाथजोड़ वा मस्तक पर हाथ धरि पंचांग नमस्कार करना, पाछे हाथजोड़ि सत्कार करना यथायोग्य विनय करना । इति गुरुतत्व ।

अथ धर्म तत्व प्रारम्भः—धर्म दोय प्रकार है—एक निश्चयधर्म १ दूजा व्यवहारधर्म २ तहां निश्चयधर्म तो वस्तुका स्वभाव है । तहां राग, द्वेष रहित अपना दृष्टा ज्ञाता स्वभाव ताविषै थिर होना निश्चयधर्म है । या ही का नाम चारित्र है । बहुरि व्यवहारधर्म दोय प्रकार है तिसही निश्चयधर्म का व्यवहार करिये तब धर्म के दोयभेद होय हैं—देश संयम १ सकल संयम । जहां एक देश मिथ्यात्व कषाय विषय अर पंचपापन रूप अंतरंग परिणामन का त्याग सो देशसंयम वा इस धर्म को बाह्य अणुव्रतादिक पांच गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत चार इन द्वादशव्रत को ग्रहण सो भी देशसंयम कहिये । जातैं यहां कारण विषै कार्य को उपचार करिये इनकौं संयम कहिये है १ । बहुरि जहां सर्वप्रकार बुद्धिपूर्वक मिथ्यात्व कषाय विषय अर पंचपापन का त्याग सों सकलसंयम है वा सकलसंयम के कारण बाह्य अट्ठाईस मूलगुण वा चौरासी लाख उत्तरगुण

८४००००० तिनका ग्रहण सो भी व्यवहार सकलसंयम है। इति धर्मतत्व।

आगै आप्त तत्व कहिये हैः—जीव का परमहित जो मोक्ष ताका उपदेष्टा सो आप्त कहिये। सो आप्त दोय प्रकार हैः— एक मूल आप्त दूजा उत्तर आप्त। प्रत्यक्षभूत भये हैं सकलपदार्थ जिनकों अर नाश कों प्राप्तभये हैं चार घातिया कर्म ताके नाश करि अनंत चतुष्टयकों प्राप्तभये हैं ऐसे श्री अरहन्त महाराज द्वादश सभा मध्ये तिष्ठ करि मोक्षमार्गका उपदेश करै हैं ते मूल आप्त हैं १। बहुरि तिनही के अनुसार कथन करनहारे ऐसे सम्यग्दर्शनादिकके धारक गणधरादिक ते सर्व उत्तर आप्त कहिये। बहुरि सम्यग्दर्शनादिकके धारक, जिनप्रणीत शास्त्रके ज्ञाता कषाय रहित वक्ता ऐसे गृहस्थ तैं सर्व उत्तर आप्त कहिये हैं २। अरु जे कुलिंग रूप मिथ्यादर्शनके धारक अर यथार्थ जिन प्रणीत शास्त्र के अर्थको कहैं हैं तौ पशाभी वे आप्त नाहीं तातैं उनके मुख थकी कह्या अर्थ प्रमाणनयादिक करि आम्नाय मिलाय सिद्ध करि ग्रहण करना। इति आप्ततत्व समाप्तः।

अव आगम तत्व कहिये है—आप्तका जो वचन सो आगम कहिये। सो आगम कैसा है? प्रमाणनयादिक करि अबाधित है, कोई प्रकार भी नाहीं संभवै है बाधा जिनकों ऐसा जिनागम है ताहीको आगम मानना, प्रमाण नयादिक करि बाधित होय सो आगम नाहीं। जातैं आगम केवलीका वचन है तातैं बाधित होय नाहीं। आगमविषैं तीन प्रकार पदार्थ कहे हैं—ज्ञेय १ हेय २ उपादेय ३। इन तीन प्रकार पदार्थनविषैं जेते प्रमाणगोचर होय तेते अर्थका प्रत्यक्ष प्रमाण करि सिद्ध करना अर जो अनुमान प्रमाण करि सिद्ध होय ताकूं अनुमान प्रमाणकरि सिद्ध करना। अर जो आगम प्रमाण करि ही सिद्ध होय ताकूं सुनि सुनिश्चित रांभव अबाधक प्रमाण करि सिद्ध करना तिनमें जो अबाधित होय सो जिनागम जानना और जो बाधित होय सो जिनागम न मानना। ऐसा न मानना कि जो ये प्राकृतमय हैं, संस्कृतमय है, या बड़े आचार्यके नाम करि वेष्ठित हैं ऐसी प्रतीति करि अर्थका श्रद्धान न करना जातैं अवार कलिकालके दोषकरि पाखंडी कषायी पंडितन करि शास्त्रनमें अन्यथा अर्थका मेल भया है तातैं जैन न्यायके शास्त्रनकी ऐसी

आज्ञा है कि आगमका सेवन युक्तिका अवलम्बन मान १ परम्परया २ गुरुका उपदेश ३ स्वानुभव ४ इन चार विशेषन का आश्रय करि अर्थकी सिध्दि करि ग्रहण करना अन्यथा अर्थका ग्रहणमयें जीवका अकल्याण होय है। इति आगमतत्व समाप्तः।

अथ पदार्थतत्व प्रारम्भः—पद का अर्थ कहिये प्रयोजन ताकूं पदार्थ कहिये सो पदार्थ नव प्रकार हैः—जीव १ अजीव २ आश्रव ३ बंध ४ संवर ५ निर्जरा ६ मोक्ष ७ पुन्य ८ पाप ९ इनका स्वरूप जिनागम विषैं जैसा कह्या है तैसा ही स्वरूप सहित ग्रहण करना जातैं ये मोक्ष के कारण है। जिस स्वरूप करि तिष्ठै हैं तिस ही स्वरूप करि ग्रहण करना सो मोक्ष के कारण होंय है। अन्यथा स्वरूप करि ग्रहण किये ये ही संसारके कारण होंय हैं। तहां जीव पदार्थ दोय प्रकार है—एक तो मोक्षका कारण जीव दूसरे संसारी—मोक्षके कारण जीवपदार्थ नवप्रकार हैं अर्हन्त १ सिध्द २ आचार्य ३ उपाध्याय ४ साधु ५ मुनि ६ अर्जिका ७ श्रावक ८ श्राविका ९। इनतें भिन्न सर्व संसारी जीव पदार्थ जानना।

अथ अजीव तत्व पांच प्रकार कहिये है—पुद्गलद्रव्य १ धर्मद्रव्य २ अधर्मद्रव्य ३ कालद्रव्य ४ आकाशद्रव्य ५।

अथ आश्रवतत्व द्रव्यकर्म नोकर्म रूप परिणमनकों कारण ऐसी पुद्गलकर्मवर्गणा तिनके योगद्वार करि आगमन सो मूल आश्रव है। अर तिनके आगमनका कारण मन वचन काय योग हैं तातैं योगनकों भी आश्रव कहिये। बहुरि कर्मन विषैं स्थिति अनुभाग बंधका कारण ऐसी मिथ्यात्व अर कषाय अव्रत विशेषकूं धरैं राग द्वेषभाव तिनकूं भी आश्रव कहिये। तातैं मूल आश्रवके भेद १३ तथा ज्ञानावरणादिक आठ कर्माश्रव ८ औदारिक १ वैक्रियक २ आहारक ३ तैजस ४ कार्माण ५ ये पांच नोकर्माश्रव ५ बहुरि इनके कारण भाव सत्तावन आश्रव हैं—योग १५ कषाय २५ अव्रत १२ मिथ्यात्व ५ ऐसे सत्तावन।

बहुरि बंधतत्व (पदार्थ) च्यार प्रकार है—प्रकृतिबंध १ प्रदेशबंध २ स्थितिबंध ३ अनुभागबंध ४।

बहुरि संवर पदार्थ दोय प्रकार है—एक मूलसंवर सो ही भावसंवर कहिये दूजा उत्तरसंवर सो द्रव्यसंवर कहिये।

तहाँ मूलसंवर तीन प्रकार है—मिथ्यात्वसंवर १ कपायसंवर २ योगसंवर ३ ये तीन तौ मूलभेद हैं। इन्हींके उत्तर भेद ५७, मिथ्यात्वसंवरके भेद ५, अव्रतसंवर भेद १२, कपायसंवर भेद २५, योगसंवर भेद १५, ऐसे सत्तावन ऐ तौ भावसंवर कहिये इन भावनका संवर कहिये रोकना सो भावसंवर कहिये। बहुरि इनके संवर होतें ज्ञानावरणादिक पुद्गल कर्मनका आश्रवका अभाव होना रुकजाना सो द्रव्यसंवर है। जेता काल भावसंवर तेता काल द्रव्यसंवर जानना।

आगें निर्जरा पदार्थ दोय प्रकार है—एक मूलनिर्जरा ताहीकूं भावनिर्जरा कहिये १। दूजी उत्तरनिर्जरा सो द्रव्य-निर्जरा २। तहां मिथ्यात्व कषाय भावनके अनुभाग शक्ति समय समय क्षीण होय सो मूलनिर्जरा है १ अर ज्ञानावरणादिकका समय समय स्थिति अनुभाग क्षीणहोना—झड़ पड़ना—सो उत्तरनिर्जरा है २।

बहुरि मोक्षतत्व भी दोय प्रकार है— एक भावमोक्ष दूजा द्रव्यमोक्ष। तहां ज्ञानावरणादिक चार प्रकारके घातिया कर्मनको अभाव करि अनंत चतुष्टयकों प्राप्त होना सो भावमोक्ष है, बहुरि सर्व कर्मनका अभावकरि सर्व परद्रव्यन सों जुदा होना हो—सो द्रव्यमोक्ष है। तहां प्रशस्त कर्मनका उदय होतें संसारिक सुखसाताका प्रगट होना, सामग्रीका समागम होना सो पुण्यार्थ उदयरूप है वा मंद कपाय रूप भाव होना सो बंधरूप पुण्यतत्व है। ऐसे पुण्य पदार्थ दोय प्रकार है। अब पाप पदार्थ दोय प्रकार है। तहां अप्रशस्त कर्मनका उदय होतें संसार विषैं दुःख सामग्रीका भाव होय समागम होय, ताकरि जीव दुःखी होय, सो उदयरूप पाप पदार्थ है। बहुरि संक्लेशभावनकरि अनेक पाप करना सो बंधरूप पापतत्त्व है, ऐसा पाप पदार्थ जानना। इस प्रकार कहे नव पदार्थ तिनका यथार्थ स्वरूप ग्रहण करना। इति पदार्थतत्वं। ऐसें मोक्षके कारण ये छह तत्व हैं—देव १ गुरु २ धर्म ३ आप्त ४ आगम ५ पदार्थ ६, इनका यथार्थ स्वरूप सहित जैसाका तैसा श्रद्धान करना सो सम्यग्दर्शन १, इनका यथार्थ स्वरूप जानै सो सम्यग्ज्ञान २, इनके विषैं यथावत् प्रवृत्ति करनी सो सम्यक्चारित्र ३ सो ही त्रिधा स्वरूपकों धर्‍यां मोक्षमार्ग जानना। इन छह तत्वन विषै एककी भी हानि होय तो मोक्षमार्गकी हानि होय जाय। जो देवतत्त्व न होय तो धर्म कौनके आश्रय प्रवर्तें १ गुरुतत्त्व न होय तो धर्मको ग्रहण कौन

करावै २, धर्म ग्रहण न कीजै तो मोक्षकी सिद्धी कौनकरि कीजै ३, आप्तका ग्रहण न होय तो सत्यधर्मका उपदेश कौनदे ४, आगमका ग्रहण न होय तो, मोक्षमार्ग विषैं आलम्बन कौनको करै ५, पदार्थका ज्ञान न कीजिये तो आपका अर परका अपने भावनका अर परभावनका, हेयभावनका अर उपादेय भावनका, अहितका अर अपने परम हितका कैसे ठीक होय ६ तातैं इन छह तत्त्वनका मोक्षमार्ग विषैं अवश्य ग्रहण है। अर जहां दर्शनमोहका उदयकरि इनहीं छह प्रकार तत्त्वनकों अन्यथा ग्रहण करना सो गृहीत मिथ्यात्वभाव कहिये। सो गृहीतमिथ्यत्वभाव इन विषैं पंच प्रकार प्रवर्ते है। एकान्त १ विनय २ संशय ३ विपरीत ४ अज्ञान ५। तातैं गृहीत मिथ्यात्वभावका मूलभेद पंच प्रकार हैं। उत्तरभेद असंख्यात लोक-प्रमाण हैं। प्रथम एक मिथ्यात्व कहिये है—तहां अनेक विशेषनकों धरैं इन छह तत्वनविषें कोईयक विशेषकों आश्रयले कोई तत्वकों धारना सेवना, सर्व विशेषनसहित सर्वकों न सेवना सो एकांतमिथ्यात्वभाव है। जैसें सर्वसिद्धिकी कारणता देव-हीमें जाननी वा अन्य पंचतत्त्वनहीको जानना वा गुरुहीकों जानना वा धर्म हीकों जानना वा आप्तहीकों जानना वा आगम ही कों जानना वा पदार्थन के ज्ञानही करनेकों जानना वा इनविषैं कोई दोयहीकों तीनहीकों वा चारहीकों वा पांचहीकों जानना सो एकांतमिथ्यात्व है। तातैं छहौंका ग्रहण भये ही सर्वसिद्धि है। बहुरि अनेकविशेषणविषैं देवकों कोईइक विशेषण के आश्रय सेवना ये महंत हैं, ये सर्वके ईश्वर हैं, ये केवलज्ञानी हैं, ये सर्वकरि पूज्य हैं, समवसरण लक्ष्मीके स्वामी है, स्वर्ग-मोक्षके दाता हैं, इनके पूंजें लक्ष्मी वा पुत्रकलत्रादि अनेक इष्टवस्तु मिलै हैं, उत्पन्न होंय है, रोगादिक अनेक राजादिकां कर उपजत विघ्न अर अनेकप्रकार ईतिभीतिका नाश होय है लोक—परलोकविषैं एही सहाय होंय इत्यादि विशेषन में कोइ एक विशेषका आश्रय ले करि सेवैं हैं इत्यादिभाव सो देवाश्रय एकांतमिथ्यात्व है ताविषैं श्री रिषभदेवजीने ही वा चंद्रप्रभजीने ही वा शांतिनाथजीने ही वा नेमिनाथजीने ही वा पार्श्वनाथजीने ही वा महावीरजीने ही अधिक मानना। बहुरि केइ ढूंढ्या-दिक मतवाले भावदेवकों ही मानें हैं स्थापनादिक देवकों न मानें है स्वेताम्बरादिक गर्भ जन्म राज्य तप विषैं ही तिष्ठता एसे देव ही कों मानें हैं, द्रव्यदेवही की स्थापना करें है, बहुरि केइ स्थापनादेव कहिये प्रतिमाकूं ही देवमानें हैं इहॉ का षोट (?)

लीयें केइ परीक्षादेवकूं जानें ही नाहीं अर केइ नामदेव ही कों मानें हैं जातें नामही जपना और कछुज्ञान नाहीं। बहुरि गुरु ही का सेवन करना गुरुका दिया अणुव्रतमहाव्रत तिनकूं गुरुकी आज्ञाप्रमाण पालना गुरु ही कूं अपनी सर्वसिद्धि का कारण मानना सांसारीक प्रयोजन का कारण भी गुरु ही कूं मानना अन्य पंचतत्त्वनकों गौण करना बहुरि इसभव परभव सम्बन्धी जो अनेक प्रकार सांसारिक प्रयोजन तिनविषैं कोई एक प्रयोजन के आश्रय गुरुकूं सेवना इत्यादि गुरुआश्रय मिथ्यात्वभाव जानना। बहुरि अनेक प्रकार जे पूजा, दान, शील, तप, संयम, अणुव्रत, महाव्रत वा व्यवहार सम्यक्त्व इत्यादि स्वरूप जो व्यवहारधर्म वा जीवादिक सप्त तत्वन का स्वरूप जानना मात्र वा आत्मा का स्वरूप जानना मात्र निश्चयधर्म ऐसा निश्चय व्यवहार रूप सामान्यधर्म ताही सों अपनी इहभव परभव सम्बन्धी वा मोक्षमार्ग सम्बन्धी सर्वसिद्धी मानै हैं अन्य पंच तत्वनकों गौण मानै हैं। अथवा व्यवहाराभ्यासी निश्चयकौं आलम्बन छोड़ि व्यवहारधर्म ही तैं सिद्धि मानै हैं वा व्यवहारधर्म विषैं भी पूजा ही तैं, वा पूजा देखने ही तैं, वा दान ही तैं, ताविषैं आहार ही तैं, वा औषधि दान ही तैं, वा शास्त्रदान ही तैं, वा अभय-दानादि ही तैं, वा शील ही तैं, वा व्रत ही तैं, वा तिनविषैं दया ही तैं, वा सत्य ही तैं, वा चोरीके त्याग ही तै, वा ब्रह्मचर्य ही तैं, वा परिग्रहके प्रमाण करने ही तैं, वा परिग्रहका त्याग करने ही तै, वा तप करने ही तै, वा तपविषैं भी उपवास करने ही तैं, वा अल्पाहार लेने ही तैं, नित्य नियमरूप त्यजन ग्रहणादि रूपव्रत परिसंख्या ही तैं, वा रस छोड़ने ही तैं, वा सर्व संग वस्ती आदि कूं छोड़ि निर्जन वनादि एकान्त स्थानक विषैं शय्यासन करने ही तैं, वा शीत, उष्ण, क्षुधा तृषादिके सहन ही तैं, वा अनेक दृढ़ आसनादिकके करने ही तैं इत्यादि काय क्लेशादि करने ही तैं वा संयम पालनेहीं तैं, ताविषैं भी इन्द्रियनका विषय छोड़ने ही तैं, मनका जो विकल्प क्रोधादिक कषाय मंद पड़ने ही तैं, वा क्रोध मन्द पाड़ने ही तैं, वा मान मन्द पाड़ने ही तैं, वा सरल भाव करने ही तैं, वा लोभ मन्द पाड़ने ही तैं, इत्यादि कषायन के विशेष घटावने ही तैं, वा थावर की दया पालनें ही तैं, वा तिनविषैं त्रसकी दया पालने ही तैं,

वा थावरकी दया पालनें ही तैं, वा आणुव्रत के धारणें ही तैं, वा शास्त्रके पढ़ने ही तैं, वा स्वाध्याय करने ही तैं, तिनविषैं भी शास्त्र बांचने ही तैं, वा उपदेश देने ही तैं, स्तवनादि करने ही तैं, दर्शन करने ही तैं, वा वादित्रादि बजावने ही तैं, वा नृत्यगानादि करने ही तैं, चैत्यालयादि बनावनें ही तैं, प्रतिष्ठादि करने ही तैं, तीर्थयात्रादि करने ही तैं, वा अनेक अंगनमें धन खरचने ही तैं, वा व्यवहारसम्यक्त्वधारने ही तैं, तिनविषैंभी कुदेवादिक न पूजने वा न मानने तैं वा सप्तव्यसनादि--कनके त्याग करने ही तैं वा अभक्ष्यके छोड़ने ही तैं, हरितवस्तुके न खाने ही तैं, रात्रिविषैं अन्नपानादि छोड़ने हि तैं, क्रिया सहित शुद्ध भोजन खानेही तैं, जलस्नानादि करि शरीर वस्त्रादि शुद्ध राखने ही तैं, इत्यादि व्यवहाधर्म के अनेक अंगनमें कोई एक दोय आदि धर्म अंगनका ग्रहण करि वा अंगनके भी कोई एक दोय विशेषनका ग्रहण करि संतुष्ट ही है आपकूं धर्मात्मा मानै हैं सो व्यवहाराभ्यासी एकन्तमिथ्यात्व सहित जानना।

बहुरि निश्चयाभ्यासी व्यवहार धर्मको हेय मानि निश्चयधर्मकी सर्वथा पक्ष करि निश्चयधर्म ही तैं सर्वथा सिद्धि मानै हैं ताविषैं भी जीवादि सप्त तत्वनका नाममात्र जानने ही तैं वा सप्ततत्वनकों लक्षण संहित जानने ही तैं, जो मैं तो चैतन्य स्वरूप आत्मा हूं अर ये जड़ादिक स्वरूप सर्व मों तैं भिन्न हैं, वा आत्मस्वरूप जानने ही तैं मैं चैतन्यस्वरूप हूं, वा जीवादि तत्वनकी वा आत्मपरकी वा आत्म--चर्चा करने ही तैं, वा पैलाकूं समझावने ही तैं, वा सुनने ही तैं, वा मनमें विचारने ही तैं, वा मनकरि ध्यावने ही तैं, वा अपने अनेकप्रकारके आसनादि मांडने ही तैं, वा मौन साधने ही तैं, वा प्राणायामादि करने ही तैं, इत्यादिकनतैं सिद्धि मानै हैं, ते निश्चयाभ्यासी एकन्त मिथ्यात्व सहित जानने। तातैं सर्व ही व्यवहारधर्मके अंग हैं वा निश्चयधर्मकूं जानना श्रद्धानकरना, वा जिस व्यवहारधर्मकी प्रवृत्तिका कारण द्रव्य--क्षेत्र--काल--भाव आपके मिलैं तिस रूप प्रवर्त्तना। व्यवहारधर्मको कारण मानना, कार्य--रूप निश्चयधर्म ताकैं पुष्ट करना; दोनोंकी सापेक्षता न छोड़नी, ऐसा सम्यक् भावका स्वरूप है। ऐसा सम्यक्त्वभाव छोड़ि मिथ्यात्वके उदयतैं धर्मके कोई एक अंग--कूं सर्वथा धर्मका स्वरूप जानि ताकैं सर्वथा ग्रहण करि सिद्धि मानना सो धर्माश्रय एकान्तमिथ्यात्वभाव है ३, बहुरि आप्तहीकों

मुख्य मानना आप्तकरि ही सर्वसिद्धि मानना, अन्य पंच तत्तनकों गौण मानना आप्त कहिये धर्मका वक्ता सोही सर्वसिद्धिका कर्ता है, सोही ईश्वर है, जातैं हित, अहित, हेय, उपादेय वक्ता हीके प्रसादसौं जानिये सोही जानना, जा जीवका कल्याण है ताविषैंभी मूलआप्तहीकों आप्त मानना, गणधरहीकों आप्त मानना, मुनि हीकूं आप्त मानना। गृस्थीनमें बहुतपढ़ा हीकों आप्त मानना, वा तपचारित्रके धारक हीको आप्त मानना, वा संस्कृत प्राकृत शब्द कर ललितबचनथकी शास्त्रका कथन करनहारे कूं ही आप्त मानना, वा अपने कुलका नेता पति होय वा अपने कुलके मानते आयेहोंय ऐसी परिपाटीके सत्य वक्ता अधिक धीमान् पुण्यवान होय, ऐसा वक्ता इत्यादि विषैं कोईएक कूं ही वा दोय कूं ही मुख्य मानना और कूं गौण मानना जिनकों मुख्य वक्ता मानना ताही कनै कथा सुनना वा सुननेकी अभिलाषा राखनी, औरकनै न सुनना, सुनना तौ गौणपने तैं सुनना, तिनके निकट वा परोक्ष अपने अभिप्रेत वक्ताकी प्रशंसा करनी, औरनकी प्रशंसा न करनी, जो करनी तौ गौणपणे करनी इत्यादि आप्ताश्रय एकांत मिथ्यात्वभाव है ४, तातैं अन्य पंच तत्त्वन सहित वक्ता कौंभी मानना वा सर्वही जिन प्रणीत सत्य अर्थके वक्ता कषाय स्रावन करि रहित याके कल्याणके कारण हैं। तिस ही अपेक्षा सर्व वक्ता समान मानना, मुख्य गौण वक्ता न मानना, उपदेश सुननेमें तिन वक्तानमें महन्त होय तिन पासि सुनना वा गौणपासभी सुनना, ए सम्यकभाव है इति। बहुरि आगमहीकों मुख्य मानना अन्य पंच तत्वनकों गौण मानना तिनविषैं भी प्रथमानुयोग हीकों वा करणानुयोग हीकों वा चरणानुयोग हीकों वा द्रव्यानुयोग हीकों मुख्य मानना औरकों गौण मानना वा तिनविषैं भी एक एक अनुयोगके अनेक शास्त्र हैं तिनविषैं भी कोईकों मुख्य मानना औरकों गौणमानना इत्यादि आगमाश्रय एकान्त मिथ्यात्वभाव है। सर्व ही शास्त्र सामान्य आगमके अंग हैं, अर सामान्य आगम याके कल्याणका कारण होय है। आगमके एक दोय आदि देश ही कल्याणके कारण नाहीं, तातैं सर्व ही आगम पढ़ना, सुनना, धारणा ए सम्यक्भाव है ५। बहुरि जीवादि नव पदार्थ के ज्ञानहीकों मुख्य जानना, अन्य पंचतत्त्वनकों गौण मानना, तिनविषैं भी जीवहीकों मानना वा अजीवहीकों मानना वा आस्रवहीकों मानना, वा बंधहीको मानना, वा संवरहीको मानना, वा निर्जरा हीको मानना, वा मोक्षहीकों मानना, वा

पुण्यहीकों मानना, वा पापहीकों मानना, वा इन पदार्थनकों अस्तिरूपही मानना, वा नास्तिरूपही मानना, वा नित्यही मानना, वा अनित्यही मानना, वा एकरूपही मानना, वा अनेकरूपही मानना, वा भेदरूपही मानना, वा अभेदरूपही मानना वा कर्त्ताही मानना, वा अकर्ताही मानना, वा भोक्ताही मानना, वा अभोक्ताही मानना, वा ज्ञाताही मानना, वा अज्ञाताही मानना, वा गुणसहितही मानना, वा निर्गुणही मानना, इत्यादि सर्वथा भावरूपही मानना। नवपदार्थन विषैं जीव आदि एक हीकों वा दोय हीकों वा तीन आदि अष्ट पर्यन्त जानना, नव न मानना, वा अनेक विशेषणन सहित वा अनेक धर्म-कों धारैं ए नव पदार्थ तिन विषैं कोई धर्म सहित सर्वथा मानना, सो पदार्थाश्रय एकांत मिथ्यात्व भाव जानना।

अब विनय मिथ्यात्वभाव दिखाइये है।

जहाँ योग्य अयोग्यका विचार रहित देव गुरु धर्मादिकका विनय करि ही सिद्धि मानना और सर्वही धर्मनके अंगनकों गौण मानना, मनकरि बचनकरि कायकरि वा दानकरि पूजा करि विनय हीमें संतुष्ट होना, आपकों कृतार्थ मानना, सो विनयमिथ्यात्वभाव जानना। यद्यपि विनय, धर्मका बड़ा अंग है, तथापि और धर्म को गौण करि याहीतें सिद्धि मानना सो विनयमिथ्यात्वभाव है।

आगें संशय मिथ्यात्वभाव लिखिये--देव विषैं संशय धरै हैं जिनमत विषैं देवका स्वरूप सर्वज्ञ सर्वदर्शी सर्व आवरण रहित सर्व मोहभाव सर्व कषायभाव तिनकरि रहित ज्ञाता द्रष्टा अपने स्वभाव सुखका भोक्ता आनंदरूप नित्य कहिये सर्वदाकाल अंतररहित इत्यादि विशेषणन सहित कह्या अर अन्यमत विषैं देवका स्वरूप नाना प्रकार करि और भांति कहैं हैं—केईएक ऐसा स्वरूप कहैं हैं जो एक ब्रह्म है और कोई दूसरा पदार्थ नाहीं, ये नाना-प्रकार पदार्थ भासैं हैं सोही भ्रान्ति करि भासैं हैं। कोई कहैं हैं कि इन नाना प्रकार पदार्थन रूप आप ब्रह्मही परिणयो है। कोई कहैं हैं कि सृष्टि

न्यारी है, ईश्वर न्यारा है, यह सृष्टि ईश्वरकरि रची है। कोई कहैं हैं कि ईश्वर परब्रह्म परमात्मा सर्वका द्रष्टा ज्ञाता अनादि है, ए सर्व ही संसारी जीव जैसा २ कृत्य करैं हैं, ताकै अनुसार स्वर्गनरकादि विषैं सुख–दुःख देय है। कोई कहैं हैं कि जीवका कछुभी कर्तृत्व नाहीं, जो कुछ भली बुरी प्रवृत्ति करावै है सो ईश्वरही करावै है, स्वर्गनरकादि विषैं ईश्वरही धरे है, ईश्वरकी इच्छा विना वृक्षका पात भी नाहीं हिल सकै है, तातैं सर्व सृष्टिका कर्ता तथा शुभाशुभ प्रवृत्तिका कर्ता ईश्वर ही है। केई अकर्ता मानैं हैं, अर केई ईश्वरकूं काम क्रोधादि प्रवृत्तिसहित मानै हैं। सांसारिक सुखका भोक्ता मानैं हैं। अर केई कहैं हैं कि संसारी जीवन कूं ईश्वरही शुभाशुभरूप प्रवर्ताय ताहीके अनुसार सुख-दुःख देय है, तातैं संसारी जीवही संसारी सुख दुःखके भोक्ता हैं, आप ईश्वर अभोक्ता है इत्यादि नाना प्रकार ईश्वर स्वरूप रचि नानाप्रकार प्रवृत्ति देखिये है, नानाप्रकार शास्त्र देखिये है। बहुरि श्वेताम्बरादि मतविषैं केवलीके कवलाहार मानैं हैं वा एकादशपरीसह मानैं हैं। बहुरि स्त्रीकों देवपदविषैं स्थापै हैं, देवकी स्थापना नानाप्रकार कुंडल, कटक, मेखलादि आभरणसहित स्थापैं हैं। इत्यादि जिनमत सों विपरीतप्रवृत्ति देखिये है तिनके अनेक शास्त्ररचना है कई अनीश्वरवादी हैं, ईश्वरको मान्ते ही नहीं, तिनकी नानाप्रकार प्रवृत्ति अर नानाप्रकार शास्त्र देखिये है। बहुरि नास्तिकवादी सर्वप्रकार "नास्ति" स्थापे है नकोई ईश्वर, नकोई जीव, नबंध, नमोक्ष, नपुण्य, नपाप, नस्वर्ग, ननर्क, नपरलोक, किछूभी नाहीं, तिनकी नानाप्रकार प्रवृत्ति देखिये है, नानाप्रकार शास्त्ररचना देखिये है, इत्यादि नानाप्रकार मतविषैं नानाप्रकार देवका रूप कह्या है। अर कोई मतवादी देवकूं स्थापैंही नहीं हैं सो जिनमतविषैं कहा जो देवका स्वरूप तैसा है कि अन्यमतकरि कह्या तैसा है ? किछु निश्चयपड़ता नहीं, ऐसैं निर्णयकी बुद्धिरहित जो भाव सो देवाश्रयसंशय मिथ्यात्वभाव है।

बहुरि जिनमतविषैं गुरुका स्वरूप बाह्याभ्यन्तर परिग्रहरहित परमदिगम्बर नग्नमुद्रा सहित वा सर्वकाम क्रोधादिभाव रहित कह्याहै, अरु अन्यमतविषैं वा श्वेताम्बरादि मतविषैं वा जिनमतविषैं ही नानाप्रकार भेषकों धरैं बहुतहै, परिग्रहका संग्रह जिनके अर काम क्रोधादि सहित गुरु देखिये, सो कैसे हैं ? अरु जिनमतविषैं कहा जो गुरुका स्वरूप

सो अबार दृष्टिगोचर आवता नहीं रो केछु निश्चय होता नाहीं ऐसी गुरुके निर्णयकी बुद्धि रहित भाव सो गुर्वाश्रय (गुरु+आश्रय) संशयरूप मिथ्यात्वभाव जानना।

बहुरि जिनमतविषैं तो धर्मका स्वरूप बाह्याभ्यन्तर हिंसा रहित कह्या है, बाह्य तो त्रस थावर सब जीवनकी दया अरु अभ्यन्तर सर्व धर्म प्रवृत्ति भाव विषैं रागादिक कषायनको अभाव ऐसा स्वरूप कह्या है। अर अन्यमत विषैं वा श्वेताम्बरमत विषै वा अबार दिगम्बर मत विषैं भी जो धर्म प्रवृत्ति देखिये है सो सर्व बाह्याभ्यंतर हिंसा सहित देखिये है, सो जैनशास्त्रन में लिखा है जैसे है सो अवारविषैं प्रवर्त्तै है तैसे हैं सो कछु भासता नाहीं, ऐसा भ्रम-रूप-भावसो धर्माश्रय संशय मिथ्यात्वभाव जानना।

बहुरि जिनमतविषैं तो मूल वक्ताका स्वरूप सर्वज्ञ वीतराग कह्या है, अरु उत्तर वक्ताका स्वरूप भी ज्ञान वैराग्य सहित कह्या, अरु अबार वर्त्तमान अन्यमत विषैं बड़े बड़े पंडित संस्कृत, प्राकृत, विद्याके धारक वा न्यायविद्याके धारक छंद अलंकारादि अनेक विद्याके पारगामी, बृहस्पतिके सदृश कथन करनहारे अपने ललित शब्दनकी गम्भीरतातैं सर्व सभा को मोहे हैं। अनेक सहस्र श्लोकनका कण्ठाग्र है ज्ञान जिनकों, तिनके निकट अनेक वादी विलखे होय मद छांड़ि तिष्ठैं बड़े अवाधिवान् तिनकौं बड़े बड़े राजादिक मानैं, बड़ी संपदाके धनी अनेक वस्त्राभूषण मण्डित ऐसे तौ वक्ता देखिये है, परन्तु ज्ञान वैराग्य सहित नाहीं, अनेक काम क्रोधादि सहित देखिये हैं। बहुरि श्वेतांबरमत विषैं वा दिगम्बरादि मतविषैं भी ऐसेही वक्ता देखिये हैं। ज्ञानी वैरागी तो कोउ दृष्टि पड़ता नाहीं सो जिनमतविषैं कहे ते ही आप्त हैं, अरु ये नाहीं, वा येही आप्त हैं अरु जिनमत विषैं कहे सो नाहीं ऐसा निश्चय हमारें तौ भया नाहीं ? ऐसे संदेहरूप आप्तविषैं भाव सो आप्ताश्रय संशय मिथ्यात्वभाव जानना ४।

बहुरि जिनमत विषैं तो आगमका स्वरूप ऐसा कह्याहै कि जो सर्व प्रमाण नयादिक करि अबाधित होय, अर सम्यक्सात वीतराग भावका पोषक दिखाईये है। मिथ्यात्व, कषाय, विषय, अव्रतभाव करि रहित होय, जिनागमविषैं तो ऐसा

अरु अन्यमत तथा श्वेतांबरादिकके जे शास्त्र हैं ते प्रमाणादिककरि अबाधित भी नाहीं, अरु सम्यक्ज्ञान तथा वीतराग भावके पोषक भी नाहीं, किन्तु मिथ्यात्व, विषय, कषायके ही पोषक हैं। परन्तु ते संस्कृत प्राकृत रचित हैं, गंभीर हैं शब्द जिनविषैं, अनेक सहस्रहैं श्लोक जिनविषैं, तिनके कर्ता बड़े बड़े आचार्य बतावैहैं, अनेक बड़े बड़े राजादिक मनुष्यनिकरि मानिये है। ऐसे शास्त्रनकौं असत्य कैसे मानिये ? तातैं हमारे निश्चय भया नाहीं कौनसा शास्त्र सत्यहै अरु कौनसा असत्य है ? ऐसा आगमविषैं संदेहरूप जो भाव सो आगमाश्रय संशय मिथ्यात्वभाव जानना ५।

बहुरि जिनमत विषैं नव तत्व कहे हैं, अरु अन्यमतविषैं कोई विषैं पच्चीस तत्व कहै हैं, अरु कोईविषैं सोलह तत्व कहे हैं, अरु कोईमत विषैं एकही तत्व कह्या, अर कोईविषैं चार आदि तत्व कहे। इत्यादि मतन विपैं नानाप्रकार रचना है, सो कौन मतके तत्व सत्य मानिये और कौन मतके कहे तत्व असत्य मानिये ऐसा हमारे ताईं तौ प्रतिभास्या नाहीं। अपने अपने मतनके शास्त्रनिविषैं अपने अपने तत्वनकौं अनेक सहस्र श्लोकनविषैं तत्वनकी प्ररूपणा करि अपने तत्वनकी सिद्धि करी है, तातैं हमारे संदेह प्रवर्त्तै, ऐसा जो पदार्थनविषैं संशयरूप भाव सो पदार्थाश्रय संशय मिथ्यात्वभाव जानना। इस प्रकार संशय मिथ्यात्वभावका कथन किया, सो संशय मिथ्यात्वभाव जानना। इति।

अब विपरीत मिथ्यात्वभाव प्ररूपिये है—

जहां तत्व तौ और स्वरूप तिष्ठै है अर ताकौं और स्वरूप जानना, और स्वरूप श्रद्धान करना, अन्यथा प्रवर्तना सो विपरीत मिथ्यात्वभाव जानना। यथार्थ देव कूं कुदेव जानना वा जिनविषैं देवका स्वरूप नाहीं तिनकौं देव मानना, तैसेंही श्रद्धान करना प्रवर्तना, ताहि अनुरार स्थापना करनी, स्वरूप रचना, सेवा करनी सो देवाश्रय विपरीत मिथ्यात्वभाव जानना १।

बहुरि यथार्थ गुरुकों कुगुरु जानना, जिनविषैं गुरुपना नाहीं तिनकों गुरु जानना, तैंसेही श्रद्धान करना, तैंसेही तिनसौं प्रवृत्ति करनी सो गुरु आश्रय विपरीतमिथ्यात्वभाव जानना २ ।

बहुरि सम्यग्ज्ञान वीतराग रूप धर्मका स्वरूप है, तिनकों तो कुधर्म जानना, अरु सम्यग्ज्ञान कहिये शास्त्रोक्त धर्म प्रवृत्ति अरु वीतरागता कहिये निः कपायभाव अर्थात् काम--क्रोध--लोभ आदि कोई भी कषाय धर्मविषैं न पोखने, ऐसा धर्म जीवके कल्याणके अर्थि हैं सो तौ न करना, कै तौ मिथ्या शास्त्रनकरि रचित धर्म ताविषैं प्रगटहैं हिंसादि पांच पाप अरु क्रोधादि कषाय, अरु पांचों इंद्रियनके विषयनका स्पर्श करना, कै मनोक्तक्रिया करना, कै पाखंडी गुरुनकरि कराये धर्म का सेवन करना, तिनविषैं नानाप्रकार विषय कषाय पोसना, हिंसादि पंच पाप पोषना, ऐसे धर्मकौ कल्याणके अर्थि जानना श्रद्धान करना, वा मनोक्त शास्त्रनसूं जैनमतविषैं प्रवृत्ति करनी, मनोक्त जैनाम्नाय रहित पूजा करनी, प्रतिष्ठा करनी, तीर्थयात्रा करनी, दान देना, तप करना, व्रत करना, संयम धारना, अनेक प्रकार यम नेम धारना, परिग्रहादिकका प्रमाण करना, अनेक प्रकार खोटा भेष धरना, झूंठा शास्त्र रचना, तथा सांचे शास्त्रविषैं झूंठे श्लोक काव्य बनाय अपने अभिप्रायकूं पोषने, धर दैना वा शास्त्रनका झूंठा अर्थ करना, कुपक्षका पक्षी होना, पद उलंघि धर्मप्रवृत्ति जो पूजा--दान--तप, व्रत संयमादिक अधिक हीन अङ्गीकार करना, अनेक प्रकार आखड़ी करनी इत्यादि प्रवृत्ति झूठी करनी, सो सबही धर्माश्रय विपरीत मिथ्यात्वभाव जानना ।

बहुरि जो सत्य समीचीन मोक्षमार्गके उपदेश देनहारे ऐसे वक्ता आप्त कहिये, तिनकूं तौ कुआप्त मानना, तिनका कह्या तो श्रद्धान न करना, अरु जे विपरीत मार्गके पोषक जैनधर्मसूं पराङ्मुख, मिथ्यात्व विषय कषाय अर पांच पापन सहित कुधर्मके पोषक शास्त्रके रचनहारे तिनको आप्त मानना तिनकरि कहे मार्गकूं प्रवर्तना सो आप्ताश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना ।

बहुरि जिनोक्त आगमकूं तौ कुआगम मानना बहुरि अनेकप्रकार संभवै है प्रमाण नयादिक की बाधा जिनकौं

विषय कषायके धारक मनुष्यकरि रचित अर मिथ्यात्व, विषय, कषाय, पंचपापन के पोषणरूप ही है प्रयोजन जिन विषैं, ऐसे कुशास्त्र तिनकौं शास्त्र मानना, सत्य अर्थको असत्य मानना, असत्य अर्थकौं सत्य मानना, झूंठे अर्थका पक्ष करना, अर सांचे अर्थकूं झूंठा ठहरावना, अरु झूंठे अर्थकूं सांचा ठहरावना, सम्प्रदायका विच्छेदन देखना इत्यादि आगमाश्रय विपरीत मिथ्यात्वभाव जानना।

बहुरि जिनोक्त जे षट्द्रव्य, जीवादि सप्त तत्व, नवपदार्थ, पंचास्तिकाय इत्यादिकन कूं तत्व न मानना, अरु अन्य मतनकरि कहे जे नानाप्रकार भेदनकौं धरैं, अरु नानाप्रकार स्वरूप सहित जे तत्व, तिनकूं स्वतत्व मानना, अरु जिनमतकरि कहे तत्वनकूं न मानना, तिनका स्वरूप अन्यथा धारना इत्यादि पदार्थाश्रय विपरीत मिथ्यात्वभाव जानना। ऐसें विपरीत मिथ्यात्वका स्वरूप जानना।



अथ अनध्यवसाय मिथ्यात्वभाव लिखिये है—

बहुरि जिनकों बहुतकाल होयगये हैं जैनशास्त्र सुणतां, तौपण भी नहीं भयाहैं हेयोपादेय, योग्य अयोग्य, यथार्थ अयथार्थका ज्ञान जिनको, देव कुदेव, गुरु कुगुरु, धर्म कुधर्म, वक्ता कुवक्ता, शास्त्र कुशास्त्र, तत्व कुतत्व सर्वही हैं समान जिनकैं, बहुरि जिनमत विषैं अन्य मंदिर, जिनप्रतिमा अन्य प्रतिमा, जिनलिङ्ग कुलिङ्ग, पूजा कुपूजा, दान कुदान, क्रिया अक्रिया कुक्रिया, तीर्थ कुतीर्थ, व्रत कुव्रत, तप कुतप, विनय अविनय, मिथ्याचार हीनाचार, अधिकाचार शिथिलाचार सदाचार, सर्व है समान जिनकैं अरु बराबर हैं यथार्थ अयथार्थ शास्त्र जिनकैं, अरु बराबर हैं श्वेताम्बर आम्नाय अरु दिगम्बर आम्नाय जिनकें, अरु अनेकप्रकार गुरु आम्नाय होतांभी अशुद्धही धारैहैं पाठ व तिनका अर्थ, अरु सत्यपाठ अरु सत्य अर्थ सोभी समान हैं, अर समान है यथार्थ अयथार्थ व्रत, तप, संयमादिक विषै प्रवृत्ति जिनकें, ऐसे

विवेकरहित धर्मविषैं प्रवृतिकरि जीवतैं अनध्यवसाय मिथ्यात्वभाव सहित जानने। इति अनध्यवसाय मिथ्यात्वभावः ५।

इनही प्रकार गृहीत मिथ्यात्वभावके पांच भेद संक्षेपताकरि कहै। सो इनही संक्षेप रूप भावकी दृष्टि करि सर्व मिथ्यात्वभावनकी उत्पत्तिका मूल कारण तौ दर्शनमोह है, तातैं भाव असंख्याते हैं, तिन प्रति दृष्टि धरते ही अनेक दृश्यमान होय हैं। ए मिथ्यात्वभाव नामा कर्म है, ताका उदय स्थानक असंख्यात लोकप्रमाण हैं। ताहीके अनुसार मिथ्यात्वभाव भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं। बहुरि दर्शनमोहके अनंत स्पर्धक हैं। स्पर्धक कहा सो कहिये है—रस देनेकी शक्तिके अविभाग प्रतिच्छेद कहिये अंश तिनकूं धरैं जे मिथ्यात्व कर्मरूप परणये पुद्गल परमाणु ते तौ वर्ग कहिये सो एक एक कर्मपरमाणु रूप वर्गविषैं शक्तिके अंश अनंतानंत हैं। बहुरि सम अविभाग प्रतिच्छेदनकूं धरैं ऐसे अनंतानंत वर्ग तिनका समूह वर्गणा है, सो सर्वतैं घाटि अविभाग प्रतिच्छेद धरैं वर्ग ते जघन्यवर्ग कहिये। अर जघन्यवर्गके समूहकों धरैं सो जघन्यवर्गणा कहिये। बहुरि जघन्यवर्गमें जो अविभाग प्रतिच्छेद पाइयेहै सो एक अविभाग प्रतिच्छेद बंधकूं धरैं वर्ग तिनके स्वरूप समूहका नाम अन्य अन्य वर्गणा है सो अनंतानंत वर्गणाके समूहका नाम स्पर्धक है। जघन्य वर्गणाके विषैं जेते अविभाग प्रतिच्छेदनकूं धर्‍यां वर्ग हैं, तिनसौं एक एक अविभाग प्रतिच्छेद बधता बधता धर्‍यां द्वितीयादि वर्गणा विषैं वर्ग हैं। ऐसेही जहां पर्यंत दूणां अविभाग प्रतिच्छेदकों धरैं जिस वर्गणा विषैं वर्ग होंय तिस वर्गणासौं दूसरा स्पर्धक कहिये। यह पहिली सर्व अनंती वर्गणा प्रथम स्पर्धककी जाननी। तैसेंही जघन्य वर्गणातैं तिगुणें अविभाग प्रतिच्छेदकूं धरैं वर्गणा हैं सो तीसरे स्पर्धककी जाननी। ऐसेही चौगुणा पचगुणा आदि अविभाग प्रतिच्छेदनकूं धरैं वर्गणा होंय सो चौथी पांचवीं आदि स्पर्धककी जाननी। प्रथम स्पर्धकका नाम जघन्य स्पर्धक है, जातैं जामे सर्व स्पर्धकनसो घाटि शक्तिके अंश हैं। ऐसेंही पूर्वस्पर्धकसौं उत्तरस्पर्धकमे शक्तिका अविभागप्रतिच्छेद अनंतानंत बंधते हैं। ऐसें दर्शन मोहके स्पर्धक जघन्य सों ले उत्कृष्ट पर्यन्त अनंत हैं। तिन अनंत स्पर्धकनकों अनंतका भाग दीजै जो प्रमाण आवै सो एक भाग जुदा काढ़ि अवशेष बहुभाग प्रमाण तो शैल रूप हैं, शैल नाम पाषाणका है, इन विषैं बहुत अंश

शक्तिका पाइये, तातैं रस देने विपैं बहुत कठोर हैं तातैं इनकों शैल साहश्य कहे। बहुरि जुदा राख्या जो एक अंनतवां-
भाग प्रमाण ताकौं फेर अनंतका भाग दीयें जो प्रमाण आवे सो एक भाग प्रमाण जुदा राखि बहुभाग प्रमाण स्पर्धक
अस्थि-रूप हैं। जातैं अस्थि नाम हाड़का है सो इन स्पर्धकन विपैं शक्तिके अविभाग प्रतिच्छेद शैल रूप स्पर्धकनसौं अनंतवें
भाग प्रमाण हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनको अस्थि-रूप कह्या। बहुरि जुदा राखा जो एक अनंतवां भाग, ताकौं
अनंतका भाग दीजै, तदि बहुभाग प्रमाण स्पर्धक दारुरूप है, दारु कहिये काष्ट, सो इन स्पर्धकनविपैं शक्तिके अंश
अस्थिरूप स्पर्धकनसो अनतवे भाग हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनकों दारुसमान कह्या। बहुरि अवशेष रह्या एक
भाग तिस प्रमाण अनंत स्पर्धक लतारूप है। लता नाम बेलिका है। इन विपैं काष्टरूप स्पर्धकनसौं शक्तिके अविभाग
प्रतिच्छेद अनंतवें भाग हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनकों लतासमान कहिये। ऐसे सर्व अनंत स्पर्धक चार प्रकार हैं—
शैलरूप १, अस्थिरूप २, दारुरूप ३, लतारूप ४। तहाँ सर्व तौ शैलरूप अरु सर्व अस्थिरूप अरु दारुरूप स्पर्धकनका
अनंत भागनविपैं एक भाग विना बहुभाग तौ मिथ्यात्वरूप हैं, मिथ्यात्वभाव उपजावनेंको कारण है। बहुरि दारूभागका
एक भागका अनंतभाग कीजै तहाँ बहुभाग सम्यङ्मिथ्यात्वरूप हैं सो मिश्रभाव उपजावनेका कारण है। तहां सम्यक्त्व
और मिथ्यात्व दोनों लारहीं मिलि एक मिश्रभाव होय हैं। बहुरि दारुको एक भाग अरु लताभागका सर्व स्पर्धक सम्यक्
प्रकृति मिथ्यात्व भावरूप हैं, ते देशघाती हैं। ते जीवकौ सम्यक्त्व भाव मूल सौं तो न घातसके, तिसविपैं चल, मल,
अगाढ़ादि दोप उपजावो करैं। ऐसे मिथ्यात्व तीन प्रकार है। जिन जीवनकैं शैलरूप, अस्थिरूप अरु दारुभागके अनंतभाग
विपैं एक भागके बिना बहुभाग मिथ्यात्वरूप है तिनके अनंतभाग विपैं एकभाग विना बहुभाग स्पर्धकनका उदय होय ते
जीव तौ धर्म, कुधर्म विपैं समझेही नाहीं, धर्म कहिये सम्यक् धर्म अरु कुधर्म कहिये मिथ्याधर्म, तिनके समझने योग्य ही
नाहीं ऐसे एकेन्द्रिय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय असैनी पंचेंद्रिय। अनंते जीव किंचिदून संसारी राशिप्रमाण, अर समझने
योग्य संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव असंख्याते जीव तिनविपैं असंख्यातभाग विपैं एकभाग विना बहुभाग प्रमाण ते रामझने विपैं

बुद्धीही न धर सकैं। अपने अपने विषय कषायादि रूप संसारीक कार्य तिनविषैं संतुष्ट रहैं, धर्मकी कथनी ही अप्रिय लागै, परलोककी बातही न करैं, निंद्य (अ) मनोज्ञ पर्यायविषैं ही निमग्न रहैं, इन किंचिदून सर्व संसारी अनंतानंत जीवनके तो अगृहीत मिथ्यात्वभाव ही है, ए तो उपदेशयोग्य ही नाहीं। बहुरि अवशेष रहे संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवन विषैं असंख्याते भाग संज्ञी पंचेन्द्रिय भाव असंख्यात प्रमाण तिनकों यथायोग्य असंख्यातका भाग दीजै जो प्रमाण आवै सो एकभाग जुदा राखि बहुभाग प्रमाण असंख्यात पंचेन्द्रिय जीवनकें दारुभागके अनंतभाग विषैं बहुभाग बिना एकभाग प्रमाण अनंत स्पर्धक, तिनकैं अनंतको भाग दीजै जो प्रमाण आवै तिस एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण स्पर्धकनका उदय है। ताका माहात्म्य-कर सम्यक्धर्म तो अप्रिय लागै, अर मिथ्याधर्म प्रिय लागै ताकरि मिथ्यात्वधर्मको सेवै, यथार्थधर्मको न सेयसकै। ये गृहीत मिथ्यात्वभाव के कारण मिथ्यात्वके स्पर्धक हैं, इनके स्थानकभी असंख्याते लोकप्रमाण है। तिनविषैं केई ऊपरले स्थानकतो ऐसे हैं कि तिनके उदय होतैं तो सत्यधर्मसों द्वेष लागै अर मिथ्याधर्मसों आसक्त होय सेवैं, सो ये भी उपदेश योग्य नाहीं। इन जीवनको मिथ्यात्वभाव छूटवो उपाय साध्य नाहीं है, अर तिनतै नीचले केतेक स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदयसहित मिथ्यात्व-धर्म विषैं मग्न रहैं, सत्य धर्मसो द्वेष न करैं। बहुरि तिनसों नीचले केतेक स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदयतैं गृहीत मिथ्या-त्वधर्म मंदभावसों सेवैं, आसक्त होय न सेवै। बहुरि तिनसों नीचले केई स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदयतै जीव मिथ्या-त्वधर्मकों छांड़ि तो न सकै परन्तु यथार्थधर्मकूं सराहवै, अनुमोदना करे, इत्यादि जीव असंख्याते गृहीत मिथ्यात्वके जानने। सो ऐसें मिथ्यात्वकै उदयसहित जीव हैं ते उपदेशादि उपाय योग्य हैं, इन जीवनकों उपदेशादिक वा बाह्यकारण मिलें तो कोई जीव मिथ्यात्वधर्मको छोड़ि यथार्थधर्मको अंगीकार करैभी, बहुरि अवशेष रहै संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव तिनके असं-ख्यातवें भाग प्रमाण संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव तिनके दारुभागका अनंतवां भाग प्रमाण नीचला स्पर्धकनको उदय है, ते कोई जीव तो सत्यधर्मका उपदेश सुणैं हैं, सत्यधर्मकों पूछै हैं, अयथार्थधर्मकों छोड़दे है यथार्थ व्यवहारधर्मकों अंगीकार करैं हैं, द्रव्यादि एकदेश अणुव्रतरूप धर्मके अनेक भेदनको ग्रहण करैं हैं। अर केई जीव

द्रव्यशुद्धिपूर्वक यथावत महाव्रत कूं धारैं है। वहुरि केई बहुतही मंद मिथ्यात्वके उदयरूप नीचले स्थानककौं उदय होतैं सम्यक्त्वकौं सन्मुख होय है, पंच लब्धिरूप भावकौं प्राप्त होय तीन करणरूप भाव करि अनिवृत्तिकरणके अंतपर्यन्त गुणश्रेणी निर्जरा आदिक अनेक आवश्यक करतो संतो दर्शनमोहकौं उपशमाइ करिये उदयको अभावकरि अनिवृत्तिकरणका अनंतरवर्ती समय उपशम सम्यक्त्वकौं प्राप्त होय हैं। ये सर्व मिथ्यात्वके नीचले स्थानकनके उदय सहित जीव सत्यधर्मको आपही तैं वा कुलाम्नाय तैं भी वा उपदेश थकी भी वा धर्मके वड़े प्रभावनादि अंग तिनको देखतैंभी वा कोई विभववान पुरुष जे राजादिक तिनकों धर्म विषै तत्पर देखि ताथकी भी वा अणुव्रत महाव्रतके धारक महापुरुष तिनके दर्शन थकी भी वा और अनेक प्रकार वाह्य कारणनको निमित्त पाय अंगीकार करे हैं। अर जिनके तीव्रतर अर तीव्र मिथ्यात्वका उदय है तिनकौं उपदेश देना योग्य नाहीं। जातैं मिथ्यात्वके तीव्र उदयमें यथा उपदेशको ग्रहण नाहीं उलटा उपदेशदेनहारेके धर्मको विघ्नका कारण होय है, यो मिथ्यात्वभाव जीवको सर्वथा अकल्याणका कारण है, तातैं जाके मंद उदयके औसरमें याको छोड़ना योग्य है। अर याका तीव्रतर व तीव्रउदयमें छोड़ना असाध्य है। ये मिथ्यात्व चतुर्गतिका कारण है, अर मोक्षके अभावका कारण हैं, तातैं ये महापाप रूपही है।

अव मिथ्यात्वभाव, गुणस्थान तो प्रथमविषैंही है, अर मार्गणास्थानकन विषै गति ४ जाति ५ काय ६ योग-अहारकद्विकविना १३ वेद ३ कषाय सर्व २५ ज्ञानविषै-कुज्ञान ३ दर्शनविषै-चक्षु १ अचक्षु २ लेश्या सर्व ६ भव्य २ सम्यक्त्व-मिथ्यात्व १, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २ इन स्थानक विषै मिथ्यात्वभाव प्रवर्तैं है।

इतिश्री भावदीपकके औदयिक भावाधिकार मिथ्यात्वभावाधिकार विषैं दूसरा पूर्ण भया।

— अब कषाय भावाधिकार प्ररूपिये है —

दोहा—

जिन कषाय विधि जगत यों ताहि जयो जिनराय।
तिन पद नमि गहि शरण जिन हरौ कषाय दुखदाय॥

चारित्रमोहकर्मके उदयतैं उत्पन्न भयो सहज ही परम निराकुलित सुखको विध्वंसक अरु महा आकुलता रूप दुःखको कारण जीवका परद्रव्यनविषैं रागद्वेष भाव, सो कषाय कहिये। तातैं कषायके मूल भेद तो दोय हैं——एक राग दूजा द्वेष। तहां परद्रव्यनसों जो रंजितभाव सो राग कहिये, अरु परद्रव्यनविषै अनरंजित भाव सो द्वेष कहिये। तहां द्वेष कषायके दोय भेद—क्रोध १ मान २। अरु राग कषायके दोय भेद—माया १ लोभ २। ऐसे कषायभाव चार प्रकार है। सो इन चारोंही प्रकार कषायभावनके उदय स्थानक, तीव्रतर १ तीव्र २ मंदतर ३ मंद ४ ऐसे चारप्रकार प्रवर्तैं हैं। सो एक एक प्रकारमें एक एक कषायके उदयस्थानक असंख्यात लोकप्रमाण हैं। अरु असंख्यातके भेद बहुत हैं। तहां तीव्रतर स्थानक असंख्यात लोकप्रमाण हैं तिनके असंख्यातवे भाग असंख्यात लोकप्रमाण तीव्रस्थानक हैं, तिनके असंख्यातवे भाग असंख्यात लोकप्रमाण मंदस्थानक हैं। अर तिनकेभी असख्यातवे भाग प्रमाण असंख्यात लोकप्रमाण मंदतर स्थानक है। ऐसे असंख्यात लोकप्रमाण कषायभाव सोही इनका कारण चारित्रमोह कर्मताका भी उदयस्थानक असंख्यात लोकप्रमाण हैं।

बहुरि गुण वर्णन अपेक्षा चारों ही कषाय—अनंतन्नुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४। अप्रत्याख्यानावरण क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ प्रत्याख्यानावरण क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ संज्वलन क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ ऐसे सोलह भेद रूप कषाय भाव हैं, सो जैसें एक एक अनंतानुबंधी आदि भेद क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४

इन चार कषाय-रूप प्रवर्तैं तैसैं ही एक २ भेद नोकषाय भाव रूप प्रवर्तैं हैं। जो नो कषायके भेद नव—हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ पुरुषवेद ७ स्त्रीवेद ८ नपुंसकवेद ९। ऐसे ही अनंतानुबंधी आदि एक २ भेद के तेरह तेरह भेद भये तातैं चार भेदनके बावन भेद भये। तहां तीव्रतर अरु तीव्र स्थानकनका एक भागबिना बहुभाग विषैं तौ अनंतानुबंधी आदि चारों भेद प्रवर्तैं हैं, बहुरि तीव्र स्थानकनका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक अरु मंद स्थानकविषैं असंख्यात बहुभाग स्थानकनकैं विषैं अप्रत्याख्यानादि तीन भाव प्रवर्तैं हैं। बहुरि मंदस्थानकनका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक सोभी असंख्यात लोक प्रमाण हैं ताकूं, असंख्यातका भाग दीजे जो प्रमाण आवै तिस एक भाग बिन बहुभाग विषैं प्रत्याख्यानादि दोय कषाय प्रवर्तैं हैं, बहुरि अवशेष एक भाग अर सर्व मंदतर स्थानकनमें एक--संज्वलन कषाय भाव प्रवर्तैं हैं, तहां अनंतानुबंधी जीवके सम्यक्त्व गुणकौं आवरै हैं। अनंतानुबंधी कषायकी यावत्—प्रवृत्ति होय तावत् जीव सम्यक्त्वकूं ग्रहण कर न सकै। अरु जो सम्यक्त्वका ग्रहण होय गया होय अरु अनंतानुबंधी कषायभावकी प्रवृत्ति होय तबही सम्यक्त्वभावका नाश होय जाय, ऐसे जानना। बहुरि अप्रत्याख्यान कषायभाव देश संयम गुणकूं आवरै है। बहुरि प्रत्याख्यान कषाय भाव जीवके संकल सयम कूं आवरै है। बहुरि संज्वलन कषाय भाव जीवके यथाख्यात चारित्रकूं आवरै है। ऐसें ये जीवके चार गुणके चार प्रतिपक्षी कषाय हैं। अब कहे जे अनंतानुबंधी आदि चार भेद तिनके विशेष बावन भेद तिनका स्वरूप तिनकी प्रवृत्ति, तिनका कार्य, तिनकी प्रवृत्ति रूप कार्यका फल इत्यादि दिखाइये है। तहां अपना स्वरूप जो दृष्टा ज्ञाता भाव तातैं छुड़ाय अरु परस्वरूप जो राग द्वेष भाव तारूप करै सो, कषाय कहिये। अब तिस कषाय रूप होते जीव परद्रव्यन विषैं किसीकूं इष्ट कल्पै है अरु किसीकूं अनिष्ट कल्पै है। जिनकैं इष्ट कल्पै है तिनसौं राग भाव करै है, अरु जिनकों अनिष्ट कल्पै है तिनसों द्वेष भाव करै है। बहुरि जिनकूं इष्ट कल्पै है तिनके साधकनसों राग करै है बहुरि जिनकूं अनिष्ट कल्पै हैं तिनके साधकनसों द्वेष करै है। ऐसें ही उत्तरोत्तर राग द्वेष करता संता उत्पन्न भया जो आकुलता भावकौं धर्‍यां महा इच्छा ताकरि दुःखी होय है।

ऐसा तो सामान्य इच्छोका स्वरूप है, बहुरि सो राग द्वेपकों धन्या इच्छा चार प्रकार प्रवर्तै है, अनंतानुबंधी रूप १ अप्रत्याख्यानावरण रूप २ प्रत्याख्यानावरण रूप ३ संज्वलन रूप ४। तहाँ राग विरुद्ध १ लोक विरुद्ध २ धर्म विरुद्ध ३ ऐसैं तीन प्रकार अन्याय रूप कपाय प्रवृत्ति करै सो अनंतानुबंधी कपाय जानना, जा प्रवृत्ति करता संता राज करि दंड योग्य होय सों राज विरुद्ध कहिये। बहुरि जो धर्मप्रवृत्ति व लोक प्रवृत्ति राज विरुद्ध व लोक विरुद्ध तो न होय अरु धर्मविरुद्ध होय सो धर्मविरुद्ध कहिये। जातैं जो प्रवृत्ति राज विरुद्ध है सो लोक विरुद्ध भी है अर धर्म विरुद्ध भी है, अर जो राज विरुद्ध नाहीं अरु लोक विरुद्ध ही है सो भी धर्म विरुद्ध तौ है ही। अरु जो प्रवृत्ति धर्म विरुद्ध ही है अरु राजविरुद्ध लोक विरुद्ध नाहीं तहां तीनों ही प्रकार विरुध्द, ऐसें राजद्रोह, स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह विश्वासघात वा पहिलेका उपकार भूलि कृतघ्नी होना इत्यादि ये अनंनुबंधीके महापाप रूप कार्य हैं तिनकूं करना सो अनंतानुधी कहिये।

बहुरि धाड़ा दैना, गैलामारना, मनुष्यनकौं मारना, गांव मारना, राजकाज बिगाड़देना, सप्तव्यसन सेवना, राजविपैं पराई चुगली खाना इत्यादि जिनकरि राजतें दण्ड योग्य ते सर्व अनंतानुबंधीके राजविरुध्द कार्य जानना कुल, जाति, रीति सों आप बड़ा चालना पितादिकका अपमान करना, आपनी बड़ाई करनी, पराई निंदा करनी, अपने व पर केविवाहादि कार्य बिगाड़ देना, अपने कुटुम्बविपैं वा पड़ोसी आदिकन सौं विरोध राखना, कटुक वचन कहना इत्यादि लोक विरुध्द अनंतानुधी जानना। मिथ्यादेव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थन कूं यथार्थ जानना, तिनका यथार्थ श्रध्दान करना, तिनका दान, पूजन, नमस्कारादि कर विनय करना अरु यथार्थ देव गु, धर्मादिक कूं व आप्त, आगम, पदार्थन कूं अयथार्थ जानना, अयथार्थ श्रध्दान करना तिनसौं अयथार्थ प्रवृत्ति करनी, अयथार्थ पूजा करनी, अयोग्य द्रव्य चढ़ावना, अयोग्य अशुध्द क्षेत्रविषैं रात्रिकौ आदि दे अयोग्य कालविपैं पूजा करनी, अशुध्द शरीर, अशुध्द वस्त्र, अशुध्द संबंध इत्यादि बाह्यभावकी अशुध्दतासहित पूजा करनी अरु अंतरंगभाव क्रोध, मान, माया,

लोभकै वा सुजस बढ़ाई इत्यादिकके अभिनिवेश सहित अशुध्दभाव तिन सहित पूजा करनी, वा प्रमादसहित पूजा करनी, प्रमाद कहिये पूजा समय—स्त्री कथा, भोजन कथा, राज कथा, चौर कथा, ये चार विकथा करनी, वा पूजा-समय क्रोध करना, मान करना, माया करनी, लोभ करना, वा पूजा-समय स्पर्श आदि पांच इंद्रियनके विषय पोषना, वा पूजा समय स्त्री–पुत्रादिकनसौं स्नेह करना, तहां मनविषैं पूजाका अनादरभाव धरना, व निद्रासहित होना वा मन, वचन, कायकरि अविनय रूप प्रवर्त्तना, पूजा करनी भारी लागै, पूजाका काल भाऱ्या लागै, पूजाविषैं द्रव्य खरचवो भाऱ्यो लागै, वा पूजनादि क्रियाविषैं तौ मनकौं न ठहरावै, अन्य विषय कषायनके कार्यनविषैं मनकौं बुध्दिपूर्वक दौड़ावै इत्यादि मनकरि अविनय करना। बहुरि उस समय चकार मकारादिक बचन बोलना वा अपने लौकिक विषय कषाय मोहके प्रयोजनका वचनालाप करना, वा अपनी हीनता प्रशंसाका वचन बोलना, वा अनादरभावसौं स्तवनादि पाठ पढ़ना, वा स्तवनादि योग्य पाठ तौ न पढ़ना, कारणानुयोगका स्तवन करना, उपदेश करना, वा चरणानुयोगका उपदेश करना, वा द्रव्यानुयोगका उपदेश करना, वा प्रथमानुयोगका उपदेश करना, वा अपने आपको संबोधनरूप अध्यात्म पाठ इत्यादि पाठ पढ़ना, वा देवके निकट गुरुके स्तवनका वा श्रुतस्तवनका वा धर्मके स्तवनका पाठ पढ़ना, वा शास्त्रके निकट देवगुरू धर्मके स्तवनका पाठ पढ़ना, वा अन्य तीर्थंकरके निकट अन्य तीर्थंकरके स्तवनका पाठ पढ़ना, वा प्रत्यक्ष पूज्यके निकट परोक्ष स्तवन पाठ पढ़ना वा अशुध्द पाठ पढना, वा पढतां भूलजाना, वा आगला पाछै पढना, पाछला आगै पढना, वा पूर्वपाठ अपूर्णछोडि उत्तरका प्रारंभ करना, वा बहुत शूक्ष्म वचन सहित स्तवन करना, वा बहुत ऊँचा स्वर करि पाठ पढ़ना इत्यादि वचन करि अविनय करना वा कायकरि पूज्यके बहुत निकट खड़ा रहना, वा बहुत दूर खड़े रहना, वा पूज्यके निकट बैठ जाना, सोय जाना, वा भित्ति आदिकके आश्रय बैठ जाना, नमस्कारादि करना, वा नमस्कारादि करते मस्तक पीठ गुदादि न नमावना, वा उध्दत्ता सहित खड़े रहना, वा अंगनकूं चलावना, निश्चल राखना, वा दृष्टि चंचल राखना, वा चालना तौ पीठि-- देई चालना, वा प्रदक्षिणा देतां बहुत शीघ्र चालना इत्यादि कायकृत अविनय जानना, बहुरि पूजन विषैं बहुत

सावद्य करना, अनछाण्यां पानी वा वारीक बड़ा पतला कपड़ा ताकरि छाण्यां, तणां सहित पानी वर्तना, वा पानी बहुत बाहुल्यतासौं वरतना, क्रिया सौं अधिक जल नांखना, अग्निकी बाहुल्यता करनी, वा बहुत दीपक जोवना, तैलादिकके दीपक जोंवने । वा पूजनविषैं बहुत पुष्पनका संग्रह करना, बिना देखी बीधी आदि सदोष सामग्री चढ़ावना, इत्यादि-सावद्य करना, वा प्रतिमाकूं कुंकुमादिके विलेपन सहित करना, वा पुष्पनकी माला सहित करना, वा चढ्या द्रव्य फेरि चढावना, वा चढी सामग्रीकूं बेचि ताकी सामग्रीसों पूजा करनी, वा चैत्यालयके द्रव्यसौं पूजा करनी, वा अन्यायकरि उपार्जन किये द्रव्यसौं पूजा करनी, इत्यादि क्रियासहित देवगुरु धर्मादिककी पूजा करनी, सो अनंतानुबंधीके धर्मविरुध्द कार्य हैं ।

बहुरि देव गुरु धर्मादिकके निकट चौरासी आसादना दोष लगावनी, वा तिनके निकट अन्य ग्रह व्यंतरादिक वा देवी आदिकी पूजा करनी, स्थापना करनी, तिनकी कथा कहाणी कहनी, स्तवन करना, सो उत्कृष्ट अनंतानुबंधीको धर्मविरुद्ध कार्य है । इत्यादि देवाश्रय अनंतानुबंधीका धर्मविरुद्ध कार्य जानना ।

बहुरि मिथ्याज्ञान, मिथ्याश्रद्धान, मिथ्याप्रवृत्ति होते संते भी आपकों वा परकों अन्य जीवन पासि सम्यग्दृष्टि मनावना बहुरि नहीं है शास्त्रोक्त बाह्याभ्यन्तर अणुव्रत महाव्रत रूपक्रिया विधान जिनके, तौ पण भी जिनमतसौं विरुद्ध श्वेताम्बर, रक्तांबर, पीताम्बरादिकके आश्रय नानाप्रकार भेषसहित आपकौं वा परकों अणुव्रती महाव्रती मानना, वा अन्य पास मनावना, पुजावना, पूजना, दानलेना, वा देना, नाहीं मानै नाहीं पूजै तिनसौं विरोध करना इत्यादि गुरु—आश्रय अनंतानुबंधीका धर्मविरुद्ध कार्य जानना ।

बहुरि पूर्वोक्त अन्यथा पूजा करनी, चतुर्विध संघ बिना जे अन्य नानाप्रकार कुलिंगके धारक कुपात्र तिनकौं चार प्रकार, वा दस प्रकार दानदेना, वा शास्त्रोक्तरहित, विषय कषाय पोषनेके अर्थि झूंठा अणुव्रत महाव्रत ग्रहण करना, झूंठा तप करना, व्रत करना, करावना, तिनके आश्रय दान दैना, वा लेना, विषय पोखने, वा पहले त्याग करना, पीछै

ग्रहण करना, बाह्यप्रवृत्ति सांची दिखावनी, अंतरंग झूंठी प्रवृत्ति धरनी, पहिलें शास्त्रसौं अधिकाचार ग्रहण करना पाछै छोड़देना, जो धर्म अंगीकार करना सो शास्त्रोक्त न करना, मनोक्त लोक रूढ़ि सहित करना, पूजा, प्रतिष्ठा, तीर्थयात्रादि सर्व अन्यथा करना इत्यादि सो धर्माश्रय अनंतानुबंधीका धर्मविरुध्द कार्य जानना।

बहुरि झूंठा आप्त बनावना, मिथ्या उपदेश देना, अपने विषय कषाय पोषतैं शास्त्र रचना, झूंठा मत चलावना, अपने विषय कषाय पोपने, आपको महत जानना, वा ऐसे वक्ताके मुखथकी उपदेश सुनना, तिनकरि कहे शास्त्रनकूं बांचना, इन मतनविषैं श्रध्दाकरना, तिनकों महत जानना, तिनके मनवांछित विषय कषाय पोषने, सांचे आप्तकरि कहे उपदेशविषैं श्रध्दा न करनी, इत्यादि आप्ताश्रय अनंतानुबंधीका धर्मविरुध्द कार्य जानना।

मिथ्या शास्त्रनकूं मानना, पढ़ना, पढ़ावना, श्रद्धानकरना, वा सत शास्त्रनका मिथ्या अर्थ करना, मिथ्या अर्थ धारना, अन्यकैं मिथ्या अर्थका श्रद्धान करावना, कुपक्षकौं ग्रहण करना; सुपक्षको छोड़देना इत्यादि आगमाश्रय अनंतानुबंधीका धर्मविरुद्ध कार्य जानना ५।

जिनेश्वर देवकरि भाषित जो मोक्षमार्गका कारण जीवादिक नव पदार्थ तिनविषै श्रद्धान न करना, अन्य कुदृष्टीन करि भाषित नानाप्रकार भेदकूं लियां नानाप्रकार स्वरूपसहित जे तत्व तिनाविषैं श्रद्धा करनी, वा जिनभाषित तत्वनविषैं श्रद्धा करनी तौ तिनका स्वरूप अन्यथा धारना, तिनसौं अन्यथा प्रकृति करनी, वा तिनविषैं आस्तिक्यभाव न जोड़ना, नास्तिकभाव न छोड़ना, सीखवा माफिक सीख लेना, जानवामात्र जानलेना, तिनमैं सों श्रद्धानपूर्वक आत्मज्ञान न करना इत्यादि पदार्थाश्रय अनंतानुबंधी संबंधी धर्मविरुद्धकार्य जानना। सो राजविरुद्ध १ लोकविरुद्ध २ धर्मविरुध्द कार्य अनंतानुबंधीकी तेरह कषायद्वारा होय प्रवर्तैं हैं, सोही कहिये।

—तहां प्रथमही अनंतानुबंधी का क्रोधभाव कहिये है—

आपकरि प्रबलतैं क्रोधकरना, वा राजादिकसों क्रोधकरना, पराया धन पराई स्त्री आदि वस्तुनकूं ग्रहण करते संते कोई न ग्रहण करने देय यह जाणि तापर क्रोध करना, ताको घात करना, वा अपना कोई प्रकार अन्याय मान जगतमें प्रगट करता संता मान भंग करै ता परि क्रोध करि ताका घात करना, वा अनेक प्रकार व्यवहार विषैं मान लोभादिकके अर्थ कोप करि वा धर्मविषैं परस्पर अदेखसका भावकरि क्रोध करि मनुष्य तिर्यंचादिकका घात करना, वा मान लोभादिकके भंग होतां क्रोधकरि गॉव मारना, गैलामारना, गांवका खातादिक बालदैना इत्यादि अनंतानुबंधीका राज विरुद्ध क्रोध जानना १।

बहुरि अपने कुटुंबादिक विषैं वा अनेक प्रकार लौकिकव्यवहार कार्यनके सम्बन्धीन विषैं वा विवाहादि कार्यनविषैं जात्यादिक मनुष्यनविषैं इत्यादिकन विषैं निरर्थक क्रोध किया करना, जो कार्य करना सो क्रोधके अभिनिवेश सहित करना, प्रयोजनवान जीव आय आपसों वचनालाप करै ताकों क्रोध सहित उत्तर दैना, ताका कार्य कर देना परन्तु क्रोध सहित करना, वा अपना न्याय कार्यभी बिगाड़ दैना, ता पीछे तासों निःप्रयोजन क्रोध करना, वा अपना न्यायकार्यका, वा सौंप्या धनादिक भी न आता जाणि तासैं निरर्थक क्रोध करना, वा आप कुविसनादिक अन्याय कर्मनविषैं प्रवर्तै है, वा प्रयोजनभूत कार्यनविषैं अज्ञानतातें प्रवर्तै है, वा न प्रवर्तै है, तिनकी कोई शिक्षा दे तो तिनपर क्रोध करना, वा आपकै पाप उदय आवतां संता, वा रोगादिक करि, वा वृद्ध अवस्थाकरि अशक्तता होते संते जो स्त्री-पुत्रादिक वैयावृत्य न करैं मनवांछित भोजनादिक न दैं, कह्यो न मानैं तिनपर क्रोधकरना, इत्यादि अनंतानुबंधीका **लोकविरुद्ध क्रोध** जानना २।

बहुरि क्रोधसहित धर्मकी शिक्षा दैनी, तथा क्रोधकरि धर्मकार्य करावना, वा शास्त्रका झूंठा अर्थ कहि झूंठा श्रध्दान ज्ञान, प्रवृत्ति करावना, उपदेश देना, अर जो कोई न मानै तापरि क्रोधकरना, वा अपने प्रति कोई यथार्थमार्गका उपदेश

दे तापर क्रोधकरना, वा धर्मकार्यविषैं अज्ञानतातैं प्रवर्तै है, शास्त्रका झूंठा अर्थ कहै है, वा झूंठा अर्थ धारै है, वा धर्मकार्यन विषैं न प्रवर्तै है, कोई भली शिक्षा दे है, वा धर्मविषैं मान करै अपमान न करै तिनप्रति क्रोध करना, वा साधर्मीनसूं क्रोधसहित चर्चाकरनी, वा क्रोधसहित प्रवृत्ति करनी, वा आप धर्मविषैं प्रवर्तै है, धनादिक खर्चै है अरु अन्य कोई साधर्मी थोड़ा प्रवर्तै है, थोड़ा खरचै हैं, वा न प्रवर्तै है, न धन खरचकरै है तिनविषैं क्रोधकरना, वा क्रोधकर धनादिक खरचावना, वा पहिलाकूं नीचा पाडवाके अर्थि क्रोधकरि पूजनादिक कार्य करना, तिनविषैं बहुत धन खरचना, वा तप व्रतादि विषैं भोजनादिको अंतराय होत संतै वा धरने धारने भोजनादिक विषैं कालकी अधिक हीनता होत संतै जो स्त्री किंकरादि-विषैं रोषकरना इत्यादि अनंतानुबंधीका धर्मविरुध्द क्रोधभाव जानना।

अब अनंतानुबंधी मानभाव कहिये हैं—

जहां आपकों पहिला पास बड़ा मनावनेकी बुध्दि व पहिलेकूं नीचे पाड़नेकी बुध्दि ताका नाम मान कह्या है। जहां आपतैं प्रबल सैती अष्टप्रकार मदकरना वा राजादिकनके निकट अष्टप्रकार मद करना वा राजादिकों से अष्टप्रकार मद करना सो राजविरुध्द अनंतानुबंधी मानभाव जानना १।

कुलमद—जो हमारा पिता राजादिक है १। जाति-मद—जो हमारी माता राजादिककी बहिन है २। लाभमद—जो हमारै धनादिक सामग्री आपै आप प्राप्त होय है ३। ऐश्वर्यमद—जो राजसामग्री व धनादिक प्राप्त होय है सो सामग्री मद है ४। बलमद—जो सप्त प्रकार सामग्री—धनका बल १, कुटुम्बका बल २, सामग्री बल ३, स्थान बल ४, बुध्दि-बल ५, मंत्रबल ६, शरीर बल ७—के बलका मद है ५। रूपमद—जो हमारा रूप है सो और कोईका नाही ६ विद्याका मद—जो हमारे तुल्य कोई पंडित नाहीं ७। तपमद—जो हम बड़ा बड़ा तप कियाकरै हैं ८। ये अष्टप्रकार मद जानना। बहुरि माता-पितादिकसों मदकरना, वा लौकिक शास्त्र किताब आदि विद्या सिखावनहारायकी मदकरना, वा आजाविकाके

दैन हारे प्रति मद करना, वा जिनतैं भली लौकिक शिक्षा पाइये है ऐसे चतुर-पुरुष तिमसौं मद करना, वा विवाहादिक कार्यंन विषैं जात्यादिकसौं मद करना, वा अपने पदसौं अधिक मान रूप प्रवृत्ति करनी वा अन्याय कार्यकी सिद्धी करि मान करना, इत्यादि अनंतानुबंधीका लोकविरुध्द मानभाव जानना।

बहुरि देव गुरु धर्मादिकके निकट मद करना, वा साधर्मीनसो मद करना, वा पूजनादिक धर्म कार्यनविषैं धनादिक खरचि मद करना, वा धर्म पध्दति विषैं मुखियापणां तैं प्राप्त होय मद करना, वहुत शास्त्र पढ़ मद करना, बहुरि अनेकप्रकार धर्म अंगनविषैं मानके अभिनिवेश सहित धनादिक खरचना, आपकूं महान मानना, अन्य साधर्मीनकों आपतैं तुच्छ समझना, वा साधर्मीनका अपमान करना, अनेक प्रकार वस्त्राभूपणादि पहरि साधर्मीनविषैं मद धारि बैठना इत्यादि अनंतानुबंधीका धर्म विरुद्ध मानभाव जानना।

अब अनंतानुबंधीका माया कषायभाव कहिये है—

जहां मनविषैं तो अन्य विचार करना अरु वचनतैं औरही कहना अरु कार्यकरि औरही करना ताका नाम माया कषाय है। तहां आपतैं प्रबलतैं मायाचार करनी, वा पराया गज, पराया धन, पराई स्त्री, आदि वस्तुनके ठिगने अर्थि माया करनी, वा विश्वासउपजाय फेरिघात करना, वा अपने मान बढ़ावने अर्थि राजविरुद्ध मायाचारी करनी इत्यादि राज्विरुद्ध अनंतानुबंधी माया कषाय भाव जानना।

बहुरि माता-पिता आदिकसौ मायाचारि करनी, वा सिरदार साहसौं मायाचारि करनी, वा निरर्थक मायाचारि वचन कहना इत्यादि लोकविरुद्ध मायाचारि जाननी।

बहुरि देवगुरु धर्मादिक विषैं मायाचारि करनी—बाह्य तौ जैनी रहना अरहंतादिककूं देव मानना, अरु अंतरंग

विषैं ग्रह व्यंतरादिककौं बाधि पाहाड़ी शीतलादिककौं देव मानना, इनके अर्थि तन, मन, धन बहुत उल्लास सेती बहुत खरचना, वा थोड़ा खरचना अरु बहुत प्रगट करनो, वा पहिलाकूं देखता बहुत भक्ति करनी, अरु न देखतां न करनी इत्यादि देवविषैं माया जाननी ।

बहुरि उपासक तौ निर्ग्रंथ गुरुका रहना, अरु बाह्य कुलिंगी पाखंडीनकूं सेवना, वा गुरु पास निंदा गर्हा करनी इत्यादि गुरुविषैं माया है ।

बहुरि व्रत, तप, संयम, आखड़ी, अनेक प्रकार यम नियम बाह्य तौं यथावत दिखावना, अरु अंतरंग विषैं यथावत न धारना इत्यादि धर्मविषैं माया जाननी ।

बहुरि सत्यवक्ताके मुखथकी धर्मका तथा तत्वका यथावत कथनसुनि आरंभ करना, व सराहना, अरु पाछै श्रद्धान असत्य वक्ताकरि कह्या तत्वनका करना, ताकी सराहना करनी, अरु सत्यवक्ता तथा सत्यकथनकी निंदा करनी इत्यादि आप्तविषैं माया जानना ।

बहुरि आगमविषैं निरूपण तौ औरही भांत है, अर ताका कथन और भांति करना, शास्त्रका अर्थ झूंठा करना, अपने अभिप्रायकूं पोषता शास्त्र रचना, अरु शास्त्रविषैं नाम बड़े आचार्यका धरना, वा कपोलकल्पित मिथ्या श्लोक काव्य बनाय शास्त्रमें धरना, वा लोकनकूं सुनावना, अर नाम शास्त्रको लेना, ये आगम आचार्यके कीये हैं, आगमके शास्त्रका कह्या वचन है, श्लोक है, काव्य है, इत्यादि आगमविषैं माया करनी ।

बहुरि तत्वनका स्वरूप और है, अरु लोकन प्रति औरही कहना, हेयको उपादेय कहना अरु उपादेयको हेय कहना, इत्यादि पदार्थनिविषैं माया जाननी ।

— इति अनंतानुबंधी माया कषायभावः —

— आगे अनंतानुबंधी लोभ कषाय कहिये है —

अति तीव्र अनंतानुबंधी लोभ कषाय कर्मके उदयकै वशीभूत होता हुआ आत्मा तीव्र लोभको विस्तारै है। नहीं दीखै है इसभव तथा परभव संबंधी अकल्याण, आपकूं जो धनादिककी वांछा करत संतो अनंतानुबंधीके अनेक विषम कार्य करै है, चोरी करै है, धाड़ा दे है, गांव तथा गैलामारे है, मनुष्य मारै है, राजद्वार विषैं चोरी करै है, पराये मंदिरविषैं धसि जाय है, नाहीं धोरहै आस जीतव्यकी। बहुरि राजादिकनकी चाकरी करै है। तहां स्वामीके घर विषैं चोरी करना, स्वामीका बिगाड़करि खोंस लेना, वा झूठेका पक्षी होय खोंसि लेना, झूठी दगा लगाय डर दिखाय खोंसि लेना, वा थोड़ी जमा विषैं बहुत इजारा बांधि रैयतको लूटि लेना, वा राजहिस्साका सख्त हासिल लेना, प्रजाका धनादि खोंस लेना, लोभके वशीभूत होय राजा--प्रजाका विध्वंस करावना, वा राजका हासिलकी चोरी करना, वा चौरकने हिस्सा लेना, चोरी करावनी, गैला मरावना, धाड़ा दिवावना, गांव मरावना, वा लोभ कषायकरि अंधा होता हुआ, राजद्रोह, स्वामीद्रोह, धर्मद्रोह, मित्र--द्रोह, कृतघ्नी होता ऐसे पाप करैं हैं। अगम्यागम्य कहिये ऐसा कार्य किसीकी दृष्टिमें न आया होय, न सुण्या होय, ऐसे कार्य कर बैठै है इत्यादि राजविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना १।

बहुरि लौकिक व्यवहार विषैं अन्याय लोभ करना, झूंठा लेखा लिखना, रकम चुरावना, लिखा सिवाय बांधि खेंचना, वा धनका संग्रह करना, अरु लौकिक व्यवहारादिक विषैं धन न खरचना, वा अपने विषयके अर्थि धन न खरचना, सूम रहना, वा अपनी आजीविकाकी बाहुल्यता होत संते भी विषम व्यवहार करना, घरका सुख छोड़ि देशान्तर जाना, समुद्रमें प्रवेश करना, विषम स्थानमें जाना, वा और अनेक महापापके व्यवहार करना, अपना पद उलंघि निंद्य व्यवहार करना, अपने पास होते संते भी पराया देना, न देना, राखि मेलनेकी बुद्धिसे पराया करज लेना, धरोहर दबाना, वा लोभके वशीभूत होय अपने व्यवहारादिक कार्य बिगाड़ देना, वा लोभके वशीभूत भया अपने कुटुम्बादिकनकौं दुःख देना, बहुत

धन जाता जातिभी तुच्छ धन न देना, धनादिकके अर्थि अपना बहुत अपमान कराना, इत्यादि लोकविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना २ ।

बहुरि परलोकके अर्थि धर्मविषैं धनादिक न खरचना, वा थोड़ा खरचना, वा धर्मकार्य तो बड़ा प्रारम्भ करना अरु धन सूमतासूं खरचना, थोड़ा खरचना, धर्मकार्य विषैं लोभके वशीभूत होता हुआ बिगाड़ देना, वा मैला दिखावना, पूजनादि धर्मकार्य विषैं सूमतासौं धन खरचना, लोभके वशीभूत भया थका पंचनमें सूम बाजना, वा धर्मके आश्रय लोभ करना इत्यादि धर्मविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना ३ ।

बहुरि राजादिक महत पुरुषनकी हांसी करना, वा माता पितादिक लौकिक गुरुजनकी हांसी करना, वा परस्पर मर्मछेदनके वचन कहि हास्य करना, वा बिनाउपाय अन्यायके विषय, कषाय कार्यनकी आपकूं प्राप्ति होना, ताकरि प्रसन्न होना, वा मुनिजनां की हास्य करना, वा साधर्मीनकी हास्य करनी, वा धर्मस्थानकन विषैं वा अंगन विषैं हास्य करना इत्यादिक अनंतानुबंधीका हास्यभाव जानना ।

बहुरि सप्त व्यसनानि विषैं अति आसक्त होय सेवना, वा पंच इंद्रियनके अन्याय विषै बहुत आशक्त रहना वा पांच इन्द्रियनके अन्याय विषैं भी धर्म, अर्थ, पुरुषार्थ बिगाड़ अति आशक्तहोय सेवना, धर्मविषैं भी कषाय पोषने इत्यादि अनंतानुबंधीका रति कषायभाव जानना ।

बहुरि माता--पितादिकन सौं रोगादिक अवस्था होते संतै वा वृद्ध अवस्था होत संतै अरुचि करना, वा पाप उदय होत संतै बंधुजनादिकसौं, वा मित्रसौं, वा साधर्मीनसौं, वा और कोई महंत पुरुषनसो अरुचि करना, वा धर्मअंगनसौं अरुचि करना, अरुचि करना कहिये छोड़ देना, अलहदा होजाना, तिनविषैं उपकार न करना इत्यादि सौ अनंतानुबंधी अरति कषायभाव जानना ।

बहुरि व्यसनादिकके साधकका वियोग होतैं शोक करना, वा अन्यायकार्य प्ररूपा था तिसका बिगाड़ होतैं शोक

बहुरि परपुरुष सौं रमनेकी इच्छा व रमना, वा बलवान पुरुष सौं रमनेकी इच्छा वा रमना, वा द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अयोग्यता सहित रमनेकी इच्छा वा रमना सो अनंतानुबंधीका स्त्री वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि स्त्री पुरुष दोनोंसूं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो नपुंसक वेद कषाय भाव है । सो यह भाव सर्वथा प्रकार व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप हूवो थको अनंतानुबंधीको भाव है । जातैं यह भाव अप्रत्याख्यानादि तीन कषायनविषैं व्यक्त-रूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप न होय है इस भावको अव्यक्त उदय होय है । ये अनंतानुबंधीका नपुंसक वेद कषाय भाव जानना ।

ऐसैं ये कहे जे अनंतानुबंधीके स्वरूप प्रगट बुद्धिपूर्वक कार्य रूप भाव, ते अनंतानुबंधी चारित्र मोहके तीव्र उदय विषैं होय है, तातैं इन भावनको प्रगट न होने देना, अरु इनके नाशका उद्यम करना, जातैं यह मनुष्य पर्याय पाई है, तातैं यहां इसके नाश करनेके सर्व उपाय मिलैं हैं । अरु यह मनुष्य पर्याय बिजलीके चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तातैं पर्याय छूटें इनका उपाय होय सक्ता नाहीं, अरु अनंतानुबंधीके उत्कृष्ट कषाय भाव इसभव परभव विषैं सर्व अकल्याणके कारण हैं इस भव विषैं तौ राजादिकों करि दंड पावै है, धन संपदा कुटुंबादिकका वियोग होय है, स्थानतैं भ्रष्ट होय है, अर लोक निंद्य होय है, दुःखी होय है, अरु आगमी नरकगति अरु निगोदादि तिर्यंचगतिको कारण है, तातैं इनके छोड़ने-का उपाय करना । इस अनंतानुबंधीका वासना काल संख्यात असंख्यात अनंतभव पर्यंत चला जाय है । एक बार किसी जीव पर किया जो क्रोधादिक भाव सौ अनंतकाल तांई दुःखदाई है, तातैं इनके उपजनेका कारण घटावना, इनके अभाव होनेका कारण मिलावना, सुसंगतिमें रहना, कुसंगतिमें न रहना, इनके नाशका प्रथम उपाय तो यह है, पीछे जैसैं बने तैसैं इनके छोड़नेका उपाय करना ।

बहुरि अनंतानुबंधीके मंद उदय मैं कार्य रहित आप गोचर भाव होय हैं । तहां छहों लेश्या पाइये है । ये भाव चारों गतिके कारण हैं, बहुरि अनंतानुबंधीके मंदतर उदयमें आपके अगोचर भाव होय हैं, तहां पीत, पद्म, शुक्ल तीन

धन जाता जातिभी तुच्छ धन न देना, धनादिकके अर्थि अपना बहुत अपमान कराना, इत्यादि लोकविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कपायभाव जानना २ ।

बहुरि परलोकके अर्थि धर्मविपैं धनादिक न खरचना, वा थोड़ा खरचना, वा धर्मकार्य तो बड़ा प्रारम्भ करना अरु धन सूमतासूं खरचना, थोड़ा खरचना, धर्मकार्य विपैं लोभके वशीभूत होता हुआ विगाड़ देना, वा मैला दिखावना, पूजनादि धर्मकार्य विपैं सूमतासौं धन खरचना, लोभके वशीभूत भया थका पंचनमें सूम बाजना, वा धर्मके आश्रय लोभ करना इत्यादि धर्मविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कपायभाव जानना ३ ।

बहुरि राजादिक महत पुरुपनकी हांसी करना, वा माता पितादिक लौकिक गुरुजनकी हांसी करना, वा परस्पर मर्मछेदनके वचन कहि हास्य करना, वा विनाउपाय अन्यायके विपय, कपाय कार्यनकी आपकूं प्राप्ति होना, ताकरि प्रसन्न होना, वा मुनिजनां की हास्य करना, वा साधर्मीनकी हास्य करनी, वा धर्मस्थानकन विपैं वा अंगन विपैं हास्य करना इत्यादिक अनंतानुबंधीका हास्यभाव जानना ।

बहुरि सप्त व्यसनानि विपैं अति आसक्त होय सेवना, वा पंच इंद्रियनके अन्याय विपैं बहुत आशक्त रहना वा पांच इन्द्रियनके अन्याय विपैं भी धर्म, अर्थ, पुरुपार्थ विगाड़ अति आशक्तहोय सेवना, धर्मविपैं भी कषाय पोपने इत्यादि अनंतानुबंधीका रति कपायभाव जानना ।

बहुरि माता--पितादिकन सौं रोगादिक अवस्था होते संतै वा वृद्ध अवस्था होत संतै अरुचि करना, वा पाप उदय होत संतै बंधुजनादिकसौं, वा मित्रसौं, वा साधर्मीनसौं, वा और कोई महंत पुरुपनसों अरुचि करना, वा धर्मअंगनसौं अरुचि करना, अरुचि करना कहिये छोड़ देना, अलहदा होजाना, तिनविपैं उपकार न करना इत्यादि सौं अनंतानुबंधी अरति कपायभाव जानना ।

बहुरि व्यसनादिकके साधकका वियोग होतैं शोक करना, वा अन्यायकार्य प्ररूपा था तिसका विगाड़ होतैं शोक

करना इत्यादि अनंतानुबंधीका शोक कषायभाव जानना ।

बहुरि अन्यायरूप प्रवृत्तिके निमित्ततैं भयकौं होत संतै भय कंप होना वा दुष्टनके भयतैं भयकंप होई अपना न्याय धर्म वा क्रिया धर्म वा आखडी धर्म वा अणुव्रत महाव्रत धर्म छोड़ि देना, वा पद योग्य शक्त्यनुसार सम्यक्त्वादि अंगीकार न करना वा अपने शरणें राख्याकों सौंपि देना इत्यादि अनंतानुबंधी भय कषाय भाव जानना ।

बहुरि रोगादिक अवस्था होतैं मुनिजनादिक चतुर्विध संघकी वा साधर्म्मीनकी ग्लानि करनी, वा माता-पितादि लौकिक गुरुजनांकी ग्लान करनी, तिनका वैयावृत्य न करना, नावारिसि (?) (अशुभ) रूप पापका है उदय जिनकैं, नहीं मिलै हैं खानपान वस्त्रादिक तिनकौं, अर रोग करि ग्रस्त है शरीर जिनका, ऐसे तिर्यंच मनुष्यनकी ग्लानि करनी, तिनकी दया न पालनी, उपकार न करना, वा साधर्मीन सूं वा धर्मावलंबी जनोंसे ग्लानि भाव करना इत्यादि अनंतानुबंधीकी जुगुप्सा कषाय जाननी ।

द्रव्य क्षेत्र कालभावकी अयोग्यता सहित स्त्रीनसौं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो अनंतानुबंधीका पुरुष वेद कषाय है।

बहुरि परस्त्रीन सौं रमना वा रमनेकी इच्छा करनी । तहाँ पूरण गर्भवती स्त्री, प्रसूतीवान स्त्री, वा रजस्वला स्त्री, वा रोग सहित स्त्री, बालक स्त्री, वा कुमारी स्त्री इत्यादि स्त्रीन सौं रमना सो द्रव्य की अयोग्यता जाननी ।

बहुरि चैत्यालयादिक विषैं वा तीर्थक्षेत्र विषैं वा अशुद्ध क्षेत्रविषैं रमना सो क्षेत्रकी अयोग्यता है ।

बहुरि अष्टमी चौदश चार परवनिविषैं, वा अष्टान्हिकाविषैं, वा भादवां विषैं, वा तीर्थंकरां का पंचकल्याणक काल जो द्रव्यमान होय द्रव्य प्रवृत्तिमान होय तिन विषैं रमना सो काल की अयोग्यता है ।

बहुरि तपके काल विषैं, वा प्रवृत्तिके काल विषैं, वा शील संयम आखड़ीके काल विषैं, वा राजादिक महंत पुरुषनके मरन काल विषैं, वा साधर्मीके मरन काल विषैं, वा इष्टके मरण काल विषैं इत्यादि भाव विषैं रमना सो भावकी अयोग्यता कहिये । इत्यादि स्थान विषैं जो रमनेकी इच्छा सो अनंतानुबंधीका पुरुष वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि परपुरुष सौं रमनेकी इच्छा व रमना, वा बलवान पुरुष सौं रमनेकी इच्छा वा रमना, वा द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अयोग्यता सहित रमनेकी इच्छा वा रमना सो अनंतानुबंधीका स्त्री वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि स्त्री पुरुष दोनोंसूं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो नपुंसक वेद कषाय भाव है । सो यह भाव सर्वथा प्रकार व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप हूवो थको अनंतानुबंधीको भाव है । जातैं यह भाव अप्रत्याख्यानादि तीन कषायनविषैं व्यक्त-रूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप न होय है इस भावको अव्यक्त उदय होय है । ये अनंतानुबंधीका नपुंसक वेद कषाय भाव जानना ।

ऐसैं ये कहे जे अनंतानुबंधीके स्वरूप प्रगट बुद्धिपूर्वक कार्य रूप भाव, ते अनंतानुबंधी चारित्र मोहके तीव्र उदय विषैं होय है, तातैं इन भावनको प्रगट न होने देना, अरु इनके नाशका उद्यम करना, जातैं यह मनुष्य पर्याय पाई है, तातैं यहां इसके नाश करनेके सर्व उपाय मिलैं हैं । अरु यह मनुष्य पर्याय बिजलीके चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तातैं पर्याय छूटें इनका उपाय होय सक्ता नाहीं, अरु अनंतानुबंधीके उत्कृष्ट कषाय भाव इसभव परभव विषैं सर्व अकल्याणके कारण हैं इस भव विषैं तौ राजादिकों करि दंड पावै है, धन संपदा कुटुंबादिकका वियोग होय है, स्थानतैं भृष्ट होय है, अर लोक निंद्य होय है, दुःखी होय है, अरु आगमी नरकगति अरु निगोदादि तिर्यंचगतिको कारण है, तातैं इनके छोड़ने-का उपाय करना । इस अनंतानुबंधीका वासना काल संख्यात असंख्यात अनंतभव पर्यंत चला जाय है । एक बार किसी जीव पर किया जो क्रोधादिक भाव सौ अनंतकाल तांई दुःखदाई है, तातैं इनके उपजनेका कारण घटावना, इनके अभाव होनेका कारण मिलावना, सुसंगतिमें रहना, कुसंगतिमें न रहना, इनके नाशका प्रथम उपाय तो यह है, पीछे जैसैं बने तैसैं इनके छोड़नेका उपाय करना ।

बहुरि अनंतानुबंधीके मंद उदय मैं कार्य रहित आप गोचर भाव होय हैं । तहां छहों लेश्या पाइये है । ये भाव चारों गतिके कारण हैं, बहुरि अनंतानुबंधीके मंदतर उदयमें आपके अगोचर भाव होय हैं, तहां पीत, पद्म, शुक्ल तीन

लेश्या ही पाइये है। जातैं मंदतर उदयमें द्रव्य सम्यक्त्व अरु द्रव्य अणुव्रत महाव्रत योग्य होय हैं, तातैं ये भावमनुष्य देव दोय गति कूं ही कारण हैं। अरु वर्तमान विषैं सर्व ही कषाय भाव दुःख हीके कारण हैं, अनंतानुबंधी कषाय–गुणस्थान तौ मिथ्यात्व अरु सासादन दोय विषैं ही हैं। बहुरि मार्गणास्थान विषैं गति ४ जाति ५ काय ६, योग–आहारकद्धिक विना १३, वेद ३, कषाय २५ कुज्ञान ३ असंयम १ दर्शन–चक्षु अचक्षु दोनों, लेश्या छहूं ६, भव्य–अभव्य दोय, सम्यक्त्व–मिथ्यात्व, अरु सासादन २, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २ विषैं प्रवर्तै है। ऐसें अनंतानुबंधी कषायभाव निरूपणादि समाप्त।

— अप्रत्याख्यानादि कषायभाव निरूपिये हैं —

अनंतानुबंधी रहित अप्रत्याख्यानादि तीन कषायका उदय होतैं यो जीव महापापके कारण अन्यायरूप जो चंचल–भाव ताकूं छोड़ि विमलतानैं प्राप्त होय है। न्यायरूप निश्चल भावविषैं तिष्ठै है। यहां यह जीव सम्यग्दृष्टी होय है, तहां सम्यक्‌भावका ग्रहण है। सर्वही तेरा प्रकार कषायभाव न्यायरूप प्रवतै है चारों कषायनके कार्य तो होय हैं, परन्तु न्याय-रूप होय हैं। पांचौं इंद्रियनके विषय तो सेवै है परन्तु न्यायपूर्वक सेवै है। सो भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित कार्य होय है। कषायकार्यनि विषैं अर विषयकार्यनि विषैं अति आसक्त होय मूर्च्छाभावकों न प्राप्त होय है। अयोग्य कार्यनकूं कदाचित् भी न करै है। राजविरुद्ध १, लोकविरुद्ध २, धर्मविरुद्ध ३, ऐसे जे कषायकार्य वा विषयकार्य वा सप्तव्यसनादि जाकैं सर्वथा न होय हैं इस कषायके होतैं इतना सचेत रहै है।

— प्रथमही अप्रत्याख्यान क्रोधभाव कहिये है —

अपने राज्यादि न्यायकार्यन विषैं क्रोध करै है, वा अपनी आज्ञा मानने योग्य हैं अर आज्ञाकूं न मानै हैं ता

(तिन) पर क्रोधभी करै है वा अपने राज्यादि न्यायकार्यके बाधक वा अपने धन, प्राण, संपदा, रत्नादिकके बाधक हैं, वा अपना मानभंग करनहारे हैं, वा प्रजाके बाधक हैं, वा कुटुम्बादिकके बाधक हैं, वा गरीब, दुखित, भुखित मनुष्यनके वा तिर्यंचादिक जीवनके सतावन हारे है तिनपर क्रोध करे है। वा धर्मबाधक चतुर्विध संघकूं दुःख दैनहारे, वा मिथ्याधर्म के पोषक, वा सत्यधर्मके उत्थापक, तिनपर क्रोध करै है इत्यादि योग्य स्थानकों पर क्रोधभाव करै है सो भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यतासहित करै है, क्रोधके वशीभूत न होय है, कार्यके अंतविषैं ही शांत होय है। याका वासना-काल उत्कृष्ट छह मास पर्यंत है पीछे उपशांतही होय है।

॥ इति अप्रत्याख्यान क्रोधभावः ॥

— अब अप्रत्याख्यानमान कहिये है —

अपने पद योग्य मान करै हैं, राजविरुद्ध १, लोकविरुद्ध २, धर्मविरुद्ध ३ मान नाहीं करै है सो भी द्रव्य क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित करै है। बहुरि देव, गुरु, धर्मादिकके निकट अष्ट प्रकार मद नाहीं करे है, चतुर्विधसंघ सों मद नाहीं करै है, तहां निर्मद होय है। बहुरि अपने पदके थांभने विषैं मान करै है, तहां प्राण-जातां भी मान नाहीं तजै है, बिना प्रयोजन किसीका मान भंग नाहीं करै है, किसीसूं बिना प्रयोजन अदेखसका भाव नाहीं राखै इत्यादि अप्रत्याख्यान मानभाव जानना।

॥ इति अप्रत्याख्यान मानभावः ॥

~ अब अप्रत्याख्यान मायाभाव कहिये है~

जहां अपने राज्यादि न्याय कार्यकी सिद्धिके अर्थि माया करै है, पहलाके ठिगनेके अर्थि माया नाही करै है, वा अपना धन, सम्पदा, प्राणादि राखनेके अर्थि माया करै है, वा अपने धर्म राखनेके अर्थि माया करै है, सोभी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित करै है। पराया धन, प्राण, स्त्री, संपदादि हरणेके अर्थि माया नाहीं करै है इत्यादि माया करै है सो अप्रत्याख्यान माया भाव जानना ३।

॥ इति अप्रत्याख्यान मायाभावः ॥

•••• अब अप्रत्याख्यान लोभ कहिये है ••••

जहाँ अपने राज्यादि न्यायकार्यन विषैं लोभ करै है, तहां भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित करै है, अन्याय लोभ नाहीं करै है, । बहुरि जिन कार्यन विषैं महा पाप उपजै ऐसा न्याय लोभ भी नाहीं करै है, अपने यश होनेका वा अपने धर्म वा धनका लोभ करै है इत्यादि लोभ करै है सो अप्रत्याख्यानलोभ भाव जानना ४

अर जहां अपने राज्यादि कार्यन विषैं मूर्ख है तिनप्रति वा अपने स्त्रीजन आदि परिवार विषैं हास्य कषाय करै है, वा अपने हास्य योग्य पुरुषनि प्रति हास्य करै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता देखि करै है इत्यादि कषाय सो अप्रत्याख्यान हास्य कषायभाव जानना ५

बहुरि अपने स्त्री पुत्रादिकन विषैं वा अपने योग्य पांच इंद्रियनके विषय तिन विषैं वा अपने योग्य विषय-सामग्री वा राज्यादि सामग्री तिनविषैं रति करै है, सोभी अति आसक्त होय नाहीं करै है, किंतु द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित रति करै है इत्यादि अप्रत्याख्यान रति कषाय भाव जानना ६।

बहुरि दुर्जन पापी पुरुषनिविषैं राजके बाधक प्रजाके बाधक धर्मके बाधक पराई चुगली खानहारे, पराई निंदा वा अपनी प्रशंसा करनहारे मिथ्यामार्गके पोषक, अन्यायके प्रवर्तक इत्यादि जीवन विषैं अरति करै है वा अन्यायके विषय विषैं वा अन्याय कषाय सामग्री वा विषय सामग्री तिन विषैं, वा सप्त व्यसनादि विषैं वा सदोष वा अक्रिया करि निपजौ भोजन खान-पान तिन विषैं वा मिथ्यामार्ग विषैं इत्यादिकन विषैं अरतिभाव करै है। ऐसा अप्रत्याख्यान अरति कषाय भाव जानना ७।

बहुरि अपने मानखंडादि विषैं, वा अपने न्यायमार्गतैं उल्लंघन भया होय, वा धर्मका उल्लंघन भया होय, तहां शोक करै है, वा इष्ट, पुत्र, स्त्री, आदिकके वियोग विषैं भी मिथ्यात्वभाव रहित किंचित् काल शोक करै, वा साधर्मी गुरुजनके मरण विषैं, वा वियोग विषैं शोक करै, अपने धन, संपदादि, राज्यादि, विभूति, वा अपने प्राणके जातां भी शोकवंत नाहीं होयहै इत्यादि अप्रत्याख्यान शोक कषाय भाव जानना ८।

बहुरि न्यायके उल्लंघनका तथा धर्मके उल्लंघनका है भय जिसकूं, वा पाप विषैं प्रवर्तनका, वा चतुर्गति संसार विषैं भ्रमणका है भय जाकूं, अर सप्त भयकरि वर्जित होय इस भवका नाहीं है भय जिनके १ बहुरि परभव संबंधी भी नाहीं है भय जिनकूं २, बहुरि मरणका भी भय नाहीं ३, रोगका भी भय नाहीं ४, नाहीं है रक्षक कोई हमारा सो भय भी नाहीं ५, बहुरि धन, संपदाके चोरका भी भय नाहीं ६, अरु अकस्मात् भय भी नाहीं ७ ऐसा अप्रत्याख्यान भय कषायभाव जानना ९।

बहुरि परधन, परस्त्री, वा अन्यायके कषाय वा, अन्यायके विषयकार्यन तैं है अहोठाभाव जिनकै, बहुरि पापकार्यन तैं, वा पापी पुरुषनि तैं मिथ्यात्वके पोषनहारे तिन विषैं धारै हैं जुगुप्सा, वा पापप्रवृत्ति विषैं, वा पापप्रवृत्तिके प्रवर्तनहारे विषैं, वा चतुर्गति संसार विषैं, आहोठा भावकूं धरै हैं। बहुरि सदोष आहार वा अक्रियाकरि निपजा भोजन ताविषैं भी ग्लानि करै है इत्यादि विषैं भी ग्लानि करै है ऐसा जुगुप्सा का अप्रत्याख्यान कषायभाव जानना १०।

बहुरि अपनी स्त्रीसूं है रमनेकी वांछा जाकैं, वा अपनी स्त्रीसहित रमण क्रीड़ा करै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल भावकी योग्यता सहित रमै है, अति आसक्त होय मूर्छाभावकों नाहीं धारै है, ऐसा पुरुषवेद अप्रत्याख्यान कषायभाव जानना ११।

बहुरि अपने भतारसौं रमनेकी है वांछा जाकैं, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित रमै है, ... [illegible] स्त्रीवेद कषायभाव जानना १२।

बहुरि नाहीं निपजैहै स्त्री–पुरुष सों कार्यरूप रमनेकी वांछा जाकैं ऐसा नपुंसकवेद अप्रत्याख्यान कषायभाव जानना १३।

[illegible] कारण ऐसे अप्रत्याख्यान कषायके स्थानक तिन विषैं, उत्कृष्ट [illegible] स्थानक उदासीनभावकौं भजै हैं, तिन विषैं तो बहु [illegible] अभिलाषा जिनकैं, ते तो शनैः [illegible] ([illegible]) भी नाहीं।

ऐसैं प्रत्याख्यान लोभ कषा[illegible] [illegible] कारण है।

बहुरि अपने भावनका विशुद्धता होत संत [illegible]
संतै वा शास्त्रके नवीन अर्थकी सिद्धि होत संतै इत्यादि कार्यनके [illegible]
होय है।

॥ इति प्रत्याख्यान हास्यभाव समाप्त ॥

बहुरि धर्म संबंधी कार्यन विषैं रतिभाव है, वा धर्मके धारकन विषैं रतिभाव है, [illegible]
है और ठौर रतिभावको अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान रति कषायभाव जानना ६।

बहुरि सर्व सांसारीक कार्यनसौं अरुचिता भजै है। वा धर्मके विध्वंसकन विषैं वा मिथ्याधर्मके पोषण विषै,

अब प्रत्याख्यान कषायभाव प्ररूपण कीजिये है--

अप्रत्याख्यान कषाय सहित दोनों कषायोंका तौ भया है अभाव जाकैं अरु प्रत्याख्यान सहित दोय कषायका है उदय जाकैं, सो जीव सर्व सांसारीक विषय, कषाय, कार्यनतै भया है उदास परन्तु प्रत्याख्यानके उदयके जोरतें सकल संयमकूं नाहीं ग्रहण कर सकै हैं, तातैं बहु आरम्भ, बहु परिग्रहका त्यागकरि, अल्पसा परिग्रह अरु अल्प आरंभ प्रमाण सहित अंगीकार करै है, सो अल्पारम्भ भी क्षुधादि रोग निवृत्तिके अर्थ है, विषय सेवनके अर्थ नाहीं है, तहां तेरह प्रकार कषाय ऐसी अवस्थासौं प्रवर्तै है सो कहिये है।

तहां प्रथमही प्रत्याख्यान क्रोध कहिये है—

उद्यमकरि त्रस स्थावर जीवनकी हिंसाके अर्थि क्रोध नाहीं करै है, अपने धन, प्राणकी रक्षाके अर्थि क्रोध नाहीं करै है, कोई अपना लौकिक कार्य बिगाड़ दे है तापर भी क्रोध नाहीं करै है, तो कहां क्रोध उत्पन्न होय है? धर्मके बाधकनि विषैं, मिथ्यात्वके पोषकनि विषैं, चतुर्विध संघकौं कष्ट देनहारेनि विषैं इत्यादि धर्मपक्ष विषैं तो क्रोध उत्पन्न होयभी, अन्य लौकिक कार्यनि विषैं प्रत्याख्यान क्रोधकी उत्पत्ति होय नाहीं, जातैं या कषायके उदयमें एकदेश जीवकी शक्ति प्रगट होय है।

॥ इति प्रत्याख्यान क्रोध कषायभाव निरूपणम् ॥

बहुरि प्रत्याख्यान मान कषाय भाव कहिये····

दूर भये हैं आठोंही प्रकारके मद जिनकैं, अरु दूर भया है परसौं मद भाव जिनकें, ताकरि बहुत प्रकार भया है मानका अभाव जिनकें, कोई अल्प अंश मान करै है, ताकरि अपने देश संयम भावकी रक्षा करै है, अनेक कष्ट आताप आये भी कोईभी कष्ट निवारणकी सामग्री काहूपास भी जांचै नाहीं, तथा अपनी हीनता काहु प्रकार भी प्रगट करै नाहीं

पैलो चलाय आप उपकार करावै ही है कोईभी राजा रंक सों आपकूं छोटा बड़ा नाहीं मानै है, अपने पद कूं कोई प्रकारभी नींचा नाहीं दिखावै है। ऐंसा प्रत्याख्यानमान कषाय भाव जानना।

बहुरि प्रत्याख्यान माया कषायभाव कहिये है :—सर्व प्रकार पहिले कूं ठगिनेके आर्थि माया नाहीं करै हैं, कै तो अपने धन प्राणकी रक्षाके अर्थि कोई अवसर आय पड़े तो माया करै, ना भी करै वा अपना धर्म राखिनेके अर्थि वा धर्मके रक्षाके अर्थि वा चतुर्विध संघकी रक्षाके अर्थि वा पर जीवनकी रक्षाके अर्थि इत्यादि कार्यनके आश्रय माया कषाय-भावका सद्भाव है और प्रकार नाहीं। इति प्रत्याख्यान माया कषायभावः।

•••• अब प्रत्याख्यान लोभ कषायभाव कहिये है ••••

जो आजीविका न्यायरूप प्रमाण सहित राखी है ताहि विषैं न्यायरूप लोभ हैं। तिस मर्यादको उलंधि लोभ नाहीं करैं। ना बनै तो अपना धन प्राण कुटुम्बादिककी रक्षाकौं भी लोभ करैं है वा अपने तथा परके धर्म बंधावनेका भी लोभ है वा अपने अपूर्व शास्त्रकी सिद्धिका भी लोभ है इत्यादि योग्य लोभ भाव पाइये है।

ऐसें प्रत्याख्यान लोभ कषायभाव जानना।

बहुरि अपने भावनका विशुद्धता होत संते श्री गुरु साधर्मीका संगम होत संते वा जिन धर्मकी बधवारी होत संतै वा शास्त्रके नवीन अर्थकी सिद्धि होत संतै इत्यादि कार्यनके विषैं प्रसन्नता होय है, अन्य कार्यनके विषैं प्रसन्नता न हौय है।

॥ इति प्रत्याख्यान हास्यभाव समाप्त ॥

बहुरि धर्म संबंधी कार्यन विषैं रतिभाव है, वा धर्मके धारकन विषैं रतिभाव है, वा शास्त्रके अर्थविषैं रतिभाव है और ठौर रतिभावको अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान रति कषायभाव जानना ६।

बहुरि सर्व सांसारीक कार्यनसौं अरुचिता भजै है। वा धर्मके विध्वंसकन विषैं वा मिथ्याधर्मके पोषण विषैं,

इत्यादिकन विषैं अरतिभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान अरति कषायभाव जानना ७।

बहुरि धर्मकौं विघ्न होतैं, वा साधर्मीको, वा चतुर्विध संघकौं उपद्रव होत संतै, वा गुरुजन साधर्मीका मरणादि वियोग होत संतै, वा अपने धर्मविषैं दोष लगते शोक होय है और प्रकार शोक न होय है। इति प्रत्याख्यान शोक कषायभाव जानना ८।

अपने संयम विषैं दोष लागनेका है भय जिनकैं और प्रकार भय नाहीं प्रवर्तै है। ऐसा प्रत्याख्यान भय कषाय-भाव जानना ९।

बहुरि सांसारीक सुखसौं है ग्लानि जिनकैं, वा मिथ्याधर्मसौं, वा मिथ्याधर्मके धारकनसौं, वा मिथ्याधर्मके पोषकनसौं है अहोठा भाव जिनकैं इत्यादि प्रत्याख्यान जुगुप्सा कषायभाव प्रवर्तै है १०।

बहुरि मिटगये हैं सर्व काम विकारभाव जिनके, बुद्धिपूर्वक बार बार कामचेष्टा नाहीं करै है, पुरुषवेद नामा मोहकर्म तीव्र उदय होय तहां निज स्त्रीका संबंध है ते तो विषय सेवन कदा काल उदासीन भाव युक्त करैभी अर जिनकैं निज स्त्रीका संबंध न होय, तौ अपने सम्यग्ज्ञान भावसौं जैतै मंद पाड़े तिनको फिर तीव्र उदय न होय। ऐसा पुरुषवेद प्रत्याख्यान कषायभाव जानना ११।

बहुरि जे देश संयमकूं धारैं हैं, ऐसी श्री महाभाग्य स्त्री तिनके स्त्रीवेद नामा मोह कषायका तीव्र उदय होय, अरु निज भरतारका संबंध होय तौ भरतारकी इच्छापूर्वक विषय सेवन होय, अरु जिनकैं भरतारका संबंध नाहीं तिनकैं स्त्रीवेदका तीव्र उदय होय नाहीं, जातैं परिणाम जिनके अति विशुद्ध हैं सौही है कारण जिनकौं, ऐसा स्त्रीवेद प्रत्याख्यान कषायभाव जानना १२।

बहुरि नपुंसकवेदका है उदय जिनकैं, ऐसे प्रत्याख्यान कषाय भाव सहित पंचम गुणस्थानवर्ती देशसंयमी जीव तिनकैं भावनकी अति विशुद्धता थकी बुध्दिपूर्वक नपुंसक वेदके उदयका अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान नपुंसक वेद

कषायभाव जानना १३ ।

इत्यादि कथन किया सो देशसंयम योग्य स्थानक प्रत्याख्यान कषायके असंख्यात लोकप्रमाण स्थानक हैं तिन विषैं उत्कृष्ट अनुभाग सहित स्थानकनके उदयकी अपेक्षा किया है जातैं देशसंयमके घातक सर्वघाती प्रत्याख्यान कषायके असंख्यात लोकप्रमाण स्थानक तौ अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान कषायकी लारही उदयके अभावकूं प्राप्त भये हैं तिनिका तौ यहां उदय नाहीं, अरु मंद अनुभाग सहित उदय स्थानकनका उदय होतैं कार्यका सद्भाव होय नाहीं, बहुरि मंदतर स्थानकनिका उदय विषैं बुध्दिपूर्वक भी प्रत्याख्यानका भाव होता नाहीं। केवलीगम्य ही भाव होय हैं। तातैं कार्य रूप भाव तीव्र अनुभाग सहित उदय स्थानकन विषैं ही हैं, तातैं दूसरी व्रत प्रतिमा विषैं देशसंयम योग्य तीव्र स्थानकनका उदय है ।

बहुरि तीसरी सामायिक प्रतिमा सूं लगाय अष्टम आरंभत्याग प्रतिमा पर्यन्त मंद अनुभाग सहित स्थानकनके उदय हैं। अरु परिग्रहत्याग नवमी प्रतिमा तैं लगाय दशमी एकादशमी प्रतिमा विषैं मंदतर अनुभाग सहित स्थानकनका उदय जानना। यह प्रत्याख्यान कषाय भाव वर्तमान तौ दुःख हीके कारण हैं, अरु आगामी देवगतिके कारण हैं ।

बहुरि प्रत्याख्यान कषायका गुणस्थान तो एकदेश संयम ही है। पंचम गुणस्थान विषैंही प्रत्याख्यान कषाय भाव प्रवर्तैं है। अरु मार्गणा स्थानकन विषैं **गति** मनुष्य, तिर्यंच, **जाति** पंचेंद्रिय व, **काय** त्रस, **योग** ९ चार मनोयोग चार वचनयोग औदारिक काय योग, **वेद** ३, **कषाय** अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान आठ बिना १७, **ज्ञान** सुज्ञान ३ मति श्रुत अवधि एवं तीन, संयम-देशसंयम १, दर्शन–चक्षु अचक्षु अवधि ये तीन, लेश्या ३, पीत पद्म शुक्ल। भव्य १, **सम्यक्त्व** ३ उपशम १ क्षयोपशम १ क्षायिक १ **सज्ञी** १, आहारक १ इन विषैं प्रवर्तैं है ।

॥ इति प्रत्याख्यान कषाय भाव समाप्तः ॥

अथ संज्वलन कषाय भाव प्रारंभः—

तहां सकल संयमके स्थानक संज्वलन कषायके सर्वघाती स्थानकनका तौ अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान कषायनकी लार ही उदयका अभाव भया, अरु जहां मंद अरु मंदतर अनुभाग कौं धरै ऐसे स्थानकनका जिन जीवनके उदय होय, ते जीव सकल संयम विषैं ही उदय हैं। तहां किंचित् प्रमाद उपजै है। तहां हार विहारादि कार्य-रूप प्रवर्तै है, तहां चारित्रका कारण जो शरीर ताकी रक्षाके अर्थि तौ आहारादि रूप प्रवृत्ति करै है। बहुरि मोहके अभावके अर्थि वा तीर्थयात्रा वा गुरु पूजनादि के अर्थि विहारादि रूप प्रवृत्ति करै वा जिनमतके प्रवर्तनके अर्थि वा जीवनके उपकार निमित्त उपदेशादि प्रवृत्ति करै, बहुरि इन ही प्रवृत्तिन विषैं पंचाचार वा अट्ठाईस मूलगुणादि रूप प्रवर्तै है, तहाँ प्रवर्तै है। इन त्रयोदश प्रकार संज्वलन कषाय कार्यरूप होय भी प्रवर्तै है।

बहुरि सप्तम गुणस्थान सौं लेय क्षूक्ष्मसाम्पराय दशम गुणस्थानपर्यन्त तेरह कषायनका मंद अरु मंदतर स्थान-कनका उदय है, तहां कार्यरूप वा बुद्धिपूर्वक इन कषायनका उदय ही नाहीं, अति मंद प्रमाद उपजावनेकी शक्ति रहित अबुद्धिपूर्वक उदय होय है, ऐसा इन संज्वलन कषायनका संक्षेपरूप कथन किया।

यह संज्वलन कषाय वर्तमान तो दुःखहीका कारण है अरु आगामी देव गतिकौ कारण है। बहुरि संज्वलन कषायभाव प्रमत्त १, अप्रमत्त २, अपूर्वकरण ३, अनिवृत्तिकरण ४, सूक्ष्म साम्पराय ५, इन पांच तौ गुणस्थानकन विषैं प्रवर्तै है। बहुरि मार्गणानि विषैं मनुष्य **गति** १ पंचेन्द्रिय **जाति** १ **त्रसकाय** १ मनोयोग ४ वचनयोग ४ औदारिककाय योग १ आहारक १ आहारकमिश्र १ ऐसे ११, **वेद** ३ कषाय १३ **ज्ञान** केवल बिना ४ मति १ श्रुत १ अवधि १ मनःपर्यय १ **संयम** सामायिक १ छेदोपस्थापना १ परिहारविशुद्धि १ शूक्ष्मसाम्पराय १ इन च्यारि विषैं, **दर्शन** चक्षु १ अचक्षु २ अवधि ३ इन तीन विषैं, लेश्या ३ पीत, पद्म, शुक्ल, भव्य १, सम्यक्त्व—उपशम १ क्षमोपशम १ क्षायिक १ संज्ञी १ आहारक १

इन मार्गणा विषैं प्रवर्तैं है। ऐसे इन चार कषाय भावनका निरूपण किया। सो ये भाव हेय जानि तजने।

॥ इति श्रीभावदीपिकाके औदयिकभाव विषैं तीसरा कषायाधिकार समाप्त हुआ ॥



अथ लेश्या भावाधिकार प्रारम्भः —

दोहा —

लेश्या अशुभ मिटायकैं शुभ लेश्यामय होई।
कर्म सु मलक्षय कर नमूं ठये अलेश्या सोई॥

कषाय रंजित योगनकी प्रवृत्तिका नाम लेश्या है, जातैं आत्मा कूं कर्मनि सैती लिप्त करैं ऐसे योग अर कषाय तातैं इनका नाम लेश्या है। नाम कर्मके उदयतैं द्रव्यमन द्रव्यवचन द्रव्यकाय निपजैं हैं, तिनकी चेष्टा कहिये प्रवृत्ति होते संतैं आत्माके प्रदेश चंचल होय हैं। प्रदेश चंचल होतैं कर्मके ग्रहणकी शक्ति निपजै है, ताकरि कर्म वर्गणानिका ग्रहण होय। आत्माके प्रदेशांसे एक क्षेत्रावगाहसंयोग होय है, तातैं इनका नाम योग है। इन योगँन-की कषाय सहित प्रवृत्ति ताकौं लेश्या कहिये, ऐसा लेश्याका स्वरूप है सो ही शास्त्रनि विषैं कह्या है।

बहुरि योग कषायनकी प्रवृत्ति तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर इन च्यार प्रकार होय है। ताके अनुसार आत्मा पंच पाप रूप कार्य विषैं प्रवर्तैं है। हिंसा १ अन्टत २ स्तेय ३ अब्रह्म ४ परिग्रह—विषयतृष्णा ५ इन पंच पाप रूप जो तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर, कार्य ताके अनुसार कृष्ण १ नील २ कापोत ३ पीत ४ पद्म ५ शुक्ल ६ ऐसे दृष्टान्त पूर्वक लेश्याके छह नाम है।

बहुरि कषाय चार प्रकार है—क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ सो ये क्रोधादि कषाय उत्कृष्ट अनुभागकौं धरैं उदय होंय हैं, तब आत्मा उत्कृष्ट पंच पाप मन वचन काय करि करै है। तहां तिस भावका नाम कृष्ण लेश्या कहिये। तातैं ये कषाय भाव महापापरूप प्रवर्तैं हैं, तातैं इनकों कृष्ण कहिये। बहुरि जहाँ क्रोधादिक कषाय मध्य अनुभागकों धरैं उदय होंय हैं, तब आत्मा मन वचन काय करि किछु घाटि पंच महापाप करै है। तहां तिस भावका नाम **नील** लेश्या है। जातैं ये कषाय भाव कृष्णलेश्यासों किछु घाटि महापाप रूप हैं, तातैं याकौं नील कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय तासैं भी नीचला मध्य स्थानकन विषैं मध्य अनुभाग कों धरैं उदय होंय हैं तब आत्मा मन वचन काय करि जघन्य पंच पाप करै है। तहां आत्माका किछु ज्ञान चमकै है। जैसे कापोत कहिये कबूतर ताकी पंख काली हैं, तथा पीत विषैं सफेदी का अंश चमके है तैसैं सो ज्ञान पंच पाप रूप कालिमा सहित है तैसें आत्माका ज्ञान अंश चमके है, तथापि पंच पाप रूप कालिमा सहित है। किछु कार्य कारी नाहीं। तातैं याकौं **कापोत** लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादिक कषाय मंद अनुभाग कौं धारैं उदय होंय, तब आत्मा मन वचन काय करि पंच पाप मंद करै है। तहां किछु धर्मानुराग युक्त होय तिस भावका नाम **पीत** लेश्या कहिये।

बहुरि जहाँ क्रोधादि कषाय अति मंद अनुभागकौं धरैं उदय होंय तब आत्मा मन वचन काय करि पंच पापन कौं अति मंद करै है। तहां किछु अधिक हीन त्याग भाव प्रवर्तैं है। तहां तिस भावका नाम **पद्म** लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय मंदतर अनुभागकौ धरैं उदय रूप होंय तब आत्मा बुद्धिपूर्वक पंच पापन कूं नाहिं करै है। सब लौकिक कार्यन विषैं उदासीन भाव धरै। तहां आत्माके भावकौं शुक्ल लेश्या कहिये। अर क्रोधादि कषाय चार चार प्रकार होय प्रवर्तैं हैं। अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ, एवं सोलह भेद कषाय भावके भये। जहाँ अनंता–

नुबंधी सहित अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन कषाय प्रवर्तै है तहां कृष्णादिक छहों लेश्या पाइये है। सो लेश्या अनंतानुबंधीकी कहिये। तहां कृष्णादि एक एक लेश्या क्रोधयुक्त, कृष्ण लेश्या १, मानयुक्त कृष्ण लेश्या २, मायायुक्त कृष्ण लेश्या ३, लोभयुक्त कृष्ण लेश्या ऐसे एक एक लेश्या च्यारि २ प्रकार हैं। ऐसे अनंतानुबंधी विषैं लेश्याके चौबीस भेद भये। तैसें ही अप्रत्याख्यान कषायन विषैं कृष्णादि छहों लेश्या पाइये है। तातैं अप्रत्याख्यान विषैं भी चौबीस भेद हैं। बहुरि प्रत्याख्यान वा संज्वलन कषायन विषैं पीत १, पद्म २, शुक्ल ३, ये तीन २ लेश्या ही पाइये है। तातैं इन विषैं क्रोध मान माया लोभ करि १२–१२ भेद हैं। ऐसे लेश्याभावके ७२ भेद भये।

बहुरि लेश्याके असंख्यात लोक प्रमाण भेद हैं। जातैं कषायनके उदय स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं ते ही लेश्याके स्थानक जानने।

अब कहे जे लेश्याके बहत्तर भेद तिनका स्वरूप, लक्षण, कार्य, फल इत्यादि निरूपण कीजिये है....

प्रथमहिं अनंतानुबंधी के चौबीस भेद कहिये है। तिनहिं विषैं अनंतानुबंधीकी कृष्ण लेश्या कहिये हैं–

कृष्णलेश्या वाला जीव अतिप्रचंड, क्रोधी होय, बैर न छौड़े, भीड़नेका तथा लड़नेका जाका सहज स्वभाव होय, झूठवचन बौले, बहुरि दयाधर्म करि रहित होय, अदेखसका भाव बहुत होय, पराया पुण्य उदय तथा पुण्य सामग्रीकूं देखि न सकै, बहुत छलबल करि युक्त होय ताकरि किसीके बसि न होय, निःशंक होय, स्वच्छन्द होय, कोईका कह्या न माने, वा ज्ञान चातुर्य करि रहित होय, क्रियारहित, दया रहित, अशुद्ध निःशंक जाका खानपान होय, सप्त व्यसननि विषैं आसक्त होय, स्पर्शादि पांच इन्द्रियनके विषयन विषैं अति लंपट होय, बहुत मानी होय, पैलेका मान भंग करै, अपना

मान पोषै, बहुत मायावी होय, बहुत लोभी होय, पराये धन संपदा हरनेकी जाकैं शाश्वती वांछा रहैं, बहुत कामी होय। पराई स्त्री सौं विषय सेवनकी, वा हरनेकी जाकैं सदाकाल वासना रहै, पूर्वापर विचार रहित होय, मूर्ख होय, क्रियाकरि भ्रष्ट होय, जाकै अभिप्रायकौं और न जानैं। पंच पाप जे हिंसा, झूंठ, चोरी, कुशील, परिग्रह, इनके करनेकी सदाकाल वांछा प्रवर्तै इत्यादि लक्षण करि युक्त होय। बहुरि पंच पापके कार्यरूप प्रवर्तै, लोभके अर्थि वा मानके अर्थि, विषयके सेवनके अर्थि, वा विना प्रयोजन ही हिंसा करनी, मनुष्यकूं मारना, तिर्यंच विनाशना, गैला मारना, संग्राम करना, मरना मारना, अपघात करना, परघात करना, अनेक प्रकार जीवनकौं दुःख देना, सताना, वा अनेक प्रकार अन्यायरूप हिंसाका कारण आरम्भ करना इत्यादि हिंसा महापाप करना।

बहुरि अनेक प्रकार झूंठ बोलना, बहुरि चौरी करना, औड़ा देना, धाड़ा दैना, गैला लूटना, पराये घरसूं वस्तु आदि उठाय लावना, भीले मारना, रकम चुराना, परस्त्री तथा पर पुत्रादिक हर लावना, जोरावरी खोस लेना, पराया धन खोंस लेना, इत्यादि चौरी करनी, परस्त्री सौं विषय सेवना, बहुरि हिंसा, झूंठ, चौरी करवा और अनेक प्रकार अन्याय करि पाप करि, परिग्रहका संग्रह करना इत्यादि पंच पाप क्रोधयुक्त होयकरि निःशंक करना, वा मायाचारी करना, तहां अन्याय-रूप पंच पाप निःशंक करना, वा पैला पास करावना, वा पंच पाप करने वालेकी सराहना करना, प्रसन्न होना इत्यादि महा-पापरूप अनंतानुबंधीकी कृष्ण लेश्या जाननी।

बहुरि अन्य धर्म बुद्धि पंडितकी रक्षाकरि ताका अपकार करनेके अर्थि, वा अपना मान पोषनेके अर्थि, वा लोभादिके अर्थि शास्त्रका अर्थ अन्यथा करना, झूंठा उपदेश देना, मिथ्या शास्त्र बनावना, अन्य कृत शास्त्र विषैं अपना अभिप्राय पोषना, श्लोक काव्यादि मेलना, इत्यादि कार्यकरि भव भव विषैं जीवनका घात करना, आपका घात करना, आपकैं, परकैं, पंच पापनकी संतति खड़ी करनी, सोभी महापापका मूल अनंतानुबन्धीकी कृष्ण लेश्या जाननी।

बहुरि जिन मंदिरमें रहना, स्त्री आदिन सों विषय करना, सोवना, भोजनादि करना, पंच इंद्रियनका

विषय सेवन करना, सप्त व्यसन सेवना, रार करना, संग्राम करना, विवाहादि कार्य करना, अपने तिर्यंचादिकन कूं मंदिरमें बांधना, अपना धनधान्यादि सामग्री मंदिरमें धरनी । बहुरि देव गुरु धर्मादिकका अविनय करना, निर्माल्य द्रव्य खाना, जिन मंदिरका द्रव्य चुराकर ले जाना सोभी अनंतानुबंधी कृष्ण लेश्या जाननी । इत्यादि अनंतानुधीकी कृष्ण लेश्याके पंच पापनि रूप कार्य जानना । ऐसैं पंच पापन रूप मन वचन कायकी प्रवृत्ति क्रोधकी वासना सहित प्रवर्तै है वा क्रोध सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी क्रोध युक्त कृष्ण लेश्या कहिये ।

बहुरि जो मानकी वासना सहित प्रवर्तै, वा मान सहित प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी मान युक्त कृष्ण-लेश्या कहिये ।

बहुरि जो मायाकी वासना सहित प्रवर्तै वा माया सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंभीकी माया युक्त कृष्ण लेश्या कहिये ३ ।

बहुरि जो लोभकी वासना सहित प्रवर्तै वा लोभ सहित प्रवर्तै हैं सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त कृष्ण-लेश्या कहिये ४ ।

अब अनंतानुबंधीकी नील लेश्या कहिये है --

नील लेश्यावालेके सर्व लक्षण कृष्ण लेश्यावालेके लक्षण वत समान जानने । विशेष इतना कि--नील लेश्यावाला आलसी होय, निद्रा जाकै बहुत होय, पहिला कूं ठगना जाकै बहुत होय, कुटुम्ब विषैं जाकै स्नेह बहुत होय । पंच इंद्रियनिके विषयनि विषैं अति आशक्त होय, धनधान्यादिककी तीव्र वांछा सहित होय, तथा धनधान्यदिक विषैं अति आसक्त होय, ताकी रक्षाविषैं तत्पर होय, भयकरि युक्त होय, बहुरि पच्चीस विकथा विषैं आरूढ़ होय, तहां पच्चीस-विकथाके नाम---

स्त्रीकथा १ अर्थ कथा–धनादिककी कथा २ भोजन कथा ३ राजकथा ४ चोर कथा ५ वैर करनहारी कथा ६ पराया खंडनरूप परखंड कथा ७ देशकथा ८ भाषा कहानी आदि कथा ९ पराया गुण प्रगट न होय ऐसी कथा गुण–बंध कथा १० धियाड़ी, शीतला, चंडी, मुंडी आदिकी कथा सो देवी कथा ११ कठोर वचनरूप निष्ठुर कथा १२ दुष्टता-रूप पर पैशुन्य कथा १३ कामादिरूप कंदर्प कथा १४ देशकाल विपरीत सो देशकालानुचित कथा १५ निर्लज्जता रूप सो भंड कथा १६ मूर्खतारूप सो मूर्ख कथा १७ अपनी बड़ाईरूप सो आत्मप्रशंसा कथा १८ पराई निंदारूप सो परपरिवादक कथा १९ पराई घृणारूप सो पर जुगुप्सा कथा २० परकों पीड़ा देनहारी रूप सो पर पीड़ा कथा २१ लड़ने रूप सो कलह कथा २२ परिग्रह कार्यरूप सो परिग्रह कथा २३ खेतीका आरंभरूप सो कृष्यारंभ कथा २४ नृत्य-संगीत वादित्रादिरूप संगीत वादित्रादि कथा २५ इति पचीस कथा नाम समासः।

इत्यादि विशेष नील लेश्यावाले विषैं और प्रवर्त्तैं हैं, तातैं कृष्णलेश्या वालोंकी अपेक्षा याकौं पंच पापन विषैं कषायभी थोड़ा लागै है, तातैं पंच पापनरूप याके कार्य भी किछू हीण होय हैं, यातैं याको नील लेश्या कहिये है।

बहुरि आजीविकाके निमित्त नानाप्रकार खोटा भेष धारणा, तहां पंचेंद्रियनके विषय पोषनैं, धन संचय करना, दश प्रकार परिग्रह राखना, आपको पूज्य मानना, बलात्कारै पुजावना, जो भक्ति करै तासौं संतुष्ट होना, ना करै तासौं द्वेष करना वा लोभके अभिनिवेश सहित धर्म प्रवृत्ति करनी इत्यादिक कार्य करना सो नील लेश्या जाननी, इत्यादि कार्य अन्याय वा पांच पाप जहां मन वचन काय करि वा कृत कारित अनुमोदना करि क्रोधकी वासना सहित वर्तै, वा क्रोध–सहित वर्तै सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त नील लेश्या कहिये ५।

बहुरि जहां मानके अभिनिवेश सहित वा मान सहित वर्तै तहां अनंतानुबंधीकी मान युक्त नील लेश्या कहिये ६।

बहुरि जहां मायाके अभिनिवेश सहित वा माया सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी माया युक्त नील

लेश्या कहिये ७।

बहुरि जहां लोभकी वासना सहित प्रवर्तै वा लोभ सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी लोभ युक्त नील लेश्या कहिये ८।

अब अनंतानुबंधीकी कापोत लेश्या कहिये है....

निरर्थक पैला ऊपर क्रोध किया करै, पैलाकी बहुत प्रकार निंदा करै, पैलाने बहुत प्रकार दुखावै, शोक जाकै प्रबल होय, भय जाकै बहुत होय, अदेखसका भाव जाकै बहुत होय, पैलाकी पुण्य सामग्री वा पैलाका पुण्य उदय सुहावै नाहीं, पैलाका अपमान करना, अपनी बड़ाई करनी, किसीका विश्वास न करना अरु अपनी कोई योग्य निंदा करै तौभी न सुहावै, जो कोई अपनी बड़ाई करै तापर संतुष्ट होय, अपनी पराई हानि-वृद्धि न समझै, युद्धविषैं मरण कूं चाहै, अपनी प्रशंसा करनेवालेकों बहुत धन देना, जस बड़ाई के अर्थ धन खरचना, व्यवहारादिक कार्यनके विषैं बहुत धन खरचना, शरीरादिककी रक्षाके अर्थि वा बलपराक्रमादिके अर्थि धन खरचना, जस बड़ाईके अर्थि संग्राम विषैं युद्ध करना, मरना मारना, बांधवादिकके अर्थि अपघात करना, जस बड़ाईके अर्थि दान दैना, जस बड़ाई मानादिकके अर्थि पूजा करना, प्रतिष्ठा करना, जिन मंदिर बनवाना, तीर्थजात्रा करनी, शील पालना, संयम धारना, तप करना, शास्त्राभ्यास करना, इत्यादि धर्मकार्य करना, कार्य अकार्यकों न जानै, हेय उपादेयकों न जानै, न्याय अन्याय तथा पांचों इंद्रियनके विषयन विषैं अति आसक्त रहै तिनके अर्थि बहुत धन खरचै, सप्त विसन सेवै, तहां बहुत धनादिक लगावै, बहुरि अनेक प्रकार नृत्यादि कौतूहल करना करावना, कौतूहल देखने विषैं आसक्त रहना, अपने पुण्यउदय विषैं बहुत मग्न रहना, वा अपने आजीविकाके कार्यनिविषैं मग्न रहना, आसक्त रहना, परलोकके अर्थि धर्मकी वासना ही न धरनी धनादिक उपजावनेकों वा आजीविकादिक उपजावनेकों, वा विवाहादिक कार्य वा विषयादिक कार्यनके अर्थि बहुत वांछा सहित अहर्निश

संकल्प-विकल्प कियो करै। लौकिक कार्यनके आश्रय पैलाका जस करना, वड़ाई करनी बहुरि स्त्रीपुत्रादिक जे कुटुम्ब तिनसौं स्नेह करना, पुत्रादिकनको श्रृंगार करना, स्त्रीकौं शोभा सहित राखणी, आप शोभा सहित रहना, हवेली बनवानी, बाग बनवाना, कूवा तालाव कुंड बनवाना इत्यादि कार्यनाविषैं क्रोधादि कषाय जन्य होय प्रवर्तै तिनके अर्थि पंच पाप जघन्य सेवन करै, सो कापोत लेश्या कहिये। तहां ए कहे कार्य ते वा इनके अर्थि पंच पाप तहां क्रोध सहित होय सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त कापोत लेश्या है ९।

अर जहां मान सहित होय सो अनंतानुबंधीकी मानयुक्त कापोत लेश्या कहिये १०।

अर जहां माया सहित होय सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त कापोत लेश्या कहिये ११।

अर जहां लोभ सहित होय सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त कापोत लेश्या कहिये १२।

अब अनंतानुबंधीकी पीत लेश्या कहिये है :-

मंद भये हैं क्रोधादि कषाय जाकै, अर नहीं है उद्यमकरि पंचपाप करने की वांछा जाकैं, अर उपजा है परभव संबंधी नरकादिकनका भय जाकों, अर उत्पन्न भई है पर भव संबंधी स्वर्गादिकनके विषै विषयनका चाह जाकैं, वा तिनहीके हेत कार्य अकार्यको विचारै है, हेय उपादेयकों विचारै है, सेवने योग्य तथा न सेवने योग्यका ज्ञान करै है, जाकूं पुण्यरूप सुकार्य जानै ताकूं तो करै, अर जाकूं पापरूप अकार्य जानै सो न करै, जाकूं त्यागने योग्य जानै ताकूं त्यागै, अर जाकूं उपादेय जानै ताकों ग्रहण करै, अर जाकूं सेवन योग्य पदार्थ जानै ताकूं सेवै, न सेवने योग्य होय ताकूं न सेवै, सर्वविषैं समदर्शी होय, काहू सों द्वेषभाव व ईर्षाभाव नाहीं करै है, सर्व जीवन पर दयाभाव राखै। बहुरि कषायरहित परलोकके अर्थि दुखित सुखित जीवांनैं वा जिनकों पूज्य मानै तिनकों दान देय, मन वचन काय जाका मदरहित कोमल होय, मन तो जाका पापके विचार रहित होय, अर वचन जाका मिष्ट होय, काय

अर्थि पंचपापन विषैं निःशंक होय प्रवर्तना सो कृष्णलेश्या कहिये।

इन कार्यन विषैं प्रवर्तैं क्रोधकषाय सहित होय सो अप्रत्याख्यान कषायका क्रोधरूप कृष्ण लेश्या कहिये १।

जो मान कषाय सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यानमानरूप कृष्ण लेश्या कहिये २।

अर जहां माया सहित प्रवृति होय सो अप्रत्याख्यानकी माया रूप कृष्ण लेश्या कहिये ३।

अर जहां लोभ सहित प्रवृत्ति होय सो अप्रत्याख्यानकी लोभरूप कृष्ण लेश्या कहिये ४।

अब अप्रत्याख्यानकी नीललेश्या कहिये है:—

जहां कृष्ण लेश्या करि कहे कार्य तिनविषैं किछु मंदकषाय रूप आलस सहित प्रवर्तैं, किछु पूर्वापर विचार सहित भी प्रवर्तैं, सो नील लेश्या कहिये ५।

अर जहां क्रोधसहित प्रवर्तैं सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधरूप नील लेश्या है ६।

अर जहां मानसहित प्रवर्तैं सो अप्रत्याख्यानकी मान रूप नील लेश्या है ७।

अर जहां मायासहित प्रवर्तैं सो अप्रत्याख्यानकी माया रूप नील लेश्या ८।

बहुरि लोभसहित प्रवर्तैं सो अप्रत्याख्यान की लोभरूप नील लेश्या कहिये ९।

अब अप्रत्याख्यानकी कापोतलेश्या कहिये है:—

जो अपने कार्यका बिगाड़ करै ता ऊपर क्रोध करै, दोष सहित होय ताकी निंदा करै, जो महादोषवान पुरुष है ताकौ पराभव करै, इष्ट वियोग विषैं शोक करै, जहां अपना पराभव होता दीखे तहां भयवन्त होय पंच पाप रूप जहाँ मंद भावन सहित प्रवर्तैं, अपने न्याय कार्यके बाधक थकी अदेखसका भाव राखै, अपने न्याय कार्यन विषैं

मर्याद रूप क्रोध मान माया लोभ रूप भी प्रवर्तै, अपनी न्याय रूप आजीविका कै अर्थि, असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्पादिक तथा दास, पशुपालनादि षट् कर्मन विषैं प्रवर्तै, न्यायरूप आजीविका कार्य करै, पापरूप अपने, पंचेंद्रियके विषय सेवै, विवाहादि कषाय कार्यभी करै इत्यादि प्रवृत्ति विषैं प्रवर्तना कापोत लेश्या जानना ।

अरु जहां इन कार्यन विषैं क्रोध सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यान क्रोध युक्त कापोतलेश्या कहिये ९ ।

अरु जहां मान सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यान मानयुक्त कापोतलेश्या कहिये १० ।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त कापोतलेश्या कहिये ११ ।

बहुरि जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त कापोतलेश्या कहिये १२ ।

अब अप्रत्याख्यानकी पीतलेश्या कहिये हैं....

जहां क्रोधादि कषाय मन्द होय प्रवर्तै, राज्यादिक जे आजीविकाके कार्य, वा संग्राम विवाहादिक कषाय कार्य, वा विषय कार्य तिनसैं उदासभाव होय, अरु पूजा, प्रभावना, तीर्थयात्रा, तप, संयमादि विषैं शुचि होय तहां हर्ष-करि प्रवर्तै, अणुव्रत महाव्रत ग्रहण करनेकी अरु संसारके छोड़नेकी वांछा प्रवर्तै, हिंसा अनृत, स्तेय, कामसेवन, जहां मंद होय, परिग्रहके भारको छोड़ो चाहै, पात्र विषैं च्यार प्रकार दान देनेकी निरंतर प्रवृत्ति होय इत्यादि भाव पीतलेश्या विषैं प्रवर्तै हैं । तहां इन भावनरूप प्रवर्तावना, जहां क्रोध कषाय होय तहां अप्रत्याख्यानकी क्रोध सहित पीतलेश्या कहिये १३ ।

अरु जहां मान सहित प्रवृत्ति होय सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त पीतलेश्या कहिये १४ ।

बहुरि जहां माया सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी माया सहित पीतलेश्या कहिये १५ । अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभ सहित पीतलेश्या कहिये १६ ।

अब अप्रत्याख्यानकी पद्मलेश्या कहिये है :-

भये हैं क्रोधादि कषाय अति मंद जहाँ, अरु त्याग दिये हैं आजीविकाके कार्य वा कषाय कार्य वा इंद्रियनके विषय, अरु निरन्तर प्रवर्तें हैं देशसंयम वा सकलसंयमके ग्रहण करनेकी वांछा, अरु मुनिजन तथा गुरुजन वा चतुर्विध संघका वैयावृत्य करने विषै तत्पर होय, अरु भया है संयम भाव उत्पन्न जहाँ, इत्यादि भाव पद्म लेश्याके हैं। जहाँ इन भावन विषैं क्रोध कषाय प्रवर्ते सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये १७।

अरु जहाँ मान कपाय प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये १८।

जहां माया सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये १९।

अरु जहाँ लोभ सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये २०।

अब अप्रत्याख्यानकी शुक्ललेश्या कहिये है....

क्रोधादि कषाय जहां बहुत मंद होंय, सर्व कुटुंबादिक सों स्नेहका अभाव होय, सर्व सामग्री विषैं अरुचि होय, मन वचन काय अति निश्चल होंय, विपयवासनाकौ जहाँ अभाव होय, सप्त भय वर्जित होय, इसभव परभव विषैं भोगनकी वांछा रहित होय, अरु सर्व पदार्थन विषैं राग-द्वेष रहित समभाव होय इत्यादि भाव शुक्ल-लेश्याके हैं।

अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २१।

अर जहां मान सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २२।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २३।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ललेश्या कहिये २४। अरु अनंतानुबंधीकी पीत पद्म शुक्ललेश्या विषैं अनंतानुबंधी अति मंदरूप प्रवर्तै है। तहां तत्व श्रद्धानरूप द्रव्य सम्यक्त्व होय हैं, ताका माहात्म्य थकी अणुव्रत महाव्रत बुद्धिपूर्वक मोक्षके अर्थही धारै है। अरु बिधिपूर्वक अंतरंग बाह्य निर्मल दोषरहित पालै है, तथापि अनंतानुबंधीके मंद उदयके माहात्म्यथकी वा मिथ्यात्वके मंद उदयथकी अंतरंग अभिप्रायमें अबुद्धिपूर्वक कोई अंश अन्यथा अभिप्रायको वा अन्यथा प्रवृत्तिको चाल्यो जाय है, ताथकी मोक्ष मार्गका अभाव ही है।

अब प्रत्याख्यान विषैं कषायनकी अपेक्षा लेश्याके बारह भेद कहिये हैं --

जातैं प्रत्याख्यान कषाय भावन विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्याका अभाव है, अरु पीत, पद्म, शुक्ल इन तीन लेश्याओंका सद्भाव है, तातैं बारह भेद हैं। संज्वलन कषाय सहित प्रत्याख्यान कषाय अति मंद कषायनके स्थानकन विषै प्रवर्तै। प्रत्याख्यान कषाय सहित जीव संसार शरीर, भोगसों विरक्त होय, बहुरि बहुत आरंभ परिग्रह छोड़ि अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह विषैं तिष्ठैं, एकादश प्रतिमाका ग्रहणरूप जो देश संयम ताकौ ग्रहण करै, जातैं इहां देश संयम के घातक अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है।

बहुरि सकल संयम लेनेकी जाकै वांछा होय बहुरि च्यारि प्रकार हिंसा विषैं उद्यमी हिंसा, संकल्पी हिंसा, विरोधी हिंसा, इन तीन हिंसाओंका तौ अभाव होय, अरु आरंभी हिंसा भोजनादि क्रिया विषैं वा अल्पारंभके अर्थि अल्प विहारादिक कार्यन विषैं वा धर्म कार्यनिके प्रवृतिन विषैं अल्प होय है सो जतनाचार पूर्वक है। लौकिक कार्यनि विषैं अरुचि है, धर्म कार्यनि विषैं प्रीत सहित है। पांचों इंद्रियनकी प्रवृत्तिकै तौ राग अर्थि है वा धर्म अर्थि है, विषयके अर्थि नाहीं है इत्यादि लक्षणनि सहित प्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं। तहां इन कार्यन विषैं प्रवृत्ति भावरूप होय है, सो पीत लेश्या कहिये, सो पीत लेश्या क्रोध सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १।

बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं माया कपाय प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मायाभाव है २३ ।
बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं लोभ कपाय प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको लोभभाव है २४ ।

॥ इति अनंतानुबंधीके लेश्याके २४ भेद कहे हैं ॥

अब अप्रत्याख्यानकी लेश्याके चौवीस भेद कहिये है :—

जहां न्यायरूप विषयकार्य वा कषाय कार्य वा पांचों पाप प्रवर्तैं, बहुरि सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होजाय, जातैं इहां सम्यक्त्वका घातक अनंतानुबंधी वा अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है, तहां क्रोधादि भावकों प्राप्त होय प्रवर्तै, तहां अप्रत्याख्यानका लेश्याभाव जानना, जातैं कार्यके अंत जाकै क्रोधादि कषाय शांततानैं प्राप्त होंय, दयाधर्म करि सहित होय, सत्यवादी होय, पराये पुण्य उदय विषैं अदेखसा भाव नाहीं करै, सुज्ञान चातुर्यता करि मंडित होय, क्रियावान शुद्ध भोजनको भक्षक होय, सप्त व्यसनादि करि वर्जित होय, अष्ट मद कर रहित होय, सरल होय, अन्याय लोभ कर रहित होय, देव, गुरु, धर्मादिकका भक्त होय, शरणागत प्रतिपालक होय, उदार होय इत्यादि भावन सहित अप्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं । तहां प्रथम ही अप्रत्याख्यानकी कृष्णलेश्या कहिये है ।

जहां न्याय कषाय कार्यनके अर्थि, वा विपय कार्यनके अर्थि, मरना–मारना, संग्राम करना, अति प्रचंड क्रोधदि कषाय करना, अपना घात करना, पैलाका घात करना, झूंठ बोलना, चुरा लावना, चुरा मंगावना, स्वस्त्री सों आसक्त होय भोग करना, अनेक स्वस्त्रीन सों भोग करनेकी वांछा करनी, तातैं अनेक स्त्री परणनी, अपने मिले भोगन विषैं अतृप्त होना, न्याय पूर्वक बहुत परिग्रह बधावना, अपने न्यायरूप कार्यनके बाधकनकों वा प्रजाके बाधकनकों अनेक प्रकार दंड दैना, राजनसूं दंड लैना, मरना–मारना, मुलक इजारैं करना, जावत् वशमें न आवै तावत् अदेखसा भाव राखना, पांच इंद्रियनके विपयनकूं आसक्त होय सेवना, कौतूहल करना इत्यादि न्याय कषाय कार्यन विषैं वा विषय कार्यन विषैं वा तिनके

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ललेश्या कहिये २४। अरु अनंतानुबंधीकी पीत पद्म शुक्ललेश्या विषैं अनंतानुबंधी अति मंदरूप प्रवर्तै है। तहां तत्व श्रद्धानरूप द्रव्य सम्यक्त्व होय हैं, ताका माहात्म्य थकी अणुव्रत महाव्रत बुद्धिपूर्वक मोक्षके अर्थही धारै है। अरु विधिपूर्वक अंतरंग वाह्य निर्मल दोषरहित पाले हैं, तथापि अनंतानुबंधीके मंद उदयके माहात्म्यथकी वा मिथ्यात्वके मंद उदयथकी अंतरंग अभिप्रायमें अबुद्धिपूर्वक कोई अंश अन्यथा अभिप्रायको वा अन्यथा प्रवृत्तिको चाल्यो जाय है, ताथकी मोक्ष मार्गका अभाव ही है।

अब प्रत्याख्यान विषैं कपायनकी अपेक्षा लेश्याके वारह भेद कहिये हैं—

जातैं प्रत्याख्यान कपाय भावन विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्याका अभाव है, अरु पीत, पद्म, शुक्ल इन तीन लेश्याओंका सद्भाव है, तातैं वारह भेद हैं। संज्वलन कपाय सहित प्रत्याख्यान कपाय अति मंद कपायनके स्थानकन विषैं प्रवर्तै। प्रत्याख्यान कपाय सहित जीव संसार शरीर, भोगसों विरक्त होय, वहुरि वहुत आरंभ परिग्रह छोड़ि अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह विषैं तिष्ठै, एकादश प्रतिमाका ग्रहणरूप जो देश संयम ताकौ ग्रहण करै, जातैं इहां देश संयम के घातक अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है।

वहुरि सकल संयम लेनेकी जाकै वांछा होय वहुरि च्यारि प्रकार हिंसा विषैं उद्यमी हिंसा, संकल्पी हिंसा, विरोधी हिंसा, इन तीन हिंसाओंका तो अभाव होय, अरु आरंभी हिंसा भोजनादि क्रिया विषैं वा अल्पारंभके अर्थि अल्प विहारादिक कार्यन विषैं वा धर्म कार्यनिके प्रवृतिन विषैं अल्प होय है सो जतनाचार पूर्वक है। लौकिक कार्यनि विषैं अरुचि है, धर्म कार्यनि विषैं प्रीत सहित है। पांचों इंद्रियनकी प्रवृत्तिकै तो राग अर्थि है वा धर्म अर्थि है, विपयके अर्थि नाहीं है इत्यादि लक्षणनि सहित प्रत्याख्यान कपाय प्रवर्तै हैं। तहां इन कार्यन विषैं प्रवृत्ति भावरूप होय है, सो पीत लेश्या कहिये, सो पीत लेश्या क्रोध सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १।

बहुरि जहां स्वर्गादिकके लोभकी वासनायुक्त होय वा तिस काल लोभ कषाय सहित होय सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये २०।

अब अनंतानुबंधीकी शुक्लेश्या कहिये है....

नहीं है इसभव संबंधी सुख–दुःख विषैं हरष विषाद जाकैं, अर नहीं है परभव संबंधी दुःखका भय अर सुखकी वांछा जाकैं, अर समभावकी प्राप्ति भई हैं, अर मिट गये हैं त्रयोदश प्रकार कषाय जाकैं, अर मिट गया है पुत्रकलत्रादिक सों स्नेह भाव जाका, अर नहीं करै है पक्षपात काहूसों, अर नहीं करै है पराई निंदा वा प्रशंसा, अर समान हैं बैरी, मित्र, सुख–दुःख, राजा, रंक, रत्न अर ठीकरी जाकैं, अर समान है जीवो अर मरवो इत्यादि जाकैं, अर नहीं इष्ट अनिष्ट पदार्थन विषैं राग–द्वेष जाकैं, अर धारै हैं शील, व्रत, तप, संयम, अणुव्रत, महाव्रतादिक बुद्धिपूर्वक जानैं, तिनकौं भलीभांति निःशंकता सहित समभावसों पालै हैं, नहीं लगावैं हैं दोष जिनकौं, अर नहीं है इसभव परभव संबंधी इष्ट अनिष्ट पदार्थनसों राग–द्वेष जाकैं, इत्यादि भाव शुक्ल लेश्याके हैं।

बहुरि जहां भले भोगन विषैं अति मंदराग प्रवर्तैं है, भोगनके उपार्जन करनेकी उपाय करि नाहीं है वांछा जिनकी, अर अति निश्चल है मन, वचन, शरीरकी चेष्टा जिनकी, अर नाहीं प्रवर्तैं है अष्ट प्रकार मद विषैं कोईभी मद जिनकैं, अर नाहीं प्रवर्तैं है कोई भी हीणता जिनकैं, अर सप्त भयकरि वर्जित हैं चित्त जिनका, अर गुणविषैं ही है राग अर ग्रहण जिनकैं इत्यादि भाव शुक्लेश्याके हैं।

अर जहां क्रोधादिभाव अति मंद होय प्रवर्तैं तहां शुक्लेश्या कहिये।

अर जहां इन भावन विषैं जिस समय क्रोध प्रवर्तैं सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको क्रोध है २१।

अर जिसकाल इन भावन विषैं मान प्रवर्तैं है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मानभाव है २२।

बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं माया कषाय प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मायाभाव है २३ ।
बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं लोभ कषाय प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको लोभभाव है २४ ।

॥ इति अनंतानुबंधीके लेश्याके २४ भेद कहे हैं ॥

अब अप्रत्याख्यानकी लेश्याके चौबीस भेद कहिये है :–

जहां न्यायरूप विषयकार्य वा कषाय कार्य वा पांचों पाप प्रवर्तै, बहुरि सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होजाय, जातैं इहां सम्यक्त्वका घातक अनंतानुबंधी वा अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है, तहां क्रोधादि भावकों प्राप्त होय प्रवर्तै, तहां अप्रत्याख्यानका लेश्याभाव जानना, जातैं कार्यके अंत जाकै क्रोधादि कषाय शांततानैं प्राप्त होंय, दयाधर्म करि सहित होय, सत्यवादी होय, पराये पुण्य उदय विषैं अदेखसा भाव नाहीं करै, सुज्ञान चातुर्यता करि मंडित होय, क्रियावान शुद्ध भोजनको भक्षक होय, सप्त व्यसनादि करि वर्जित होय, अष्ट मद कर रहित होय, सरल होय, अन्याय लोभ कर रहित होय, देव, गुरु, धर्मादिकका भक्त होय, शरणागत प्रतिपालक होय, उदार होय इत्यादि भावन सहित अप्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं । तहां प्रथम ही अप्रत्याख्यानकी कृष्णलेश्या कहिये है ।

जहां न्याय कषाय कार्यनके अर्थि, वा विषय कार्यनके अर्थि, मरना–मारना, संग्राम करना, अति प्रचंड क्रोधदि कषाय करना, अपना घात करना, पैलाका घात करना, झूंठ बोलना, चुरा लावना, चुरा मंगावना, स्वस्त्री सों आसक्त होय भोग करना, अनेक स्वस्त्रीन सौं भोग करनेकी वांछा करनी, तातैं अनेक स्त्री परणनी, अपने मिले भोगन विषैं अतृप्त होना, न्याय पूर्वक बहुत परिग्रह बधावना, अपने न्यायरूप कार्यनके बाधकनकों वा प्रजाके बाधकनकों अनेक प्रकार दंड दैना, राजनसूं दंड लैना, मरना–मारना, मुलक इजारैं करना, जावत् वशमें न आवै तावत् अदेखसा भाव राखना, पांच इंद्रियनके विषयनकूं आसक्त होय सेवना, कौतूहल करना इत्यादि न्याय कषाय कार्यन विषैं वा विषय कार्यन विषैं वा तिनके

जाकी विनय युक्त होय, नरकादिकके दुःख सों डरि छोड़े हैं पंचपाप अर सप्त व्यसनादिक जानै, बहुरि स्वर्गादिक के सुखके अर्थकरे हैं, जिनभाषित दान पूजादिक षट् आवश्यक जानै, तथा मंद भये हैं चारों ही कषाय जाकै, बहुरि आपकूं प्राप्त भये जे पंच इंद्रियनके भोग तिनकूं पंच पाप रहित वा हठ रहित मगन होय आसक्त होय न सेवै है, कौतूहलादि करि प्रसन्न रहैं, पराये धनादिक भोग सामग्री देखि अदेखसका भाव नाहीं करै है—इच्छा नाहीं करै है, कौतूहलादिकके निमित्त वा दुखित जीवनके निमित्त, वा सम्यक्त्व संयमादिके धारक जीवनके दुःख निवारणके अर्थि दुष्टनकों दुःख भी देय संग्राम भी करै इत्यादि भाव पीत लेश्याके हैं । सो ये कार्य जहां दुःखसों खुणास खाय संसारीक सुखके अर्थि धर्म कार्य करै सो क्रोधके अभिनिवेश सहित होय वा क्रोधसहित होय सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १३ ।

अर जहां मानके अभिनिवेश सहित होय वा मानसहित होय, सो अनंतानुबंधीकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये यहां स्वर्गादिक विषैं अपना मान बधावनेका अभिप्राय जानना १४ ।

अर जहां माया सहित होय तहां माया कहिये । एक तो स्वजन परजनके भय थकी धर्म कार्य दानादिक तें अपरछन्न (प्रच्छन्न गुप्त) करै अर चौड़े और भांति करै, बहुरि एक माया अंतरंग तो स्वर्गकी चाह सहित अभिप्रायकों धारै है, अर मुख थकी मोक्षके अर्थि विस्तारै, सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये । यहां स्वर्गादिक विषैं अपने विषय सेवनेका अभिप्राय जानना १५ ।

अर जहां लोभके अभिनिवेश सहित होय, वा लोभसहित होय, सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये १६ । इंहां स्वर्गादिकके सुखका लोभ जाननां । इति ।

अब अनंतानुबंधी पद्म लेश्या कहिये है --

परभव विषैं नरकादिक संबंधी दुःख निवारणके अर्थि अर स्वर्गादिकके सुखके अर्थि त्याग दिये हैं एकदेश सर्व-देश विषय सुख जानै, तथा त्याग दिये हैं एकदेश सर्वदेश संसारीक कषायनके कार्य जानैं, अर उपशम गये हैं क्रोध मान माया लोभ व छह हास्यादिक वा तीन वेद ऐसें तेरह कपाय जाकैं, बहुरि भले-पुण्य कार्य करनेका ही है परिणाम जाकैं, अर शुभ कार्यनके करने रूप ही है उद्यम जाकैं, बहुरि अणुव्रत महाव्रतका जाकैं ग्रहण होय, अत्यंत कष्टरूप जो परीसह आपके प्राप्त होंय तिनकों समभाव सों सहै। बहुरि मुनि गुरुजनकी सेवा विषैं प्रीतिवन्त होय इत्यादि भाव पद्म लेश्याके जानने।

बहुरि मिले भोगनकों भोगवै है, आसक्तता नाहीं धारै है। किसीकों दुःख नाहीं देय है, किसीकों सतावै नाहीं है, चंचलता रहित धीर है मन जिनका, तथा कृपणता रहित उदार है चित्त जिनका, बहुरि अलभ सामग्रीकी वांछा नाहीं करै है, परोपकार करने विषैं तत्पर है, गुण हीका है ग्रहण जिनके, किसीका दोष ग्रहण कर पराई निंदा नाहीं करै है। किसी पास हीनता नाहीं करै है इत्यादि भाव पद्म लेश्याके हैं।

जहां क्रोध सहित कषाय अति मंद होय प्रवर्तै तहां पद्मलेश्या कहिये। सो ए भाव जहां संसारीक दुःख सौं खुणास खाय तहां पैदा होय है, वा जहां क्रोध सहित प्रवर्तै तहां अनंतानुबंधीका क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये १७।

अर जहां स्वर्गादिक विषैं मान बधावनेके अर्थि होय वा इन भावनविषैं जिस काल मान वर्तै सो अनंतानुबंधी की मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये १८।

बहुरि जहां एभाव प्रवर्तै तो हैं अंतरंग स्वर्गादिकके सुखके अर्थि अर मुख थकी मोक्षके अर्थि कहना वा जिस-काल माया कषाय सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये १९।

जहां मान सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये २।
अरु जहां माया सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये ३।
अरु जहां लोभ सहित होय सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये ४।

अब पद्मलेश्या कहिये :—

जहॉं पूर्वोक्त कार्यनि विषैं त्याग रूप प्रवर्तें है सो पद्म लेश्या कहिये हैं। तहां जो लेश्या क्रोध सहित प्रवर्तें सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ५।
अरु जहॉं मान सहित प्रवर्तें तहॉं प्रत्याख्यानकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये ६।
अरु जहां माया सहित प्रवर्तें तहां प्रत्याख्यानकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये ७।
अरु जहॉं लोभ सहित प्रवर्तें सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ८।

अब प्रत्याख्यानकी शुक्ललेश्या कहिये है :—

पूर्वोक्त कार्यनि विषैं जहॉं समभाव होय राग—द्वेष रहित निश्चल भाव होय सो शुक्ल लेश्या कहिये। सो शुक्ल लेश्या जहॉं क्रोध कषाय सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ९।
अरु जहॉं मान कषाय सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मान युक्त शुक्ल लेश्या कहिये १०।
अरु जहॉं माया सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ११।
अरु जहां लोभ सहित होय सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये १२।

अब केवल संज्वलन कषाय सहित लेश्याके बारह भेद कहिये हैं —

जहां क्रोधादि कषाय अति मंद वा मंदतर स्थानकन विषैं प्रवर्तैं हैं। संज्वलन कषाय सकल संयमका घातक नाहीं, यथाख्यात चारित्र का घातक है। तातैं सकल संयमका ग्रहण होय, जातैं सकल संयमका घातक प्रत्याख्यान कषायके उदयका अभाव हैं । अट्ठाईस मूलगुण वा पंचाचारादि रूप प्रवृत्ति होय। षष्ठम गुणस्थान सौं लेय दशम गुणस्थान पर्यंत आरूढ़ होय, सामायक १ छेदोपस्थापना २ परिहारविशुद्धि ३ सूक्ष्मसाम्पराय ४ ये चार संयम होंय, चौरासी लाख उत्तर-गुण युक्त होय, द्वाविंशति परीषह विषैं सहनशील होय इत्यादि भावयुक्त मुनि होय । जहां ये भाव प्रवृत्तिरूप हैं तहां पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां क्रोध कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १ ।
अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये २ ।
अर जहां माया सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये ३ ।
अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये ४ ।

अब संज्वलन कषायकी पद्मलेश्या कहिये हैं —

जहां पूर्वोक्त भाव त्याग रूप प्रवर्तै सो पद्म लेश्या कहिये ।
अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ५ ।
अरु जहां मान सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये ६ ।
अरु जहां माया सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये ७ ।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ८ ।

अब संज्वलन कषायकी शुक्ललेश्या कहिये है....

जहां पूर्वोक्त प्रवृत्तिका अभाव होय, उपयोगकी राग—द्वेष युक्त प्रवृत्ति न होय, जहां मन वचन कायकी निश्चलता होय इत्यादि भाव सो शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां क्रोध कषाय प्रवर्तै सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ९ ।

अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मान कषाय युक्त शुक्ल लेश्या कहिये १० ।

अरु जहां माया कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ११ ।

अरु जहां लोभ कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये १२ ।

बहुरि कषाय रहित गुणस्थान जे उपशांत कषाय एकादशम वा क्षीण कषाय द्वादशम वा सयोगकेवल त्रयोदशम इन तीन गुणस्थाननि विषैं जो शुक्ल लेश्या कहिये है सो योगोंकी अपेक्षा उपचार करि कहिये है। ऐसे ये बहत्तर भेद कहे। अब इनके अंतर्भूत अनेक भेद कहे हैं ते सर्व लेश्या भाव जानने ।

अब इन लेश्या भावनका फल कहिये है....

अनंतानुबंधीकी उत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि तौ आत्मा उत्कृष्ट स्थिति वा उत्कृष्ट अनुभाग सहित नरकायुको बांधे है । अरु इस ही लेश्या सहित जीव मरण को पाय सप्तम नरक विषैं उपजै है, अरु अनुत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि आत्मा अनुत्कृष्ट स्थिति अनुभाग सहित नरक गति तथा नरकायु बांधे है । अरु इस हीं लेश्यामें मरण करै तौ पंचम नरकके अंत पाथड़ासे लगाय छटवें नर्कके अंत पाथड़ा पर्यन्त उपजै है। बहुरि अजघन्य कृष्ण लेश्या भाव

करि आत्मा मनुष्य तिर्यंच आयु बांधि मनुष्य तिर्यंच दोय गतिविषैं उपजै है अर जघन्य कृष्ण लेश्या भाव करि जीव देवायु बांधि भवनात्रिक देवगति विषैं उत्पन्न होय है।

बहुरि अनंतानुबंधी नील लेश्या के उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायु बांधै है।

बहुरि याही लेश्यामें मरण करै तो पंचम नरक विषैं उपजे है। अरु अनुत्कृष्ट नीललेश्याके भावकरि आत्मा मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायुकौ बंध करै हैं।

बहुरि इस ही लेश्यामें मरणकरि तृतीय नरकके अंत पाथड़े सौं लेय चतुर्थ नरकके अंत पर्यंत उपजै है।

बहुरि जघन्य नीललेश्या भावकरि जीव मनुष्य तिर्यंचायु बांधै है। मरण करि मनुष्य तिर्यंच गति विषैं ही उत्पन्न होय है। अर जघन्य नीललेश्या भावकरि जीव देवायुको बांध करि भवनत्रिक देव गति विषैं ही उपजै हैं २।

बहुरि अनंतानुबंधी कापोतलेश्याके उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायु बांधि मरण करि तृतीय नर्क विषैं उपजै है। बहुरि अनुत्कृष्ट कापोतलेश्या भावकरि आतिमान (परिवर्तमान) जघन्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायुका बंध करि मरणकों पाय प्रथम नरकसों लगाय दूसरे नरक पर्यंत उपजै है। बहुरि कापोतलेश्याके अजघन्य भाव करि जीव मनुष्य तिर्यंचायु बांधि मनुष्य तिर्यंचगति विषैं उत्पन्न होय है। बहुरि कापोतलेश्याके जघन्य भाव करि आत्मा देवायुको बांध करि भवनात्रिक देवन विषैं उपजैं है।

बहुरि अनंतानुबंधी पीतलेश्या के भावनकरि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण कर कल्पवासी देव होय हैं अर देव याही लेश्याके स्थानकन थकी मनुष्य तिर्यंच आयु बांधि मरण कर मनुष्य तिर्यंच दोनों गति विषें उपजैं हैं ४।

बहुरि अनंतानुबंधी पद्मलेश्या भाव करि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण करि कल्पवासी देव होंय हैं। अर देव याही लेश्या भाव करि मनुष्य तिर्यंचायु बांधि मरण कर मनुष्य तिर्यंच दोनों गति विषैं उपजै है २।

बहुरि अनंतानुबंधी शुक्ललेश्याभावकरि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण कर कल्पवासी देव हौंय हैं, अर देव याही लेश्याभाव करि मनुष्यगति आयु वांधि मनुष्यगति विषैं उपजैं हैं ६।

बहुरि अप्रत्याख्यानकी छहू लेश्याभाव करि मनुष्य–तिर्यंचकैं तौ देवगति देवायुका ही बंध है, अर मरण विषैं विशेष है, कृष्ण नील लेश्या भावन विषैं तो मरण ही नाहीं, बहुरि कापोत लेश्याके उत्कृष्टादि भावन सहित जीव प्रथम नरक विषैं उपजै, अर मध्यभावन विषैं मर्‍यो जीव भोगभूमिविषैं तिर्यंच होय, अर जघन्यादि भावन सहित मर्‍यो जीव भोगभूमि विषैं मनुष्य होय।

बहुरि पीत पद्म शुक्ल लेश्या भावन करि मर्‍यो जीव कल्पवासी देव ही होय, बहुरि नारकी कृष्ण नील कापोत लेश्या भाव धरैं हैं। अर मनुष्यगति विषैं ही उपजैं हैं, अर देव पीत पद्म शुक्ल लेश्या भावन करि मनुष्य-आयु ही वांधैं हैं। अर मरण करि मनुष्यगति विषैं ही उपजैं हैं २।

बहुरि प्रत्याख्यानकी पीत, पद्म, शुक्ललेश्या भावन करि मनुष्य वा तिर्यंच देव आयु ही वांधैं हैं, अर मरण कर उत्तम कल्पवासी देवन विषैं उपजैं हैं।

बहुरि संज्वलनकी पीत पद्म लेश्या वाला मनुष्य मुनिपद विषैं तिष्ठता देव आयु ही बांधै है, अर मर कर कल्पवासी देव उत्तम इंद्रादिक होय है। अर शुक्ल लेश्या वाला उत्तम देव आयु बांधि मरण करि कल्पातीत जो नौग्रीवक वा नौ अनुदिश विमान वा सर्वार्थसिद्धि सहित पंच अणुत्तर विमान तिन विषैं उपजै है। अर वर्तमान विषैं कृष्ण, नील, कापोत ए तीन लेश्या तौ दुख हीकी कारण है। अर पीत, पद्म, शुक्ललेश्या सुख ही की कारण हैं।

इति फलवर्णनम्।

बहुरि कृष्ण, नील, कापोत ए तीनलेश्याभाव, गुणस्थान तौं असंयतपर्यन्त हैं, मार्गणा गति ४ जाति ५

योगन विषैं सामान्यपनै तो तीनों ही वेद भावनिकी अपेक्षा हैं, द्रव्यकी अपेक्षा नाहीं। कषाय २५, ज्ञान पुरुष वेद विषैं तो केवल विना ७ पाइये, अर स्त्री नपुंसक वेद विषैं मनःपर्ययज्ञान विना छह ही ज्ञान पाइये।

अर संयम–सूक्ष्मसाम्पराय वा यथाख्यात विना ५, अर दर्शन–केवल विना ३, लेश्या–छह ६, भव्य अभव्य २ सम्यक्त्व ६, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २, इन विषैं पाइये है।

॥ इति श्री भावदीपकका औदयिक भावाधिकार विषैं वेद भावाधिकार पांचवां समाप्त भया ॥

अथ असंयम भावाधिकार प्रारम्भ :—

दोहा

अमंयमभाव परभावकों मेटि रु संयम भाव
स्वभाव भावकों सिद्धकरि नमों मुक्तिके राव ॥

अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोह कर्मके उदयतैं जीवकैं असंयमभाव होय है। तहां पांच इंद्रिय अर छठे मनकी स्वच्छंद प्रवृत्ति होय, जातैं पांच इंद्रिय छठे मनका विषय स्वच्छन्द होय सेवै है। नहीं है हेय उपादेयका विचार जहां, अर नहीं है त्यजन ग्रहणकी प्रवृत्ति जहां, बहुरि नहीं है षट कायके जीवनकी दया जाकैं, ऐसी जहां निःशंक प्रवृत्ति होय सो असंयमभाव कहिये। सो असंयमभाव दोय प्रकार है—एक तो अनंतानुबंधी चारित्रमोहके उदयतैं होय है। तहां तो योग्य–अयोग्य, न्याय–अन्याय, हेय–उपादेयको, विवेक रहित विषय कार्यन विषैं वा कषाय कार्यन विषैं प्रवर्तै है। स्वच्छन्द दयारहित त्रस स्थावर जीवनकी हिंसा करै है, ऐसा असंयमभाव है।

बहुरि दूसरा असंयमभाव अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोहकर्मके उदयतैं होय है, तहां विषयकार्य वा कषाय

कार्य वा त्रस-स्थावर जीवनकी हिंसा न्यायपूर्वक योग्य अयोग्यके विचार सहित होय हैं। तहां त्यजन ग्रहणका प्रतिज्ञा वाक्य तो नहीं काटि (काढ़ि) सकै है परन्तु हेय उपदेयके विचार सहित होय है। तातैं अपने पद योग्य न्यायकार्यैन विषैं तो प्रवर्तै है, अर पद योग्य अन्याय कार्यैनि विषैं नाहीं प्रवर्तै है, ऐसा असयंमभाव तो अप्रत्याख्यानके उपरले स्थानकन विषैं होय है। अर अप्रत्याख्यानके मंद उदयमें किंचित् त्यजन ग्रहण रूप आखड़ी, व्यसनादिक का त्याग, अभक्ष्य उदंवरादिकका त्यागरूप इत्यादि प्रतिज्ञाभी होय है। परन्तु पंच पापनका एकदेश वा सर्वदेश त्याग नाहीं कर सकै है। तातैं असंयम ही कहिये हैं।

ए असंयमभाव वर्तमान विषैं भी दुःखरूप हैं, अर आगामी चतुर्गति संसारके कारण हैं। बहुरि एक (अ) संयमभाव जो अनंतानुबंधी चारित्रमोहके उदय ज (घ) न्य है, सो तौ मिथ्यत्व अरु सासादन दोय गुणस्थान विषैं पाइये, अर अप्रत्याख्यानावरण मोहकर्मके उदयज (घ) न्य है, सो मिश्रगुणस्थान अर असंयत इन दोय गुणस्थानन-विषैं पाइये, तातैं सामान्य असंयमभाव, गुणस्थान तौ आदिके चार विषैं पाइये, अर मार्गणा गति ४ जाति ५ काय ६ योग आहारकाद्विक विना १३ वेद ३ कषाय २५ ज्ञान ६—कुज्ञान ३ सुज्ञान ३, असंयम १, दर्शन ३—चक्षु १ अचक्षु २ अवधि ३ एवं ३, लेश्या ६, भव्य अभव्य २ सम्यक्त्व छह ६, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २, इन विषैं प्रवर्तै है। इति श्रीभावदीपकाका औदायिक भावाधिकार मध्ये असंयम भावाधिकार छट्ठा पूर्ण भया।

अब अज्ञान भावाधिकार लिखिये है....

दोहा—

अनादि अज्ञाम विभावको मूलनाश कर देव
केवल ज्ञान स्वभावकों प्रगट कियो प्रणमेव ॥१॥

जो ज्ञानावरण दर्शनावरण करमके क्षयोपशमतैं जेतो ज्ञानभाव जीव कैं प्रगट है सो तो क्षयोपशमभाव कहिये, अर ज्ञानावरण दर्शनावरणके उदय तैं जेतो ज्ञान अभावरूप है सो अज्ञानभाव कहिये । जातैं जीवको संपूर्ण ज्ञानभाव तो केवलज्ञान है, ताविषैं जेता ज्ञानके उपरि ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके सर्वघाति स्पर्धकनिका उदय है ताको तो अभाव है, जेते ज्ञानके ऊपर ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके देशघाति स्पर्धकनका उदय है सो ज्ञान खुलासा है, ताकों क्षयोपशमभाव कहिये । सो अज्ञानभाव क्षीणकषाय द्वादशम गुणस्थानके अंत पर्यंत जानना । तहां संपूर्ण ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके क्षय होतैं संपूर्ण ज्ञानभाव जीवकौ केवलज्ञान प्रगट होय है । तहां सयोगकेवल त्रयोदशम गुणस्थान विषैं अज्ञानभावका अभाव है, तातैं अज्ञानभाव गुणस्थान तौ क्षीणकषाय पर्यन्त बारा १२ विषैं पाइये, अर मार्गणा–गति. ४, जाति ५, काय ६, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवलज्ञान बिना ७, संयम सर्व, दर्शन केवल बिना ३, लेश्या ६, भव्य अभव्य दोय २, सम्यक्त्व छह ६, संज्ञी असंज्ञी ए दोय २, आहारक अनाहारक दोय २ इन विषैं पाइये है । ए अज्ञानभाव वर्तमान काल विषैं भी दुःखरूप हैं अर आगामी चतुर्गति संसारका कारण हैं ।

॥ इति श्री भावदीपकाका औदयिक भावाधिकार मध्ये अज्ञान भावाधिकार समाप्त भया ॥

अब असिद्ध भावाधिकार लिख्यते:—

दोहा

सब कर्मनको नाश करि असिद्धभाव खय कीन ।
सब स्वभावकी सिद्धितैं सिद्ध नमूं गुण लीन ॥१॥

जावत् सर्व कर्मनका क्षय न होय तावत् सम्पूर्ण स्वभाव भावकी असिद्धि है तातैं असिद्धभाव कहिये । जावत्

अिसिद्ध भाव है, तावत् जीव संसार विषैं तिष्ठै है। बहुरि जिस समय असिद्ध भावका अभाव होय, ताही समय जीव संपूर्ण स्वभाव भावमई होय मुक्त होय है। बहुरि असिद्ध भावके अभावका कारण जिनधर्म है, तातैं यथाशक्ति जिनधर्मकों यथावत् ग्रहण करि असिद्ध भावका अभाव करना योग्य है। जिन जीवनकैं असिद्धत्व भावका अभाव भया है, तिनकैं जिनधर्मके प्रसाद करि ही भया है, अन्य धर्म असिद्ध भावके अभावके कारण नाहीं। तातैं भलीभांति सत्यधर्म जो जिन-धर्म ताहि सेय अर असिद्ध भावका नाश करना सर्व ग्रंथनका ऐसा तात्पर्य है। ए असिद्धभाव वर्तमान विषैं दुःखका कारण हैं, अर आगामी चतुर्थगति संसारका कारण हैं। बहुरि ए असिद्धभाव गुणस्थान तो सर्व गुणस्थान अयोग केवल गुणस्थान पर्यंत पाइये, बहुरि सर्व मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं।

इति श्री भावदीपकाका औदायिक भावाधिकार विषैं असिद्ध भावाधिकार अष्टम पूर्ण भया। ये आठ अधिकार औदयिक भावाधिकार विषैं कहे हैं। इति श्री भावदीपकाका अष्टाधिकार चतुर्थ पूर्ण भया।

अब क्षयोपशम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

अष्टादश भावन सहित वर्तै जीव विभाव।
नाम क्षयोपशम तास हर बंदू चितधरि चाव ॥१॥

— प्रथमही सामान्य क्षयोपशम भावका स्वरूप कहिये हैं —

जीवके स्वभाव भावके अभावका कारण जो प्रतिपक्षी कर्म ताका जहां सर्वघाती स्पर्द्धकनका उदय है, तहां तौ प्रतिपक्षी गुणका सम्पूर्ण अभाव प्रवर्तै हैं, अर जहां स्वभाव गुणके प्रतिपक्षी कर्मके सर्वघाती स्पर्धकनकै तौ उदयका

अभाव होय जातैं उदयकों प्राप्त भये जे सर्वघाति स्पर्धक ते बिना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिर जांय, अरु सत्तामें तिष्ठते जे सर्वघाती स्पर्धक ते उपशांतकरणकों प्राप्त हांय, जातैं तिनकी उदीरणा होय उदयमें न आय सकैं, अर देशघाती स्पर्द्धकनका उदय होय, ताकरि किंचित् सत्ताकों धरें किंचित् गुणका प्रगटपना होय, वाका नाम क्षयोपशम भाव कहिये। ऐसा सामान्य क्षयोपशमभावका स्वरूप जानना । अब क्षयोपशम भावके भेद अष्टादश हैं—तहां कुमतिज्ञान १ कुश्रुतज्ञान १ कुअवधिज्ञान १ सुमतिज्ञान १ सुश्रुतज्ञान १ अवधिज्ञान १ मनः पर्ययज्ञान १ क्षयोपशम लब्धि पांच प्रकार——दान लब्धि १, लाभ लब्धि १, भोग लब्धि १, उपभोग लब्धि १, वीर्य लब्धि १, क्षयोपशम सम्यक्त्व १, देशसंयम १, क्षयोपशम चारित्र १, दर्शन ३ ऐसे ये अठारह भाव हैं, तिनका भिन्न-भिन्न वर्णन कीजिये है तिन विषैं प्रथम ही क्षयोपशम ज्ञान भावाधिकार प्ररूपिये है——

जीवकौं जानना मात्र ऐसा जो सामान्य ज्ञान भाव पारिणामिक भाव ताका पंच प्रकार कर्मका वश थकी पांच अवस्था होय हैं। तहां मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तौ अपने अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयोपशमतैं होंय हैं, अर केवलज्ञान प्रतिपक्षी कर्मके क्षयतैं होय है, सोही कहिये हैं। तहां मिथ्यात्व निमित्तकरि उत्पन्न भये ऐसे प्रथम ही कुमति १ कुश्रुति २ कुअवधि ३ ऐसे तीन कुज्ञानाधिकार कहिये है——

दोहा

निज ज्ञानभाव मिथ्यात्व तैं उलट भयौ दुःख दाय।
तिस मिथ्यात्व ध्वंसको प्रभु नमूं चरन चित लाय ॥१॥

दर्शन ३ ——चक्षुदर्शन १, अचक्षुदर्शन १, अवधि दर्शन १ । प्रथम मतिज्ञानका वर्णन कीजिये है—

जो पांच तौ द्रव्येन्द्रिय अरु अनिंद्रिय कहिये, द्रव्यमन इनके द्वार होय जो आत्माके ज्ञानकी प्रवर्ति ता ज्ञानके भावका नाम मतिज्ञान कहिये । सो मतिज्ञानके भेद ३३६ ऐसे ही कहिये है । ज्ञेय प्रति जीवका मतिज्ञान ऐसे प्रवर्तै है । पहिले तौ अवग्रह होय । अवग्रह कहिये पदार्थकों किंचित विशेष सहित जानै, जैसे दूर आकाशमे तिष्ठता पदार्थको ऐसा देखा जो ये कछु श्वेत वस्तु है १ पीछे संशय उपजा जो यह बगुलाकी पंक्ति है कि ध्वजा है, इस ज्ञानका नाम ईहा है २ । पीछे निश्चय भया कि बगुलाकी पंक्ति ही है या ध्वजा ही है, इस ज्ञानका नाम अवाय होय है ३ । बहुरि निश्चय भया पदार्थकों किताक काल न भूलना इस ज्ञानका नाम धारणा है ४ । इस प्रकार अवग्रह ईहा अवाय धारणा ये ज्ञानका च्यार भेद भया । अब मतिज्ञानके मूल दोय भेद है—अर्थावग्रह १ व्यंजनावग्रह १ तहां इन्द्रिय और मन के द्वारा जो पदार्थ जीवके व्यक्त रूप होय, प्रगटरूप होय, बुद्धिपूर्वक ताकौं जाने जो मेरे स्पर्शभया, मैं आस्वाद्या, मोकूं बास आई, मैं देख्या, मैं सुन्या, मैं मनकरि जान्या, ऐसा ज्ञानका नाम तो अर्थावग्रह है १ अरु जो इंद्रिय और मनकरि पदार्थका अबुद्धिपूर्वक ज्ञान जो पदार्थ सो अव्यक्त भिड़भेंट भया ऐसा सूक्ष्म ज्ञान जो आपके बुद्धि गोचर भया नाहीं, तृणस्पर्शवत् रहा है । जैसें कोमल तृण स्पर्श तौ भया, पर आपको गम्यमान नाहीं भया, ऐसा सूक्ष्म शब्दादि-का समूह प्रति अव्यक्त ज्ञान ताकौ व्यंजनावग्रह कहिये २ । सो प्रथम ही तौ अर्थावग्रह ज्ञानके भेद दोय से अठयासी कहिये । अर्थावग्रहकों अवग्रह ईहा अवाय धारणा इन चार करि गुणा च्यार ही भये, इनकों पांच इन्द्रिय अरु मन इन छह करि गुणैं चौवीस भेद भये । बहुरि मतिज्ञानका विषयभूत ज्ञेय वारह १२ बहु १, अबहु २ बहुविधि ३ एकविधि ४ निसृत ५ अनिसृत ६ क्षिप्र ७ अक्षिप्र ८ उक्त ९ अनुक्त १० ध्रुव ११ अध्रुव १२ एवं वारह । इन थकी चौबीसको गुणैं दोय सो अठासी भेद तौ अर्थावग्रहके भए, बहुरि व्यंजनावग्रह ज्ञानके अवग्रह ही होय, ईहादि तीन न होंय, तातैं अवग्रहकौं स्पर्शन रराना १ घ्राण १ श्रोत्र १ इन चार इन्द्रियानिसौं गुणैं तो चार ही भये जातैं नेत्र इन्द्रियके अरु मनके अर्थावग्रह ही है, व्यंजनावग्रह नाहीं, जातैं ये अपने दूर तिष्ठतै विषयको प्रगटपने ही

ग्रहण करै है। जातैं इनका विषय बधस्पर्शी है। बधस्पर्शी कहिये विषय और विषयीके भिड़भेंट भया अपने विषयका ज्ञान होय है। तातैं पहिले तो विषयका सूक्ष्म ज्ञान होय पीछै स्थूल होय तब बुद्धिपूर्वक प्रगट होय, तातैं तहां पर्यंत सुक्ष्म रहै व्यक्त न होय, वा सूक्ष्म ज्ञान ही होय अर ज्ञान ज्ञेयका संबंध छूट जाय तहां व्यंजनावग्रह कहिये तातैं चार इन्द्रिय करि बहुरि बहु आदि बारह ज्ञेयकों गुणें अडतालीस भेद व्यंजनावग्रहका भया। ऐसैं मतिज्ञानके भेद तीन सैं छत्तीस भये। बहुरी ये बारह प्रकार ज्ञेय अनेक भेद रूप हैं तातैं जितना मतिज्ञानका विषय भूत ज्ञेय तितने ही मतिज्ञानके भेद जानने।

अब श्रुतज्ञान कहिये है॰॰॰॰

'श्रुतं मतिपूर्वकं' पहिले मतिज्ञान होय तब श्रुत ज्ञान होय, ऐसा सिद्धान्तका वचन है। सो श्रुतज्ञान दोय प्रकार है-एक अक्षरात्मक, एक अनक्षरात्मक। तातैं वर्ण सौं वर्णांतरका, शब्द सौं शब्दान्तरका, पद सौं पदांतरका, अर्थ सौं अर्थान्तरको ज्ञान होय ताकौं श्रुतज्ञान कहिये। जैसे ककार वर्ण ने देखा सो तौ मतिज्ञान कहिये। बहुरि ताकरि ककार-वर्णकौ ज्ञान होय, ताकरि ककार वर्ण मांडै सो श्रुतज्ञान कहिये।

बहुरि जीव ऐसा पद देख्या सुन्या सो मतिज्ञान कहिये, ताकरि जीव द्रव्यकों जानै सो श्रुत ज्ञान कहिये। बहुरि अर्थ सौं अर्थान्तरको ज्ञान होय सो अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहिये। जैसे भयके कारण वा दुःखदायक पदार्थ जो सिंहादिक वा शत्रु आदि तिनको देख्या सो मतिज्ञान कहिये। यह मोकूं सुखदायी नाहीं तिन सौं भाज जाना लुक जाना सो श्रुतज्ञान कहिये वा शीत—उष्णका स्पर्शन भया सो मतिज्ञान कहिये ये सुखदायी नाहीं तिनसों दूर रहना भागना सो श्रुतज्ञान कहिये सो इनको अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान जानना। ऐसें श्रुतज्ञान दोय प्रकार जानना।

अब अवधिज्ञान कहिये—जहां द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद—पूर्वक रूपी पुद्गलद्रव्यकों वा पुद्गलद्रव्यका

संबंधको धरैं संसारी जीव द्रव्यकों प्रत्यक्ष जानै सो अवधिज्ञान कहिये।

जेता जेता द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लिये अवधिज्ञानकी शक्ति उत्पन्न भईहोय, तेता तेता अपने विषय योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लिये जानै, ऐसा अवधिज्ञानका स्वरूप हैं।

ये मतिज्ञान श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान क्षयोपशमभाव हैं। अपने अपने प्रतिपक्षी कर्मका जेता जेता क्षयोपशम होय, तेता तेता ये ज्ञान प्रगट होय है। जेता मतिज्ञानावरण अर वीर्यान्तरायका क्षयोपशम होय तेता मातिज्ञान प्रगट होय, जेता श्रुताज्ञानावरण अर बीर्यान्तरायका क्षयोपशम होय तेता श्रुतज्ञान होय, जेता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यान्त-रायका क्षयोपशम होय, तेता अवधिज्ञान होय। ये तीनों ही ज्ञान दर्शनमोहका उदय करि उत्पन्न भया जो जीवके तत्वज्ञान रहित अतत्त्वश्रद्धान रूप मिथ्यात्वभाव ता सहित होय प्रवर्तै। तहां इनकों कुमति ज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कु अव धिज्ञान कहिये। अर ये ही ज्ञान जहां मिथ्यात्व भाव रहित सम्यक्त्व भाव अर तत्व ज्ञान सहित होंय प्रवर्तैं, तहां इनही कों सुज्ञान कहिये। ये तीनौं कुज्ञानभाव वर्तमान भी दुःखके कारण हैं अर आगामी चतुर्गति संसारका कारण हैं।

बहुरि ये तीनों कुज्ञान भाव गुणस्थान तौ मिथ्यात्व अर सासादन दोय विषैं पाईये है। अर मार्गणा गति ४ जाति ५ काय ६ योग आहारकद्विक बिना १३ वेद ३ कषाय २५ ज्ञान स्वकीय, कुज्ञान ३ असंयम १ चक्षु-अचक्षु दर्शन २ लेश्या ६ भव्य २ सम्यक्त्व–मिथ्यात्व १ सासादन २ संज्ञी २ आहारक २।

॥ इति भावदीपकाका क्षयोपशमभावाधिकार विषैं तीन कुज्ञानाधिकार प्रथम पूर्ण भया ॥



अब पंच स्वज्ञानाधिकार लिखिये है....

दोहा

सम्यक् सहित प्रमाण जे च्यार ज्ञान तैं धीर ।
घाति कर्मको ध्वंस करि नमूं केवली वीर ॥ १ ॥

सो ही तीन सैं छत्तीस भेद युक्त मतिज्ञान अपना स्वभाव जो सम्यक्भाव ता सहित होत संते स्वज्ञान होय प्रमाणताकौं प्राप्त होय है, जीवकों सुखदाई होय है, मोक्षका कारण होय है। बहुरि याही मतिज्ञान पूर्वक उत्पन्न भया जो श्रुतज्ञान सो भी प्रमाणताको प्राप्त होय हैं। सो प्रमाण श्रुतज्ञानका भेद २—अंगप्रविष्ट अर अंगबाह्य।

तहां अंग प्रविष्टके द्वादश भेद हैं—आचारांग १ सूत्रकृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग ५ ज्ञातृधर्मकथांग ६ उपासकाध्ययनांग ७ अन्तःकृतदशांग ८ अनुत्तरउपवाददशांग ९ प्रश्नव्याकरणांग १० विपाकसूत्रांग ११ दृष्टिवादनामध्येयांग १२ इति अंग प्रविष्ट भेद।

अथ अंगबाह्य प्रकीर्णक भेद १४

सामायिक १ स्तवन २ वन्दना ३ प्रतिक्रमण ४ वैनयिक ५ कृतकर्म ६ दशवैकालिक ७ उत्तराध्ययन ८ कल्पव्यवहार ९ कल्पाकल्प १० महाकल्प ११ पुंडरीक १२ महापुंडरीक १३ निषधिक १४ इति। ये दोनों मिल सम्पूर्ण श्रुतज्ञानके भेद होय हैं। सो सम्पूर्ण श्रुतज्ञानके अपुनरुक्त अक्षर एक घाटि इकट्ठी प्रमाण हैं। इकट्ठी कहा कहिये, सो कहिये है।

पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस ६५५३६ ते पणट्ठी कहिये। बहुरि पणट्ठी प्रमाणकों पणट्ठी प्रमाण तैं गुणैं

बादाल होय है। ६५५३६×६५५३६=४२९४९६७२९६ इन दोनों सम प्रमाणकूं गुणैं चारसौ उनतीस कोडि गुणचास लाख सडसठ हजार दोयसौ छिंणवै होय हैं। तहां बादाल प्रमाणको बादाल प्रमाण सौं गुणिये, तब एकट्ठी होय है। तिस एकट्ठी प्रमाणमें सूं एक अक्षर घटाय दीजै, तब इतने अक्षर प्रमाण होंय १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ इतना अक्षर प्रमाण सर्व श्रुतका जानना।

बहुरि एक पदके अक्षर सोलासौ चौंतीस कोडि तिरयासी लाख सात हजार आठसौ अठासी होय हैं। १६३४८३०७८८८ इनका भाग सर्व श्रुतके अक्षरनकौं दीजिए तब एकसौ बार कोडि तिरयासी लाख अठावन हजार पांच ११२८३५८००५ पद भये। अवशेष अक्षर जे आठ कोडि एक लाख आठ हजार एकसौ पिछहत्तर ८०१०८१७५ इन अक्षरनकौं बत्तीसका भाग दीये पचीस लाख तीन हजार तीनसौ अस्सी २५०३३८० तो श्लोक भये, अर पन्द्रह अक्षर अधिक रहै इतने श्लोकन प्रमाण चौदा प्रकीर्णक जाननी।

बहुरि एक पदके श्लोक इक्यावन कोडि आठ लाख चौरासी हजार छहसौ साठ अर २१ अक्षर होंय। तहां प्रथम ही आचारंग सूत्रके अठारह हजार पद हैं '८००० । ताविषैं मुन्याचारका वर्णन है। कैसें चलिये, कैसें खडा रहिये, कैसें बैठिये, कैसें सोइये, कैसें वचन बोलिये, कैसें खाइये, कैसें मलमूत्र खेपिये, ए सप्त प्रकार मुनिपद विषैं प्रवृत्ति है तिनका वर्णन है। सूत्रकृतांग दूसरा अंग ताकै छत्तीस हजार पद है ३६०००, तिन विषैं संक्षेप अर्थको सूचै ऐसा जो परमताकीं निर्विघ्न अध्ययनकी सिद्धिकै अर्थि ऐसी जे कारणभूत वैनायिक क्रिया विशेष तिनका वर्णन है २।

स्थानांग तीसरे अंगके बयालीस हजार पद है ४२०००, ता विषैं जीव पुद्गलके एक एक स्थानक बधता वर्णन है। जैसे जीव संग्रह नय करि एक है और व्यवहार करि संसारी अर सिद्ध ऐसे दोय स्थानक हैं उत्पाद १ व्यय२ ध्रौव्य ३ ऐसे तीन हैं, अर गति अपेक्षा चार हैं ४, उपशमादि पंच भावयुक्त हैं ऐसे पांच हैं, छह दिशा विषै श्रेणीवद्ध

गमन करन हारे हैं ऐसे छह हैं, अर सप्त भंग बाणी करि उपयुक्त ऐसे सात हैं, आठ कर्म करि युक्त हैं, ताते आठ है, नौ पदार्थ रूप है विषय जाका, ऐसे नवस्थानक हैं। बहुरि ऐसैं ही पुद्गल सामान्यपने करि एक १ अर विशेषपने अणु-स्कंध दोय २, इत्यादि एक एक स्थानक बधता अनेक भेदका वर्णन है ३।

बहुरि समवायांग चौथे अंग विषैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी समानताका वर्णन है। ताकै पद एक लाख चौंसठ हजार हैं १६४०००, तहां द्रव्य विषैं धर्म द्रव्य अधर्म द्रव्य समान हैं। संमारी संसारी समान हैं। मुक्तजीव मुक्तजीव समान हैं इत्यादि। क्षेत्रापेक्षया प्रथम नर्कके प्रथम पाथडेको सीमन्तकनामा इन्द्रकाबिला, अढाई दीप, प्रथम स्वर्गके प्रथम पाथड़ेका ऋतु नामा इंद्रकाविमान, सिद्धशिला, सिद्धक्षेत्र ये पंच क्षेत्र पैंतालीस--लाख योजन प्रमाण समान हैं। बहुरि सातवें नर्कका इंद्रकाविला, जम्बूदीप, सर्वार्थसिद्धि ए तीन स्थानक लाख योजनके समान प्रमाण वाले हैं। बहुरि कालापेक्षया—समय समय समान हैं। आवली आवली समान है। प्रथम नर्क, भवन-वासी, व्यंतरदेव इनविषैं दश दश हजार वर्षकी जघन्यआयु समान है। सप्तम नर्क विषैं वा सर्वार्थसिद्धि विषैं तैंती-स सागर उत्कृष्ट आयु समान है इत्यादि। बहुरि भावापेक्षा करि केवल ज्ञान केवल ज्ञान समान हैं इत्यादि समानता के अनेक भेदका वर्णन है ४।

बहुरि व्याख्याप्रज्ञप्ति पंचम अंग ताके पद दोय लाख अट्ठाईस हजार हैं, ता विषैं गणधर महाराज भगवान प्रति साठ हजार ६०००० प्रश्न किये, जीवादि द्रव्य अस्तिरूप हैं कि नास्तिरूप हैं? नित्य हैं कि अनित्य हैं? एक हैं कि अनेक हैं? व्यक्त हैं कि अव्यक्त हैं? इत्यादि प्रश्न कीये तिनका भगवान उत्तर दीया, तिनका वर्णन है ५।

बहुरि ज्ञातृधर्म कथा नामा षष्ठम अंग है, ताकैं पांच लाख छप्पन हजार पद हैं ५५६०००, ता विषैं नाथ जो परम यथार्थ भट्टारक श्री तीर्थंकर देव तिनका धर्म तथा जीवादि पदार्थनका स्वभाव तिनका वर्णन है, वा रत्नत्रय तथा दश लक्षणीक आदि धर्म तिनका वर्णन है, वा तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदिक सलाका पुरुषनिकी धर्म संबंधी कथा तिनका

वर्णन है इत्यादि कथन है ६।

बहुरि उपासकाध्ययन सातमां अंग ताके पद ग्यारह लाख सत्तरहजार हैं ११७०००० तहां उपासक जे श्रावक, चतुर्विधसंघकी दान पूजादिक करि सेवैं तिनका कथनका वर्णन है। ताविषैं दर्शन प्रतिमा कूं आदि देइ एकादशप्रतिमा रूप श्रावकका चार वर्णन है ७।

बहुरि अंतःकृतदशांग अष्टम अंग ताके पद तेईस लाख अट्ठाईस हजार हैं २३२८०००, ता विषैं एक एक तीर्थंकरके वा दश दश अंतःकृतकेवली भये, तिनका ज्ञानकल्याणक अर निर्वाण कल्याणक साथ ही भया तिनका वर्णन है ८।

बहुरि अनुत्तर उपपादकदशांग नवमां अंग ताके पद बाणवै लाख चवालीस हजार हैं ९२४४०००, ता विषैं एक एक केवलीके वारै दश दश मुनि घोर उपसर्ग जीति अनुत्तर विमानन विषैं उपजे तिनका वर्णन है ९।

बहुरि प्रश्नव्याकरण दशम अंग ताके पद तिराणवे लाख सोलह हजार हैं ९३१६०००, तिस विषैं लौकिक संसारी जीव आय प्रश्न पूछैं, आगामी शुभाशुभको, वा गई वस्तुको, वा झूठीकी आदि अपरिछिन्न (प्रच्छन्न) वस्तुकों ताका उत्तर देनेके विधानका वर्णन है। वा आक्षेपणी १ धर्मकी स्थापक,, निक्षेपणी २ धर्मकी उत्त्थापक, संवेगिनी ३ धर्म तथा धर्मात्मासूं प्रीति रुचिकी बढ़ावनहारी, निर्वेदनी ४ संसार शरीर भोगनसूं वैराग्य करावनहारी, ऐसी जे चार सुकथा तिनका वर्णन है।

बहुरि विपाकसूत्र ग्यारवां अंग ताके एक कोड़ि चौरासी लाख पद हैं १८४०००००, ताविषैं कर्मोंका विपाक तीव्र मंद जघन्य मध्यम उत्कृष्ट ताका वर्णन है। ऐसैं चार कोड़ि पंद्रह लाख दोय हजार ४१५०२०००, पद तो ग्यारह अंगनके हैं। अर अवशेष एक सौ आठ कोड़ि अड़सठ लाख छप्पन हजार पांच १०८६८५६००५ पद, दृष्टिवाद नामधेय बारहवां अंगका है—मिथ्या दर्शनका निराकरण जा विषैं। तिन विषैं दृष्टिवाद नामा बारहवां अंगका पांच भेद हैं।

परिकर्म १, श्रुत (सूत्र) २, प्रथमानुयोग ३, पूर्वगत ४, चूलिका ५। तहां परिकर्मके पद एक कोड़ि एक्यासी लाख पांच हजार पद हैं १८१०५०००, प्रथम तो ताविषैं गुणकार भागहार रूप गणित ज्ञान होय, तिस कारण ऐसे करण सूत्र तिनका वर्णन हैं।

बहुरि ताके भेद पांच ५—चन्द्रप्रज्ञप्ति १, सूर्यप्रज्ञप्ति २, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति ३, द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति ४, व्यख्या प्रज्ञप्ति ५ एवं पांच भेद हैं। तहां प्रथम चंद्र प्रज्ञप्तिके छत्तीस लाख पांच हजार पद हैं ३६०५०००, ताविषैं चन्द्रमाके विभव आदिका वर्णन है।

बहुरि दूसरे सूर्य प्रज्ञप्तिके पांच लाख तीन हजार ५०३००० पद हैं, ताविषैं सूर्यके विभवादिका वर्णन है।

बहुरि तीसरा जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति है, ताकै पद तीन लाख पच्चीस हजार हैं, ३२५००० ताविषै जम्बूद्वीपका वर्णन है।

बहुरि चौथा द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति हैं, ताके बावन लाख छत्तीस हजार पद हैं ५२३६०००, ताविषैं असंख्यात द्वीप समुद्रका वर्णन है।

बहुरि पांचवां व्याख्या प्रज्ञप्त्यंग है, ताकै चौरासी लाख छत्तीस हजार पद हैं ८४३६०००, पद हैं ताविषैं जीव अजीवादि रूपी अरूपी पदार्थनका वर्णन है, वा भव्य अभव्य जीवनके प्रमाणका वर्णन है। इति परिकर्म भेद।

बहुरि दूसरा भेद श्रुत ताके पद अठासी लाख ८८००००० हैं, ताविषैं मिथ्यादृष्टि कुवादीनके तीनसौ त्रेसठ ३६३ भेदनका वर्णन है। कुवादी कहिये सर्वथा एकान्तवादी, जीव अस्ति ही है, जीव नास्ति ही है, नित्य ही है, अनित्य ही है, एक ही है, अनेक ही है, व्यक्त ही हैं, अव्यक्त ही है, ज्ञात ही है, अज्ञात ही है, परप्रकाशक ही है, स्व प्रकाशक ही है, अबन्ध ही है, बंधा ही है, कर्ता ही है, अकर्ता ही है, भोक्ताही है, अभोक्ता ही है, गुण सहित ही हैं निर्गुण ही हैं। इत्यादि एकान्तवादका वा तिनके निराकरणका कथन है।

बहुरि तीसरा भेद प्रथमानुयोग ताके पांच हजार पद हैं ५००० ताविषैं त्रैसठ शलाका पुरुषनके चरित्रका वर्णन है।

बहुरि चौथा भेद पूर्वगत हैं, ताकै साढ़े पिच्यानवैं कोड़ि पांच पद हैं ९५५००००००५, ताकै भेद चौदह १४– उत्पादपूर्व १ आग्रायणी २ वीर्यानुवाद ३ अस्तिनास्तिप्रवाद ४ ज्ञानप्रवाद ५ सत्यप्रवाद ६ आत्मप्रवाद ७ कर्मप्रवाद ८ प्रत्याख्यान ९ विद्यानुवाद १० कल्याणवाद ११ प्राणवाद १२ क्रियाविशालवाद १३ लोकविंदुसार १४ ऐसें चौदह पूर्व जानने इन चौदह पूर्वन विषैं एक सौ पिच्याणवें वस्तु हैं १९५, तहां प्रथमपूर्व विषैं दश वस्तु हैं १०, दूसरे विषैं १४, तीसरे विषैं ८, चौथा विषैं १८, पाचवें विषैं १२, छठें विषैं १२, सातवें विषैं १६, आठवें विषैं २० नवमें विषैं ३० दशमें विषैं १५ ग्यारवें विषैं १० बारहवें विषैं १० तेरहवें विषैं १०, चौदहवें विषैं १०, ऐसे चौदह पूर्व विषैं एक सौ पिच्याणवें वस्तु हैं १९५, बहुरि एक एक वस्तु विषैं वीस वीस प्राभृत हैं। तहां एक सौ पिच्याणवें नैं बीस करि गुणैं तीन हजार नव सौ प्राभृत भये १९५×२०=३९००। बहुरि एक २ प्राभृत विषैं चौबीस चौबीस प्राभृतप्राभृत हैं, तहां तीन हजार नवसौं कूं चौबीस करि गुणैं तिरानवें हजार छह सौ प्राभृतप्राभृत चौदह पूर्ववनि विषैं जानने ३९००×२४=९३६००।

अब प्रथम उत्पाद पूर्वके १००.०'०० एक कोड़ि पद हैं। ताविषैं उत्पाद-व्यय, ध्रौव्य, आदि अनेक धर्मनका कथन हैं, तहां जीवादि वस्तुनका नाना प्रकार नयविवक्षा करि क्रमवर्ती युगपत अनेक धर्म तिनकरि भये जे उत्पाद–व्यय ध्रौव्य ३ तीनों काल अपेक्षा नव धर्म भये। इन धर्मरूप परिणया वस्तु सो भी नव प्रकार होय है, उपजा १, उपजै है २, उपजेगा ३, नष्ट भया १, नष्ट होय है २, नष्ट होयगा ३, स्थिर भया १, स्थिर होय है २, स्थिर होगा ३, ऐसे नव प्रकार द्रव्य भया, इन एक एक द्रव्यके उत्पन्नादि नव नव धर्म, ऐसैं नवकौं नव करि गुणैं इक्यासी भेद लिये द्रव्य ताका वर्णन है १।

बहुरि दूसरा पूर्व आग्रायणी ताकै छिनवै लाख पद हैं ९६०००००, ता विषैं, द्वादशांग विषैं प्रधानभूत जो वस्तु तिनका ज्ञान होय है, जातै अैसै सात सौ सुनय अर दुरनय बहुरि सप्त तत्व, नव पदार्थ, षट् द्रव्य इत्यादिकनका वर्णन है २।

बहुरि तीसरा पूर्व वीर्यानुवाद ताकै पद सत्तर लाख ७०००००० ता विषैं जीवादि वस्तुनकी सत्य सामर्थ्य ताका वर्णन है। जहां आत्माका वीर्य, परका वीर्य, क्षेत्र वीर्य, काल वीर्य, भव वीर्य, तप वीर्य, इत्यादि द्रव्य गुण पर्यायनका शक्तिरूप वीर्यका वर्णन है ३।

बहुरि चौथा पूर्व अस्ति–नास्तिप्रवाद–ताके पद साठ लाख हैं ६००००००, ता विषैं अनंतगुणात्मक जो जीवादिक वस्तु तिनका अस्ति नास्ति, नित्य अनित्य आदि अनेक स्वभाव तिनकरि सप्तभंग थकी वस्तुकों साधकरि सिद्धकरी है, तहां सप्त भंगके नाम ७ अस्तिनास्ति भाव की अपेक्षा। अस्ति १ नास्ति २ अस्तिनास्ति ३ अवक्तव्य ४ अस्ति अवक्तव्य ५ नास्ति अवक्तव्य ६ अस्तिनास्तिअवक्तव्य ७ ऐसें वस्तु सप्तभंग स्वरूप है। यहां हरेक भंगके आदिमें "स्यात्" पद लगाना अर जो वस्तुकों सर्वथा अस्ति ही है, वा नास्ति ही है, वा अस्तिनास्तिही है वा अवक्तव्यही है वा अस्ति अवक्तव्य ही है, वा नास्ति अवक्तव्य ही है, वा अस्तिनास्ति अवक्तव्य ही है अैसा मानैं है सो ही मिथ्यात्वभाव हैं। अर स्यादस्ति १ स्यान्नास्ति २ स्यादस्तिनास्ति ३ स्यादवक्तव्य ४ स्यादस्तिअवक्तव्य ५ स्यान्नास्तिअवक्तव्य ६ स्यादास्तिनास्ति अवक्तव्य ७ अैसैं कथंचित् प्रकार अस्ति है १ कथंचित् प्रकार नास्ति है २ कथंचित् प्रकार अस्ति नास्ति है ३। कथंचित् प्रकार अवक्तव्य है ४। अैसै ही नित्य अनित्य भावन करि साधिये। तहां स्याद्वाद सम्यक्वाद है, अैसा कथन या पूर्व विषैं हैं।

बहुरि पांचवां पूर्व ज्ञानप्रवाद—ताके पद एक घाटि एक कोड़ि ९९९९९९९. ता विषैं आठ ज्ञानका स्वरूप–भेद–स्वामी–विषय–फल–प्रमाण–अप्रमाण इत्यादि ज्ञानका वर्णन हैं।

बहुरि छठा पूर्व सत्यप्रवाद–ताके पद एक कोड़ि अर छह प्रमाण है १००००००६। ताकै विशेष चिन्ह बचनकी

मुख्यता लिये वर्णन है ताके अर्थ बचनगुप्ति बचन संस्कारके कारण वचनकें प्रयोग बारा प्रकार भाषा, दश प्रकार सत्य-वचन, बहुत प्रकार मिथ्यावचन, बारा प्रकार भाषा वचन, बोलने वाले जीवन के भेद इत्यादि कथन है। सत्य बोलना वा मौन धरना सो बचनगुप्ति कहिये। बहुरि बचन संस्कारके कारण दोय २-स्थान १, प्रयत्न २। तहां स्थान आठ प्रकार हृदय १ मस्तक २ जिह्वामूल ३ दन्त ४ नासिका ५ कंठ ६ तालु ७ ओठ ८। बहुरि प्रयत्न चार प्रकार हैं——अंग का अंग तैं स्पर्श भयें बोलिये सो स्पृष्टता १ किंचित् स्पर्श भयें बोलिये सो ईषत् स्पर्शता २ अंगकों उघाड़ि बोलिये सो विवृतता ३ अंगकूं अंगतें ढकि बोलिये सो ईषत् विवृतता ४। बहुरि वचन प्रयोग दोय प्रकार स्पष्टरूप भलावचन १ दुष्ट-रूप बुरा वचन २। बारा प्रकार भाषा "इन ऐसा किया है" ऐसा अनिष्ट वचन सो अभ्याख्यान कहिये १ जाकरि विरुद्ध होय सो कलुष वचन है २ परका दोष प्रगट करनहारा सो पैशून्य वचन ३ धर्म--अर्थ--काम--मोक्ष इन चार प्रकार पुरुषार्थ रहित बचन सो परताप वचन ४, इंद्रियनके विषयन विषें रति उपजावे सो रति वचन ५, इंद्रियनके विषयन विषैं अरति उपजावैं सो अरति वचन ६, व्यवहार विषैं ठगनरूप वचन सो निष्ठुर वचन ७, तप ज्ञानादि विषैं अविनयका कारण वचन सो अप्रणति वचन ८, चौरीका कारण सो मोष वचन ९, भला मार्गका उपदेशरूप वचन सो सम्यग्दर्शन वचन १०, मिथ्या मार्गके उपदेशरूप वचन सो मिथ्यादर्शन वचन ११।

नोट—बारहवां वचन किसी प्रति में मिला ही नहीं है।

बहुरि दस प्रकार सत्य वचन——

[illegible] विषे [illegible] और और नाम हैं सो ही कहना सो जनपद सत्य कहिये १।
[illegible] [illegible] वहीं ही [illegible] राधे [illegible] विषें समान रूढ़ि नाम सो संवृति सत्य कहिये या [illegible] १।
वा उत्तर प्र[illegible]

बहुरि नवमा प्रत्याख्या[illegible]

बहुरि अन्य विषैं अन्यकूं स्थापन करि तिस मुख्य वस्तुका नाम कहना सो स्थापना सत्य कहिये ३।

रत्नादिकर निर्मापित चंद्र प्रभ तीर्थंकरकी प्रतिमाकूं चद्रप्रभ कहिये। अर जहां अन्य अपेक्षा रहित केवल व्यवहार निमित्त जिसका जो नाम होय सो कहना सो नाम सत्य कहिये ४।

अर जो पुद्गल विषैं अनेक गुण होते संतै जहां रूपकी मुख्यता लिये वचन कहिये सो रूप सत्य कहिये, जैसैं किसी पुरुषको शुक्ल कहिये यद्यपि वाके केशादिक श्याम हैं वा, रसादिक गुण पाइये है तिनकी मुख्यता न करी ५।

बहुरि विवक्षित वस्तुकूं अन्य वस्तुकी अपेक्षा करि हीन अधिक लघु, दीर्घ, सूक्ष्म, स्थूल आदि कहिये सो प्रतीति सत्य है। या ही का नाम आपेक्षिक सत्य कहिये, जातैं जाकूं लघु दीर्घादिक कहियें तासौं अन्य द्रव्य लघु दीर्घादिक पाइये है, परन्तु ताकी विवक्षा न लगाई ६।

बहुरि जो नैगमादि नयकी प्रधानता लिये वचन कहिये सो व्यवहार सत्य कहिये। जैसें नैगमनयकी प्रधानता करि ऐसा कहिये "भात पचैं है" सो भात तौ पचे पीछै होगी अभी तौ चांवल ही हैं, थोरे ही कालमें भात होना है, तातैं नैगमनयकी विवक्षा करि भात पर्याय करने योग्य द्रव्य अपेक्षा कहिये नयनके व्यवहारकी अपेक्षा जैसैं सत्वरूप कहिये, असत्वरूप कहिये इत्यादि वचन सो व्यवहार सत्य कहिये ७।

बहुरि जो वस्तु विपैं शक्ति तो पाइये है अर क्रिया नाहीं करैं है तो पण भी शक्तिकी अपेक्षा तिस क्रियाको कर्ता कहिये ऐसें संभावना सत्य कहिये। जैसें इंद्र, जम्बूद्वीपके पलटावनेको समर्थ है ऐसा कहना असंभव है, ताकी शक्तिकी अपेक्षा परिहारकरि वस्तु स्वभावका विधानरूप जो संभावना सो संभावना सत्य कहिये ८।

बहुरि अतीन्द्रिय पदार्थन विषैं सिद्धांतके अनुसार विधिनिषेधका संकल्परूप जो परिणाम सो भावसत्य कहिये। जैसें सूका, पचा, पीसा, यंत्रकरि पैल्या, वा खटाई लूनकरि मिश्रित भया, वा भस्मीभूत भया होय जो

वस्तु सो प्रासुक कहिये । यद्यपि तिन विषैं इंद्रिय अगोचर सूक्ष्म जीव पाइये है, तथापि आगमप्रमाण तैं प्रासुक अप्रासुकका संकल्प रूप भावके आश्रित ऐसा वचन सो सत्य कहिये ९।

बहुरि जो किसी प्रसिद्ध पदार्थकी किसीविषैं समानता कहिये सो उपमासत्य कहिये १० ।

बहुरि वेंद्रिय आदि वक्ता वचन बोलने वालेनके भेद इत्यादि कथन है ।

बहुरि सातवां आत्मप्रवाद पूर्व, ताके पद छव्वीसकोड़ि प्रमाण हैं २६००००००००, ताविषैं आत्माका प्ररूपण हैं, आत्मा जीव है सो जीव व्यवहार करि दश प्राण थकी निश्चयनय करि चेतना प्राण थकी जीव आया, वर्तमान विषैं जीवै है, आगै जीवैगा, तातैं जीव कहिये । व्यवहार नय करि शुभाशुभ कर्मकों करै है अर निश्चयनय करि चैतन्य पर्यायकों करै है, तातै कर्त्ता कहिये । बहुरि व्यवहार करि सत्य—असत्य बचन बोलै है तातैं वक्ता कहिये । अर निश्चयनय करि आत्मा वक्ता नाहीं, बहुरि निश्चय व्यवहार करि प्राण याकै पाइये है तातैं प्राणी कहिये। बहुरि व्यवहारकरि शुभाशुभकर्मफलको भोगै है अर निश्चय नय करि निजस्वरूपकों भोगवै है तातैं भोक्ता कहिये । बहुरि व्यवहार करि कर्म नोकर्म पुद्गलकों पूरै हैं गालै है तातैं पुद्गल कहिये । निश्चय नय करि आत्मा पुद्गल है नाहीं। बहुरि निश्चय व्यवहार दोऊ नयन करि लोकालोक संबंधी त्रिकालवर्ती सर्व कों जानै है तातैं वेदक कहिये । बहुरि व्यवहार करि अपने देहको केवलसमुद्घातकरि सर्वलोककों अर निश्चयनय करि ज्ञानमें सर्व अलोककों व्यापै है तातैं विष्णु कहिये । बहुरि व्यवहार करि कर्मके वशते यद्यपि संसार विषैं परिणमै है तथापि निश्चय नय करि आत्मा स्वयं आप ही आप विषैं ज्ञान दर्शनरूप करि परिणमै है, तातैं स्वयंभू कहिये, इत्यादि आत्माका वर्णन है ७ ।

बहुरि आठवां कर्मप्रवाद पूर्व ताके पद एक कोड़ि अस्सीलाख हैं १८००००००, ता विषैं कर्मनकी मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति वा बंध, उदय, सत्वादिकका वर्णन है ।

बहुरि नवमा प्रत्याख्यान पूर्व ताके पद चौरासी लाख हैं ८४०००००, ताविषैं प्रत्याख्यानका वर्णन है । प्रत्या-

ख्यान कहिये निषेधिये है पाप करि तातैं प्रत्याख्यान कहिये, तातैं नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। अपेक्षा
जीवनका संहनन, वीर्य, बल इत्यादिकनके अनुसार काल मर्यादि लिये वा जावज्जीव प्रत्याख्यानका उपदेश है ९।

बहुरि विद्यानुवाद दशमां पूर्व ताके पद एक कोड़ि दस लाख हैं ११०००००० , ता विषैं पांचसौ रोहण्यादि
महाविद्या अर सातसौ क्षुद्र विद्या तिनका स्वरूप, सामर्थ्य, साधनभूत मंत्र, वा पूजाविधान सिद्धि भये उन विधानका
फल इत्यादि वर्णन है। बहुरि अष्ट प्रकार महानिमित्तज्ञानका कथन है १ ।

बहुरि ग्यारहवां कल्याणवाद पूर्व है, ताके पद छब्बीस कोड़ि हैं २६०००००००, ताविषैं त्रेसठ शलाका
पुरुषनके गर्भकल्याणकादि महा उत्सवका वर्णन है। बहुरि तिनके कारणभूत षोड़स भावना वा तपश्चरणादि क्रिया
तिनका वर्णन है, वा ग्रहादिकका गमन, ग्रहण, शकुनफल इत्यादि कथन हैं ११ ।

बहुरि बारहवां प्राणवाद पूर्व है—ताके पद तेरह कोड़ि है १३००००००० , ता विषैं चिकित्सा आदि आठ महा
प्रकार वैद्यक का वा भूतादि व्याधि दूर करनेके कारण मंत्रादिक वा विष दूर करनहारे मंत्र औषधादिक वा इला १
पिंगला २ सुषुम्ना ३ तीन पवन साधनेका विधान वा स्वरोदय रूप बहुत प्रकार श्वासोश्वासका भेद इत्यादि
वर्णन है १२।

बहुरि तेरहवां क्रियाविशाल नामा पूर्व ताके पद नव कोड़ि हैं ९०००००००, ता विषैं संगीत शास्त्र, छंद, अलं-
कारादि शास्त्र, बहत्तर कला, चौंसठ स्त्रीनका गुण, अनेक प्रकार शिल्पादि चातुर्यता, गर्भाधानादि चौरासी ८४ क्रिया,
सम्यग्दर्शनादि एक सौ आठ क्रिया १०८, देववंदनादि पच्चीस २५, वा नित्यनैमित्तक क्रिया इत्यादिका प्ररूपण है १३ ।

बहुरि चौदहवां लोकबिंदुसार पूर्व है ताके पद साढ़े बारह कोड़ि है १२५०००००० , ता विषैं तीन लोक
का स्वरूप है, तथा छब्बीस परिकर्म २६, आठ व्यवहार ८, च्यार बीज ४ इत्यादि गिणती अर मोक्षका स्वरूप, मोक्षकी
कारणभुत क्रिया, मोक्षका सुख इत्यादि वर्णन है १४ ।

अब पंचम भेद चूलिका कहिये है....

ताके पद दश कोड़ि उनंचास लाख छियालीस हजार हैं १०४९४६००० ताके भेद पांच हैं--जलगता १ स्थलगता २ मायागता ३ रूपगता ४ आकाशगता ५। इनके एक एक भेदके दोय कोड़ि नव लाख नवासी हजार दोय सौ पद हैं २०९८९२००, तहां जलगता विपैं जलके स्तंभनका वा जलविपै प्रवेश करनेका, जल विपैं गमन करनेका, वा जल वर्षानेका, वा अग्नि विषें प्रवेश करनेका, वा अग्निभग करने का, वा अग्नि प्रजालने का, वा अग्नि बुझावनेका, अग्नि बंध करनेका इत्यादिकनके कारणभूत मंत्र-तंत्र, औपधि क्रिया, तपश्चरणादिकका विधान वर्णन है १।

बहुरि स्थलगता विपैं मेरु आदिक पर्वतन विपै प्रवेश करनेका, वा शीघ्रगमन करनेका, वा पृथ्वी विपैं पैठ जाना इत्यादिकनके कारणभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, तपश्चरणादिकका वर्णन है २।

बहुरि मायागता विषै अनेक विक्रिया करनेका, वा इंद्रजालादि विद्याके साधनभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, क्रियादिका वर्णन है ३।

बहुरि रूपगता विपैं अनेक हस्ती, घोटक, सिंह, मृगादिक रूप पलटनेका, वा धातु रसादिक मारनेका, इत्यादिकनके साधनभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, तपश्चरणादिकका वर्णन है ४।

अरु आकाशगता चूलिका विपैं आकाश विपै गमन करनेका उपाय, मंत्र, तंत्र यंत्र, क्रिया, तपश्चरणादिका विधान वर्णन है। इति द्वादशांग निरूपणम्।

अब अंग बाह्य चौदह प्रकीर्णकनका स्वरूप कहिये है—

प्रथम सामायिक प्रकीर्णक विपै षट् प्रकार सामायिकका निरूपण नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ काल ५

भाव ६ इन छह प्रकार पदार्थन विषैं समभाव कह्या, इनकों राग—द्वेष रहित देखना, जानना, ताका नाम सामायिक है, ताका वर्णन है। बहुरि ताके साधनभूत द्रव्य क्षेत्र काल भाव संबंधी क्रिया आलंबन इत्यादि वर्णन है १।

स्तवनप्रकीर्णक विषैं चोवीस तीर्थंकरके स्तवन करनेका विधान वर्णन है २।

बहुरि वंदना प्रकीर्णक विषैं एक तीर्थंकरकी वा प्रतिमाजीकी वा चैत्यालयकी स्तुति करनेका विधान वर्णन है ३।

बहुरि प्रतिक्रमण प्रकीर्णक विषैं सप्त प्रकार प्रतिक्रमण करनेका विधान वर्णन है—दैवासिक १ रात्रिक २ पाक्षिक ३ चातुर्मासिक ४ सांवत्सरिक ५ ईर्यापथिक ६ उत्तमार्थक कहिये सर्व पर्याय संबंधी पापको मरन समय कों ७ इत्यादिका वर्णन है ४।

अरु वैनयिक प्रकीर्णक विषैं पंच प्रकार विनयका विधान है—दर्शनविनय १ ज्ञानविनय २ चारित्र विनय ३ तपविनय ४ उपचार विनय कहिये दर्शन ज्ञान चारित्र तपके धारक पंच परमेष्ठी तिनका विनय ५ इत्यादि वर्णन है ५।

कृतकर्म प्रकीर्णक विषैं श्रावककी क्रियाको विधान पंचपरमेष्ठीकी प्रदक्षिणा नमस्कार आवर्तन इत्यादि का वर्णन है ६।

बहुरि दशवैकालिक प्रकीर्णक विषैं मुनिका आचार आहारकी शुद्धताका लक्षण इत्यादि वर्णन है ७।

बहुरि उत्तराध्ययन प्रकीर्णक विषैं चार प्रकार उपसर्गका—देवकृत १ मनुष्यकृत २ तिर्यंचकृत ३ अकस्मात पुद्गल कृत ४ इनका बाईस परिषह कृत विधान वर्णन है ८।

बहुरि कल्प व्यवहार प्रकीर्णक विषैं योग्य आचरणका विधान वा अयोग्य आचरण होतैं प्रायश्चित प्ररूपिये है इत्यादि वर्णन है ९।

बहुरि कल्पाकल्प प्रकीर्णक विषैं द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अपेक्षा योग्य अयोग्य आचरणका विधान

वर्णन है १

अर महाकल्प प्रकीर्णक विषैं महानपुरुषनके योग्य आचरणका कथन है ११। बहुरि पुंडरीक प्रकीर्णक विषैं दान पूजा तपश्चरणादि अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादि रूप देव पर्यायका कारणभूत पुण्य ताका वर्णन है १२।

बहुरि महापुंडरीक प्रकीर्णक विषैं अहमिंद्रादि बड़े पद पावनेका कारण भूत पुण्य ताका वर्णन है १३।

बहुरि निषिध प्रकीर्णक विषैं प्रमाद करि किया दोप ताकै निराकरणकैं अर्थि प्रायश्चित्त विधानका वर्णन है १४। इति अंग बाह्य प्रकीर्णक कथनम्।

इति सर्वतश्रु कथन समाप्तः।

ये प्रमाणभूत एक सुश्रुत ज्ञान कह्या, जहां जैसा श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशम होय तैसा तैसा जीवकैं शास्त्रका ज्ञान होय है, तहां तैसा तैसा ही क्षयोपशमभाव कहिये। अब अवधिज्ञान क्षयोपशमिकभावका भेद कहिये है—अवधिज्ञानके भेद ३– देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ३। तहां देशावधिके दोय भेद—एक भवप्रत्यय १ दूजा गुणप्रत्यय २

तहां भवही है कारण जाकूं सो भवप्रत्यय कहिये, सो देव कैं वा नारकीनकैं वा गृहस्थ अवस्था विषैं तीर्थंकरके होय। तातैं जो जीव देव नारकीकी पर्याय पावे ताकैं अवधि होय है, वा तीर्थंकर पदके धारककैं होय या भवप्रत्यय अवधिका विषय सर्व आत्म प्रदेशतैं है। सर्व ही आत्म प्रदेशन थकी अपने विषय योग्य पदार्थनकों जाने।

बहुरि सम्यक्त्व संयमादिकके प्रभावतैं होय सौ गुणप्रत्यय कहिये। सो गुणप्रत्यय अवधि मनुष्य वा पंचेन्द्रिय तिर्यंचकैं होय। याका विषय नाभि ऊपर शंखादिकके आकार धऱ्या कितनाक आत्मप्रदेशनितैं अपने योग्य

विषयकों जानैं सर्व प्रदेशन सौं न जानै । ताका भेद ६ वर्द्धमान १ हीयमान २ अवस्थित ३ अनवस्थित ४ अनुगामिनी ५ अननुगामिनी ६ । जो अवधिज्ञानका उत्पत्ति काल सो वंधता जाय सर्वावधि पर्यंत सो वर्धमान कहिये १ जो उत्पत्ति-काल सौं घटता जाय अपने नाम पर्यंत सोही प्रमाण हीयमान कहिये २ अरु जो जैसे उपजा था तैसै ही रहै सो अव-स्थित कहिये ३ बहुरि जो कदै घट जाय अरु कदै बढ़ जाय सो अनवस्थित कहिये ४ । बहुरि अनुगामिनीके दो भेद—जो सर्व क्षेत्र विषैं लार रहै सो क्षेत्रानुगामिनी कहिये । अर जो, परभव विषैं भी लार ही जाय सो भवानुगामिनी कहिये ५ । अननुगामिनीके दोय भेद—जो जिस क्षेत्र विषैं उपजा होय तिसही क्षेत्र विषैं रहै अन्य क्षेत्रमें अभाव होय सो क्षेत्राननुगामिनी कहिये । बहुरि जो जिस भव विषैं उपजी होय तिसही पर्याय विषैं रहे अन्य पर्याय विषैं लार न जाय सो भवाननुगामिनी कहिये ६ ।

बहुरि देशावधिके असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं । जहां जघन्य देशावधिवाले जीव द्रव्यापेक्षया तौ द्वयर्धगुण-हानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण औदारिक शरीरकी सत्ताको द्रव्य विश्रसोपचय प्रमाण सहित ताको लोकमात्र असं-ख्यातका भाग दीजै जो प्रमाण आवे तितना स्कंधकी जानैं, इनतैं एक परमाणू घाटकी भी न जानै, अरु इनसौं बाध स्कंध होय, ताकी तौ जानै ही जानै, अर क्षेत्रापेक्षया घनावलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण जो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्त जीवकै शरीरकी अवगाहना क्षेत्र तितने क्षेत्रकी जानै, अधिक क्षेत्रकी न जानै २ ।

बहुरि कालपेक्षया आवालिके असंख्यातवें भागकी जानै ३ । अर भावापेक्षा भी आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण भावांकी जानैं ४ । ऐसा तो देशावधिका जघन्य १ बहुरि सिद्ध राशिके अनंतवें भाग अर अभव्य राशिसौं अनंतगुणा ऐसा जो कोई अनंतप्रमाण ताकौं भाग देशावधिका जो जघन्य भेदका द्रव्य ताकौं दीजै जो प्रमाण आवै तितना द्रव्या-पेक्षया दूजा भेदवाला जानैं । ऐसैं तिसही भागका दूसरे भेदके द्रव्यको दीये जो प्रमाण आवै तितने स्कंधको तीसरे भेद-वाला जानैं, ऐसें ही पूर्व स्थानकनें इस ही ध्रुव भागहारका भाग दीये जो जो प्रमाण आवै तितने तितने स्कंधको उत्तर उत्तर

भेद वाला जानै, सो असंख्यात स्थानक द्रव्यापेक्षया होय। तहां पर्यंत उतने ही क्षेत्र कालकी जानै, पीछै एक प्रदेश क्षेत्रकी अधिक जानै, पीछे वहुरि द्रव्यापेक्षा असंख्यात स्थानक होंय तहां पर्यन्त उतना ही क्षेत्रकी जानै, पीछै एक प्रदेश और वधते क्षेत्रकी जानै, ऐसें क्षेत्रापेक्षा असंख्यात स्थानक होंय, तहां पर्यंत तो उतने ही कालकी जानै, पीछै एक समयाधिक कालकी जानै, ऐसैं फिर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात स्थानक होय चुकैं, तब एक २ समय बधते कालकी जानै, ऐसें क्षेत्र अपेक्षा असंख्यात स्थानक होंय, तब जहां एक हाथ क्षेत्र प्रमाण की जानैं तहां संख्यात घनावली-प्रमाण कालकी जानै। बहुरि जहां एक कोशकी जानैं, तहां अंतरमुहूर्त कालकी जानैं, बहुरि जहां एक जोजन की जानै, सो एक समय घाटि दोय घड़ी प्रमाण मुहूर्त्त ता प्रमाण कालकी जानैं।

बहुरि जो पच्चीस जोजन क्षेत्र प्रमाणकी जानै, सो किछु घाटि एक दिन कालकी जानै, जो भरत क्षेत्रकी जानै सो एक पक्ष कालकी जानै, क्षेत्रापेक्षया जो जंवूदीपकी जानै सो एक मास काल की जानै, अर जो अढ़ाई द्वीपकी जानै, सो छहमास कालकी जानै, अर जो तेरह रुचिक द्वीप ताईंकी जानै सो सात आठ वर्ष कालकी जानै अर जो संख्यात द्वीप समुद्रांकी जानै, सो संख्यात वर्ष कालकी जानै, जो द्रव्यापेक्षया तैजस शरीरकीजानै, जो असंख्यात कोड़ि जोजनकी जानै, सो असंख्यात हजार वर्ष कालकी जानै। ऐसें असंख्यात लोक प्रमाण स्थानक होय चुकैं तब उत्कृष्ट देशावधि वाला द्रव्यापेक्षया तौ कार्माण वर्गणानैं एक भाग ध्रुव भागहारको भाग दीयां जो प्रमाण आवे तितने द्रव्य स्कंधकी जानैं, क्षेत्रापेक्षया लोक प्रमाण क्षेत्रकी जानै, अर कालापेक्षया एक समय घाटि पल्य प्रमाण कालकी जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण भावांका जानै। प्रथम जघन्य स्थानक विषैं आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण भावांकी जानै, अर अपने विषय क्षेत्र विषैं तिष्ठते अपने विषय योग्य पुद्गल स्कंध तिनके अर्थपर्याय वा व्यजन पर्यायका जानै, पीछै स्थान प्रति असंख्यात भावांकी जानै।

अब चारों गति जीवां प्रति अवधिका प्रमाण कहिये है—

प्रथम—नरकगति विषैं कहिये है– सातवें नरकके नारकी एक कोश प्रमाण क्षेत्रकी जानैं, अर छठवें नरक वाला डेढ़ कोसकी, अर पाचवें वाला दोय कोसकी, अर चौथे वाला अढ़ाई कोशकी, अर तीसरे वाला तीन कोशकी, अर दूसरे वाला साढ़े तीन कोशकी अर पहिले वाला एक जोजनकी जानैं १

बहुरि तिर्यंचके जघन्य के भेदसों लगाय मध्यके भेदमें जहां तैजसशरीर प्रमाण द्रव्यापेक्षया जानै, क्षेत्रापेक्षया असंख्यात द्वीप समुद्रकी जानै, अर कालापेक्षया असंख्यात वर्षकी जानै २।

अर मनुष्य–गति विषैं जघन्य भेद सौं लगाय सर्वावधि पर्यन्त सर्व भेद होंय ३।

बहुरि देव—गति विषैं, भवन वासी जघन्य क्षेत्रापेक्षया तौ भवन वासी व्यंतरदेवन सौं संख्यात गुणा क्षेत्रकी जानै, अरु कालापेक्षया किछू अधिक कालकी जानैं, बहुरि उत्कृष्ट असुर कुमार जातिका देव क्षेत्रापेक्षया तौ असंख्यात कोड़ि जोजनकी जानै, अरु उर्ध्व मेरुके शिखर पर्यंतकी जानै, अरु नीचे बहुत स्तोक जानै, अरु कालापेक्षया असंख्यात वर्षकी जानै ।

बहुरि नव जातिका भवनवासी देव अर आठ जातिका व्यंतर वा पांच प्रकारका ज्योतिषीदेव क्षेत्रापेक्षया तौ असंख्यात हजार जोजनकी जानै, अर असुर—कुमार सौ असंख्यातवां भाग कालकी जानैं।

बहुरि कल्पवासी देव सौधर्म ईशान प्रथम युगलका देव प्रथम नरक पर्यंत अवधिज्ञान करि देखे। बहुरि सानत्कुमार माहेन्द्र जुगलका देव दूसरे नरक पर्यंतकी जानै। बहुरि ब्रह्म ब्रह्मोत्तर अर लांतव कापिष्ट दोय जुगलनिका अवधिज्ञान तीसरे नरक पर्यंत है। बहुरि शुक्र–महाशुक्र अर सतार सहस्रार दोय युगलका चौथे नरक पर्यंत जानै। अर आनत प्राणत आरण अच्युत इन दोय जुगलन विषैं के देव पांचवें नरक पर्यंत की जानै ।

बहुरि नव ग्रैवेयकके देव छठे नरक पर्यंत जानैं, अर अनुदिश विमान वाला देव सातवें नरक पर्यंत जानैं, अर पंच अनुत्तर विमान वाला देव लोकके अंत पर्यंत जानैं। बहुरि द्रव्य अपेक्षा अपना अपना अवधि—ज्ञानावरणी कर्मका द्रव्य विश्रसोपचय रहित ताकौं अपना अपना जितना अवधिका क्षेत्रका प्रदेश होय तितनी वार ध्रुव भागाहारका भाग दीजैं ऐसा करतैं जो प्रमाण आवै तितने तितने द्रव्य स्कंधकी जानै। इति देशावधिज्ञानम्।

अब परमावधि कहिये—देशावधिका उत्कृष्ट भेद सो परमावधिका जघन्य भेद वाला द्रव्यापेक्षया तो देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्य नैं ध्रुव भागहारका भाग दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्यको जानै, अर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात गुना क्षेत्रकी जानैं, अर कालापेक्षया असंख्यात गुने कालकी जाने, अर भावापेक्षया असंख्यात गुने भावोंकी जानै, बहुरि पीछै अनुक्रमतैं स्थान प्रति असंख्यात २ गुना क्षेत्र काल भावकी अवधि अधिक जानै। ध्रुव भागहार करि भाजित द्रव्यको जानै, या प्रकार परमावधिका स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण है। बहुरि उत्कृष्ट परमावधि वाला द्रव्यापेक्षया तौ ध्रुव भागहार प्रमाण द्रव्यकी जानै, अर क्षेत्रापेक्षया देशावधिका उत्कृष्ट लोक प्रमाण क्षेत्रकौं तीन वार असंख्यात लोकका गुणाकार प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण क्षेत्रको जानै। बहुरि कालापेक्षया समय घाटि आवलि प्रमाण कालकौं तीन वार असंख्यात लोक गुणित असंख्यात लोक प्रमाण कालको जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोककौं तीन वार असंख्यात लोक गुणित भावांकी जानै। इति परमावधिका कथन।

अब सर्वावधि कहिये—सर्वावधि वाला द्रव्यापेक्षया तो अविभागी पुद्गल परमाणुको जानै, अर क्षेत्रापेक्षया परमावधिका उत्कृष्ट भेद सो असंख्यात लोक गुना क्षेत्रको जानै, अर कालापेक्षया असंख्यात लोक गुना कालको जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोक गुणा भावांको जानै। ऐसा इस सर्वावधिका स्वरूप है।

इति श्री अवधिज्ञानभाव निरूपणम्।

आगैं मनःपर्यय ज्ञान क्षयोपशम भावका निरूपण कहिये है—

मनः पर्यय ज्ञानावरणी कर्मका जैसा क्षयोपशमभाव होय है तैसैं ही भेदकौं लियें मनःपर्ययज्ञान जीव कैं होय है। सो याके भेद असंख्यात हैं। मूलभेद दोय हैं—एक ऋजुमति १ दूजा विपुलमति २।

अन्य जीवके मनविषैं चिंतवन रूप प्राप्त भया अर्थ कहिये रूपी पुद्गलद्रव्य वा पुद्गलसंबंधी (घ) कौं धर्‍यां संसारी जीवद्रव्य तिनकौं जानै सो मनःपर्यय ज्ञान कहिये।

अर जहां त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्यकौं कोई जीव वर्तमानकाल विषैं चिंतवन करै है ताकौं जानै सो ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञान कहिये।

बहुरि त्रिकालसंबंधी पुद्गलद्रव्यकौं कोई जीव अतीत काल विषैं चिंतया था, वर्तमानकाल विषैं चिंतवै है, वा आधा सा चिंतया व) आगामी काल विषैं चिंतवैगा ऐसा विना चिंतया ताकौं जानै सो विपुलमतिमनः पर्ययज्ञान कहिये। जैसैं कोई जीव त्रिकाल संबंधी पुद्गल जीवों को मन करि चिंतया था, वा वचनकरि कह्या था वा काय करि किया था सो कालांतर विषैं भूलिगया, याद करने कों समर्थ न भया, तव आय करि ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञानी कूं पूंछता भया वा पूंछने की इच्छाधारि मौन ही तैं खड़ा रहा, ताके सर्वचिंतवनकूं ऋजुमति मनः पर्यय ज्ञानी जानै सो प्रथम तो ईहा नामा मतिज्ञान करि ऐसा विचारै कि जो याके मनविषैं कहा है? पीछैं सर्वजानै, जातैं मनविषै ही ईहादि मतिज्ञान होय हैं, अर मनही विषैं मनःपर्ययज्ञान होय हैं।

बहुरि कोई जीव त्रिकालसंबंधी पुद्गल द्रव्यकों मन विषैं चिंतया था, वा वचन करि कह्या था, वा काय करि किया था, बहुरि कालांतर विषैं भूल गया, याद करने को समर्थ न भया, सो आय करि विपुलमति मनः पर्यय ज्ञानीको पूंछा वा पूंछनेका अभिप्राय धारि मौन ही तैं खड़ा रहा, ता नरका सर्व ही चिंतवनकूं बिना ही ईहा मतिज्ञानके

मनः पर्यय विपुल मति ज्ञानी जानै ।

अब इन दोनों ही भेदनका द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अपेक्षा असंख्यत भेद हैं सो ही कहिये है—ऋजुमति-वालौ जघन्य द्रव्यापेक्षा तौ निरजारवा (?) योग्य औदारिकका समयप्रबद्ध तितने स्कंधके चिंतवनकी जानै, अरु क्षेत्रा-पेक्षया दोय तीन कोशकी वा कालापेक्षया दोय तीन भवकी भावापेक्षया आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण भावांके चिंतवनकी जानै, बहुरि उत्कृष्ट द्रव्यापेक्षया तौ निरजारवा (?) योग्य चक्षु इन्द्रिय कों समयप्रबद्ध जो अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण स्कंधके चिंतवनकी जानै, अर क्षेत्रापेक्षया सात आठ जोजनकी जानै, अर कालापेक्षया सात आठ भवां की जानैं, अर भावापेक्षा जघन्य सो असंख्यात गुणां भावांके चिंतवन की जानै । बहुरि विपुलमति वाला जघन्य तौ द्रव्यापेक्षया ऋजुमतिके उत्कृष्ट द्रव्यकौं ध्रुव भागहार जो मनो वर्गणा के अनंत भेद हैं ताका अनंतमां भाग प्रमाणको भाग दीयें जो प्रमाण आवै तितने स्कंधके चिंतवनकी जानै । बहुरि क्षेत्रापेक्षया आठ नौ योजनकी जानै, बहुरि भावापेक्षया उत्कृष्ट ऋजुमति वालो जितने भावांके चिंतवनकी जानै तासैं असंख्यात गुणे भावोंके चिंतवन की जानै । बहुरि दूसरे भेद वाला द्रव्यापेक्षा तो ज्ञानावरणादि आठ कर्मको समयप्रबद्ध ताकों ध्रुव भाग हारको भगा दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्यके चिंतवनकी जानै । बहुरि ऐसे ही ध्रुव भागाहारको भाग दूसरे स्थानकके विपयभूत द्रव्य नैं दीजैं जो प्रमाण आवे तितने स्कंधके तीसरे भेद वाला जानै, ऐसे ही स्थान २ प्रति ध्रुव भागहारका भाग दिये जाना, तहां बीस कोड़ाकोड़ि सागर प्रमाण कल्पकालके जेते समय होंय तितनी बार ध्रुव भागहारकौ भाग दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्य स्कंधके चिंतवनको उत्कृष्ट विपुलमतिमनः पर्यय ज्ञानी जानै । बहुरि क्षेत्रापेक्षया पैंतालीस लाख योजन प्रमाण चतुरस्र क्षेत्रकी जानै, तहां अढ़ाई द्वीप पैंतालीस लाख योजन गोल क्षेत्र है, तिन विषैं तिष्ठते सैनी पंचेंद्रियके मनकी जानै वा अढ़ाई द्वीपके वाहर चारों कोणनमें तिष्ठता देव तिर्यंच तिनके भी मनके चिंतवनको जानै । बहुरि कालापेक्षया आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण भावांको जानैं, अरु भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण

भावांको जानै, यह मनः पर्ययज्ञान परम संयमके धारक ऋद्धिधारी मुनिके होय है। बहुरि ऋजुमति तौ विशुद्ध है अर विपुल मति विशुद्ध है। बहुरि ऋजुमति तौ प्रतिपाति है, अरु विपुलमति अप्रतिपाति है, जातैं ऋजुमतिवाला कूं तौ तद्भव भी मोक्ष होजाय जो पड़ै तौ एक भव मनुष्यका, और भीले अर विपुलमति तद्भव ही मोक्षगामी होय। इति।

अथ चार सुज्ञान--मति १, श्रुत २, अवधि ३, मनःपर्यय ४, क्षयोपशम भाव सों वर्तमान भी सुखका कारण अरु आगामी मोक्षका कारण है। बहुरि मति श्रुत अवधि ये तीन ज्ञान तौ गुणस्थान चौथे असंयम सौं लगाय बारहवें क्षीण कषाय पर्यंत हैं। अर मार्गणा गति ४, जाति पंचेंद्रिय १, काय त्रस १, योग १५, वेद ३, कषाय अनन्तानुबन्धी चार बिना २१, ज्ञान स्वकीय १, संयम ७, दर्शन केवल बिना ३, संज्ञी १, आहारक, अनाहारक २ इन विषैं प्रवर्तें है। बहुरि मनःपर्यय ज्ञान गुणस्थान तौ छठवें प्रमत्त ते लगाय बारहवें क्षीण कषायपर्यंत सात गुणस्थान विषैं पाईये। अर मार्गणा--गति--मनुष्य १, जाति पंचेंद्रिय १, काय त्रस १, योग ९ चार मनोयोग, चार वचनयोग औदारिक काययोग, वेद पुरुष १, कषाय ४, संज्वलन चतुष्क अर छह हास्यादिक, अर पुरुष वेद १, ज्ञान स्वकीय १, संयम ४ सामयिक, छेदापस्थापना, सूक्ष्मसांपराय, यथारव्यात। केवलबिना दर्शन तीन, लेश्या तीन, पीत १, पद्म २, शुक्ल ३, भव्य १, सम्यक्त्व क्षयोपशम १ क्षायक २ एवं दो २, संज्ञी १ आहारक १।

इति श्री भावदीपकाका क्षयोपशम अधिकार विषैं चार सुज्ञान क्षयोपशम भावाधिकार दूसरा समाप्त भया।

आगै तीन क्षयोपशम दर्शन भावाधिकार लिखिये है....

दोहा—

दर्शनावरण अति दुष्ट है, सर्व कर्ममें वीर।
ठगै ज्ञान सामान्य कूं, निन्दू ताहि धरिधीर ॥१॥

दर्शनावरण नामा कर्मके क्षयोपशमके अनुसार जीवके क्षयोपशम दर्शन भाव होय है। ता क्षयोपशम दर्शन भावके तीन भेद हैं—चक्षु-दर्शन १ अचक्षु-दर्शन २ अवधि-दर्शन ३।

तहां पदार्थके सामान्य अबलोकनका नाम दर्शन है। अर चक्षुदर्शनावरण कर्मके उदयतैं तो चक्षु-दर्शनका अभाव होय है। अर क्षयोपशमके अनुसार चक्षुदर्शनागुण प्रगट रहै है।

बहुरि तैंसें ही अचक्षुदर्शनावरण कर्मके उदय तैं तो अचक्षुदर्शनका अभाव होय है। अरु क्षयोपशमके अनुसार अचक्षुदर्शन गुण प्रगट रहै है।

बहुरि ऐसैं ही अवधिदर्शनावरण कर्मके उदय तैं अवधिदर्शनका अभाव होय है। अरु क्षयोपशमके अनुसार अवधिदर्शन गुण प्रगट होय है। जेता जेता अपने प्रतिपक्षी कर्मको क्षयोपशम होय तितना गुण प्रगट जानना। चक्षुदर्शनावरण कर्मको एकेन्द्रिय १ वेंद्रिय २ तींद्रिय ३ जीवनके तौ सम्पूर्ण उदय हैं तातैं तिनके संपूर्ण चक्षुदर्शनका अभाव होय है। अरु चौइन्द्रिय ४ पंचेन्द्रिय जीवन कैं उदय भी है अरु क्षयोपशमभी है सो जेता उदय है तेता तौ चक्षुदर्शनका अभाव है, अरु जेता क्षयोपशम हैं तेता चक्षुदर्शन गुण प्रगट होय है।

बहुरि अचक्षुदर्शनावरण को सर्व ही संसारी जीवनके उदय भी हैं अरु क्षयोपशम भी है, जेता जेता उदय है तेता तेता अचक्षुदर्शन गुण का अभाव है अरु जेता जेता क्षयोपशम हैं तेता तेता अचक्षुदर्शन प्रगट हैं तातैं अचक्षुदर्शनावरण कर्मका सम्पूर्ण उदय होय नाहीं, सम्पूर्ण उदय होय तौ वस्तूका अभाव होय जाय।

बहुरि तैंसे ही अवधिदर्शनावरण कर्मका जेता २ भाव उदय है तैता तैता अवधि दर्शनका अभाव है, अरु जेता २ क्षयोपशम होय तेता २ अवधिदर्शन प्रगट होय। तहां एकेन्द्रिय आदि असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत जीवनके तौ उदय ही हैं, क्षयोपशम नाहीं, तातैं तिनके तौ अवधिदर्शन का अभाव ही है। अरु संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवन विषैं जिनके सम्पूर्ण उदय है, तिनके तो अवधिदर्शनका अभाव है। अरु जिनके क्षयोपशम है तिनके क्षयोपशम अनुसार

अवधिदर्शन पाईये है । इतना दर्शन भावका स्वरूप व प्रवृत्ति कहिये । जातैं नेत्र इंद्रियकरि पदार्थका सामान्य अवलोकनसौं चक्षुदर्शन कहिये अर जो नेत्रैंद्रियबिना चा' इंद्रियनकरि पदार्थनका सामान्य अवलोकन होय सो अचक्षुदर्शन कहिये । बहुरि अवधिदर्शन करि जो पदार्थनका सामान्य अवलोकन सो अवधिदर्शन कहिये । ऐसें तीन भाव कहिये । तहां चक्षु अचक्षु दोय दर्शनभाव, गुणस्थान तो मिथ्यादृष्टि आदि क्षीण कषाय पर्यंत बारा गुणस्थान विषैं पाइये है, अर मार्गणा—गति ४ जाति विषैं चक्षुदर्शन तो चौइंद्रिय पंचेन्द्रिय दोय ही जाति विषैं पाइये । अर अचक्षुदर्शन, पांचों ही जाति विषैं पाइये । अर काय विषैं चक्षुदर्शन तो त्रसकाय विषैं ही पाइये, अर अचक्षुदर्शन काय ६, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवलीबिना ७, संयम ७, दर्शन स्वकीय १, लेश्या ६, भव्य २, सम्यक्त्व ६, संज्ञी २, आहारक अनाहारक २ । अवधि दर्शन—गति ४, जाति पंचेंद्रिय, काय त्रस १, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवल बिना ७, संयम ७, दर्शन—अवधि, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व ६, संज्ञी १ आहारक १, अनाहारक १ ।

॥ इति श्री भावदीपकका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं दर्शन क्षयोपशम भावाधिकार तीसरा पूर्णभया ॥

आगे पंच क्षयोपशमलब्धि लिखिये है

दोहा—

लब्धि अपूरण पंच-५ अंतराय वश थाय ।
ता विधिकों क्षयकर प्रभू नमौं पूर्ण रि धिपाय ॥१॥

पंच प्रकार अंतरायकर्म, ताका क्षयोपशमके अनुसार जीवकै पंचलब्धि होय हैं। पंचलब्धि कहिये पंचभावकी इच्छा के अनुसार सामग्रीकी प्राप्ति होय है पंचभाव कहिये—दान १, लाभ १, भोग १, उपभोग १, वीर्य १ इन पांच भावन

का जीवकैं उत्साह कहिये इच्छा उपजै। तहां उत्साहके अनुसार पंच प्रकार अंतराय कर्मको क्षयोपशम होय तो उत्साहके अनुसार ही प्राप्त होय, अर उत्साह भावसों अन्तराय कर्मको क्षयोपशम घाटि होय तौ घाटि प्राप्त होंय, अर उत्साह भावसों अंतराय कर्मको क्षयोपशम घाटि न होय तो बहुत प्राप्ति होय, अर उत्साहभाव अनुसार सामग्री पर अन्तरायको उदय होय तौ सामग्रीकौ विघ्न होय, वा सामग्रीकी प्राप्ति न होय, उत्साह भावको विघ्न होय, तातैं उत्साह भावको साधक तथा बाधक अंतरङ्ग तौ अन्तराय कर्मको क्षयोपशम भाव वा उदय होय है, अर बाह्य आपको मन वचन काय वा योग्य सामग्री वा अन्य द्रव्य चेतन अचेतन पदार्थ वा क्षेत्र काल भाव हैं। जैसे—सत्तर रुपया दान करनेका जीवके मन विषैं उत्साह उपज्या, तिसकाल तैसाही दानांतराय कर्मका क्षयोपशम होय तो सत्तर रुपया ही दान करे, अर दानान्तराय कर्मका क्षयोपशम भाव अधिक होय तो अभिप्राय तो सत्तर ७० रुपया देनेका था अर दोयसौ दे काढ़ै वा क्षयोपशम कर्मका घाटि होय तो अभिप्राय तो सत्तर रुपया देनेका था अर देय घाटि। अर सत्तर रुपया दान देनेका उत्साह किया अर दानांतरायकर्मका तिसकाल उदय होय, तौ किछूभी न दे सकै। बहुरि तैसाही—दानांतरायकर्मका क्षयोपशम उदयके अनुसार ही बाह्य आपका मन फिरजाय तैसाही वचन निकसै, तैसाही कार्य प्रवर्तै, ताहीके अनुसार बाह्य सामग्री दृष्ट पड़ै, ताही अनुसार अन्य चेतन अचेतन द्रव्य क्षेत्र काल भावकी परिणति होय। बहुरि तैसैंही जीव सहस्रधन उपार्जनका उत्साह किया था, तहां लाभांतराय कर्मका क्षयोपशम, उत्साह सादृश (सदृश) होय तो सहस्र धनकी प्राप्ति होय, अर क्षयोपशम अधिक होय तो उत्साहतैं अधिक प्राप्त होय, क्षयोपशम हीन होय तो हीन प्राप्तहोय, अर तिसकाल लाभांतराय कर्मका उदय होय तो कछुभी प्राप्त न होय, ताहि अनुसार बाह्य अपना मन वचन काय प्रवर्तै तैसैही सामग्री होय, तैसाही अन्य द्रव्य चेतन, अचेतन पदार्थ वा क्षेत्रकाल भावकी परनति होय। बहुरि तैसैंही भोग, उपभोग, वीर्य भावका उत्साहकी प्राप्ति अप्राप्ति जाननी। अर दानदिककी इच्छा हैं सो मोहजन्य है मोहकर्मके बशीभूत भया संसारी जीव दानादिककी इच्छा करै हैं, सो इच्छानुसार दानादिक कार्य बनिजांय तौ सुख मानै, अर जो इच्छानुसार दानादिक कार्य न बनैं तो दुःख

मानै, अर कार्यका बनना न बनना अंतराय कर्मके क्षयोपशमके अनुसार है, तातैं संसारी जीव मोहके वशीभूत हुवा वृथा ही दानादिक की इच्छाकरि सुखी–दुःखी होय है । तातैं ही जे सम्यग्ज्ञानी हैं ते पंच क्षयोपशमलब्धि की प्राप्ति अप्राप्ति विषैं हर्ष–विषाद नाहीं करै हैं । अर जे मिथ्यादृष्टि हैं, ते इन पंचलब्धिके उत्सव उठाय--उठाय अर इनकी प्राप्ति अप्राप्ति विषैं हर्ष--विषादकरि दुःखकों प्राप्त होय हैं इन पंच क्षयोपशम लब्धिके, अन्तराय कर्मके क्षयोपशमके अनुसार असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं । ये पंच क्षयोपशमलब्धिभाव अपने--अपने पंच अन्तराय कर्मके अनुसार सर्वही जीवनके क्षीणकषाय बारवें गुणस्थान पर्यंत सर्वही अवस्था विषैं पाइये हैं । अर सर्वही मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं ।

॥ इति श्री भावदीपकाका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं पंचलब्धि भावाधिकार चौथा समाप्त भया ॥

अब क्षयोपशम सम्यक्त्व भावाधिकार कहिये है....

दोहा—

बेदक सम्यक् भावतैं धरि मुनि व्रत शुध भाय ।
जीत लिये सब कर्म अरि तास नमूं शिवराय ॥ १ ॥

मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्वके निषेक सो प्रदेश उदय होय खिरैं सो ही तौ क्षय कहिये । बहुरि सत्ता में तिष्ठता जो मिथ्यात्व मोहनीय अर मिश्र मोहनीय कर्मको द्रव्य सो उपशांतकरनकों प्राप्त होय, उपशांत कहिये उदीरण होय, उदयमें आवें नहीं, अर देशघाती सम्यक्त्व प्रकृति मिथ्यात्वका उदय होय, तहां क्षयोपशम सम्यक्त्व भाव जीवके उत्पन्न होय हैं । जिन भाषित जीवादिक तत्व तिन विषैं रुचि कहिये श्रद्धा उपजे है प्रतीति होय हैं । जैसें सर्वज्ञकरि कहे जीवादिक द्रव्य भेद करि षट् प्रकार कहे अर अस्तिकाय भेद करि पंच प्रकार, अर तत्वभेद करि सप्त प्रकार वा

अर्थभेद करि नव प्रकार, बहुरि तिनका द्रव्य, गुण, पर्याय स्वरूप जैसा कह्या तैसा ही श्रद्धान करै है, तैसा ही जाने है, अर ताहि रूप तिन विषैं प्रवृत्ति करै है, अर यहां दर्शनमोहकी सम्यक्त्व मोहनीय प्रकृतिका उदय है, ता-करि मूल तत्व श्रद्धानका अभाव तौ नाहीं होय सकै है, अर श्रद्धान विषैं चल मल अगाढ़ ऐसें तीन प्रकार दोष उपजै हैं। सो दोषोंकी तारतम्यता तौ केवलीगम्य है, परन्तु तिनकी छद्मस्थ दिखावनेके अर्थि दृष्टान्त करि शास्त्र विषैं जो कह्या है सोही कहिये हैं । जैसे अपने केतेक जिनमंदिर जिनप्रतिमा वा शास्त्र वा अपने नातापन—पिता आदिक मुनि, तिन विषैं तौ भक्त्यादिक सरस करै, मनमें ऐसा जाने कि ये मेरे हैं । बहुरि अन्यके कराये जिन मंदिर जिन प्रतिमा वा शास्त्र वा अन्य मुनि, तिन विषैं प्रीतिभाव भक्त्यादि घाट होय, तिनकौं ऐसा मानै, ये अन्य हैं, ऐसी भ्रांति भाव उत्पन्न हुवो करै, मिटावो करै, जैसे जल विषैं उत्पन्न भई कल्लोल जल विषैं ही रहे, अन्य ठौर न जाय, तैसै सम्यक्त्वके साधकधर्म पदार्थ विषैं ही विकल्प उपजै, अर विनसि जाय, अर मिथ्यात्वके साधक पदार्थंन विषैं भ्रांति उपजै तो अनाचार होय, सम्यक्त्व जाता रहै ऐसा तो चल दोष जानना। बहुरि मल दोष पच्चीस प्रकार है तहां आठ तौ मल दोष ८ — शंका १ कांक्षा २ विचिकित्सा ३ मूढ़दृष्टि ४ अनुपगूहन ५ अस्थितिकरण ६ अवा-त्सल्य ७ अप्रभावना ८ बहुरि आठ मद दोष कुलमद १ जातिमद २ रूपमद ३ ऐश्वर्यमद ४ लाभमद ५ बलमद ६ तपमद ७ विद्यामद - ८ ।बहुरि षट् अनायतन—कुदेव कों सराहना १ कुदेवके धारकनकूं सराहना २ कुगुरुकों सराहना ३ कुगुरुके धारकनकूं सराहना ४ कुधर्मकूं सराहना ५ कुधर्मके धारकन कूं सराहना ६ । बहुरि तीन मूढ़ता—देवमूढ़ता १ गुरुमूढ़ता २ लोक (समय) मूढ़ता ३।एवं पच्चीस । सो ये दोष धर्म प्रकरण विषैं उत्पन्न होय हैं। ताही सम्यक्त्व कूं अतिचार हैं, सो ही कहिये है। जहां जीवादि तत्वन विषैं संशय उत्पन्न होय, जो इनका स्वरूप, इनकी प्रवृत्ति, वा इन विषैं हेय उपादेय वा त्याजन ग्रहण फल इत्यादि कह्या है मो ऐसें ही है अन्यथा तौ न होंय ? ऐसा संदेह उत्पन्न होय पीछे बिनस जाय ताका नाम शंका दोष कहिये। बहुरि जहां ऐसा भाव उत्पन्न होय कि जो इस धर्मके

प्रसाद तैं मेरें लक्ष्मी होय वा सुंदर स्त्री वा पुत्रादिककी प्राप्ति होय, मेरे शरीरका रोग जाता रहे, वा मेरा शत्रु विलाय जाय इत्यादि इस भवसंबंधी वांछा वा परभव विषैं देव होऊं इन्द्रपदका सिंहासन पाऊं, भोगभूमि विषैं उपजूं, वा चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, कामदेव, विद्याधर इत्यादि पद पाऊं, ऐसा इसभवपरभवसंबंधी संसारी वांछा सो बांछादोष कहिये। बहुरि जे आखड़ी, व्रत, शील, अनशनादि तप व अणुव्रत, महाव्रतका नेमरूप वा संयमरूप ग्रहण किया, तिन विषैं अहोठाभाव होय कि जो यह नेमका काल कब पूर्ण होय ? वा यह नियम, जप ग्रहण तौ करलिया अब याका निर्वाह कैसें होसी ? भारया लागै, वा मंदिरादिकका वा पूजाप्रतिष्ठादिकका वा तीर्थयात्राका इत्यादि धन संबंधी कार्यका प्रारंभ तो कर दिया, अर पाछे कार्य भाऱ्या लागै, धनादिक अहोठाभाव सौं कृपणता सहित खरचै' जैसें तैसें पूरा पाड़ा चाहै, वा चतुर्विध संघके विषैं रोग, दालिद्रादिक होत संतै तिनसौं ग्लानि करना इत्यादि भाव प्रवर्तैं सो विचिकित्सा दोष कहिये। बहुरि जहां धर्म कार्य, यथा—अयथा, योग्य—अयोग्य, विनय—अविनय, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके विवेक रहित करना सो मूढ़दृष्टि कहिये । बहुरि जहां चतुर्विधसंघ विषैं मुनि अर्जिका श्रावक श्राविका विषै कर्मके उदयकरि उत्पन्न भया जो दोष ताकों प्रगट करना सो अनुपगूहन दोष कहिये । बहुरि मुनि आचार्य आर्यिका श्रावक श्राविका विषैं इन विषैं कोई कों कोईभी प्रकार धर्म सौं शिथिल होय वा का कारण जानैं तनकरि धनकरि बचनकरि उपदेशादिकरि अपनी सामर्थ्य होतैं संतैं स्थिर न करना, वा अपनी सामर्थ्य न होतैं और पासि न करावना, सो अस्थितिकरन दोष कहिये । बहुरि धर्म अरु धर्मात्मा विषैं प्रीतिभाव न जोड़ना, सो अवात्सल्य दोष कहिये। बहुरि तन, मन, धन, बचन, ज्ञान, श्रद्धान करि वा तप, संयमादि प्रवृत्ति सम्यक् रूप करि आपकूं वा जिनमत कूं ऊंचा न दिखाना वा तन, मन, बचन, धन, कषाय,—ज्ञान, श्रद्धान, तप, संयमादिककी मिथ्या प्रतीतिकरि आपकूं वा जिनमार्गकूं हीन दिखावना सो अप्रभावना दोष कहिये ।

इति अष्टमलदोषः ।

अब अष्टमद दोष कहिये है....

आपतो बेटा राजादिकोंका है, अर अन्य धर्मात्मा कोई अन्य मनुष्यका पुत्र है, वा शुद्धकुलका हैं, अर श्रद्धान ज्ञान, तप, संयमादि विषैं आपसूं अधिक है, ताका कुलमदका जोर सों विनयसत्कारादि न करना, सो कुलमद कहिये १। बहुरि तैसें ही आप बड़े राजानका दोहिता है, ताका मदकरि आपसौं अधिक गुणवान सामान (सामान्य) जातिके वा शुद्धकुलके तिनका विनयसत्कारादि न करना सो जातिमद कहिये २। बहुरि तैसैं ही आप रूपवान है, अर अन्य आपसों अधिक गुणवान रूपकरि हीन है, तिनकों हीन जानना, आपकों अधिक मानना, सो रूपमद कहिये ३। बहुरि आप ऐश्वर्यवान हैं, राज्यलक्ष्मी करि युक्त है, तथा धनादि करि युक्त है, अर अन्य आपतैं अधिक गुणवान ऐश्वर्यकरि हीन हैं, वा धनादि करि रहित हैं, तिनका विनयसत्कारादि न करना सो ऐश्वर्यमद कहिये ४। बहुरि आपकें पूर्व पुण्यके उदय तैं नाना प्रकार अलभ्यका लाभ होय है, अर अन्य आप करि अधिक गुणवानकूं पूर्व पापके उदय करि लाभ न होय हैं, वा अलाभ होय है ताकों, दुर्भाग्य जानना, अर आपकों भाग्यरूप जानना, ताकों कटुक वचन कहना सो लाभमद है ५। बहुरि आप विषैं शरीरबल, राज्यबल, कुटंब बल, लक्ष्मीबल इत्यादि सप्त प्रकार बल पाइये हैं, ताका मद करि गुणवान धर्मात्माका पराभव करना, सो बलमद कहिये ६। बहुरि आप अनेक तप विषैं प्रवर्तैं है, अर अन्य धर्मात्मा विषैं तप आदिक थोड़ा पाइये, वा न पाइये है, तहां ताकौं तो हीन मानना, अर आपकौं अधिक मानना सो तपमद कहिये ७। बहुरि आप तो अनेक शास्त्रका पाठी है, अर अन्य धर्मात्माको शास्त्रज्ञान समान (सामान्य–मामूली) है तहां आपकों महंत मानना, ताकों हीन मानना, सो विद्यामद कहिये ८।

इति अष्टमद निरूपणम्।

अब षट् अनायतनस्वरूप प्ररूपणम्

देवका भावसों रहित, विपरीत स्वरूपकों धरैं ऐसा जो कुदेव तिनकी सराहना करनी "कैसे शृंगारादि किये हैं, कैसी लक्ष्मी करि युक्त हैं, कैसी कंचुकीरची है, कैसे कटक, कुंडल, हार, भुजवंध आदि पहरैं हैं, बहुत सबल हैं, पूजनहारे की कामना पूर्ण करैं हैं, बहुत राजादिकौं करि सेवित है" इत्यादि सराहना करनी सो देवायतन-दोष जानना। १ बहुरि कुदेवके सेवक तिनकों सराहना "देखो इनकैं बड़ी शक्ति है, तन, मन, धन, बचन, घर, कुटंवादिक सब वार-दिये हैं, (न्योछावर कर दिये हैं) शास्वते भजनमें ही निमग्न रहे हैं, अैसे और पुरुष नाहीं" इत्यादि सराहना करनी सो कुदेव धारक (आराधक) आयतन दोष जानना २। बहुरि नानाप्रकार भेषके धारक अैसे कुलिंगी आप गुरुकी ठसक धरावैं, जगत पास पुजावैं, जगतके धनसंपदादिक वा जगतके ठगोरे, मानरूप पर्वतके शिखर वैठे, अनेक माया-के करन हारे, क्रोधरूप अग्निके पुंज, तिनकों सराहैं "ए वहुत विद्यावान् हैं, तपस्वी हैं, त्यागी हैं, निर्मोही हैं, शील-वान हैं, हिंसारहित हैं, अजाची हैं, नानाविध चमत्कारके धारक हैं, लक्ष्मीवान हैं, महंत हैं" इत्यादि गुणन विषैं कोई एक दोय गुण बाह्यदृष्टि गोचर देखि ताके आश्रय सराहना करनी सो कुगुरु आयतन दोष कहिये ३। बहुरि तिनके सेवकन कुं सराहना "ए उनकी वड़ी भक्ति करैं हैं, तिनके अर्थि धनादि खर्चैं हैं, बड़े फलकूं प्राप्तहोंयगे" इत्यादि सराहना करनी सो कुगुरु धारक अनायन कहिये ४। बहुरि धर्मकों सराहना "सर्व ही धर्म सेये हुए भले फल कों दैंय हैं, वा धर्म विषैं वह अच्छा मार्ग है, वा धर्म विषैं वे सदा ही प्रवर्तैं हैं, श्वेतांबरादिक के संवत्सरी आदि धर्म हैं, ढूंढियामत विषैं धन नाहीं राखैं हैं, शीलपालैं हैं, जीवनकी दया पालैं हैं, भिक्षा मांगि भोजन पाइये हे, ता विषैं मान अपमान नाहीं गिनैं हैं" इत्यादि कुधर्मकी सराहना करनी सो कुधर्म अनायतन दोष हैं ५। बहुरि पूर्वोक्त नाना प्रकार धर्मके सेवनहारे पुरुष तिनकी सराहना करनी सो कुधर्मधारक अनायतन कहिये ६।

अब तीन मूढ़तादोष कहिये है....

तहां सदोष, निर्दोष, सर्व देव समान जानने कछु विचार नाहीं, जैसे दिगम्बर आम्नायके प्रतिबिम्ब अर श्वेतांबर आम्नायके प्रतिबिम्ब वा देहरा (देवघर-मंदिर) समान जानना, सारे ही कूं बंदना द्रव्यादि विवेक रहित देवविषैं प्रवृत्ति सो देवमूढ़ दोष कहिये। बहुरि अट्ठाईस मूलगुण धारक परम दिगम्बर मुनि वा कुलिंग के धारक पाखंडी तिनको समान जानना, विनय सत्कारादि करना सो गुरुमूढ़ता कहिये। बहुरि सर्व शास्त्र समान मानना, यथा अयथाका विवेक न करना, यथा अयथा वक्ताका विवेक न करना, आम्नाय कुआम्नायका विवेक न करना, धर्म कुधर्मका विवेक न करना, तत्व कुतत्वका विवेक न करना, जा शास्त्र कूं संस्कृत वा प्राकृत रचित देखा वा बड़ा पाना सुन्दर अक्षरन करि लिखा देखा, बडे वंधने करि वेष्टित देखि इत्यादि अविधि पद देखि, बहुरि वक्ता ताकूं बडा पंडित देखि संस्कृत, प्राकृत, न्याय का ज्ञाता देखि, बडी गादी व बडे सिंहासन पर तिष्ठता देखि, बडे शब्दाडंबर ललितावाणी सहित देखि इत्यादि अविधिपनो सहित देखि, बहुरि जिस आम्नाय में घणा धन खरचता देखि, घने पंडित देखि परस्पर बहुत चर्चा देखि, बहुत तप संयमादि देखि बहुत गान नृत्य वादित्रादि करि भक्ति करते देखि वा बहुत मनुष्यनका संघट्ट देखि, इत्यादि अविधि पनो सहित देखि, बहुरि अनेक प्रकार विषय कषाय पोषक धर्म प्रवृत्ति, जा धर्म प्रवृत्ति विषैं पंच इंद्रियनके विषय सेवना अर ताकूं धर्म कहना, ऐसा विषय पोषक धर्म बहुरि ता धर्म प्रवृत्ति विषैं क्रोध मान माया लोभ पोषना, छह हास्यादिकके कार्य उघडते होंय, तीनों वेदनिकी मुख्यता होय, कोई कुशील का सेवन होय ऐसा कषाय पोषक धर्म प्रवृत्ति। बहुरि केई पच्चीस तत्वके साधक, अर केई षोड़श तत्वके, अर केई षट् तत्वके, वा चार, तीन, दोय, एक तत्वके साधक ऐसे मतन कूं देखि वा तिनकूं घने राजादिक मन विषैं मानतें वा अपने कुलाम्नाय में चला आया वा कोई चमत्कारादि देखि वा लज्जा कज्जा जश बड़ाई इत्यादि करि तिनकौं

वा जथा जिनशास्त्र वा जथा जिनवक्ता वा जथा जैनाम्नाय वा जथा जैनधर्म वा जथा जैन भाषित जीवादि तत्व इत्यादिकन कौं समान जानना सो समयमूढ़ कहिये। इति पंचविंशाति दोषा;।

अब अगाढ़दोष कहिये है....

सर्व ही तीर्थंकर अनंतशक्तिके धारक हैं, तिन विषैं हीनाधिक जानना, जैसे "शांतिनाथ शांतिके कर्ता हैं, विघ्न हरनेको पार्श्वनाथ समर्थ हैं" ऐसा श्रद्धान शिथिलताकौं प्राप्त होय, जैसें वूढ़ा मनुष्यकी हाथकी लाकड़ी कांपैं अर छूटै नाहीं, तैसें सम्यक्त्व मोहनीय कर्मके उदयतैं श्रद्धान शिथिल होय, परंतु छूटै नाहीं, सो अगाढ़ दोष कहिये। इस प्रकार कहे जे चल मल अगाढ़ दोष ते सम्यक्त्व मोहनीय कर्मके उदयतैं उत्पन्न होंय, तिनकौं तत्वज्ञानके बल करि अभावकों प्राप्त करै है, सत्य प्रतीत रूप अवस्था होय है। देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ इनकों मोक्षके मूल कारणभूत पदार्थन विषैं संदेह होय है, अर इनके अनेक प्रकार विशेष तिन विषैं जो संदेह उत्पन्न होय है, ताकों देव गुरु शास्त्रके प्रसाद करि निवारण करै हैं, अर दिन दिन प्रति समता भाव है बंधता जाकैं, बहुरि आपापरका विचार विषैं कोई प्रकार भ्रम नाहीं पाइये है। बहुरि दूर भया है सर्व प्रपंचभाव जातैं ऐसी सरलताकों भजै है। ऐसा सम्यक्त्वभाव अष्ट अंगन सहित होय है। तहां अष्ट अंग कहिये है—निःशंकित १ निःकांक्षित २ निर्विचिकित्सा ३ अमूढ़—दृष्टि ४ उपब्रहण ही का नाम उपगूहन कहिये ५। स्थितिकरण ६ वात्सल्य ७ प्रभावना ८ इति।

अब इनका स्वरूप कहिये है—

सर्वज्ञ देव करि भाषित जे जीवादिक तत्व वा तिनका स्वरूप वा अनेक प्रकार द्रव्य, गुण, पर्यायन करि

वस्तुनिका स्वरूप तिन विषैं वा सूक्ष्म १ अंतरित २ दूरवर्ती ३ इन तीन प्रकार पदार्थन विषैं छद्मस्थकी इंद्रिय अगोचर सो सूक्ष्म कहिये १ अर जो अतीत काल विषैं होगये वा अनागत काल विषैं होंयगे सो अंतरित कहिये २ अर जे दूर क्षेत्रवर्ती वर्तमान हैं अर अपने देखनेमें न आयें ऐसे मेरु आदिक ते दूरवर्ती कहिये ३ वा हेय कहिये त्यागने विषैं उपादेय कहिये ग्रहण करने विषैं वा दुःख—सुखके कारणन विषैं वा संसार मोक्षके कारणन विषैं इत्यादि पदार्थन विषैं संशय नाहीं धरैं हैं सो निःशंकित अंग कहिये १।

अरु नहीं हैं धर्मके सेवन थकी इस भव परभव संबंधी सांसारिक सुखादिककी बांछा जानै, किंतु मोक्षके अर्थ ही सैवे है सो निःकांक्षित अंग कहिये।

बहुरि जो धर्म अंग कूं सेवै हैं सो उत्साह भावन सहित सैवें हैं, अर धर्मात्मा जो चतुर्विध संघ तिन विषैं अनेक प्रकार दरिद्र रोगादिक देखि-ग्लानि नाहीं करैं हैं तिनकी भक्ति करैं हैं सो निर्विचिकित्सा अंग कहिये ३।

बहुरि जो धर्म प्रवर्त्ति करैं हैं सो विवेक सहित शास्त्रोक्त करैं हैं सो अमूढ़ दृष्टि कहिये ४।

बहुरि अपने धर्मका बधावना वा जिनधर्मका बंधावना सो उपब्रंहण अंग कहिये, वा पराया दोष ढांकना सो उपगूह अंग कहिये।

बहुरि स्थितिकरणके दोय भेद भये २ जो अपने परिणाम धर्म सौं डिगैं तौं शास्त्रोक्त ज्ञान करि अनुप्रेक्षा-दिकका चिंतवन करि आपकों धर्म तैं न डिगवा दे सो स्वस्थितिकरण कहिये १ अर अन्य जीवन कूं धर्म तैं चिगता देखि ताकौं जा प्रकार बनैं, जाकरि वाका समाधान होता दीखै ता प्रकार समाधान करि धर्म विषैं स्थिति करै सो परास्थितिकरण कहिये।

बहुरि जहां धर्म, धर्मात्मा सौं बहुत प्रीति करै सो वात्सल्य कहिये।

बहुरि प्रभावना दोय प्रकार है, जहां आपकूं सर्व प्रकार ऊँचा दिखावै, कोई प्रकार भी नीचा न दिखावै सो

आत्म प्रभावना कहिये १ अर जिनमार्गकूं ऊंचा दिखावना सो मार्ग प्रभावना कहिये । ८

ऐसे अष्ट प्रकार अंगकरि युक्त है। बहुरि धनकूं विनाशीक जानि सप्त क्षेत्रन विषैं खरचैं हैं, निरन्तर खर्च करै हैं। अर देवन सूं पूज्य सर्व देवनके देव ऐसे श्री जिनेंद्र देव तिनकौं षट् प्रकार अष्ट द्रव्यनि करि भक्ति सहित पूजैं हैं—नामकरि १ स्थापनाकरि २ द्रव्यकरि ३ क्षेत्रकरि ४ कालकरि ५ भावकरि ६ इति ।

तिनके नाम को पूजे हैं, नामका उच्चार करि पुष्पांजलि क्षेपै हैं, नमस्कार करैं हैं, तिनके नामका जाप करैं हैं, ध्यान करैं हैं इत्यादि नाम करि पूजैं हैं १। बहुरि तिनकी जे कृत्रिम, अकृत्रिम प्रतिमां तिनकौं अष्ट द्रव्यनकरि पूजैं हैं, नमस्कार करैं हैं, वंदना करैं हैं, स्तवन करै हैं, जाप करैं हैं, चिंतवन करैं हैं इत्यादि करि तिनकी स्थापनाकूं पूजैं हैं २। बहुरि गृहस्थावास्था विषैं तिष्ठते जे तीर्थंकर तिनकौं द्रव्य पूज्य कहिये, तिनकौं यथाविधि पूजैं है, उनके निकट जानां नमस्कार करना, उनका अनुचर होना, उनके गुणनिका अनुरागी होय है ३। बहुरि जिस क्षेत्र विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं, तिस क्षेत्रकौं अष्ट द्रव्यनकरि पूजैं हैं, वा तिस क्षेत्र विषैं तिनकौं पूजैं हैं ४। बहुरि जिस काल विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं तिस काल कौं अष्ट द्रव्यन करि पूजैं हैं, वा तिस काल विषैं तिनकौं पूजैं हैं ५। बहुरि जिस काल विषैं ज्ञानावरणादिक चार घातिया कर्मनका नाश करि अनंत चतुष्टय शक्तिकौं धारैं हैं, अर समोशरण लक्ष्मीयुक्त होय गंधकुटीके मध्य सिंहासन कमल परि अंतरीक्ष विषैं तिष्ठ करि कल्याण रूप मोक्ष ताके मार्गका उपदेश करैं हैं ते भाव पूज्य हैं। तिनकौं अष्ट द्रव्य करि पूजैं हैं, नमस्कार करैं हैं, वंदना करैं हैं, स्तवन करैं हैं, जाप करैं हैं, ध्यान करैं है इन षटप्रकार करि जिनेंद्र देवकौं भक्ति करि पूजैं हैं १। बहुरि तीर्थंकर के जिन क्षेत्रन विषैं गर्भादिक पंच कल्याणक भये हैं तिन क्षेत्रन विषैं चतुर्विध संघ सहित जाय पूजन करैं हैं, तहां पूजनादि दानादि विषैं बहुत धन खरचैं हैं २। बहुरि जिन मंदिर बनावैं, बहुरि जिनबिंब निरमापन करावैं बहुरि यथोक्त प्रतिष्ठा करैं, चतुर्विध संघनै बुलाय तिनकी साक्षी सहित जिस भगवानकौं प्रतिमा विषैं स्थापित करना होय

तिनकों नाम सहित स्थापित करै, तादिनसैं प्रतिबिंब विषैं स्वपनो धारैं हैं, इच्छै तब ही तिस प्रतिबिंबकों भाव तीर्थंकर तुल्य जान सर्वभक्त्यादि क्रिया भावपूजा तुल्य करैं, वहां बहुतधन खरचैं। बहुरि च्यार प्रकार दत्ति विषैं धन खरचैं हैं—पात्रदत्ति १ समदत्ति २ दयादत्ति ३ सर्वदत्ति ४ इन चार दत्ति करि धन खरचना, ऐसें पूजा १ प्रतिष्ठा २ तीर्थयात्रा ३ अर चार प्रकार दत्ति विषैं धन खरचनेके अर्थि ये सप्त स्थान कहैं। अब चार प्रकार दत्तिकों दरसावै हैं।

प्रथम ही पात्रदत्ति कहिये हैं....

जगतविषैं पात्र तीन प्रकार हैं—सुपात्र १, कुपात्र २, अपात्र ३। जो सम्यक्त्व संयमादि सहित होंय ते सुपात्र कहिये १। तिनके तीन भेद—उत्तम १, मध्यम २, जघन्य ३। तहां उत्तम पात्र तौ अट्ठाईस मूलगुणके धारक बनवासी मुनि १ बहुरि मध्यम पात्र देशव्रती प्रथम प्रतिमा धारक सौं लेय एकादश प्रतिमा धारक पर्यन्त २ अरु जघन्य पात्र व्रत करि रहित सम्यग्दृष्टी श्रद्धानी सम्यग्ज्ञानी ३ बहुरि उत्तम पात्रके भेद उत्कृष्ट १ मध्यम २ जघन्य ३। तहां उत्कृष्ट पात्र तौ श्री तीर्थंकर देव १ मध्यम पात्र गणधर व संघ नायक आचार्य २ जघन्य पात्र विषैं सर्व मुनि ३ बहुरि मध्यम पात्रके तीन भेद—उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य। तहां उत्कृष्ट मध्यम पात्र तौ दशमी ग्यारमी प्रतिमाका धारक वा आर्यिका जी १ अर मध्यम २ पात्र अष्टमी नवमी प्रतिमाके धारक २ अर जघन्य मध्यम पात्र प्रथम प्रतिमा तैं लेय सप्तम प्रतिमाके धारक पर्यंत। बहुरि जघन्य पात्र भी तीन प्रकार—उत्कृष्ट १ मध्यम २ जघन्य, तहां उत्कृष्ट जघन्य पात्र तो उदासीन श्रावक १ अर मध्यम जघन्य पात्र अल्प आरंभी अरु अल्प परिग्रही श्रावक २ अर जघन्य जघन्य पात्र बहु आरंभी बहु परिग्रही श्रावक ३ ऐसे पात्र के नव भेद भये, तिनकौं आहार दान, औषधदान, अभय-दान, शास्त्रदान इन चार प्रकार दानादि सहित यथाविधि यथायोग्य देना, तिन विषैं मुनि अर्जिका अर अष्टम प्रतिमा तें लगाय एकादश प्रतिमाके धारक मध्यम पात्र पर्यंत चार प्रकार ही दान देना, जातैं इहां पर्यंत तौ ये त्यागी हैं और

कोऊको कछू चाहै नाहीं, भक्तिपूर्वक योग्य शुद्ध आहार देना १ योग्य रोगके परिहारके अर्थि यथाविधि सौं औषध देनी २ बहुरि तिन विषैं उपसर्ग परीषह आय प्राप्त भये होंय तौ तिस परीषह कूं जिस प्रकार मिटती जानौ तिस प्रकार करना। बहुरि कमंडलु, पिच्छिका दैनी। बहुरि अर्जिका आदि मध्यम पात्रन कूं योग्य वस्त्र देना ३ तिनके पढ़ने के अर्थ शास्त्र देने ४। बहुरि अल्प आरंभी अल्प परिग्रही तैं लेय सप्तम प्रतिमाके धारक पर्यंत श्रावकन कौं चार प्रकार दान देना, वस्त्रदान १ धनदान २ अजीविकादान ३ गृहमंदिरादि दान ४ निकट राखना, भक्ति करनी, इत्यादि पोषना करना। बहु आरंभी बहु परिग्रही श्रावकनकौं चार प्रकार दान दैना,, वस्त्राभरण देना, लक्ष्मी देना, गृह मंदिरादिक देना, हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी, आदि अनेक सामग्री देना, बेटी देना, निकट राखना, तिनके अर्थ तन, मन, धन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान, कषाय, ये सप्त भाव अपना पद अर पात्रकी योग्य सर्व लगावना भक्ति करनी स्वधर्मीके अर्थि प्राण दवोका अवसर होय तहां प्राण पर्यंत देना, इन नौ प्रकार पात्रन कूं यथायोग्य भक्ति पूर्वक दान—सत्कारादि करना। तहां भक्ति प्रवृत्ति दोय प्रकार है, वहुमान अरु विनय! जहां पात्रका यथायोग्य आदर सत्कारादि करना उनकौं ऊँचा दिखवना सौं बहुमान कहिये। अर आप तिनके निकट अष्ट प्रकारमद छोड़ि नीची वृत्ति धरनी सो विनय कहिये। इन नौं प्रकार पात्रनकौं दान संसारींक सुखकी वाछां रहित केवल मोक्षके अर्थि है, इन पात्रनकौं भक्ति पूर्वक दिया हुआ दान स्वर्ग मोक्षके सुखकौं प्राप्त करै है। इति पात्रदान भेदः।

बहुरि जे सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत, संयम कर तो रहित हैं, अर मुनि १, आर्जिका २, उत्कृष्ट श्रावक ३, इन लिंग वा अनेक नाना प्रकार भेष बनाय झूठा तप संयमादि कौं धरैं हैं, आपकौं पूज्य मानैं हैं, अर दान लेनेकी इच्छाकौं शाश्वती इच्छातैं धरैं हैं, ते कुपात्र हैं। तिनकौं सम्यग्दृष्टि दान भक्ति करि नाहीं दे हैं, तिनका सत्कार आदि मन, वचन, काय करि नाहीं करै है, तिनका लालन पालन भी नाहीं करै हैं, अर जो कुपात्रनका कोई प्रकार भी लालन पालन राखैं हैं, ते अपने धर्मकूं जलांजलि दैं हैं। जे कुपात्रनकौं भक्ति तैं दान दैं हैं ते नर्कनिगोद विषैं बूडैं हैं, तिनके धर्मकी अभिलाषा

करि धर्म जानि दै है, सो दिया भया पापके भाव कूं भजैं हैं। बहुरि जे सम्यक्त्व संयमादि रहित जीव हैं, ते अपात्र हैं। तिन विषैं जे जाचकोंको दान दै हैं सो जसके अर्थि दै हैं, तिस विषैं धर्म भावकौं नाहीं धरैं हैं, जातै जैनी सूम होय नाहीं, सूम होय ते जैनी नाहीं। तातैं जैनी सर्व तत्वनैं जानता थका अपने पर योग्य यथायोग्य सर्वही दान करै सो ही पद्मनंदिपंचविंशतिका विषैं कह्या है—

उत्कृष्टपात्रमनगारमणुव्रताढ्यम् ।
मध्यं व्रतेन रहितं सुदृशं जघन्यम् ॥
निर्दर्शनं व्रतनिकाययुतं कुपात्रम् ।
युग्मोज्झितं नरमपात्रमिदञ्च विद्धि ॥१॥

दूसरा अध्याय श्लोक नं. ४८ प पं.

अर्थ——जे पंच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, रूप तेरह प्रकार चारित्रके धारक, अट्ठाईस मूलगुण, यथायोग्य चौरासी लाख उत्तरगुण तिनकर सहित, त्रिकाल योगके साधक, बाह्य अभ्यन्तर चौबीस प्रकार परिग्रह करि रहित गृहवास का त्यागी सुख-दुःख, जीवन-मरण, शत्रु-मित्रादिक विषैं राग-द्वेष करि रहित, समान है प्रवृत्ति जिनकी, ऐसे निर्ग्रंथ वीतराग महाव्रती, मुनिराज, सर्व जीवनके दयालु, माता समान हितकारक ते उत्कृष्ट पात्र हैं, इनके अर्थि दिया हुआ दान उत्तमफल जे स्वर्ग मोक्षादि तिनकौं फलैं हैं। जैसे सुक्षेत्र में बोया एक हु बीज बहुत फल कूं फलै है। बहुरि अणुव्रती सम्यग्दृष्टि श्रावक पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, इन द्वादश व्रतनकरि सहित सो मध्यम पात्र हैं। याके अर्थि दिया हुआ दान मध्यम भोगभूमि आदि शुभतर फलको फलै है। अर जे व्रत करि रहित यथोक्त जिनमार्ग के श्रद्धानी उपशमादि सम्यग्दृष्टि ते जघन्य पात्र जानने, तिनके अर्थि दियाहुआ दान जघन्य भोगभूम्यादि शुभ फलनिको फलै है। बहुरि जे महाव्रतादि करि वा अणुव्रतादि करि सहित हैं अर जिनकैं जिनभाषित तत्वनिका श्रद्धान नाहीं, ते

जीव द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक कुपात्र जानने। बहुरि जिनके तत्वनिका श्रद्धान नाहीं अर व्रत भी नाहीं ते जीव अपात्र जानने, इनके अर्थि दिया हुआ दान किछु भी फलदायक नाहीं, उल्टा संसार की वृद्धि का कारण है, जैसे खारड़ी भूमि विषैं बोया बीज निष्फल जाय। भावार्थ--सम्यग्दर्शन सहित महाव्रतनिके धारक जिनकल्पी स्थविरकल्पी मुनिराज ते उत्तम पात्र हैं। जिनके बल, वीर्य, ज्ञानसंपदा की सामर्थ्य ज्यादा है ऐसे एकल बिहारी मुनि जिनकल्पी हैं। अर जिनका बल वीर्य, ज्ञानसंपदादि सामर्थ्य घटि है ऐसे संघ में बसने वाले मुनि ते स्थविर कल्पी हैं। जिन--कल्पी एवं स्थविरकल्पी में इतना ही भेद है कि जिनकल्पी तौ एक विहारी व स्थविरकल्पी संघवासी, शेष चारित्र श्रद्धान ज्ञान वैराग्यादिकका भेद नाहीं, सो इनके अर्थि मिथ्यादृष्टि भी श्रावक दान दें हैं तैं उत्तम भोगभूमिका दश प्रकार कल्पवृक्षनि करि उपज्या उत्तम सुख तिनकूं पावै हैं। वहां तैं मरि देवगति जाय हैं, अर जे सम्यग्दृष्टि श्रावक भक्ति पूर्वक दे हैं ते स्वर्गादिक सम्पदाकूं पावैं प्राप्त होय हैं। सम्यग्दृष्टि जीव भोगभूमि विषैं उपजे नाहीं, जिन जीवनके पहिले मिथ्यात्व अवस्था विषैं दान का प्रभाव करि भोगभूमि का बन्ध पड गया अर पीछे सम्यग्दर्शन का लाभ भया, ते जीव तौ भोगभूमि विषैं जाय हैं परन्तु वह जीव भोगभूमि विषैं मरण करि कल्पवासी देव होय हैं। अर मिथ्यात्वी मरण करि भवनत्रिक विषैं उपजें, ऐसे जानना। अर जे अणुव्रती सम्यग्दृष्टि श्रावक ते मध्यम पात्र जानने। बहुरि सांसारिक सुख सौं अंतरंग विषैं उदास, परन्तु चारित्रमोह के उदय तैं परिग्रहको छोडि सकैं नाहीं, ऐसे अव्रती सम्यग्दृष्टिजीव ते जघन्य पात्र जानने, अर जे व्रत तौ ग्रहण किया अर श्रद्धान करि रहित हैं, ते द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक ते कुपात्र जानने। जैसे अभव्यसेन मुनि ग्यारह अंग नव पूर्व पढ्या तौ भी श्रद्धान करि रहित था सो सम्यग्दृष्टि जीवनिके वंदिवे योग्य नाहीं। तैंसे ही और कुपात्र जानने। अर जे श्रद्धान अर व्रत इन दोनों से ही रहित हैं ते अपात्र जानने। जे जिन सूत्रोक्त बिना स्वकल्पित भेषके धारक ऐसे रक्तांबरादि, काथांबरादि, श्वेतांबरादि व अन्य मतके भेषी ते अपात्र जानने। यहां कोई प्रश्न करै कि जे जिन--सूत्रका अभ्यास करैं हैं, उपदेश दे हैं, पूजनादिक करै हैं ते रक्तांबरादि

अपात्र कैसें ताका समाधान जो तुमने कहा कि जिन–पूजा, शास्त्राभ्यासादि करैं है सो तो लौकिक विषैं ख्याति लाभ पूजा मान बढ़ाई के अर्थि करैं हैं, परमार्थ निमित्त नाहीं करैं हैं । लोकिक कार्य पर शून्य करना सो मिथ्या-कार्य है, तातैं ते मिथ्याती हैं । अर जिन सूत्र विषैं लिंग तीन ही कहे हैं—मुनि १ अर्जिका २ श्रावक ३ । इन सिवाय चौथा भेष कह्या नाहीं है । अर जे जिन सूत्रकी आज्ञा कों लोप रक्तवस्त्र धारण किया, आपका भेप नया चलाया ते बिषय कषाय भ्रष्ट रक्ताम्वरादि श्रद्धानी कैसे ? महा मिथ्यात्वकी साक्षात मूर्ति हैं । ताका दृष्टांत—जैसै द्वीपायन-मुनि बारा वर्ष ताईं तपश्चरण किया परंतु श्रद्धान बिना क्रोधके वशि होय नरक गयो तातैं मिथ्यात्वीके व्रतभी कार्य-कारी नाहीं ताही तें अपात्र है इनकी जो लोकिक भयतें पूजा, सत्कार, वंदना, नमस्कारादि करैं हैं ते महामिथ्याती हैं । जैसा गुरु होय तैसा शिष्य होय तातैं उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य पात्र बिना अन्यका दान पूजा सत्कारादि न करना यह उपदेश हैं । अब समदत्ति कहिये है, जे बराबर के बहु आरम्भी, बहु परिग्रही वा अल्पारंभी अल्प परिग्रही साधर्मी हैं तिनकौं चार प्रकार दान देना । अनेक प्रकार तिनसौं हित राखना, खान, पान, शैंया आसनादि विषै संबंध राखना, तिनसौं अनेक प्रकार लौकिक व्यवहार राखना, अपने नाता पति कुटुम्बसौं अधिक मानना सो समदत्ति कहिये ।

बहुरि दुखित भुखित जीवानैं चार प्रकार का दान करना, भावकरि देना सो दया दत्ति कहिये। तहां दुखित भुखित जीवोंके अर्थि च्यार प्रकार दान अपने पद माफिक निरंतर जैनीके घर बटवौंही करै ।

बहुरि जहां अपने सर्व परिग्रह हैं ते एके बार त्याग करना, अर पुनि वृत धरना सो सर्व दत्ति कहिये वा मरण समय सर्व धन कुटुम्बादिकतैं अपना ममत्व छोड़ि समाधिमरण करना सो सर्व दत्ति कहिये । ऐ सर्वोत्कृष्ट दत्ति है । ऐसैं धनको विनाशीक जानि सो धन धर्मके अर्थि है तिनकों इन सात क्षेत्रों विषैं तौ धन खरचना, इन विषैं खरचा हुआ धन बहुत फलकौं फलै है । स्वर्ग मोक्ष सुखकों प्राप्त करैं हैं, जैसे भली धरती विषैं बोया बीज बहुत

फलकौं दे है । अर कुपात्र दान करि त्यागा भया धन निरफल जाय है । जैसे वंजरभूमि विषैं वोया वीज निरफल होय है । इति ।

बहुरि मुनिजन, गुरुजनकी मन, वचन, काय करि भक्ति करै है, तिनके चरणारविंदका शाश्वती अनुरागी रहै । बहुरि पंच अंगनि सहित नाना शास्त्र तिनिका अभ्यास करै है । पंच अंग-श्रवण कहिये रुचिलगाय शास्त्र सुनैं १ धारण कहिये भलीभांति सुनौं जो अर्थ ताहि धारै, भूलै नाहिं २ बहुरि विचारै ३, शुद्ध घोपणा करै, आम्नाय मिलावै ४, वारंवार चिंतवम किया करै ५, इन पंच अंगन सहित शास्त्राभ्यास करै । अर प्रकट हैं अष्ट गुण जाकैं-करुणा १, वात्सल्य २, सज्जनता ३, आत्मनिंदा ४, समता ५, भक्ति ६, विरागता ७, धर्मानुराग ८ । बहुरि त्यजन ग्रहण विषैं उत्साहवान होय बहुरि गर्व वा आलस्य भाव करि रहित होय, बहुरि धीरजवान होय, बहुरि हर्षकरि सदा मंडित होय, बहुरि चतुर होय, बहुरि सर्व प्रतिष्ठित वचन बोलै, बहुरि धर्म कार्य वा उपकार कार्य करि अपने मुंह तैं अपनी बड़ाईके वा कर्तव्यके वचन नाहीं कहै है, बहुरि गौण हैं क्रोधभाव अर अदेखसका भाव जाकै, बहुरि लोकनकी लाज तैं वा अनेक प्रकार भय आवता थकां वा भोगनकी वांछा थकी धर्म सौं शिथिल नाहीं होय है, बहुरि पंच इन्द्रियनके विषय न्याय पूर्वक सेवै है, सर्व लौकिक कार्य न्यायके करै है । राजविरुद्ध १ धर्मविरुद्ध २ लोक विरुद्ध ३ कार्य विषय कपायनकै नाहीं करै है, सप्त व्यसन नाहीं सेवै है । बहुरि नहीं है अभक्ष्यका भक्षण जाकैं, बहुरि सप्तधातु व मल मूत्रादिकके संबंध रहित है खान पानादिक जाकैं, बहुरि द्रव्य शुद्धि १ क्षेत्र शुद्धि २ कालशुद्धि ३ भाव शुद्धि ४ संबंध शुद्धि ५ इन पंच शुद्धता करि सहित है भोजनादि क्रिया (सामग्री) जाकैं, इत्यादि गुण सम्यक्त्वभावके साथ ही प्रगट होय हैं। तिन सर्वको क्षयोपशम भाव कहिये । यहां पर्यंत तौ पाक्षिकका पद है । जहां पर्यन्त त्यागकी प्रतिज्ञा वाक्य करि रहित श्रद्धान ज्ञानकी शक्ति करि ही गुणका प्रगट होना सो पाक्षिक पद है । बहुरि सम्यक्त्व ही के माहात्म्य करि प्रथम प्रतिमाका ग्रहण करै है। तहां सप्त व्यसनका मन वचन काय करि वा कृत कारित अनुमोदना करि ऐसा तेतीसके भंग

विषैं भी सुखके कारण हैं, अर आगामी स्वर्ग मोक्षके कारण हैं।

इति श्री भावदीपिकाका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं क्षयोपशम सम्यक्त्व भावाधिकार पांचवां पूर्ण भया। ५

अब देशविरत संयमासंयम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

देशसंयमकों ग्रहण करि तेरि मोहको जोर।
संयम सकल मिलाय तिन नमूं मोह हर घोर॥

तहां अप्रत्याख्यान चौकड़ीका अभाव होत संतै प्रत्याख्यान चारित्र मोह कर्मके सर्वघाती स्वर्धकनके उदयका अभाव होय उदयकूं प्राप्त भया सर्वघाती स्पर्धकनका निषेक सो तौ प्रदेश उदय होय खिरैं सो ही तौ क्षय कहिये, अर उदयकों न प्राप्त भया ऐसा सत्ता रूप द्रव्य ताका उपशांतकरण होय, कहिये उदीरणा होय—उदयमें आवे नाहीं, अर देश-घाती स्पर्धकनका ऊदय होय तहां देशविरत संयमासंयम होय हैं। बहुरि जहां बहुत आरंभ बहुत परिग्रहका त्याग करि अल्प आरंभ अल्प परिग्रहका ग्रहण होय, तहां देशविरतसंयमासंयम होय, तातैं पंच स्थावर अर छटबां त्रस इन षट् प्रकार जीवनकी हिंसा त्याग, बहुरि पंचइन्द्रिय अरु षष्ठम मन इनके विषय विषैं राग—द्वेष का त्याग, तहां संयम होय। सो जहां त्रस हिंसाका तौ सर्वथा मन वचन काय कृत कारित अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै अवशेष एकदेश असंयमका त्याग एक देश होय, तहां देश संयम होय। तातैं बहु आरंभ बहु परिग्रह होत संते त्रस जीवनकी रक्षा न होय सकै, अर स्थावर जीवनकी हिंसाकी बाहुल्यता होय, बहुरि पंच इंद्रियनकी विषय वासना मंद नाहीं पड़े, अर मनका विकल्प न छूटे तब देशसंयम कहांते होय? तातै अल्प आरंभ अल्प परिग्रह भया ही

करि अतीचार सहित त्याग करै। बहुरि आठ मूलगुणनका अतीचार रहित ग्रहण करै, तहां सप्तव्यसन जुआ १ चौरी २ परदारा सेवन ३ वेश्यारमण ४ मांसभक्षण ५ मदिरापान ६ शिकार७ इनका तौ आसक्तता सहित त्याग, अर अष्ट मूलगुण-मांस १ मदिरा २ मधु कहिये शहद ३ बड़का बडबाला फल ४ पिप्पलकी गोल फल ५ पाकर फल ६ ऊमर फल ७ कठूमर फल ८ इनके भक्षणका त्याग करि अर अतीचारमें इनके सजातीय त्रस, आश्रित द्रव्य तिनका त्याग, बहुरि प्रथम दर्शन प्रतिमा विषैं भी परिग्रह प्रमाण संभवै है । सो नाना रूप है । प्रथम तौ अपने पुण्य उदय प्रमाण मिली जो राज्यादि सामग्री ता विषैं संतोषधारि ता सिवाय अधिक सामग्रीका त्याग करै सौ तौ परिग्रह प्रमाणका जघन्य भेद है । बहुरि मध्यभेदन विषैं पाई सामग्री विषैं, वा आरंभ प्रारंभ विषैं पौन राखना, चौथाई घटाय देना, अर्धराखना, चतुर्थभाग, अष्टमभाग इत्यादि प्रमाण विशेष त्याग करना सो मध्यके नाना भेद हैं । बहुरि इसके आगै उदासीन श्रावकके अनेक प्रकार प्रमाण हैं, जेता जेता कषाय घटता जाय, तेता तेता इन्द्रियनके विषय वा कषाय वा परिग्रह घटता जाय, या प्रकार प्रथम प्रतिमाका उत्कृष्ट पद सर्व आरंभ परिग्रह कुटुम्ब आदिक छोड़ि एकाकी होय तिष्ठै तहां पर्यंत है ऐसा प्रमाण शास्त्रोक्त नाहीं है, जो मिली सामग्री तैं अधिक राखना ऐसा प्रमाण तो उल्टा तृष्णा कौं कारणभुत है, धर्मका लक्षण तौ संतोष है, तातैं पाई सामग्री विषैं घटाय संतोप धरना, ताका नाम धर्म है, ऐसा देश विषैं रत दर्शनीक श्रावकका स्वरूप जानना । नामके एकदेशमे सर्व नामका ग्रहण करना इस न्याय तैं उपचार करि दर्शनप्रतिमाको भी देश-विरत कहिये इत्यादि क्षयोपशमसम्यक्त्व भावना जाननी । ये क्षयोपशम सम्यक्त्व–गुणस्थान तौ असंयत १ देशसंयत २ प्रमत्तविरत ३ अप्रमत्तविरत ४ इन चार विषैं पाईये । अर मार्गणा–गति ४ जाति पञ्चेन्द्रिय १ काय त्रस १ योग १५ वेद २ कषाय २१ अनंतानुबंधी चार बिना, ज्ञान—मति १ श्रुत २ अवधि ३ मनःपर्यय ४, संयम ५ सामायक १ छेदोपस्थापना २ परिहारविशुद्धि ३ संयमासंयम ४ असंयम ५, दर्शन—केवल बिना ३, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व स्वकीय १, संज्ञी १, आहारक १ अनाधरक २, इनविषैं पाइये है । बहुरि एक क्षयोपशमभाव जे हैं ते भाव वर्तमान

देशसंयमका कारण है । तहां पांच तो अणुव्रतका ग्रहण होय, हिंसा १ अनृत २ स्तेय ६ अब्रह्म ४ परिग्रह ५ इन पंच पापनका एकदेश त्याग सो अणुव्रत कहिये । अब इनके एकदेश त्यागका स्वरूप कहिये।

प्रथमही हिंसाका त्याग कहिये....

"प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा" जहां प्रमादयोग थकी प्राणका व्यपरोपण कहिये धात करना--पीड़ा उप-जावना ताका नाम हिंसा कहिये । प्रमादयोग कहिये कपाय विशेषात् जो कषाय विशेप थकी प्राणोंका पीड़ना ताका नाम हिंसा कहिये शास्त्रका वचन है। सो हिंसा दोय प्रकार—एक द्रव्यहिंसा १ दूजी भावहिंसा । तहां पंचेन्द्रियस्पर्शन १ रसन २ घ्राण ३ चक्षु ४ श्रोत्र ५ तीन बल—मन १ वचन २ काय ३ श्वासोच्छास १ आयु १ इन दश प्राणनका घात करना सो द्रव्य हिंसा है। बहुरि भाव प्राण जो चेतनाप्राण ज्ञान प्राण विषैं कषाय उत्पन्न करना सो भावहिंसा है । बहुरि द्रव्यहिंसा दोय प्रकार है—निज द्रव्य प्राणनका घात करना, क्रोध करि शरीरादिक दश प्राणनका कृश करना—अपघात करना, मान कषाय करि कृश करना, अपघात करना, मायाकषाय करि कृश करना-अपघात करना, लोभ कषाय करि कृश करना अपघात करना सो स्वेन्द्रिय हिंसा है १ बहुरि कपायकी तीव्र संक्लेशता करनी सो स्वभाव हिंसा है २ । बहुरि अन्य जीवनके द्रव्य प्राणोंका घात करना, मारना, बांधना, छेदना इत्यादि पर द्रव्य हिंसा है ३। अर पहिले कौं कषाय सहित करना सो परभाव हिंसा है ४ । ऐसैं हिंसाके चार भेद हैं—उद्यमी १, संकल्पी २, आरम्भी ३, विरुद्धी ४ । ऐसे हिंसाके सोलह भेद हैं । जहां उद्यम करि स्वपर द्रव्यभाव हिंसा करना सो उद्यमी हिंसा कहिये। सो चार प्रकार है । जहां चतुर (चार) प्रकार हिंसा करनेका मन विषैं विचारका करना सो संकल्पी हिंसा चार प्रकार है । बहुरि जहां नाना प्रकार स्वपरको दुःख देना सो विरुद्ध हिंसा चार प्रकार है । बहुरि चतुर प्रकार हिंसा अरम्भ के आश्रय होय सो आरंभी हिंसा चार प्रकार जाननी। सो इन हिंसा विषै अल्प आरंभ अल्प परिग्रहकै आश्रय जो शास्त्रोक्त

आजीविका व्यवहार विवाहादिक खान-पानादिक व्यवंहारादिक इत्यादिक आरंभ विषैं जो आरंभी हिंसा है सो तौ होय है सौ मोकली है। अब शेष रावं हिंसाका त्याग करै सो अहिंसा अणुव्रत कहिये। बहुरि असत्य वचन चार प्रकार है— सद्भाव विषैं असद्भावको वचन १, अर अभाव विषैं सद्भावको वचन २, स्वरूपतें विपर्यय वचन ३, पाप सहित वचन ४। पाप सहित वचनके तीन भेद—गर्हित वचन १, सावद्य वचन २, अप्रिय वचन ३ तहां पराया दोष प्रगट करना, वा दोषीके आश्रय हांसी करना, चुगली खानी, कर्कश वचन कहना, मर्मच्छेदक वचन कहना इत्यादि सो गर्हित असत्य वचन कहिये १। बहुरि जिस वचन करि हिंसादि पंच पापन रूप प्रवृत्ति होय सो सावद्य असत्य वचन कहिये २। बहुरि शोक, भय, आतापादि उपजावनेका कारण वचन सो अप्रिय असत्य वचन कहिये ३। इनमें अपना धन प्राण राखनैके निमित्त वा अपना धर्म राखनेकै निमित्त वा पर उपकारकैं निमित्त असत्य बोलना तौ मोकला है, और प्रकार झूंठ बोलना तेतीस के भंग त्याग हैं सो सत्य अणुव्रत कहिये २। बहुरि परका धनादिक सर्व वस्तु बिना दिया कोई भी प्रकार ग्रहण करना सो चोरी कहिये। "अदत्तादानं स्तेयं" ऐसा शास्त्रका वचन है। सो जहां मगराकी माटी अर निवान कौ जल ए जाकी वस्तु हैं तिनका तौ बिना दिया ग्रहण है और प्रकार सर्व अदत्त ग्रहणका तेतीसके भंग त्याग, सो अचौर्याणुव्रत कहिये ३। बहुरि स्व स्त्रीका तौ रोग मात्र विषय रहित सेवन अर अवशेष सर्व प्रकार अब्रह्मका तेतीसके भंग त्याग, सो ब्रह्मचर्याणुव्रत कहिये ४। बहुरि परिग्रह भेद दस प्रकार—क्षेत्र १, वास्तु २, हिरण्य ३, स्वर्ण ४, धन ५, धान्य ६, दासी ७, दास ८, कुप्य ९, भांड १०। इन दश प्रकार परिग्रह विषैं अपनो बाहिर भूम्यादिक विचरवा मात्र तौ क्षेत्र, अर रहवा मात्र मंदिर-घर अर आजीविका मात्र हिरण्य, सुवर्ण बहुरि जो आजीविका करनी पड़ै तो त्रस हिंसा रहित आजीविका करैं, अर जो राजादिक बड़े पदके धारक होंय तौ पालकी चौपाल मात्र बाहन, जातैं तिर्यंचाश्रित बाहन राखै नाहीं, याकैं त्रस हिंसाका त्याग तें तिसके भंग है तिर्यंचके राखने तैं मारना, बांधना, छेदना, भेदना, डाहना तथा नासिका क्रिया करनी पड़े, वा तिसके खान-पानादि मल-मूत्रादि विषैं त्रस हिंसा होय तब त्रस हिंसाका सद्भाव होय, अर पांच सात दिनके खावामात्र

धान्यादि सामग्री अर चाकरी मात्र एक दोय दासी, दास बहुरि पहरवा मात्र पद योग्य स्वल्प मूल्यका कपड़ा, अर खान-पान तथा शौचादि मात्र उपकरण, इस प्रकार तौ परिग्रहका प्रमाण करि मोकलो राखै, अर अवशेष समस्त परिग्रह छोड़ि पुत्रादिकनैं सौंपि आप गतस्पृह होई तिष्ठै, सो परिग्रह प्रमाण अणुव्रत कहिये। इति पंच अणुव्रत।

बहुरि इन अणुव्रतकी साधनभूत बाड़ बांधै, तब अणुव्रत सूं खेती निपजे। तहां तीनौं तौं गुणव्रत धारै दिग्व्रत १ देशव्रत २ अनर्थदण्ड त्याग ३। तहां कर्म-कार्य निमित्त पूर्व १ दक्षिण २ पश्चिम ३ उत्तर ४ ये चार तौ दिशा अरु ऐशान १ वायव्य २ नैऋत्य ३ आग्नेय ४ ये चार विदिशा एक ऊर्ध्व एक अधो इन दशोंदिशा विषैं गमनका प्रमाण, जितनी दूर दिशा प्रति ... लौकिक कार्य दीसै, अटके नाहीं, तितना प्रमाण राखै, निरर्थक अधिक प्रमाण न राखै, जितना प्रमाण राखै तहां पर्यन्त ही काम पड़ै तौ जाना, वस्तु मंगाना, भेजना, लेख लिखना, वा बांचना, समाचार भेजना, वा मंगावना इत्यादि क्रिया रूप प्रवर्तना। प्रमाण अधिक दिशा प्रति सर्व क्रिया प्रवृत्तिका त्याग करै सो दिग्व्रत कहिये १। बहुरि जितनी दिशा प्रति नियमरूप प्रमाण किया ता विषैं घटाय २ नियम रूप प्रमाण किया करना, सो देशव्रत कहिये २। बहुरि जहां विना प्रयोजन मन वचन कायकी प्रवृत्तिका त्याग करना, वा विना प्रयोजनकी विषय सामग्री, कषाय कार्यनकी सामग्री, पंच पापन की कारणभूत, तिनका लेना, देना, संचय राखना मोल लेना इत्यादिका त्याग करना सो अनर्थदंडका त्याग कहिये। ता अनर्थदंड त्यागके पांच भेद—अपध्यान १ हिंसाप्रदान २ प्रमाद चर्या ३ पापोपदेश ४ दुःश्रुति श्रवण ५। तहां धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार प्रकार मुख्य पुरुषार्थ रहित मनका विकल्प निरर्थक करना सो अपध्यान कहिये १। बहुरि पंच प्रकार स्थावर वा त्रसकी हिंसाका कारण उपकरण मांग्या देना, सो हिंसा प्रदान कहिये २। बहुरि अन्य जीवनकौं पंच पाप रूप प्रवृत्तिका उपदेश देना सो पापोपदेश कहिये ३। बहुरि विषय, कषाय, मिथ्यात्व पोषक खोटे शास्त्र कहना, कथा सुनना सो दुःश्रुत श्रवण कहिये ४ बहुरि विना देख्या विना विचारया विना प्रयोजन कार्य करना वा बिना प्रयोजन गमनागमन करना वा

कार्यसूं अधिक अग्नि आदि प्रजाल्हना, जल नाखना, वनस्पति तोड़ना, घात करना, धरती पर्वतादिक खोदना, कार्यसूं अधिक वस्तु उत्पन्न करनी इत्यादि प्रमादचर्या कहिये । इन पंच प्रकार निरर्थक क्रियाका त्याग सो अनर्थदंडका त्याग कहिये ५।

बहुरि चार शिक्षाव्रत धरै—सामायिक १ प्रोषधोपवास २ भोगोपभोग प्रमाण ३ अतिथि संविभाग ४ । जहां तीन काल सामायिक करिये पौर्वाह्णिक १ माध्याह्निक २ आपराह्णिक ३ । जघन्य एक मुहुर्त्त, उत्कृष्ट तीन मुहूर्त्त प्रमाण नाम १, स्थापना २, द्रव्य ३, क्षेत्र ४, काल ५, भाव ६ ऐसें षट् प्रकार पदार्थनि विषै समभाव करना सो सामायिक शिक्षाव्रत कहिये १ । बहुरि दोय अष्टमी दोय चतुर्दशी इन चार तिथियन विषैं मास मास प्रति पोसा सहित उपवास करना, सर्व विषय कषांय वा विषय कषायनके कार्यनका त्याग करि उत्कृष्ट षोड़स प्रहरकी मर्यादा वा मध्यम बारह प्रहरकी जघन्य आठ प्रहर की मर्यादा करि धर्मध्यान रूप रहना सो प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत कहिये २ । भोग उपभोगका प्रमाण करना सो भोगोपभोग प्रमाण शिक्षाव्रत कहिये ३ । बहुरि अतिथि जे मुनि तिनकै अर्थि भोजन विषैं भाग करना, द्वारापेक्षण करना, मुनिके आवने योग्य काल विषैं अपने द्वार पर खड़े रहना, प्रासुक जल है हस्त विषैं जाकै, मुनिकी बाट देखा करना, जो भाग्यका जोर करि महापुरुष आय जांय तौ तिनकौं नवधा भक्ति करि भोजन देना । प्रथम तौ मुनि द्वार आवै तिन प्रति ऐसा शब्द कहि पड़गावै " हे प्रभो ! तिष्ठिये, अन्न–जल मेरे शुद्ध है१, बहुरि आप आगे होय साधु पाछै चालै २, बहुरि रसोईके बाह्य आंगनमें शुद्ध क्षेत्र विषैं ऊंचा आसन दे तिस पर साधु खड़ा रहै, तिनके चरण धोवै ३, पूजा करै ४, नमस्कार करै ५, मन शुद्ध ६, वचन शुद्ध ७, काय शुद्ध ८, आहार शुद्ध ९ ।

इति नवधा भक्ति ।

बहुरि सप्त गुण दातारके ताकरि युक्त होय——श्रद्धा १, भक्ति २, निर्लोभता ३, दया ४, क्षमा ५, अनसूया ६, अविसाद ७, । इनके अर्थ–भक्ति करि दिया दान कल्याण हीके अर्थि हैं, सो श्रद्धा कहिये १, भक्तिपूर्वक शक्ति

सों अधिक हीन भोजन न दे २ इहभव परभव संबंधी लौकिक फल न वांछै ३ सर्व जीवन विषैं करुणाभाव सहित होय ४ क्रोध करि बर्जित होय ५ अदेखसा भाव रहित होय ६ हर्ष सहित बेड़े आदर सों उदाराचित्त सहित होय ७ अर जो साधू न आवें वा लाभांतराय कर्मके उदय तैं आपके हाथ भोजन न बनैं तौ ता दिन उपवास करै, वा कोई रस त्याग करै, ताका नाम अतिथिसंविभागशिक्षाव्रत कहिये ४ । इन बारह व्रतोंको ग्रहण करै । बहुरि अंतमें संल्लेखना मरण करै । तहां अपना मरण दृष्ट पड़ै तब सर्व विषय कषाय कार्यनका त्याग करै, चेतन पदार्थ जे स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब आदिक, अर अचेतन पदार्थ धन, संपदा, मंदिरादिक तिनसौं ममत्व छोड़ि सर्व परद्रव्य तैं आपा छुडाय, आपको चैतन्य अमूर्त्तीक पदार्थ ध्यावै, तहां पंच परमेष्ठीकों सुमरता तथा अनुप्रेक्षाका चिंतवन करता, पर्याय छोड़ै । बहुरि जेता काल सन्यास लिया था, ता पीछे जीवन होय तौ तेताकाल जीवो, मरयो, वैरी, मित्र, सुख, दुःख समान जानै, तिन विषैं राग द्वेष न करे, सो अंतसल्लेखना कहिये १३। अस्पर्श्य शूद्रको दूसरी प्रतिमातें अधिक ग्रहण करनेकी आज्ञा नहीं है ।

इति श्री व्रतप्रतिमा द्वितीयविधान देशविरतका द्वितीय भेद भया, देशविरत संयमासंयमका प्रथम भेद भया ।

बहुरि तृतीय प्रतिमा सामायिक कहिये हैं—तहां उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य कालका नियम धारि तीनों काल के विषैं जो सामायिकका विधान शास्त्र विषैं कह्या है, तिस विधान सहित षट् प्रकार पदार्थन विषैं समभाव है लक्षण जाका ऐसा सामायिक करै, नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ काल ५ भाव ६ तहां अनेक प्रकार वैरी मित्र के इष्ट अनिष्ट नाम विषैं राग—द्वेष न करना सो नाम सामायिक कहिये १ ।

बहुरि इष्ट स्थापना वा अनिष्ट स्थापना वा वैरीकी स्थापना वा मित्रकी स्थापना तिन विषैं राग—द्वेष न करना सो स्थापना सामायिक कहिये २।

बहुरि जहां इष्ट, अनिष्ट, चेतन, अचेतन द्रव्य वा मित्र, वैरी तिन विषैं राग-द्वेष न करना, सो द्रव्य सामायिक

कहिये ३।

बहुरि जहां इष्ट अनिष्ट क्षेत्र विषैं राग—द्वेष न करना सो क्षेत्र सामायिक कहिये ४।

बहुरि इष्ट अनिष्ट काल विषैं राग–द्वेष न करना सो काल सामायिक कहिये ५।

बहुरि जीव पुद्गलकी मिश्रदशारूप देव, मनुष्य, तिर्यंच, नरक आदि पर्याय इष्ट अनिष्ट रूप तिन विषैं वा न्यायके क्रोध, मान, माया, लोभ, रूप जे कषायभाव वा मन, वचन, कायकी प्रवृत्ति इष्ट अनिष्ट, इत्यादि तौ चेतन के भाव, वा शीत–उष्णादिक वा मिष्ट–कटुकादिक वा सुगंध–दुर्गंध वा शुक्ल–कृष्णादिक वा शब्द, बंध, शूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, उद्योत, आतप इत्यादिक अचेतन पुद्गलके इष्ट अनिष्ट भाव, तिन विषैं राग–द्वेष न करना सो भाव सामायिक कहिये ६।

इन षट् पदार्थन विषैं समभाव करना। बहुरि नियमके काल पर्यंत एकान्त स्थानक निश्चल आसन मुनिवत रहना, जो परीषह आय प्राप्त होय हैं, तौ मरण पर्यंत तिनकों दृढ़ मन करि राग–द्वेष रहित होय सहना। तहां कै तौ अपने स्वरूपको विचारना या पंच परमेष्ठीके गुणानिका स्मरण करना, कै द्वादश अनुप्रेक्षा का चिंतवन करना, और सर्व विधान सामायिकका जो शास्त्र विषैं कह्या है, सो सर्व करना सो तीजी सामायिक प्रतिमा कहिये, देशविरतका सामायिक तीसरा भेद कहिये अर देशसंयमभावका द्वितीय भेद है।

अब प्रोषध प्रतिमा निरूपिये है....

प्रोषध प्रतिमाका धारक मास विषैं दोय अष्टमी, दोय चतुर्दशी इन चार तिथि विषैं चार प्रोषध करै, काल मर्यादा उत्कृष्ट सोलह पहर, मध्यम बारह प्रहर, जघन्य आठ प्रहरका नियम धरि, चार प्रकार आहारका मन, वचन, काय करि कृत कारित अनुमोदना करि तेतीसंके भंग त्याग करि सर्व लौकिक कार्य वा विषय कार्य वा कषाय कार्य वा आजी-

विकादिक के कार्य वा विषय वासना वा कषाय वासना का त्याग करि सर्व कुटुम्बादिकतैं वा ग्रह मंदिरादिक तैं मोह वासना छोड़ि एकांत स्थानक विषैं शय्या, आसन करै। तहां अपने स्वरूपका चिंतवन करै। एक तीर्थंकर वा प्रतिमाजी तिनकी वंदना करै, चौबीस तीर्थंकरोंका स्तवन करै, पंच परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतवन करै, जाप करै, तीन लोकका स्वरूप चिंतवन करै, शास्त्रका बांचना, पृच्छना, आम्नाय, अनुप्रेक्षा, धर्मोपदेश ये पंच प्रकार स्वाध्याय करै, द्वादशानुप्रेक्षाका चिंतवन करै, अनेक प्रकार परीषह, कष्ट आय प्राप्त होई तिनकों साम्य भावन करि सहैं इत्यादि धर्म प्रवृत्ति युक्त होत संतो मुनि समान होय नियम काल पूर्ण करै, अर प्रोषध प्रतिमाकौ सर्व विधान शास्त्रोक्त होय सौ करै, सो चौथी प्रोषध प्रतिमा कहिये ४। ये देशविरतका प्रोषधोपवास चौथा भेद है। अर देशसंयमका तृतीय भेद।

अब पांचवीं सचित्त त्याग प्रतिमा प्ररूपिये हैं....

कच्चा जल अरु हरित कायका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग मुख्य करि विराधना करनेका त्याग करै। स्थूल पनेका एक भी, अष्ट प्रहरकी मर्याद सहित उष्ण जल अर हरित काय रहित प्रासुक वस्तु का है भक्षण जाकै, सचित्त संबंधादि अतीचार रहित सचित्त का त्याग करै, सो सचित्त त्याग पांचवीं प्रतिमा कहिये। सो सचित्तविरत देश विरतका पांचवां भेद है। अर देश संयमका चतुर्थ भेद है।

अब रात्रिभुक्ति त्याग नाम षष्टम प्रतिमा कहिये है—

तहां मन, वचन, काय, कृत, करित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग रात्रि भोजनका त्याग करै। रात्रि भोजन आप करैं नाहीं, मन करि भोजनपर चित्त चलावे नहीं, भोजन कऱ्या वा वचन करि भोजन कऱ्या ऐसा वचन कहे नहीं, काय करि भोजन करै नहीं, वहुरि अन्य पुत्रादिकन को भोजन करावनेका चिंतवन करै नाहीं, वचन करि कहै नहीं कि

थैं भोजन करो, काय करि अपने हस्त थकी भोजन करावै नहीं, बहुरि रात्रि भोजन करनेवालेकौं मन विषैं सराहवे नहीं, वचन करि सराहवे नाहीं, काय करि सराहवे नाहीं सो रात्रिभुक्ति त्याग षष्टम प्रतिमा कहिये।

या रात्रिभुक्ति देशविरतका षष्टम भेद है अर देशसंयमका पचम भेद।

अब ब्रह्मचर्य प्रतिमा कहिये है--

जहां सर्व प्रकार चेतन–अचेतन स्त्रीन सौं मैथुन करिवा का त्याग करै, मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेंतीसके भंग अतीचार रहित त्याग करै, अर नववाढ सहित रहैं, स्त्रीनके संग विषैं रहै नाहीं १ स्त्रीनका सुन्दर अंग देख प्रेम रुचि करि निरखै नाहीं २ स्त्रीनसौं प्रेम रुचि करि बतलावै नाहीं ३ बहुरि प्रथम अवस्था विषैं आपनै कीये जो काम रसभोग तिनकों चिंतवे नाहीं ४ तथा कामोत्पादक गरिष्ट आहार खाय नाहीं ५ शरीरकौं संवारे साजै नाहीं ६ स्त्रीनकी शय्यापर सौवे नाहीं ७ काम कथा करै नाहीं ८ उदरभर भोजन खाय नाहीं, लघु–भोजन करै ९। मन विषै कामविकार करै नाहीं स्त्रीनके मुख के गानादिक राग करि सुनै नाहीं, तथा वचन करि काम–विकार चेष्टा करै नाहीं, गाली काढ़ै नाहीं, मसखरी आदि करै नाहीं, काय करि काम–चेष्टा करै नाहीं, इत्यादि त्याग युक्त होय सो ब्रह्मचर्य प्रतिमा सप्तम कहिये। ब्रह्मचर्य देशविरतका सप्तमभेद अर देशसंयमका षष्ठम भेद है।

अब आरंभत्याग प्रतिमा कहिये है–

जहां सर्व खान—पान संबंधी चूल्हा परंडी आदिके आरंभका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेंतीसके भंग त्याग करि निरारंभ होय तिष्ठै अपने घर वा पराये घर न्यौता जाय, विषय रहित योग्य लघु–भोजन करै, पुत्रादिक करि दिये विषय रहित, तुच्छ मोलके वस्त्रादिक पहिरै, वैठै आप सर्व वित्त सामग्रीका त्याग

करै इत्यादि क्रिया सहित आरंभ त्याग अष्टम प्रतिमा कहिये । आरंभ त्याग देशविरतका अष्टम भेद है अर देश-संयमका सप्तम भेद है।

अब परिग्रहत्याग प्रतिमा कहिये है-

जहां एक छोटे पन्हे की धोती, शिर ढांकनमात्र एक छोटीसी पागड़ी एकपछेवड़ी इत्यादि इन तीन वस्त्र-मात्रका तौ ग्रहण, अर अवशेष सर्व परिग्रहका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै, स्वपरके घर बुलाया जाय, योग्य लघु भोजन करै, योग्य वस्त्र अन्यके दिये पहरै, निरबांछिक रहै, सौ परिग्रह-त्याग नवमी प्रतिमा कहिये।

यह परिग्रहविरत देशविरतका नवमां भेद व देशसंयमका आठवां भेद है।

अब अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये....

जहां लौकिक पापकार्यनके उपदेश देनेका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै, सो अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये । यह अनुमति त्याग देशविरतका दशमभेद अरु देशसंयमका नवमां भेद है ।

अब उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा कहिये है--

जहां उपदेश्या भोजनका त्याग करै, अनुदिष्ट आहार करै, मुनिकी तरह ग्रहस्थके घर जाय खड़ा रहै । वह बड़ा आदर सत्कार करि भक्ति पूर्वक स्थापै, हे महाभाग्य हमारौ अन्न--जल शुद्ध है, आप लीजिये, तहां वाका

उत्साहभाव, भक्तिभाव देखि योग्य काल विषैं योग्य लघु भोजन करै । वे श्रावक बहुत आदर सहित ऊँचा आसन बिछाय बहुत विनय सहित भक्ति करै, हर्ष करि भोजन दे, तहां विषय रहित बैठ करि भोजन करै, सो उद्दिष्ट त्याग कहिये । इस प्रतिमाके दोय भेद हैं—क्षुल्लक, ऐलक । तहां क्षुल्लक तो लगोट अर एक पाटको एक खंड साड़ौ राखै, आहार करनेको स्वल्प मोलका एक पात्र, शौचादि क्रिया निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखै, अर पांच घरनिमें आहारके निमित्त भ्रमण करैं, जहां अपने पूर्णता योग्य आहार दीखै तहां ही पात्रमें लेय बैठिकें भोजन करि पीछैं पात्रकौं शुद्ध जलतैं पखालि वन विषैं विहार करैं, अर जो यह सुनै कि यहां व्रती श्रावक वा मुनि आवेगैं, उनकौं यह आहार पकाया है, वहां भोजन का त्याग करै । अर ऐलक एक कोपीन ही राखैं, बहुरि स्पर्श्य शूद्र कौ तौ क्षुल्लक पर्यंत ही देशविरत का ग्रहण है, अर ऐलक व्रत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन उच्च गोत्रके धारकन ही के होय, अर ये शौच निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखैं, पंच धरन विषैं आहार निमित्त भ्रमण करैं जहां आहारकी योग्यता होय तहां वैठि पाणिपात्र विषैं भोजन करैं, इनकें पात्रका ग्रहण नाहीं । ये श्रावक मुनि तुल्य हैं, जिनके कौपीन मात्र परिग्रह है । जितने देशव्रती हैं महाव्रती हैं ते द्विजन्या हैं । लोक विषैं द्विजन्या ब्राह्मण कूं कहैं हैं सो द्विजन्या शब्द का यहां यह अर्थ न जानना । यहां ऐसा अर्थ है कि जो पहिले तौ माताका रुधिर, पिताका वीर्य तैं पुद्गल पिंडको ग्रहण करि नग्न दिगम्बर रूप तैं जन्म पाया, सो एक जन्म तो यह भया सो, यह जन्म तौ सर्व ही संसारी जीवनकै अनादिकालका अज्ञान अवस्था तैं होय है । अर पीछे संसार देह भोग तैं उदास होय वाह्य अभ्यंतर चौबीस प्रकार परिग्रह त्याग करि जैसा स्वरूप माताके उदरमें तैं निकसै नगन था, तैसा ही ग्रहण किया सो ज्ञान पूर्वक व्रतसंस्कार करि दूसरा जन्म भया, सो यहां द्विजन्मा शब्दका यह अर्थ है । सो क्षुल्लक व्रतको धारक शूद्रही होय सो तौ एक लोह पात्र राखै, जातैं अपना शूद्र—कुल प्रगट ही दीसै, जातैं सूत्रकी ऐसी आज्ञा है कि ताही पात्र विषैं भोजन करै । अर अस्पर्श्य शूद्र कों दूसरी प्रतिमा तें अधिक ग्रहण करने की आज्ञा नाहीं । बहुरि

बस्ती वा अनवस्तिका आदिकनमें है वास जिनका, इस प्रकार देशसंयमभावके दश भेद कहिये । तहां सर्व ही भेदन विषैं सदाकाल सर्वके खान—पानादि करना, आजीविका व्यवहार करना, विषय सेवना इत्यादि सर्व अवस्था विषैं गुणश्रेणीनिर्जरा अपने भावनकी विशुद्धताके अनुसार निरन्तर होय है । ऐसा एकादशमी प्रतिमा उद्दिष्ट त्याग स्वरूप जानना । यह उद्दिष्ट त्याग देशविरतका एकादशवां भेद है, यह देशसंयमका दशमां भेद हैं । इस प्रकार एकादशप्रतिमा सहित देशसंयमका संक्षेप कथन किया । विशेष व्याख्यान श्रावकाचारके योग्य बड़े—ग्रंथन तैं जानना ।

अब देश संयम क्षायोपशमिक भावका योग्य गुणस्थानक तौ एक पंचम संयमासंयम ही है । बहुरि मार्गणा गति मनुष्य तिर्यंच २, जाति—पंचेन्द्रिय १, काय—त्रस १, योग ९—मनके चार वचन के चार औदारिक काययोग १, वेद-तीन कषाय—अनंतानुबन्धी अप्रत्याख्यान आठ बिना १७, ज्ञान—मति १ श्रुत २, अवधि ३, संयम—देश संयम १, दर्शन केवल बिना ३, लेश्या-पीत १ पद्म २ शुक्ल ३, भव्य १ सम्यक्त्व-उपशम १ क्षयोपशम २ क्षायिक ३, संज्ञी १, आहारक १, बहुरि देश संयम भाव वर्तमान भी सुख रूप है अर आगामी स्वर्ग मोक्षका कारण है ।

इति श्री भावदीपिका का क्षयोपशम भावाधिकार विषै देश संयम भावाधिकार सप्तम पूर्ण भया ।

अब क्षयोपशम चारित्र भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

चारित चाप चढायकें रत्नत्रय सरबंध ।
मोह शत्रु क्षय जिन कियो नमों जगत करि वंध ॥

तहां संज्वलन चारित्र मोहकर्मके सर्व घाती स्पर्धकनके उदयका अभाव होय, उदयको प्राप्त भये जे सर्व-घाती स्पर्धक तिनका तौ प्रदेश उदय होय नहीं सो तौ क्षय कहिये, अर उदयकौं न प्राप्त भये ऐसे सत्ता रूप स्पर्धक तिनका उपशांत करण होय, उदीरणा होय, उदय आवै नहीं। अर देश स्पर्धकनका उदय होय तहां क्षयोपशम चारित्र भाव प्रगट होय है। तहां स्वयं बुद्ध वा प्रति बुद्ध हुआ संता, संसार, शरीर, ग्रह, कुटुम्ब, परिग्रह, विषयभोगादिक तैं विरक्त होय बन में जाय अट्ठाईस मूल गुण के धारक महातपस्वी सर्व श्रुतके पारगामी दोय, तीन, चार प्रमाण ज्ञानके धारक, महा-ऋद्ध्यादि गुणकरि युक्त, सर्व संसार मायातैं निस्पृह, बाह्य, अभ्यन्तर चौबीस परिग्रहके त्यागी, परम दिगम्बर नग्नमुद्रा के धारक, दीक्षा शिक्षा देने विषैं प्रवीण, सर्व जीवन के हितकारी, ऐसे जै श्री गुरुदेव तिनकै पास जाय दीक्षा जांचै, तब श्री गुरु वाकौं दीक्षा योग्य देखि आज्ञा करैं। "हे महाभाग्य! तैं (तूने) भली विचारी, यह महा अलभ्य परम कल्याण की करनहारी, संसारीक पर जीवन कूं भयकारी, महापुरुषनि करि सेव्यमान, त्रिलोक पूज्य, ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा ताहि तूं ग्रहण कर। तब यह अष्टांग नमस्कार करि हाथ जोड़ विनय करि युक्त सन्मुख श्रीगुरुके निकट खड़ो रहै। तब श्री गुरु आज्ञा करैं, वस्त्राभूषणका परिहार कर, तब आज्ञा होता ही यह तत्काल हर्ष करि सर्व वस्त्राभरण ऐसें उतारे जैसैं शरीर तैं मैल उतारि डारै। बहुरि चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं अरु दशप्रकार बाह्य परिग्रहका श्रीगुरुकी आज्ञा पूर्वक त्याग करै। तहां मिथ्यात्व १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ हास्य ६ रति ७ अरति ८ शोक ९ भय १० जुगुप्सा ११ पुरुष वेद १२ स्त्री वेद १३ नपुंसक वेद १४ ऐसे चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं।

बहुरि क्षेत्र १ वास्तु २ हिरण्य ३ सुवर्ण ४ दासी ५ दास ६ धन ७ धान्य ८ कुप्य ९ भांड १० या प्रकार दश बाह्य परिग्रह ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग करै।

अब इनका स्वरूप कहिये—"मूर्च्छा परिग्रह" कहिये पर द्रव्य सेती ममत्वभाव, ममत्व कहिये आत्माका परि-णाम अर पर द्रव्य सौं एकत्व होय बंधजाना। जैसे—तांतून निगोद ? जलचर जीव अपने तंतून कूं चलाय गांठि देय

परद्रव्यकौं आपकी वोर खेंचकरि एकत्व होय है, तैसैं आत्मा अपने ममकार भावरूप परिणाम करि परद्रव्यन सौ गांठरूप होय एकत्व-भायकी प्राप्ति होय है । तातैं याहीकूं ग्रंथि कहिये, परद्रव्यन कूं बांधनहारा आत्माका ममत्व परिणाम सो अभ्यंतर ग्रंथ कहिये, अर जो आत्म परिणामके बांधनेमें आये परद्रव्य ते बाह्य ग्रंथ कहिये । बाह्य अभ्यंतर परिणाम ग्रंथि पूर्वोक्त चौबीस प्रकार ताका त्याग करै तब निर्ग्रंथ पद होय है ।

जहां परद्रव्य सेती अहंकार ममकार बुद्धि रूप परिणामनका त्याग सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग अर बाह्य शरीर कुटुंबादिकका त्याग वा क्षेत्रादि दश प्रकार वस्तुओंका त्याग सो बाह्य मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये । वा विपरीत मिथ्यात्व भावको धरैं मिथ्यादेव, गुरु, धर्म, आप्त आगम, पदार्थ वा तिनके धारक चेतन, अचेतन पदार्थन विषैं रागका त्याग कहिये, सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये । अर तिन चेतन अचेतन नव पदार्थन का त्याग सो बाह्य मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये १ ।

बहुरि जहां पर द्रव्य विषैं क्रोधका त्याग सो अभ्यन्तर क्रोध परिग्रहका त्याग कहिये अर बाह्य क्रोधके कारण पर द्रव्यका त्याग सो बाह्य क्रोध परिग्रहका त्याग कहिये २ ।

बहुरि जहां अष्ट प्रकार मदादि रूप मानभावका त्याग सो अभ्यन्तर मान परिग्रहका त्याग कहिये । अर मानके कारण बाह्य द्रव्यका त्याग सो बाह्य मान परिग्रहका त्याग कहिये ३ ।

बहुरि मन वचन कायकी कुटिलता रूप जो मायाभाव जहां मन विषैं तो किछु और ही विचार करना, अर वचन करि कछु और ही कहना, वा काय करि किछु और ही करना, सो मन, वचन, कायकी कुटिलता कहिये । वा आप तौ मन वचन कायादिककी प्रवृत्ति वा ज्ञान चारित्रादिककी प्रवृत्ति, वा कुल जात्यादिक नीची अवस्थाको धारै हैं, अर कोई अन्य जीव अपनी अवस्था सैं ऊंची बधाय वर्णन करै, तहां अपने मन विषैं प्रिय लागै, अपनी जैसीकी तैसी अवस्था प्रगट न कर देना, सो मनकी कुटिलता कहिये ।

बहुरि वचन तो तुच्छ कार्यादिक का साधक वा अपनी न्यूनताको कारण कह्यो थो, अर कोई अन्य मनुष्य इनके वचनकौं कोई अपेक्षा करि बडे कार्यको साधक वा उच्चताको कारण थापै ताप्रति अपने कहे वचनको गोप्य करि कहै " हमकौ तुम समझे हौ ऐसा ही वचन कह्या है, ऐसा कहना सो वचन की कुटिलता कहिये।

बहुरि आप कायकी नीची प्रवृत्तिकौं धारैं हैं अर अन्य जीवन कौं देखतां कायकी प्रवृत्ति ऊंची बनाय ले सो कायकी कुटिलता कहिये । इनका तहां त्याग करना सो अभ्यंतरमाया परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि इनके कारण बाह्य परद्रव्य का त्याग सो बाह्य माया परिग्रहका त्याग कहिये।

बहुरि मोहइच्छा १ कषायइच्छा, भोगइच्छा, रोगइच्छा, इन चार प्रकार की इच्छाकी कारणभूत जो इष्ट सामग्री तिनकी प्राप्तिकी इच्छा रूप जो अप्रशस्त लोभ ताका त्याग सो अभ्यंतर लोभ परिग्रहका त्याग कहिये। अर बाह्य कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामिग्री का त्यागसो बाह्य लोभ परिग्रहका त्याग कहिये । जहां चार प्रकार इच्छाकी साधक सामग्रीका संगम होता प्रसन्न होना वा परद्रव्य हास्यके कारण देखी आप हास्य रूप होना ऐसा जो हास्य रूप भाव ताका जो त्याग सो अभ्यंतर हास्य परिग्रहका त्याग कहिये। अर हास्यकी कारणभूत परद्रव्य सामग्री ताका त्याग सो बाह्य हास्य परिग्रहका त्याग कहिये ६।

बहुरि चार प्रकार इच्छाको कारण परद्रव्य रूप जो इष्ट सामग्री तिन विषैं आसक्तभावका त्याग सो अभ्यंतर रति परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि रति–भावको कारण परद्रव्य रूप सामग्री ताका त्याग सो बाह्य रति परिग्रह का त्याग कहिये ७।

बहुरि जो आपकों न सुहावै वा दुःखदायक होय ऐसी जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्री ताका संबंध होतैं जो अरुचिभाव होय, यातैं शीघ्र छूट जानेकी भावना ऐसा अरतिभाव ताका त्याग करना, सो अभ्यंतर अरति परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि बाह्य अरतिको कारणभूत सामग्रीके अभावको कारण बाह्य सामग्री ताका त्याग सो बाह्य अरति

परिग्रहका त्याग कहिये ८।

बहुरि चार प्रकार इच्छाका कारणभूत जो बाह्य परद्रव्य रूप सामग्रीका वियोग होतैं जो निरुद्यमी हुआ थका चिंताका करना, सो शोक कहिये, ताका त्याग सो अभ्यंतर शोक परिग्रहका त्याग कहिये। बहुरि शोकका कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्रीका त्याग सो बाह्य शोक परिग्रहका त्याग कहिये ९।

बहुरि जहां शरीरादिक इष्ट सामग्रीका बाह्यकौं जानि भयरूप भावकौं धरना, छुप जाना वा भागजानेकी बुद्धि धरना, ताका त्याग सौ भय परिग्रहका अभ्यंतर त्याग कहिये, बहुरि भयके कारण जे परद्रव्य चेतन अचेतन पदार्थ तिनके निवारनेका कारण जो परद्रव्य रूप सामग्री, ताका त्याग सो बाह्य भय परिग्रहका त्याग कहिये १०।

बहुरि जे अपने मनकूं अभावती पर द्रव्य रूप सामग्री ता थकी अहोठाभाव करना, ग्लानि करना ताका नाम जुगुप्सा कहि ताका त्याग सो अभ्यंरत जुगुप्सा परिग्रहका त्याग कहिये। बहुरि जुगुप्सा का कारणभूत तो बाह्य परद्रव्य ताका त्याग सो बाह्य जुगुप्सा परिग्रहका त्याग कहिये ११।

बहुरि स्त्री सौं काम सेवनकी इच्छा ताका नाम पुरुष वेद कहिये, ताका त्याग सो अभ्यंतर पुरुष वेद परिग्रह का त्याग कहिये, अर बाह्य स्त्री संगमका त्याग सो बाह्य पुरुष वेद परिग्रहका त्याग कहिये १२।

बहुरि पुरुष सौं काम सेवनेकी जो इच्छा ताका नाम स्त्री वेद कहिये, ताका जो त्याग सो अभ्यंतर स्त्री वेद परिग्रहका त्याग कहिये। बहुरि बाह्य पुरुषके संबंधका त्याग सो बाह्य स्त्री वेद परिग्रहका त्याग कहिये १३।

बहुरि स्त्री पुरुष दोयन सौं काम सेवनेकी जो इच्छा सो नपुंसक वेद कहिये ताका जो त्याग सो अभ्यंतर नपुंसक वेद परिग्रहका त्याग कहिये। अर जहां बाह्य स्त्री—पुरुष—नपुंसकके संबंधका त्याग सो बाह्य नपुंसकके परिग्रहका त्याग कहिये १४।

बहुरि कह आये जे बाह्य परिग्रह ते सर्व दश प्रकार भेद कूं धरैं हैं—क्षेत्र कहिये भूमि देशादिक वा वास्तु

कहिये मंदिर घर मंडयादिक २ हिरण्य कहिये हेम रत्नादिक ३ स्वर्ण कहिये हेम रूपादिक ४ धन कहिये स्त्री पुत्र परिवारादिक वा हस्ती घोटक महिष ऊँट वृषभ गाय आदिक ५ धान्य कहिये अन्न घृतादिक सर्व जिन्स (वस्तुएं) ६ दासी कहिये टहल करनहारी ७ दास कहिये टहल वा, चाकर पुरुष ८ कुप्य कहिये कपड़ा वा सौदा अर गजादि सुगंध द्रव्य ९ भांड कहिये खान—पान स्नानादिकके उपकरण थाली, कटोरा, लोटा, चरी, परात इत्यादि कांसा, पीतल, लोहा, सुवर्ण रूपादिक के १० इन दश प्रकार बाह्य परिग्रहका त्याग करै । ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग करै, तब निर्ग्रंथ पदको प्राप्त होय । अर जो इन चौबीस प्रकार बाह्य अभ्यंतर परिग्रह विषैं कोई भी प्रकार किसीको ग्रहण होय, तहां निर्ग्रंथ पदको अभाव है, इन चौबीस प्रकार बाह्य अभ्यंतर परिग्रहका त्याग द्रव्यलिंगी भावलिंगी दोनों ही जातिके मुन्याकैं पाइये है । इनमें से एकका भी सद्भाव पाइये तहां वह मुनिपद नाहीं कुलिंग है । वा बाह्य दस प्रकार परिग्रहका तौ अभाव है । अर नग्न मुद्राके धारक हैं । अर अभ्यंतर चौदह प्रकार परिग्रह विषैं किसी भी भावका सद्भाव पाइये तौ भी कुलिंगी हैं । अर जहां बाह्य दस प्रकार परिग्रहका सद्भाव पाइये है । तहां तौ कुलिंग अवश्य ही हैं, तातैं बाह्य अभ्यन्तरको सद्भाव होतैं, इन विषैं एकादि कोई ही को सद्भाव होतैं मुनि लिंग मानना, भगवानकी आज्ञा नाहीं है । सर्व प्रकार परिग्रहके त्याग विषैं ही मुनिलिंग मानना इन चौबीस प्रकार परिग्रहतैं निस्पृह होय, बहुरि सर्व-विधको कारण भूत सामायिक चारित्र ताकौं प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै, कैसा है सामायिक चारित्र ता विषैं शत्रु, मित्र, मंदिर अर वन, सुख—दुख, जीवन—मरण, राजा—रंक, स्वजन-परजन, चिंतामणिरत्न, ठीकरी, लाभ—अलाभ, कटु-वचन मिष्ट वचन, सत्कार पराभव, गाली, असत्य वचन इत्यादिक है समान जाकैं, ऐसा राग—द्वेष रहित समताभावका धारक गुरुकी आज्ञा तैं ग्रहण करै है । बहुरि मनकरि वचन करि काय करि कृत कारित अनुमोदना करि सर्व सावद्यका मेरे यावज्जीवन त्याग है " ऐसा प्रतिज्ञा वाक्य मुख तैं काढे अर दीक्षा काल (समय) जो क्रिया योग्य हैं सो सर्व शास्त्रका वेत्ता श्री गुरु शास्त्रोक्त सर्व क्रिया युक्त दीक्षा ग्रहण करावै ! तहां अष्टाईस मूल गुण सहित सामायक

चारित्रकी प्रतिज्ञा वह जीव करै । तहां पंच महाव्रत प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै, तहां त्रस स्थावर जीवनकी रक्षा है जा-विषैं, तिनकों मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि नाहीं विराधैं, उद्यम करि शरीरतैं स्वपरका द्रव्यभाव प्राणनका नाश नाहीं करै है । स्वपर कोई द्रव्यभाव प्राणनिकों कोई प्रकार वचन काय करि दुःखावै नाहीं, बहुरि मन विषैं स्वपरके द्रव्यभाव प्राणनके नाश करनेका दुःखावनेका संकल्प करै नाहीं । बहुरि जीवनकी दयाधारि छोड़ा है सर्व प्रकार आरंभ जानै, ताकरि आरंभी हिंसा भी नाहीं होय ऐसे अहिंसा महाव्रतका ग्रहण है १ ।

बहुरि सत्य महाव्रतका ग्रहण करै है, बहुरि छोड़ा है सर्व प्रकार असत्य वचन जानै, हित कहिये सर्व जीवन के सुखका कारण अर मर्यादा रूप ऐसा हित, मित, वचन बोलै है, वा मौनसे रहैं है, कोई प्रकार भी अलीक वचन नाहीं बोलै हैं २ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अदत्त ग्रहणका त्याग है ऐसी अचौर्य महाव्रतकी प्रतिज्ञा करी है ३ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा द्रव्य भाव करि मैथुनादिक काम-विकारका त्याग है सो ब्रह्मचर्य महाव्रत कहिये ४ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अभ्यंतर व बाह्य चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग है सो परिग्रह त्याग महाव्रत कहिये ५ ।

ऐसैं तो नियम रूप पंच महाव्रत मूलगुणनकी प्रतिज्ञा करै। बहुरि इन पंचमहाव्रतकी रक्षाके निमित्त २३ गुण की प्रतिज्ञा सहित ग्रहण है । तहां पांच तौ समितिका ग्रहण करै । तहां विहार समय श्रीमुनि अपनी अचलदृष्टि तैं जूड़ा प्रमाण धरती शोधते हुए गमन करैं, और तरफ नहीं फेरी है दृष्टि जिनने, सर्व जीव आप सर्वत्रपने नमस्कारादि करै हैं। तिन प्रति आपके मुख थकी वचनालाप न करै है, तहां मार्ग मैं पिपीलिनिकादि जीव दृष्ट पड़ें तिनकों बचाय पग धरै है, अर बहुत होय तौ वह मार्ग छोड़ि अन्य मार्ग गमन करै, और मार्ग नहीं होई तो वहां ही खड़ा रह जाई वा तिस मारग सों उल्टा हो जाई जैसा योग्य विवहार होई तैसा करे, सो ईर्या समिति है ।

बहुरि जहां उपदेशादिक वचन योग्य कार्य होय, तहां वचनकी प्रवृत्ति करैं, सो वचन हित कहिये, सव जीवनका कल्याण रूप अर मित कहिये मर्यादरूप ऐसा हित मित वचन बौले सो भाषा समिति कहिये।

बहुरि छियालीस दोष रहित अन्तराय करि वर्जित शुद्ध आहारका ग्रहण सौ एषणा समिति कहिये। अब छियालीस दोषोंका वर्णन करिये हैं—— तहां सोलह दोष तौ दातार आश्रित सो तो उद्गम दोष कहिये। जहां षट् काय जीवनकी विराधना करि आहार निपज्या होय वा आहार समय षट् काय जीवनकी मन वचन काय, कृत कारित अनुमोदनाकरि विराधना करै सो अधःकर्म दोष कहिये १ बहुरि यतिके अर्थि वा आपके अर्थि रसोईविषैं तंदुलादिक और मिलावै सो अडोडं (१) दोष कहिये २ अप्रासुक भोजनदे ताकूं प्रतिकर्म दोष कहिये ३ कुदिष्टनि (दृष्टि) की सामलातकी रसोईका अन्न आहार कूं दैना वा असंयमीको पांति आहार देना सो मिश्र दोष कहिये ४ जिस भाजनमें तंदुलादिक पचाये हों तिसमें सों अन्न काड़ि पचावना वा अन्य भाजन में काढ़ि लाय आहार दैना सो स्थापित दोष कहिये ५ बहुरि पित्रादिकके अर्थि रसोई करी होय वा ओरां कां निमित्त करी होय तिस रसोईका भोजन दैना सो बलि दोष कहिये ६ कालके हीनाधिक सहित भोजन आहार दैना सो पराप्ति (?) दोष कहिये ७ मुनि आहार लीये पीछे भाजनादिक बाहर काड़ि वुहारना जांगा धोवना सो प्राचीनक्रिया दोष कहिये ८ तत्काल अपने पराये द्रव्य करि वा विंध्या आहार दैना सो कृत दोष (?) कहिये ९ उधारा लेय आहार देना सो ऋणदोष कहिये १० अपने अन्नादिक औरसूं बदलि आहार दैना सो प्रवर्तिक दोष (?) कहिये ११ अन्य ग्रामादिक तैं मंगाय आहार दैना सो अभिघट दोष कहिये १२ बहुरि बंधा हुवा वा मौहर किया हुवा तत्काल खोलि आहार दैना सो उद्भिन्न दोष कहिये १२ नालि चढ़ि लाय आहार दैना सो मालारोहण दोष कहिये १४ स्वामी बिना अन्यकी रसोईका आहार दैना सो अनीशार्थ दोष कहिये १५ राजादिकके भय करि व्यास हो अर आहार दैना सो आछेद्य दोष कहिये १६ इति उद्गमदोषः

इन षोडश दोष सहित ग्रहस्थ, यतीकूं आहार दे नहीं, अर मुनि जानै तौ ले नहीं।

बहुरि सोलह उत्पादनदोष यत्याश्रित हैं । जहां धायकी नाईं दातारके वालकनकूं खिलावना पुछ (च) कारसो धात्री दोष कहिये १ दूतकी नाईं देशांतरका समाचार दातार सूं कहनां सो दूत दोष कहिये २ निमित्तज्ञान की बात दातार सूं कहना सो निमित्त दोष कहिये ३ दातारकूं सुहावतां कुपात्रदानादि पोषतां वचन दातारको कहना सो बणीपक (वनीपक) दोष कहिये ४ दाताराश्रित नाड़ी देखनादि वैदक (वैद्यक) क्रिया करनी सो चिकित्सा दोष कहिये ५ बहुरि क्रोधसहित आहार लैना सो क्रोध दोष कहिये ६ मानयुक्त आहार लैना सो मानदोप कहिये ७ मायायुक्त आहार लैना सो मायादोप कहिये ८ लोभका अभिनिवेश सहित आहार लैना सो लोभदोष कहिये ९ आहारालिये पहिले स्तुति करना सो पूर्वस्तुतिदोष कहिये १० अर आहारालिये पाछैं दातारकी स्तुतिकरना सो पश्चात्स्तुतिदोष कहिये ११ कोई विद्या दे आहार लैना सो विद्या नाम दोष कहिये १२ मंत्रकरि आहार लैना सो मंत्र नामा दोष कहिये १३ चूर्ण अंजनादि देइ आहार लैना सो चूर्णादिदोष कहिये १४ बशीकरणादि कर आहार लैना सो मूल-कर्म दोष कहिये १५। - इति उत्पादन दोषः

इन दोषन सहित भया यति आहार ले नाहीं।

अब एषणा दोष कहिये है : आहार सदोष है कि निर्दोष है एसी शंका सहित आहार लैना सो संभिन्न (शंकित) दोष कहिये १ चिमटा करि वा भाजनि करि आहार लैना सो मिश्रित (मखस) दोष कहिये २ सचित्तवस्तु पर धरया

नोटः— आछेप दोपकू सारचौवीसी मे एसा कहा है कि सयमीन के भिक्षा का आगमन देखि कर गृहस्थ, राजादिकानि का भय तें दान देवै वा पच लोकनि नें अपनी निन्दा होनेके भय तें साधू कू दान देवै सो आछेद्य दोप जानना ।

- यहा १६ वा दोप छूट गया मालूम होता है ।

आहार लैना सो निहित दोष कहिये ३ सचित्तवस्तु सूं ढका हुआ आहार लेना सो पिहित दोष कहिये ४ सचित्त बस्तु करि मिला हुवा आहार लैना सो मिश्रदोष कहिये ५ जो व्यवहार जनाय आहार दे तिस आहारका लेना सो व्यवहार दोष कहिये ६ बहुरि सूतकवाला वा रोगी वा नपुंसक वा बालक वा वृद्ध वा गर्भवतीस्त्री वा अकेली स्त्री वा अग्न्यादिक का जलावनहारा वा घर मंडपादिक का चुननेवाला वा धोवने वाला वा विलेपस्नानादि करने वाला वा रोवते बालक कों छोड़िआवै वा ऊंचे नीचे क्षेत्र विषैं तिष्ठते स्त्री पुरुष तिनके हाथ करि दिया हुवा आहार लेना सो दायकदोष कहिये ७ जिनके वर्णादिक फिरैं नाहीं ऐसे अन्नजलादिक तिनका ग्रहण सो अपरिणति दोप कहिये ८। खटाई आदि करि लिप्त दातारका हाथ होय वा भाजन होय तौ तिसकरि आहार लैना सो लिप्तदोष कहिये ९ जिनके रसादिक गल गये, ऐसे तंदुलादिक तिस आहारका ग्रहण करना सो त्यजन दोष कहिये १० इति एषणा दोषः

बहुरि स्वादके अर्थि शीत उष्णादिक वा क्षार, आम्ल, तिक्त, मिष्ट आदि वस्तुनिका मिलावना सो संजोजन दोष है १ आहार आसक्त होय ग्रहण करि दातारका जस करै, सो अंगार दोष कहिये २ स्वाद रहित आहार न ग्रहै, दातारकी निंदा करै सो धूम्र दोष कहिये ३ मर्यादा उल्लंघि आहार लैना, सो अप्रमाण दोष है ४। इस प्रकार सोलह उद्गम दोप १६, सोलह उत्पादन दोप १६, दश एषणा दोष १०, चार संयोजनादि दोष ४ ऐसे छियालीस दोष आहार के टालै, वा अंतरायटालै। शरीर का विष्टापतन १ परंदादि (?) अशुचिवस्तु करि लिप्त देखै सो औघ (?) कहिये (२) छर्दि कहिये बमन करै तौ (३) रोधन कहिये कोई रोके तौ [४] रुधिरादि सप्तधात दर्शन [५] मलमूत्रादि स्पर्शन वा दर्शन (६) अश्रुपात कहिये आपकै कोई मोहादिकको कारण पाइ अश्रुपात होय वा कोई निकटवर्ती रोवै तौ [७] ज़ालधैं ? प्रामृष कहिये कोईप्रकार जंघा नीचौ हाथ लगि जाय तौ [८] जानूपरतित कर्म कहिये गोंड़ा करि कोई कर्म होयजाय तौ [९] नाभिअधो निगमन कहिये नाभिके नीचै नीचै होय निकलना होय तो १० प्रत्याख्यान कहिये त्यजन करि वस्तु कौ ग्रहण होय जाय तो ११, आपकरि या अन्यकरि कोई जीवका मरण होय

जाय तौ १२ काकादिक ग्रास लेय जाय तो १३ पाणिपात्रादि पिंडपतन कहिये पाणिपात्र थकी ग्रासगिरपड़ै तो १४ पाणिपात्रादि जंतुवध कहिये पाणिपात्र विषैं कोई जंतु आय मरै तो १५ उपसर्ग होय तो १६ तहां तरे जीवगमन कहिये दोनौं पगां बीच होय कोई पंचेन्द्रिय जीव निकसि जाय तौ १७ भाजन संपात—आहार देनेवाले के हाथसूं भाजन गिरपड़े तो १८ उछाट कहिये स्व उदर थकी मल निकल पड़े तो १९ पिश्रिवन (?) कहिये स्व उदर थकी मूत्रस्रवै तो २० अभोजन ग्रह प्रवेश कहिये चांडालादि के ग्रह विषैं प्रवेश होजाय तो २१ पतन कहिये मूर्च्छा आदि से गिरपड़ना होय जाय तो २२ उपवेशन कहिये कोई प्रकार वैठना होय जाय तो २३ श्वसंदष्टि (दृष्टि) कहिये श्वानादि काट खाय तो २४ भूमिस्पर्श कहिये भूमिका स्पर्श होय जाय तो २५ न (नि) ष्ठीवन कहिये श्लेष्मादि खेपै तो २६ स्व उदरथकी कृम्यादि निर्गमन कहिये स्व उदर थकी गिंडोला निकसि पड़ैं तो २७ अदत्तग्रहण होय जाय तो २८ ग्रामदाह कहिये लाय लागै तो २९ (अ) परिहार कहिये आपको वा पर कों शस्त्रादिक का घाव लागै तो ३० पादग्रहण कहिये पाद थकी वस्तु उठाय ले तो ३१ कर ग्रहण कहिये हाथ थकी भूमि सौं वस्तु उठाय लेय तो ३२ दाताराश्रित रोग मृत्यु आदि दुःख ३३ पड़िगा-हन हारे के वस्त्र अयोग्य अशुद्ध होंय ३४ चतुर्विध संघ कों उपसर्ग होय ३५ साधर्म्मीको संन्यास मरण सुनै ३६ चैत्य चैत्यालय शास्त्रजीकों विघ्न होय ३७ राजादि महंत पुरुषन का मरण होय ३८ हस्ती घोटकादि वड़े तिर्यंच का मरण दृष्ट पड़ै ३९ कलह होय संग्राम होय ४० प्रजाभय कंप होय ४१ डाखादिक उपजैं ४२ पाणिपात्र विषैं नखरोमादि निसरैं ४३ अशुचि वस्तु का स्मरण ४४ गंडूरा करन- ४५ चांडालादिक मनुष्य मार्जार कूकर शूकर खर मूषकादि का स्पर्श होय-जाय ४६ अंजुलिमोचन ४७ मौन मोचन ४८ अशुद्ध हिंसक कर्कश बचन सुनै ४९ बहुरि चाकी चलती ५० चूल्हो बलतो ५१ खोदतो ५२ सिल बांटतो ५३ कुपास पेलतो ५४ मांटीषनतो ५५ रोष कर्म करतो ५६ गोबर थापती ५७ मांटी मलती ५८ शिर न्हावती ५९ शिरबांधिती ६० जूवांदिक काढती ६१ अप्रासुकपानी ६२ नाज सूकतो ६३ मांतनो फाटो, करवो फोड़ो ६४ इत्यादि दृष्टि पड़ै इन ६४ अंतरायनकूं टालै औरभी अयोग्य अंतराय होंय तो तिनकौं टालि आहार

प्रासुक ले सो चारित्र का साधक जो शरीर ताकी स्थितिके अर्थ विषय रहित नीरस आहार ले, नीरस कहिये इष्ट भोजनादि मिलै तो तासों राग न करै, अनिष्ट मिलै तो तासों द्वेषभाव न करै, एसा अजाचीक व्रत धारतां संता लाभ अर अलाभ है वरावर जाकै श्रावकके घर जाय यथाविधि आहार ले सो एषणा समिति कहिये। बहुरि तीन धर्मोपकरण राखै, शौच क्रिया के अर्थ काठ वा एक किस्म के फल को कमंडल राखै, सो शौचोपकरण कहिये। अर दया के अर्थ कोमल मोर पिछिकादि राखै सो दया उपकरण कहिये। अर जो पहले गृहस्थ अवस्था विषैं कोई शास्त्र भरायो नाहीं अर ज्ञानवैराग्य का जोर सों मुनिपद अंगीकार कियो सो मुनि मुन्याचार के बोध के अर्थ मुन्याचारको शास्त्र यथाविधि सों राखै, बहुरि मुन्याचारको बोध होय गया पाछे न राखै, बहुत शास्त्र राखै नहीं, एसैं ए तीन उपकरण राखै तिनकों देखि पुंन (पोंछ) धरना देखि पूजि (पोंछ) उठावना सो आदान निक्षेपण समिति कहिये। बहुरि शरीर के मलमूत्रादिक देखि शोधि पूजि [?] क्षेपना सो प्रतिष्ठापना सिमीत कहिये। इति पंच समिति।

अब पंच इंद्रियन का निरोध कहिये हैः—जहां अष्ट विषय स्पर्शनइंद्रियन के शीत १ उष्ण २ स्निग्ध ३ रूक्ष ४ कोमल ५ कठोर ६ हलको ७ भारयो ८। पंच विषय रसना इंद्रियन के मिष्ट १ कटुक २ अम्ल ३ तिक्त ४ कषाय ५। बहुरि दोय विषय नासिका इंद्रिय के-सुगन्ध १ दुर्गंध २। बहुरि पंच विषय नेत्रेन्द्रियन के-शुक्ल १ कृष्ण २ आरक्त ३ हरित ४ पीत ५। बहुरि सप्त विषय श्रोत्रेन्द्रिय के षडज १ मध्यम २ रिषभ ३ गंधार ४ पंचम ५ धैवत ६ निषाद ७ इन पंच इंद्रियन के सत्ताईस विषय तिन विषैं राग—द्वेष न करना सो पंच इंद्रिय का निरोध कहिये। बहुरि षट् आवश्यक करना—

षटावश्यक दिनप्रति अवश्य करना। समता कहिये बुद्धिपूर्वक समभाव करना, सर्व पदार्थनकों राग—द्वेष रहित जानना १ बहुरि वंदना कोहय एक तीर्थंकर कों नमस्कारादि वा स्तवन करना २ बहुरि स्तुति कहिये चौबीस तीर्थंकरों का स्तवन करना ३ प्रतिक्रमण कहिये आहार—विहारादि विषैं प्रमाद करि कोई दोष लागा होय सो मेरा मिथ्या

हूजो सो पडिकोणो कहिये ४ आहार–विहारादि विषैं दिन प्रति कोई बस्तु कोई प्रवृत्तिका नियम रूप वा यम रूप त्याग करै सो प्रत्याख्यान कहिये ५। दिन प्रति एक बार शरीर का ममत्व का छोड़ि निरपृह होय तिष्ठना सो कायोत्सर्ग कहिये ६। बहुरि भूमिशयन कहिये रात्रिके पिछले प्रहर प्रासुक पृथ्वी विषैं अल्पनिद्रा सहित सोवैं जंतुरहित पृथ्वी को देखि पिच्छिका सों पूंछि शयन करै पिच्छिकासों जवि ही कों तो टालै अर जो कदाचित् कंकर कंटकादि कौं टारे सो पिच्छिका परिग्रहके भाव कों प्राप्त होय, तब मूलगुण का छेद होय मुनिपद का अभाव होय १ बहुरि कदाकाल भी अंतर बाह्य करि शुद्ध अैसे महामुनि ते स्नान न करैं जो कदापि विष्टादिक शरीर विषैं आय पड़ैं तो आप तो हस्त थकी दूर नाहीं करै जावत शरीर विष्टालिप्त रहै तावत् सर्व क्रिया रहित होय ध्यानाध्ययन कर रहित तिष्ठै, अर जो अन्य कोई मुनि गृहस्थादिक शरीर तें विष्टादिक दूर करै तब कमंडल के प्रासुक जलतें दंडस्नान करै। दंडस्नान कहिये खडा होय मस्तक ऊपर जल क्षेपै सो जल शरीर चरन परसि पृथिवी तल विषैं प्राप्त होय वा चांडालादिक का स्पर्श होय तहां दंडस्नान करै, और प्रकार स्नान करने का यम रूप त्याग करै। कदाचित् स्नान करतें वा पाद प्रक्षालन करतें जल की शीतलता थकी रागादिक जोडै तो कमंडल परिग्रह के भावकूं प्राप्त होय, तब मूलगुणनका अभाव भयें मुनिपद जाता रहै, बहुरि जावत् विष्टादि करि शरीर लिप्त रहै, तावत ग्लानि कषायभाव कों न प्राप्त होय, वस्तु का का स्वरूप विचारे अैसे मज्जन त्याग मूलगुण का ग्रहण करै २। बहुरि सदाकाल नग्न रहै, दशो दिशा सो ही हैं अम्बर जिनकैं अैसे दिगम्बर महामुनी तजी है सर्वप्रकार लौकिक लज्जा जिनने, बालकवत् नग्न मुद्राकों धरैं अैसा नग्न स्वरूप मूलगुण का ग्रहण करै ३। बहुरि केश लुंचे–हस्तअंगुली करि ग्रहण में आवने योग्य केश होंय तब ही निःशंक होय अपने हस्त करि केशनकों उखाडि डारैं, रंचमात्र केशके उपाड़ने विषैं वेदना करि व्याप्त न होय है, उत्कृष्ट दोय मास विषैं, मध्यम तीन मास विषैं, जघन्य चार मास विषैं केशलौंचन करै सो केशलौंचन मूल गुण कहिये ४। बहुरि दिन प्रति एक बार लघु भोजन उदंड व्रत सहित श्रावक के घर जाय अजांची सर्वदोष अंतराय सहित नीरस करैं सो एकभुक्त मूलगुण कहिये ५। बहुरि पाणिपात्र

करि खड़ा आहार लेय सो पाणिपात्र कहिये अपने दोनों हाथ की अंजुली जोड़करि पात्र करै ता विषैं गृहस्थ भक्तिकरि ग्रास धरै सो ग्रास मुखथकी ग्रहण करै अैसैं ही जल ग्रहण करि जल्थकी अंतर वाह्य मुख और हस्त शुद्ध करि आहार की पूर्णता करै सो खड़ा आहार ग्रहण मूलगुण कहिये ६। बहुरि करा है जावज्जीव दंत धोवन का त्याग जानै अंगुली थकी वा दातुन थकी कोई भी प्रकार दांतनकी पंक्तिको धोवै नहीं अर रंचमात्र भी ग्लानि ताकों नाहीं धारैं हैं अैसा दंत धोवन परिहार मूलगुण का ग्रहण करै है ७। इस प्रकार कहे जे महाव्रत ५ पंच समिति ५ पंच इंद्रियन का निरोध ५ षट् आवश्यक ६ अर सप्त भूमि शयनादिक ७ अैसैं अट्ठाईस मूलगुण का जावज्जीव प्रतिज्ञा सहित ग्रहण करै है ताही समय गुरु की आज्ञापूर्वक केशनका लौंच करै है इत्यादि मुनियोग क्रियाका ग्रहण करि दीक्षाके लाभ योग्य समस्त क्रिया की पूर्णता करि पद्मासन वा कायोत्सर्ग आसन धारि तिष्ठै ताहि समय अप्रमत्त है नाम जाका अैसा सप्तम गुणस्थान को प्राप्त होय है, अर ताहि समय सूं लगाय अंतर्मुहूर्त पर्यंत समय समय अनन्तगुणी विशुद्धता है, अर असंख्यात गुणी कर्मन की निर्जरा होय है, तापीछे षट् स्थान पतित हानि वृद्धि लिये समय समय परिणामों की विशुद्धता है अर तिन्हीं के अनुसार समय समय चतुःस्थान पतित हानि वृद्धि नैं लियां गुणश्रेणी कर्मन की निर्जरा होय है जातैं अन्तर्मुहूर्त पीछे अैसे ही वृद्धिरूप परिणाम रहते नाहीं। बहुरि ता समय देखैं है वृद्धिरूप परिणाम जहां जे स्वजन परजन मनुष्य हैं ते नाना अवस्था कों प्राप्त होय हैं जे स्वजन सम्यक्त ज्ञानी धर्मात्मा हैं ते तो अैसा विचारैं हैं जो इनका बडा भाग्य जो सर्व कल्याणकारिणी यो जिनेश्वरी दीक्षा हम सारिखे कायरजन कूं अलभ्य अर तिनकी नाना भांति स्तुति करैं हैं, अर आपकूं धिक्कार मानैं है, हमारा अैसा भाग्य कब होयगा जो हमभी इस दशा को प्राप्त होंयगे अर हमारा भी बडा भाग्य है जो हमारे कुल विषैं मुनिपद के धारक पुरुष भये, अर जे स्वजन मोही जीव हैं ते मोहकरि व्याप्त भये अश्रुपातकरि भीज गया है सर्व अंग जिनका, अर व्याकुलभया है चित्त जिनका, अर कंपायमान है शरीर जिनका, अर बारंबार मुनि प्रति दृष्टि धरता संता अत्यन्त मोह को प्राप्त होय है। बहुरि केई पर जन आश्चर्यकों प्राप्त भये हैं, केई करुणा

को प्राप्त भये केई-ज्ञानभावको प्राप्त भये हैं, कोई शोकभावको प्राप्त होंय हैं, इत्यादिक नानावस्थाकूं प्राप्त होत संतै अपने घर दिशा गमन करै हैं । अब वे महामुनि मूलगुणनकों पालते संतै उत्तर गुणनकों प्राप्त होय हैं तहां द्वादशप्रकार तपकौं धारै हैं । कभी तो अनशन तपकों धारैं हैं, अनशन कहिये कभी तो एक उपवास करैं हैं अर कबी (भी) दोय तीन चार पांच आदि एकपक्ष एकमास दोयमास चतुर्मास पट्मास एकवर्ष पर्यन्त तो विहार की प्रतिज्ञा करैं हैं । बहुरि दूसरा भेद ऊनोदरी कहिये है--ऊनोदरी कहिये ऊन आहार लैं हैं कबी (भी) एकग्रास कभी दोयग्रास आदि अष्टमअंश चतुर्थ अंश अर्धभागपर्यन्त करैं हैं २। बहुरि तीजा तप व्रत प्र (परि) संख्यान करैं हैं, तहां नाना प्रकार प्रवृत्तिकों संख्या धारी आहारकों उतरैं हैं जो आज हमरै ताईं ऐसा द्रव्य ऐसे क्षेत्र विषैं वा इतने क्षेत्र पर्यन्त वा इतने काल पर्यन्त वा ऐसा पुरुष वा ऐसी स्त्री ऐसे भेषकों धरयां ऐसे संबंध सहित जो पड़गाहै तो आहार मोकला है अन्य प्रकार नाहीं ३। बहुरि चौथा रसपरित्यागनामा तप करै है, नानाप्रकार रसविषैं आज हमारे ताईं ए रस लेने अर ए रस न लैना वा सम्पूर्ण रसका त्याग करै सो रसपारित्याग तप कहिये ४। बहुरि पंचम् तप विविक्तशय्यासन--तहां संघकों छोड़ि एकांत स्थानक जाइ शय्यासन करना सो विविक्तशय्यासन कहिये ५। बहुरि कायक्लेश छठा तप करै, तहां अनेक प्रकार कायक्लेश करै, नानाप्रकार विषमासन धारै, ग्रीष्म ऋतुविषैं धूपकरि तप्तायमान जो पर्वतका शिखर तापर आतापन योग धारि तिष्ठै वा वर्षाकाल विषैं वृक्षनके तलैं जहां अनेक प्रकार डांस मच्छरादिकन का उपद्रव, सासता वृक्षतै जल स्रवै तहां जाय ध्यानाध्ययन करैं हैं, बहुरि कभी शीतकाल समय नदी सरोवर के तीर जाय तिष्ठैं हैं, महाशीतकरि जमगया है जल जहां अर दाह करि भस्म भये हैं बड़े बड़े वृक्ष जहां, एसी शीतका परिसह युक्त ध्यानारूढ़ होय तिष्ठैं हैं । बहुरि अनेक प्रकार विषम तप करैं हैं, अनेक प्रकार चलाया परीसह का ग्रहण करैं हैं इत्यादि कायक्लेश करैं हैं सो कायक्लेश तप कहिये ६ ।

इति भावदीपका विषैं ऐसैं छहप्रकार बाह्यतप कहे तिनके उत्तर भेद अनेक प्रकार हैं तिन विषैं अपनी शक्ति

प्रमाण शरीर शोषणके निमित्त द्रव्य क्षेत्र कालभावकी योग्यता देखि ग्रहण करै अर छह-प्रकार अभ्यंतर तप करै। तहां प्रथम प्रायश्चित्त तप कहिये है अपने चारित्रकों जो दोष लागता होय ताकों दोष रहित शुद्ध करै, सो पराश्चित्त (प्रायश्चित्त) कहिये, सो प्रायश्चित्त नव प्रकार है—गुरां निकट जाय अपनी निंदा करता संता अपने चारित्रकों अपने प्रमाद करि लागा जो दोष ताका प्रकाश करना, सो अलोचना कहिये १ बहुरि अपनी आपही निंदा करनी दोषथकी भयभीत होना, अपनी प्रमाददशा कौं निंदना प्रमाद करि यह दोष मोकूं लागा है सो मिथ्याहूजो इत्यादि सो प्रतिक्रमण कहिये २। बहुरि आलोचना प्रतिक्रमण दोऊ करना सो उभय कहिये ३। बहुरि प्रमाद दशाकों उत्पन्न होतां अपने चारित्रको दोषयुक्त होता देखि प्रमाददशाकों मेटि ज्ञानसहित होय इसका विचार करै तहां दोषका अभाव करना सो विवेक कहिये ४। बहुरि शरीरादि पर द्रव्य रूप बाह्य अभ्यंतर परिग्रहसों निस्प्रे (स्पृ) ह होइ दोय प्रकार निराकरण करना कायोत्सर्ग धरि तिष्ठना सो व्युत्सर्ग कहिये ५। बहुरि नानाप्रकार तप करि दोषका निराकरण करना सो तप कहिये ६। बहुरि दीक्षाका श्रीगुरुकी आज्ञा पूर्वक छेदकरि अवशेष दोषका निराकरण करना, श्रीगुरु आज्ञा करैं जो तुह्मारे ताईं इस दोषके लागया करि तिहारी दीक्षा इतने कालकी तौ अभावकों प्राप्त भई अर इतने कालकी अवशेष रही, ताही दिन सों आपकों अवशेष रह्या काल तितने ही कालकी दीक्षा मानै, इस कालसे पहलेका दीक्षित मुनि होय ते मुनिकी दीक्षा छेदनभई थी ता पहली तौं इनको पहले नमस्कार करते थे, अब उनकौं पहले ए नमोस्तु करैं, सो छेद कहिये। बहुरि कोई दोष अैसा लागा होय ताका श्रीगुरु अैसा दंड दें जो थें इतना काल ताईं संघ तैं बाहिर तिष्ठौ, औंधी पिच्छिका हस्त विषैं धारौ, तुह्मारें ताईं नमोऽस्तु कोई न करैगा, तुम सबकौं नमोऽस्तु करो, अट्ठाईस मूलगुण भलीभांती पालौ, नानाप्रकार तपश्चरणादि उत्तर गुण विषैं आरूढ़ होय सावधानी तें प्रवर्तो, तब तुह्मारा दोष निर्वृत्त होयगा, सो श्रीगुरु की आज्ञा प्रमाण करि दोष का निराकरण करना सो परिहार कहिये ८। बहुरि कोई दोष अैसा लागा होय ताका गुरु अैसा दंड दें कि जो इस काल पर्यन्त तौ तिहारी दीक्षा का अभाव भया अब

नवीन दीक्षा कों ग्रहण करो, ऐसा श्रीगुरुकी आज्ञा प्रमाण अतीत दीक्षाका अभाव मानि फेर नवीन दीक्षाकों ग्रहण करि दोषका निराकरण करना सो उपस्थापन कहिये । इति प्रायश्चित्त तपः ।

अब दूजा विनय तप कहिये हैः—विनय तप पांच प्रकार है भलीभांति श्रद्धान विषैं दृढ़ रहना चल मल अगाढ़ादि दोष न लगावना, सो दर्शन विनय कहिये १। बहुरि संशय विपर्यय अनध्यवसाय रहित पदार्थनकों शास्त्रोक्त यथार्थ जानना सो ज्ञानविनय कहिये २। बहुरि निर्मल दोष रहित चारित्रका पालना सो चारित्रविनय कहिये ३। वहुरि मोक्ष के अर्थ शास्त्रोक्त तप का यथाविधि मन वचन काय विषैं निश्चल होय पालना सो तप विनय कहिये ४। बहुरि दर्शन ज्ञान चारित्र तपके धारक ऐसे जे पंच परमेष्ठी वा शास्त्र वा श्रावक श्राविका अर्जिका तिनकी भक्ति करनी बंदना करनी स्तवन नमस्कारादि करना सो उपचार विनय कहिये ५। इति विनय तपः

अब तीजा वैय्यावृत्य नामा तप कहिये हैः—तहां वैय्यावृत्य दशप्रकार है–दीक्षा शिक्षाके दायक ते तौ आचार्य कहिये १ शास्त्रके पढ़ावनहारे ते उपाध्याय कहिये २। बहुरि उग्रोग्र तपके करनहारे ते तपस्वी कहिये ३। अपने दीक्षक [क्षित] शिक्ष्य मुनि ते कहिये ४ । बहुरि रोगकरि ग्रसित ते ग्लान कहिये ५। अर अन्य अनेक मुनिन का समूह ते गण कहिये ६। बहुरि अपने गुरु के वा अपने गुरुनि के शिष्य ते कुल कहिये ७ । बहुरि अपने संघ विषैं विचरते संधाहड़ा के मुनि ते संघ कहिये, संघाहड़ा कहिये ८। बहुरि वने काल के दीक्षक (क्षित) ते साधु कहिये ९। बहुरि ऋद्धि ज्ञानादियुक्त ते मनोज्ञ कहिये १०। ऐसैं दश प्रकार मुनि तिनका उपकार करना तिन विषैं आय प्राप्त भये जे नानाप्रकार उपसर्गपरीसह तिनका मन वचन काय कृत, कारित अनुमोदना करि दूर करना अनेक प्रकार चाकरी करनी सो वैय्यावृत्य तप कहिये ३। बहुरि जहां श्रवण १ धारण २ विचारण ३ आम्नाय ४ अनुप्रेक्षा ५ इन पंच अंगन सहित शास्त्राभ्यास करना सो स्वाध्याय तप कहिये ४ । अर नानाप्रकार आसनादि धार काय सों निर्ममत्व होना सो व्युत्सर्ग तप कहिये ५।

अब छठ्ठा ध्यान नामा तप कहिये है—तहां ध्यान चार प्रकार है–आर्तध्यान १ रौद्रध्यान २ धर्म्यध्यान ३ शुक्लध्यान ४। एकाग्रचिंता निरोध सो ध्यान। एक पदार्थ या उसकी पर्याय–तहां तिसकूं अग्रेसर करि तिसविषैं चित्त का रोकना सो ध्यान कहिये। अब प्रथम ही आर्तध्यान कहिये ताका चार भेद हैं—तहां इष्टका वियोग होतें जो चिंताका होना सो इष्टवियोग आर्तध्यान कहिये १। बहुरि अनिष्ट के संयोग विषैं जो चिंता का होना सो अनिष्ट संयोग आर्तध्यान कहिये २। बहुरि जो शरीर विषैं रोग होतें चिंता होय सो पीड़ा चिंतवन आर्तध्यान कहिये ३। बहुरि इसभव तथा परभव संबंधी जो भोगोंकी चाह प्रवर्तें सो निदानबंध आर्तध्यान कहिये ४। इति

अब दूसरा रौद्रध्यान चार प्रकार कहिये हैः—जहां जीवन की हिंसा करि आनंद मानना सो हिंसानंद रौद्र-ध्यान कहिये १। जहां झूठ बोलतां बचन की सिद्धि हुवां आनंद मानना सो मृषानंद रौद्रध्यान कहिये २। बहुरि पराया धन चोरि आनंद मानना सो स्तेयानंद रौद्रध्यान कहिये ३। परिग्रह का संग्रह होतां आनंद मानना सो परिग्रहानंद रौद्रध्यान कहिये ४।

बहुरि धर्म्यध्यान चार प्रकार है—जहां केवली की आज्ञा अनुसार श्रद्धान ज्ञान रूप प्रवृत्ति करनी वा पुनः २ जिनेन्द्रदेव की आज्ञा कूं विचारना तिनकी आज्ञा उलंघि कोईभी कार्य न करना सो आज्ञाविचयधर्म्यध्यान कहिये १। बहुरि जहां पुनः पुनः कर्मन के नाशका उपाय विचारना सो अपाय विचयधर्म्यध्यान कहिये २। बहुरि जहां जघन्य मध्यम उत्कृष्ट अनुभागकों धरैं उदय कों प्राप्तभये शुभाशुभकर्म तिनके अनुसार उत्पन्न भया सुख और दुःख ता विषैं शिथिल न होना कर्मों का विपाक विचारना बाह्य पदार्थन सो रागद्वेष न करना सो विपाक विचयधर्म्यध्यान कहिये ३। बहुरि जहां जिन आज्ञानुसार तीनलोक का स्वरूप विचारना सो संस्थान विचयधर्म्यध्यान कहिये ४। अब प्रकार शुक्ल-ध्यान कहिये है—जहां पृथक् कहिये भिन्न ध्याता ध्यान ध्येय धियति (ध्याति) भाव कों धरैं वितर्क कहिये भाव श्रुत-ज्ञानका बल करि द्रव्य गुण पर्यायकों बीचार कहिये पलटन क्रिया सहित राग द्वेष रहित ध्यावे मनयोग, वचनयोग, काय-

योग तीन योगन सों ध्यावै मनयोगसों ध्यावैं फिर वचनयोग सों ध्यावै ताकूं छोड़ि काययोग सों ध्यावै ऐसें योग सों योगान्तर शब्दसों शब्दान्तर अर्थ सों अर्थान्तर गुणसें गुणान्तर पर्यायसों पर्यायान्तर ऐसें पलटनक्रिया सहित ध्यावै सो पृथक्त्ववितर्कविचार नामा शुक्लध्यान कहिये १। बहुरि जहां एकत्व कहिये ध्याता ध्यान ध्येय धियति (ध्याति) के द्वीय ? भाव कों दूर करि तिन विषैं भेदभावकों छोड़ि अभेदरूप वितर्क कहिये भावश्रुतज्ञानके बल करि अवि-चार कहिये पलटन क्रिया रहित कहिये द्रव्य गुण पर्यायन विषैं जाकों ध्यावै है ताहींको ध्यावै है ताकों छोड़ि और कों नाहीं ध्यावै और जा जोग सों ध्यावैं ताही एकयोग सों ध्यावै ऐसें राग–द्वेष रहित पदार्थनकों ध्यावै सो एकत्व वितर्क अवीचार नामा शुक्लध्यान कहियें २। बहुरि जहां केवली भगवान आय के अंतर्मुहूर्त पहली मन वचन काम के योगन कूं सूक्ष्म करै हैं, तहां योगनकी प्रवृत्ति महासूक्ष्म होय सो केवलीके एक काययोग तें ही होय सो सूक्ष्म क्रिया प्रतिगाति नामा शुक्लध्यान है ३। बहुरि जहां योगन की सर्वक्रिया का अभाव होय ऐसा अयोग केवली गुणस्थान तहां योग रहित ध्यान होय है सो व्युपरति (त) क्रिया निरवृति [—) नामा शुक्लध्यान कहिये ४। ऐसें ए चार ध्यान के सोलह भेद हैं सो ए ध्यान मिथ्यात्व अर सासादन दोय गुणस्थान विषैं तो चार आर्तध्यान चार रौद्रध्यान ऐसें आठ ध्यान पाइजे (ये) बहुरि तीजे मिश्रगुणस्थान विषैं आठ तो आर्तरौद्र अर आज्ञाविचयधर्म्यध्यान एसैं नौ ध्यान पाइये। बहुरि असंयतचतुर्थ गुणस्थान विषैं आठ तो आर्तरौद्र अर आज्ञाविचय अपायविचय दोय धर्म्यध्यान ऐसें दशध्यान पाइये। बहुरि देशसंयम (त) पंचमगुणस्थान विषैं आठ तौं आर्तरौद्र अर आज्ञाविचय अपायविचय संस्थानविचय तीन धर्म्य-ध्यान ऐसें एकादश ्यान पाइये। बहुरि प्रमत्त नामा षष्ठम गुणस्थान विषैं इष्टवियोग अनिष्टसंयोग पीड़ा चिंतवन तीन तो आर्तध्यान अर चार धर्म्यध्यान ऐसें सप्तध्यान पाइजै [इये] बहुरि अप्रमत्तगुणस्थान विषैं चार धर्म्यध्यान ही पाईजै (इये)। बहुरि अष्टम अपूर्वकरणगुणस्थान सों लेइ क्षीणकषाय बारैंहै गुणस्थान के असंख्यातभाग विषैं एकभाग छोड़ि बहुभाग पर्यन्त उपसमश्रेणी वा क्षपकश्रेणी पर्यन्त विषैं पृथक्त्ववितर्क वीचार नामा शुक्लध्यान के प्रथम पायो

पाइये । वहुरि अनशेष क्षीणकषाय गुणस्थान का असंख्यातवां एकभाग विषैं एकत्ववितर्क अवीचार नामा शुक्लध्यान को दूसरो पायो पाईजै । वहुरि सयोगकेवली गुणस्थान विषैं तीसरा पाया अयोगी विषैं चौथा पाया पाइजै । एसें ए वारह प्रकार वाह्य अभ्यंतर तप कहे तिन विषैं इस क्षयोपशम चारित्री कें और एकादश तप कौं सर्व ही संभवै अर ध्यान नामां तप विषैं चार रौद्रध्यान अर एक निदानवंध ए पांच ध्यान तो संभवैं नहीं अर तीन आर्तध्यान अर चार धर्म्यध्यान ऐसें सप्तध्यान संभवैं है । अर गुणस्थान प्रमत्त अप्रमत्त याके होय हीं हैं, सो इन दोय गुणस्थानन का काल एक एक का जघन्य एकसमय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है, सो एक अप्रमत्त का प्रमत्त विषैं, अर प्रमत्त का अप्रमत्त विषैं गमनागमन होय है, तहां अप्रमत्त गुणस्थान विषैं आरूढ होय हैं तहां तो चार धर्म्यध्यान हैं अर प्रमत्त विषैं उतरैं है तहां चार धर्म्यध्यान अर निदानवंध विना तीन आर्तध्यान एसें सप्तध्यान पाईजे हैं । वहुरि तेरा प्रकार चारित्र रूप प्रवृत्ति करैं है । पंचमहाव्रत ५ पंच समिति ५ तीनगुप्ति ३ मनोगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति । वहुरि वाईस प्रकार परीषहों को सहे हैं सो ही कहिये है—जहां एक उपवास दोय उपवास वा तीन उपवास वा चार उपवास पांच उपवास आदि पक्ष का महीना का दोयमास का चार मास का छहमास का करि अर पारणा के निमित्त नगर ग्रामादिक विषैं गये तहां भोजन का लाभ भया नाहीं अंतराय भया तव वधी (वढ़ी) जो क्षुधा की वेदना ताकों समभावां सों सहना, लाभ—अलाभ विषैं हरष—विषाद नाहीं करैं, भूंख की वेदना सहिवो सो क्षुधापरीसह कहिये १ । प्यासकी वाधा सहिवो सो तिरसा परीसह कहिये २ ।

शीत की वेदना सहिवो सो शीतपरीषह कहिये ३ । अर अग्नि धूप की वेदना साहिवो सो उष्ण परीसह कहिये-४ । वहुरि वर्षा काल विषैं श्रावण के महीने की अत्यन्त डरावनी रात्रि जामें चारूं तरफ तो विजली के चमके होय रहे हैं अर मूसलधार जल वरसै वाजती जो झंझावायु सो आरि के पारि निकसिजाय तो वह ध्यानी वीतरागी, वृक्षमूल विषैं ध्यानारूढ़ तिष्ठै है तहां डांस मांछर सर्प श्रृगाल गिंडोला आदि जीवनि करि किया जो उपसर्ग ताहि समभावां

सू सटना चलाचल शरीर मन मैं न होना सो दंशमशक परीसह विजयी कहिये ५। बहुरि नग्नमुद्रा विषैं कोई प्रकार
भी लज्जा कौं न प्राप्त होना सो नग्नपरीषह कहिये ६।
बहुरि अनेकप्रकार अनिष्ट का संयोग जो कांटादिक वा किरकिरादि आदि रेणु, लोचन विषैं आय प्राप्त
होय इत्यादिक विषैं जो अरतिभाव कौं न प्राप्त होय सो अरति परीषह कहिये ७। बहुरि अनेक प्रकार तरुणी रूप
की खानि स्त्री कामचेष्टा करै तहां विकारभाव कौं न प्राप्त सो स्त्रीपरीषह कहिये ८। बहुरि गमन करतां ने कंटक
कंकर आदि चुभै वा महाधूप शीतादि विषे धरती अत्यन्त शीत उष्णता कों प्राप्त भइ ता विषैं पांव धरतां खेद नाहीं
मानै सो चर्या परीसह कहिये ९ बहुरि आसन मांड़ि वैठे हैं तहां वैठक के तलैं अनेक उपद्रव का कारण कंटक-
कंकरादि आय जाय हैं तिनकी अत्यन्त वेदना होतें भी आसन कौं चलाचलें नाहीं करैं हैं सो निषद्यापरीसह कहिये-
१०। बहुरि जब रात्रि के पिछले पहर अपने शरीर कौं संकोचि एक करवट अल्प निद्रा सहित सोवें हैं तहां शरीर
के तलें आय गये जे कंकर कंटकादिक ताकी घोर बेदना होतां भी शरीर कौं चलाचल नाहीं करैं हैं सो शय्यापरीषह
कहिये ११। बहुरि केई दुष्ट जीव अनेक प्रकार गाली आदि करकस (कर्कश) वचन मर्मच्छेद वचन कहैं हैं
तहां क्रोधभाव को प्राप्त न होना, छमा न छोड़ना सो आक्रोश परीसह कहिये १२। बहुरि केई दुष्ट जीव आय मारैं हैं
बांधैं हैं, प्राणनाशकरैं हैं, तहां बहुत वेदना होत संतां क्रोध कौं रंचमात्र भी नाहीं विस्तारैं हैं, सो बधपरीसह कहिये १३
बहुरि अनेकप्रकार शीतउष्णादिक की व क्षुधातृषादिक की वा रोगादिक की वेदना होतसंतैं अजाची रहैं हैं कोई
प्रकार कोई ही सों ज्याचना नाहीं करैं हैं सो याचना परीषह कहिये १४। बहुरि जहां अनेक उपवासों के पारणे आहार
को गये हैं अर जहां आहारका अलाभ भया तहां रंचमात्र भी खेदकों नाहीं प्राप्त होय हैं सो अलाभ परीषह
कहिये १५। बहुरि शरीर विषैं नानाप्रकार दुष्ट रोग होत संतै कंपायमान न होय हैं, वेदना कौं जीतैं हैं, सो
रोगपरीसह कहिये १६।

बहुरि चर्या शय्या आसन विषैं अनेकप्रकार तीक्ष्णकांटे शरीर पर चुभैं हैं तिनकी बेदना कों जीतैं हैं, सो तृणस्पर्श परसिह कहिये १७। बहुरि जावज्जीव है स्नान का त्याग जिनकैं अर शरीर विषैं पसेव रजके संबंध करि बहुत मैल जम जाय है, ताकी अत्यंत बेदना होय है सो नाहीं गिनैं हैं सो मलपरसिह कहिये १८। बहुरि मुनि महाराज कों कोई धर्मात्मा जीव तो सत्कारादि नमस्कारादि करैं हैं, अर कोई जीव अपमान करैं हैं, सो तिन दोनों विषैं राग—द्वेषादि नाहीं करैं हैं समभाव व्रत कौं नाहीं छोड़ैं हैं सो सत्कार पुरस्कारादि परीसह कहिये १९। बहुरि अनेक प्रकार शास्त्राभ्यास करैं हैं, अर श्रुतज्ञानावरणी कर्म के उदय तैं शास्त्र स्फुरायमान होय नाहीं, तहां कर्म का विपाक विचारैं, वेदना कौं नाहीं भजैं हैं, सो प्रज्ञा परीसह कहिये २०। बहुरि घनाकाल तप करतैं होय गये अर अवधि-ज्ञानादि उत्पन्न नाहीं भये तहां मुनि खेद कों प्राप्त न होंय सो अज्ञानपरीसह कहिये २१। बहुरि बहुत काल मुनि-पद विषैं प्रवर्तैं भये अर बहुत प्रकार तपश्चरणादि करे अर कोई रिद्धि चमत्कारादि प्रगट न भया तौ भी तिनके परिणामन विषैं कोई भी प्रकार भ्रांति नाहीं होय सो अदर्शनपरीसह कहिये २२। ऐसैं बाईस परीसह कहीं। तिन विषैं ज्ञानावरणी कर्म के उदय तैं प्रज्ञापरीसह अर अज्ञान ये दोय परीसह उत्पन्न होंय हैं। तहां दर्शनमोह कर्म के उदय तैं अदर्शनपरीसह होय है। अर अन्तराय कर्म के उदय तैं एक अलाभ परीसह होय है। बहुरि चारित्रमोह के उदय तैं नग्न—अरति—स्त्री—निषद्या—आक्रोश—याचना—सत्कारपुरस्कार ये सप्त परीसह होंय हैं। बहुरि अवशेष एकादशपरिसह वेदनी कर्म के उदय तैं जाननी—क्षुधा १ तृषा २ शीत ३ उष्ण ४ दंशमशक ५ चर्या ६ शय्या ७ बध ८ रोग ९ तृणस्पर्श १० मल ११।

इन बाईसपरीसह विषैं अनिवृत्तिकरण नवेंगुणस्थान पर्यन्त तो सर्व परीसह पाईये, अर सूक्ष्मसाम्पराय दशम गुणस्थान विषैं तथा उपशांतकषाय अर क्षीणकषाय इन तीन गुणस्थानन विषैं मोहकर्म के उदयके अभाव होतैं मोहकर्म सम्बंधी आठ परीसह न पाईये, चौदह ही पाईजैं (पाइये)। बहुरि ज्ञानावरणी अर अंतराय का नाश

होतैं तीन परीसहका अभाव होय है, तब वेदनीसंबंधी एकादश परीषह सयोग केवली अयोगकेवली गुणस्थान विषैं उपचार करि पाईजैं, तातैं जहां वेदनी के सहकारिकारण मोहकर्म का अभाव है तातैं वा असातावेदनी के द्रव्य विषैं शक्ति के अनुभाग का अभाव है, बहुरि असातावेदनी का द्रव्य प्रदेश उदय होय षिर जाय हैं तातैं परीसह कार्यरूप होय दुःख को नाहीं प्राप्त करै है, तातैं वेदनी के उदय अपेक्षा इस संबंधी एकादश परीसह को सद्भाव कह्यौ है, परन्तु कार्यभूत नाहीं, तातैं उपचार करि कही है एसा जानना । बहुरि बाईस परीषह विषैं एकैं काल एक जीव कें होंय तो एकनें आदि दे दोय तीन आदि उगणीसपर्यन्त होंय, यातें शीत—उष्ण विषैं एकैं काल एक ही होय बहुरि निषद्या चर्या शय्या इन तीन परीसहन विषैं एकै काल एक ही होय, दोय न होंय, जो एकै काल बहुत होंय तो उगणीस परीसह को सद्भाव होय । इति परीसह वर्णनम् ।

बहुरि चार प्रकार उपसर्ग कों सहै—देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत, अकस्मात् कहिये वज्रपात पाषाण काष्ठादिक तैं उत्पन्नभया तौ या प्रकार परीसह उपसर्ग को सहै, मुनि अपने चारित्र तैं तो च्युत न होय है, निरवांछिक मोहवासना रहित अडिग मेरुवत होत संतै सहै है, ता करि कर्मन की निर्जरा करै है । अब तैं मुनि द्वादश प्रकार तपवृत्ति विषैं वा तेरा प्रकार चारित्र विषैं प्रवर्तता संता वा परीषह उपसर्गसहने विषैं कर्म के उदय तैं प्रमाद करि अपने सामायिक चारित्र सों परिणाम चलै तो ताके अर्थ छेदोपास्थापना संयम कों निरंतर धारैं हैं, सो छेदोपस्थापनसंयम को स्वरूप कहैं हैं—सामायिक चारित्र को धारि बहुरि प्रमाद तै संखलित (स्खलित) होय साधनक्रिया कों प्राप्त हुवा तिस सापद्य पर्याय कों छोड़ि अपने सामायिक चारित्र विषैं तिष्ठना सो छेदोपस्थापना कहिये, वा सावद्य जो पाप ताकों छेदि अपने सामायिकधर्म विषैं स्थापित होना सो छेदोपस्थापना कहिये । वा अपना सामायिक चारित्र छेदभया ताकों बहुरि स्थापन। सो छेदोपस्थापना कहिये । एसें सामायिक छेदोपस्थापना जो दोय संजम कों धारता संता अपने दश विशेषण सहित जो आत्मीक दशलक्षणधर्म ताकों पुष्ट करै हैं ताकी सिद्धि करैं हैं । धर्म के दश विशेषण कहिये लक्षण सो

कहिये है—उत्तम क्षमा १ मार्दव २ आर्जव ३ सत्य ४ सौच ५ संयम ६ तप ७ त्याग ८ आकिंचन्य ९ ब्रह्मचर्य १० केई दुष्ट जीव वा अज्ञानी जीव अनेकप्रकार मुख थकी कुवचन कहैं हैं उपसर्ग करैं हैं, परसिह दैं हैं, इत्यादि अनेक क्रोध के कारण होतां संतां भी रंचमात्र भी क्रोधभाव कों नाहीं प्राप्त होय हैं अपने क्षमाभाव कों नाहीं छोड़ैं हैं सो उत्तमक्षमाधर्म कों प्रथम लिखिये है १।

बहुरि अनेकप्रकार श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मनः पर्ययज्ञान तिन करि मंडित है अर उत्पन्न भई हैं अनेक प्रकार ऋद्धि जिनकों अर पूजैं हैं तीनलोक के जीव चरणारविंद जिनकै, तौ पण मानकषाय के वशीभूत होय मदभाव कों नाहीं प्राप्त होंय सो मार्दव कहिये २। बहुरि महासरले स्वभाव कों धरैं हैं, छोड़ा है सर्वप्रकार कपट रूप वक्रभाव जिनने, जैसा मन विषैं विचारना तैसा ही मुखथकी कहना, तैसा ही काय थकी करना, ऐसैं मन वचन काय को एकी भाव रूप कों प्राप्त करैं सो आर्जवधर्म कहिये ३। बहुरि सर्वप्रकार छोड़ा है असत्यवचन का वोलना जिननैं, वचन वोलैं तो सर्व जीवन के हितरूप मर्यादीक वोलै वा मौनधरि रहैं सो सत्य धर्म का अंग है ४। बहुरि छोड़ा है इसभव परभवसंबंधी संसारीक सुख का लोभ जिननैं, सो शौचधर्म का लक्षण है ५। बहुरि वशीभुत किये हैं पांचों इंद्रिय अर मन तिनको विषयवासना विषैं नाहीं विचरण दे हैं अर पालें हैं मन वचन काय कृत कारित अनुमोदना करि षटकाय के जीवन की दया, सर्व जीवन कों आप समान जानै हैं सो संयम कहिये ६। बहुरि करै हैं अपनी शक्ति-प्रमाण द्वादशप्रकार तप उग्रोग्र जिननैं, अरु कियेहै सर्व प्रकार इच्छा कों निरोधैं सो तपधर्म कहिये ७। बहुरि बुद्धिपूर्वक त्यागदिये हैं सम्यक् श्रद्धान ज्ञान करि परद्रव्य अर परभाव जानैं, अर अबुद्धिपूर्वक होय हैं कपायभाव वा ब्रनि रह्या है शरीर का संबंध तिनको छोड़ने का निरंतर उपाय धरैं हैं सो त्यागधर्म का लक्षण है ८। बहुरि तिलतुषमात्र भी परद्रव्य विषैं ममकारभाव नाहीं धारैं हैं एक अखंड चिन्मूर्ति आत्मा वा अपने ज्ञानादिक स्वभाव का भाव तिनही विषैं अहंकार ममकार भाव धारैं हैं सो आकिंचनधर्म कहिये ९।

बहुरि तजदिये हैं सर्व स्त्री अर तज दिये हैं सर्व काम—विकारभाव अर दूरभई हैं सर्व परद्रव्यन सौं रमनचेष्टा जाकी, अर थिरीभूत भये हैं अपने दृष्टा ज्ञाता स्वभावभाव विषैं ही है चर्या जिनकी, सो ब्रह्मचर्यधर्म है १० । ऐसें दश लक्षण को धरैं धर्म ताकों सदाकाल धारै हैं। बहुरि पंचाचारकों आचरैं हैं—दर्शनाचार १ ज्ञानाचार २ चारित्राचार ३ तपाचार ४ वीर्याचार ५ इन पंचाचाररूप है आचार जिनकै, ऐसे क्षयोपशम चारित्र के धारक मुनि ते अनेक उत्तर-गुणन कों विस्तारैं हैं, धारैं हैं अतुलपराक्रम, ता करि प्रसाद रहित जे सप्तम गुणस्थान ता विषैं आरूढ़ होय हैं तथा पदस्थ १ पिंडस्थ २ रूपस्थ ३ रूपातीत ४ इन चार प्रकार धर्मस्थान तिनकों ध्यावैं हैं। तहां कर्मन का जोर अत्यन्त आय पड़ै है तहां तें भाव उतरैं हैं, तब षष्ठम गुणस्थान जो प्रमत्त किंचित् प्रमाद सहित ता विषैं तिष्ठैं हैं। तहां पंच-प्रकार शास्त्राध्ययन करैं हैं—वांचना कहिये द्रव्य श्रुत कों कच्ची दशा में आचारग्रंथ कों वांचैं १ बहुरि शास्त्र का अर्थ विचारैं ता विषैं कोई संदेह उपजै तो ताको निवारण के अर्थ बहुज्ञानी आचार्यादि पास जाय प्रश्न करै सो पृच्छना कहिये २। बहुरि धारै हुए शब्द अर्थ का बारंबार चिंतवनकरै सो अनुप्रेक्षा कहिये ३। बहुरि सब द्रव्य अर्थ का शुद्ध घोकना करे सो आम्नाय काहये ४। बहुरि चार अनुयोग रूप शास्त्र की भलीप्रकार सिद्धि होय तहां धर्मोपदेश देय ५ ऐसें शास्त्र के पंच अंगन का अध्ययन करै। बहुरि जहां उपसर्ग परीसह सहित कर्मन का तीव्र उदय होय तहां द्वाद-शानुप्रेक्षा का चिंतवन करैं—अनित्यानुप्रेक्षा १ अशरणानुप्रेक्षा २ संसारानुप्रेक्षा ३ एकत्वानुप्रेक्षा ४ अन्यत्वानुप्रेक्षा ५ अशुचित्वानुप्रेक्षा ६ आस्रवानुप्रेक्षा ७ संवरानुप्रेक्षा ८ निर्जरानुप्रेक्षा ९ लोकानुप्रेक्षा १० बोधदुर्लभानुप्रेक्षा ११ धर्मा-नुप्रेक्षा १२।

तहां ऐसा चिंतवन करैं—यह असमानजाती जो अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री पुत्रादिक वा हस्ती घोटकादिक अर समानजानीय पर्याय जे धनसंपदादिक मंदिरादिक तिनका जीवके साथ संयोग होय है, तिनका निश्चय करि वियोग होय हैं, सर्व ही असमानजातीय समानजातीपर्याय बिनाशीक हैं, अनित्य हैं, ऐसें पुनः पुनः सर्व इष्टसामग्री

कों अनित्य चिंतवना सो अनित्यानुप्रेक्षा कहिये १। बहुरि अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री पुत्रादिक कुटंब वा दासी दास आदि अनुचर वा हस्ती घोटकादिक वा राज्यादि विभूती, धनसंपदादिसंयोग, जहां कर्म उदय तैं अन्यथा परणमैं वा वियोग होय, तहां कोई भी राखनेकों समर्थ नाहीं, सर्वकों असरण विचारना सो असरणानुप्रेक्षा कहिये २। बहुरि जो द्रव्य क्षे काल भव भाव इन पंच प्रकार का जो परिवर्तन रूप संसार सोई भया चक्र ता विषैं धरदिया—कर्म रूप कुलाल करि राग—द्वेष मोहभावरूप उपादान शक्ति को धरया—संसारी जीव रूपपिंड सो नाना अवस्था कों प्राप्त होय दुःखी होय ऐसा संसार का स्वरूप बिचारना चिंतवना सो संसारानुप्रेक्षा कहिये ३। बहुरि जहां एसा विचारैं कि जो यह जीव सदाकाल अकेला है कोई काल विषैं कोई भी प्रकार परद्रव्य सों किसी ही क्षेत्र विषैं कोई ही भाव करि याका संबंध नाहीं है, जदपि परद्रव्य याके एकक्षेत्रावगाही होय, तथापि सव न्यारे हैं, पाप पुण्य आप अकेलो ही वांधे है, बहुरि तिनके उदयकाल विषैं दुःख—सुख आप अकेलो ही भोगे है, नरक स्वर्गादिक विषैं आप अकेलो ही जाय है, बहुरि अपना परमहित जो मोक्ष ताकों आप अकेला ही साधे है, अर अपने एकाकी भाव करि बांधे जे कर्म तिनका विध्वंस आप एकाकी होय ही करै है, तातैं मैं सदा अकेला ही हूं, एसा आपके एकाकी चिंतवना सो एकत्वानुप्रेक्षा कहिये ४। बहुरि एकक्षेत्रावगाही शरीर अर ए सर्व कुटंबाद परिवार अन्य हैं, मन्दिर, ग्रह, धन, संपदादिक अन्य हैं, मैं अन्य हूं, मेरा कोई भी नाहीं, मैं कोई का नाहीं, एसा जहां सर्व परद्रव्यन कूं अन्य चिंतवना सो अन्यत्वानुप्रेक्षा कहिये ५।

बहुरि जहां एसा चिंतवना जो यह ततधातु करि निर्मापित शरीर महाघिनावना क्रमिकीटकादिक को भाजन महाअशुचि ताविषैं मुद्रित कियो आयुनाम कर्म बंदिग्रह को रक्षक अमूर्तीक ज्ञानस्वरूप सुखपिंड जीव द्रव्य रूप आत्मा सो तहां नानाप्रकार दुःख भोगावै है, ऐसे शरीरसूं केसैं राचैं ? न राचै, एसैं शरीर कूं बारंबार अशुचि चिन्तवना सो अशुचित्वानुप्रेक्षा कहिये ६। बहुरि मिथ्यात्व, कषाय, अव्रत, योग इन चार प्रकार आस्रव भावनकरि

परणयो संसारी जीव चार प्रकार प्रकृतिबंध १ स्थितिबंध २ अनुभागबंध ३ प्रदेशबंध ४ कों करै है, ताके उदयकाल विषैं नानाप्रकार दुःख—संकट कों भोगवै है, ये आस्रव जीवको महा अहित के कारण हैं, तातें हेय हैं एसा नइकों वारंवार हेय चिंतवना सो आस्रवानुप्रेक्षा कहिये ७। बहुरि इन आस्रवभावन कूं रोकनहारा एसा जो सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की एकता रूप संवरभाव सो जीवको उपादेय हैं ताकों ग्रहण करना इस संवरभाव विना आस्रवभाव नाहीं रुकै, अर आस्रवभाव रुकै विना कर्मास्रव रुकै नाहीं, एसा संवरभाव तहां बारबार चिंतवन करना सो संवरानुप्रेक्षा कहिये ८। बहुरि जहां थिति पूरी करि अपना विपाक दे कर्म का खिरना सो सविपाक निर्जरा कहिये, सो तो सर्व संसारी जीवन कैं हुवा ही करै है, ताकर तो किछु सिद्धि होती नाहीं, तातैं सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र पूर्वक जो तपरूप भावना है, ताकरि समय समय असंख्यात गुणी निर्जरा होय सो अविपाकनिर्जरा मोक्ष को हेतु है; एसा निर्जरास्वरूप वारवार विचारना सो निर्जरानुप्रेक्षा कहिये ९।

बहुरि जहां पुरुषाकार स्वरूप कों धरयां चौदह राजू ऊंचा, दक्षिण उत्तर सर्वत्र सातराजू चौड़ा, पूर्व पश्चिम अधोभाग विषैं सातराजू चौड़ा, अर मध्यभाग विषैं एक राजू चौड़ा, ब्रह्मस्वर्ग निकट पांचराजू चौड़ा, लोक के अंत विषैं एकराजू चौड़ा, तीनसौं तेतालीस राजू घनाकार, तीन वातवलयन करि वेष्टित, जीवादिक षट् द्रव्यन करि पूर्ण भया, एसा लोक ताका जिनसूत्रानुसार स्वरूप चिंतवन राग—द्वेष रहित चिंतवन करना सो लोकानुप्रेक्षा कहिये १०। बहुरि जीवको अनादिकाल का संसार चतुर्गति विषैं भ्रमण करतां संता सर्व दुःख—सुख सामग्री अनेकवार मिली कोई भी सामग्री अलभ्य न रही परन्तु एक सम्यग्ज्ञान करि ही हीन रह्या तातैं संसार का भ्रमण न मिटा, तातैं इस घोरसंसार विषैं एक सम्यग्ज्ञान ही दुर्लभ हैं, अर जीवन के सर्व कल्याण का कारण है, तातैं सम्यक् ज्ञान होने का यत्न करना, एसें सम्यक्ज्ञान कों दुर्लभ भावना सो बोधदुर्लभानुप्रेक्षा कहिये ११। बहुरि जहां अपना स्वरूप विचारना, जिनधर्म का स्वरूप विचारना, बहुरि धर्म के दश लक्षण तिनकों विचारना, इत्यादि धर्म का चिंतवन करना

हारे आचार्यगुरु सो आचार्यभाक्ति कहिये ११ बहुरि तैसैं ही भक्तियुक्त भावयुक्त करि विराजैं हैं अपने हृदयविषैं अपने पढ़ावनहारे बहुश्रुत के धारक उपाध्याय सो बहुश्रुतभाक्ति कहिये १२ बहुरि द्वादशांग वाणी विषैं लग रहा है भाक्ति सहित अनुराग जिनका सो प्रवचन भाक्ति कहिये १३ अर अपने पदयोग्य धारे हैं षट् आवश्यकन विषैं कोई आवश्यकभाव, सो आवश्यकापरिहाणि कहिये १४ बहुरि आपका आत्मा कौं किया है सर्व दोषन करि रहित अर जिनमार्ग की उच्चता दिखावनें कौं तत्पर हैं, सो सन्मार्गप्रभावना कहिये १५ बहुरि प्रवचन कहिये आप्त आगम पदार्थ जिनधर्म वा चतुर्विध संघ तिनविषैं है प्रीति जिनकी, सो प्रवचन वात्सल्य कहिये १६ इति षोडशभावना।

बहुरि किसी क्षयोपशमसंयम वाले के तीसरा परिहारविशुद्धिसंयम होय है सो कौनसे जीव के होय है ? -जो तीसवर्ष की अवस्था विषैं ही दीक्षा धारै अर गृहस्थ अवस्था विषैं खान पान जाकै सुख सों भया होय, अर आठवर्षताईं केवली के निकट पढ़ै, अर प्रत्याख्यान नवें पूर्वपर्यन्त पढ़ा होय, तिसकै परिहारविशुद्धिसंयम होय है। सो संयम के माहात्म्य करि सर्व पापसौं कमलवत् निर्लेप रहै, चौरासी लाख उत्तरगुणका पालक होय, रात्रिविषैं गमन नाहीं करै, अर वर्षाकाल विषैं गमन करै भी अर न भी करै किछु नेम नाहीं, इस परिहारविशुद्धिसंयम की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त है, जातैं और गुणस्थान होय जाय तो यह संयम रहै नाहीं, जातैं याके गुणस्थान प्रमत्त अप्रमत्त दोऊ ही हैं, अर उत्कृष्ट स्थिति अड़तीसवर्षघाटि कोडिपूर्व है, एसा परिहारविशुद्धिसंयम का स्वरूप गोमटसार विषैं कह्या है। इत्यादि क्षयोपशम चारित्रभावन के भेद संक्षेपमात्र कहै, और भी अनेकभेद है, सो वड़े शास्त्रन सों जानना। इस चारित्र के सर्वभेद केवलीगम्य है, यह क्षयोपशमचारित्रभाव वर्तमान भी सुखरूप है अर आगामी स्वर्ग मोक्ष का कारण है। यह क्षमोपशमचारित्र गुणस्थान तो प्रमत्त अप्रमत्त दोयही विषैं पाइये, अर मार्गणा गति--मनुष्य १ जाति--पंचेन्दिय १ काय--त्रस १ योग--मनके चार वचन के चार औदारिककाय योग आहारककाय योग आहारकमिश्र काययोग एसैं ग्यारह ११, वेद--३ कषायसंज्वलनचतुष्क छह हास्यादिक एवं १० ज्ञान--केवली विना ४ संयम--सामायिकछेदोपस्था--

पना परिहारविशुद्धि ३ दर्शन—केवल विना ३, लेश्या-पीत पद्म शुक्ल ३, भव्य सम्यक्त्व-उपशम क्षयोपशम क्षायिक एवं ३ संज्ञी १ आहारक १ इनविषैं पाइये है।

इति श्री भावदीपका का क्षयोपशमभावाधिकार विषैं क्षयोपशमचारित्राधिकार पांचवां समाप्तभया ५

आगे उपशम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा:—अनादिदुष्ट मिथ्यात्व कौं करि उपशम जिन जीव।
शक्ति धारि मोह मारियो करूं प्रणाम सदीव ॥ १ ॥

मोह कर्म का उपशम होतें जो भाव निपजै सो उपशमभाव कहियै। सो उपशमभाव के दोय भेद हैं—उपशम सम्यक्त्व १ उपशम चारित्र २। तहां प्रथम ही उपशमसम्यक्त्वभाव कौं लिखिये-है तहां प्रथम ही उपशम सम्यक्त्व की उपत्ति को विधान कहिये है उपशमसम्यक्त्व-संज्ञी, पर्याप्त, गर्भज, पंचेन्द्रिय, चारों गति के जीवन के होय है, भव्य होय, मंदकपायरूप विशुद्धाता का धारक होय, गुण दोष का विचार रूप जो साकार ज्ञानोपयोग ताकरि युक्त होय, निद्रा रहित जागता जीव होय, तिनके उपशम सम्यक्त्व होय है। सो सम्यक्त्व के उपजने के दोय कारण हैं—अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी गुणस्थान तैं छूटि उपशम सम्यक्त्व होय सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये। बहुरि उपशमश्रेणी चढ़तें क्षयोपशमसम्यक्त्व तैं होय सो द्वितियोपशम सम्यक्त्व कहिये प्रथम ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये हैं—प्रथमोपशमसम्यक्त्व होनें तैं पहले मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं पंच लब्धि होय है ५ क्षयोपशम १ विशुद्धि २ देशना ३ प्रायोग्यता ४ करण ५ ये पंच लब्धि हैं क्षयोपशम १ विशुद्धि २ प्रायोग्यता ३ देशना ४ ए चार लब्धि तो भव्यजीवन कें होय हैं वा अभव्य के भी होंय अर करणलब्धि भव्य के ही होय। ज्ञानावरणादिक जे अप्रशस्तकर्म-

प्रकृति तिनकी शक्ति जो अनुभाग सो जिसकाल विषैं समय २ प्रति अनंतगुणा घटता अनुक्रमरूप होय उदय आवै तिसकाल विषैं क्षयोपशमलब्धि कहिये १ बहुरि क्षयोपशम लब्धि होतैं जीव के उपजा जो सातावेदनी आदि प्रशस्तप्रकृतिबंध का कारण धर्मानुराग रूप शुभपरिणाम ताकी जो प्राप्ति सो विशुद्धि लब्धि कहिये २। बहुरि पट् द्रव्य नव पदार्थ के उपदेश करणहारे आचार्यादिक की वा तिनके उपदेश की प्राप्ति वा उपदेशित पदार्थ के धारणे की प्राप्ति सो देशनालब्धि कहिये ३। अर जहां नारकादि विषैं उपदेश देनेवाला न होय तहां पूर्वभव विषैं धारे हुए तत्वार्थ के संस्कारके बलतैं सम्यग्दर्शन होय है। बहुरि पूर्वोक्त तीन लब्धि संयुक्त जीव समय--समय विशुद्धता करि वर्धमान होत संतैं आयुकर्म विना सात कर्मन की स्थिति अंतः कोटाकोटी मात्र अवशेष राखै तिसकाल विषैं जो पूर्वस्थिति थी ताकौं एक कांडक घातकरि छेदि तिसकांडक के द्रव्यकों अवशेष रही स्थिति विषैं निक्षेपण करै है बहुरि घातियाकर्मन का दारुलतारूप अघातिया कर्मन की नींव कांजी रसरूप द्विस्थानगत अनुभाग इहां अवशेष रहै है पूर्व अनुभाग या तामें अनंत का भाग दियें बहुभागमात्र अवशेष रहा अनुभाग विषैं प्राप्त करै है तिसकार्य करने की योग्यता की प्राप्ति सो प्रायोग्यलब्धि कहिये ४। सो ए चार लब्धि तो भव्य अभव्य कें समान होय हैं। बहुरि विशुद्धता की वृद्धि कर वर्धमान होतसंता प्रायोग्यलब्धि के प्रथम समय तें लगाय पूर्वस्थितिबन्ध के असंख्यातवें भागमात्र अंतः कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण आयुविना सात कर्मन का स्थितिबंध पीछै करै है अंतर्मुहूर्तप्रमाण समानता लिये इसतें पल्य का संख्यातवां भाग मात्र घटता स्थितिबंध तीसरा अंतर्मुहूर्त पर्यन्त करै ऐसैं ही क्रम तें एक २ अन्तर्मुहूर्त में पल्यका संख्यातवां भाग मात्र स्थितिबंध घटाय २ करै याका नाम स्थितिबंधापसरण कहिये। तहां संख्यात स्थितिबंधापसरण होय तहां प्रथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध घटै तहां पहला प्रकृति बंधापसरणस्थानक होय बहुरि तिसको अनुक्रम तैं प्रथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध और घटे तहां दूसरा प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होय, ऐसें इसही अनुक्रम तैं चौंतीस प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होय। इस जगह पृथक्त्व नाम सातवें आठवे का है तातैं पृथक्त्व सौ सागर कहने तैं सातसै वा आठसै सागर जानना। अव चौंतीसस्थानक तिन

विषैं क्रम तैं चौंतीसप्रकृति के बंध तैं विच्छेद होय है सो कहिये है—पहले विषै नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ नरकगति नरकगत्यानुपूर्वी ५ संयोगरूप सूक्ष्म साधारण अपर्याप्त ६ सूक्ष्म अपर्याप्तप्रत्येक ७ वादर अपर्याप्त साधारण ८ बादर अपर्याप्तप्रत्येक ९ वेंद्रिय अपर्याप्त १० तेंद्रिय अपर्याप्त ११ चौंद्रियअपर्याप्त १२ असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त १३ संज्ञीपंचेन्द्रि अपर्याप्त १४ सूक्ष्मपर्याप्तसाधारण १५ सूक्ष्मपर्याप्तप्रत्येक १६ वादर पर्याप्त साधारण १७ बादर पर्याप्तप्रत्येक एकेन्द्रिय स्थावर आताप १८ वेंइन्द्रियपर्याप्त १९ तेंइन्द्रियपर्याप्त २० चौंइद्रियपर्याप्त २१ असंज्ञी-पंचेंद्रिय पर्याप्त २२ तिर्यंचगति तिर्यंचगत्यानुपूर्वी उद्योत २३ नीचगोत्र २४ अप्रशस्तविहायोगति दुर्भग दुःस्वर अनादेय २५ हुंडकसंस्थान सृपाटिकसंहनन २६ नपुंसक वेद २७ वामनसंस्थान कीलितसंहनन २८ कुब्जकसंस्थान अर्धनाराचसं-हनन २९ स्त्रीवेद ३० स्वातिसंस्थान नाराचसंहनन ३१ न्यग्रोधसंस्थान वज्रनाराचसंहनन ३२ मनुष्यगति मनुष्यगत्या-नुपूर्वी औदारिक शरीर औदारिक अंगोपांग वज्रवृषभनाराचसंहनन ३३ अस्थिर अशुभ अयश अरति शोक असाता-वेदनी ३४ एसैं ए चौंतीसस्थानक तो भव्य वा अभव्य के समान होय हैं इन चौंतीस स्थानन करि छियालीस प्रकृति बंध तैं व्युच्छित्ति होय है। तहां मनुष्यातिर्यंच के बंध योग्य प्रकृति एकसौ सतरा में छियालीस प्रकृति की व्युच्छिति भई अवशेष इकहत्तर प्रकृति का बंध प्रायोग्यता लब्धि का अनंतरवर्ती समय तैं करै हैं अर देव नारकी वज्रवृषभ नाराच-संहनन का बंध सिवाय करै तातैं बहत्तरि का करै है अर इनका अन्तरविशेष लब्धिसार जीतैं जानना बहुरि अनुभाग अप्रशस्तप्रकृतिन का तौ घातिया दारुलता दुः (दि) स्थानगत अर अघातिया का नींब कांजीर दोय स्थान को प्राप्त समय २ अनंत गुणां घटता बांधे है प्रशस्त प्रकृतिन का चार स्थान कौं प्राप्त समय २ अनंतगुणां वधता वांधे है

इति प्रायोग्यतालब्धि समाप्त।

करण, तीन प्रकार हैं अधः प्रवृतिकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ये तीन करण करैं तिनका काल प्रत्येक अन्तर्मुहूर्त है परन्तु अनिवृत्तिकरण का कालस्तोक है अर तासों संख्यातगुणा काल अधः प्रवृत्तकरण का है।

अब अधः प्रवृत्तकरण विषैं समय समय प्रति अनंतगुणी परिणामन की विशुद्धता होय है सातावेदनी आदि प्रशस्तप्रकृतिन का समय २ प्रति अनंतगुणां चतुस्थानरूप अनुभागवंध करै हैं असातावेदनी आदि अप्रशस्तप्रकृतिन का समय समय प्रति अनंतवैभागमात्र अनुभागवंध करै है बहुरि स्थितिवंध अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त पूर्वंग्थितिवंध तै पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र घटतावांधे है अर इसतें दूसरा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पल्य का असंख्यातवां भागमात्र घटता वंध है अर इसतें दूसरा अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त पल्यका असंख्यातवां भागमात्र वंघता वंध है एसें एक एक अन्तर्मुहूर्त करि पल्य का असंख्यातवां भागमात्र स्थितिबंधापसरण होय है एसें या विषैं अपसरण असंख्यातहजार् होंय है एसै होते इस करण की आदि के समय स्थितिवंध अन्तः कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण था ताके अंत समय विषैं संख्यातगुणां घाटि होय है १ बहुरि दूसरा अपूर्वकरण करे है तहां गुणसंक्रमण तो नाहीं करै है तीन आवश्यक और होंय हैं। समय समय असंख्यात असंख्यातगुणी कर्मन की निर्जरा होय तहां गुणश्रेणि आयाम अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण के काल तें साधिक गलतावशेष हैं सो अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है १ स्थितिकांडक घात करै अन्तर्मुहूर्तकाल में अपूर्वकरण के प्रथमसमय में जेतीजेती कर्मन की 'स्थिति सत्वविषैं पाइये है तिनविषैं जेती स्थिति घटावैं तिन निषेकन के द्रव्य की अवशेष रही स्थिति तिनके निषेकन विषैं 'समय समय असंख्यातगुण कर्मन कूं लीयां अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त दे है तहां सम्पूर्ण देचुकैं द्रव्य तब एक कांडक घात भयौ एमें ही उपशमसम्यक्त्व का अंतपर्यन्त अनेकस्थिति--कांडक घात करै सो स्थिति कांडकघात कहिये। इहां पल्य का असंख्यातवां भागमात्र एक ९क कांडक तैं स्थिति घटावै हैं। बहुरि सत्ता विषैं तिष्ठते कर्मन का अनुभाग ताके अनंतस्पर्धक हैं तिनविषैं अनंते उपर के बहुत अनुभाग कों करैं स्पर्धक तिनका अनुभाग घटाय अवशेष रहा स्पर्धक तिनकै अनुसार एक अंतर्मुहूर्त में करै सो अनुभागकांडकघात कहिये। एसैं अनंत स्पर्धकन के कांडक एक एक अंतर्मुहूर्त में करै सो अनुभागकांडकघात कहिये एसै गुणश्रेणिनिर्जरा स्थिति कांडकघात अनुभागकांडकघात ए तीन आवश्यक अपूर्वकरण विषैं होंय हैं। बहुरि अनिवृत्तिकरण करै है तहां

पल्यका संख्यातवां भाग मात्र स्थितिकांडकघात करैं हैं तहां संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण भये तहां उपशमनकरण करे है तहां सत्तामें तिष्ठते मिथ्यात्वके द्रव्य ताको समय असंख्यातगुणों द्रव्य ताकों उपसमावै हैं । उपशमकरण कहिये उदीरणा होय उदयमें न आयसकै ऐसा कर्म करै है सो अनिवृतिकरणके अंतसमय पर्यंत सर्व मिथ्यात्वको द्रव्य उपशम--भावकों प्राप्त करै है । बहुरि अंतरकरण करै है, तहां अनिवृत्तिकरणके अंतसमय पर्यंत स्थापै है, अनिवृत्तिकरणके अनंतर समयतें लगाय अंतर्मुहूर्तके समयप्रमाण निषेकनि विषैं तिष्ठतौ जो मिथ्यात्वको द्रव्य ताकों कितनौंक तो उपरितन स्थिति विषैं उत्कर्षण करि चढ़ायदे है, अर कितनौंक द्रव्य अपकर्षणा करि निषेक दे काढ़े है । अंतर्मुहूर्तकालप्रमाण जो प्रथम स्थिति ता विषैं अंतर्मुहूर्तप्रमाण मिथ्यात्वके द्रव्य रहित करै, एसी क्रिया अनिवृत्तिकरके अंत पर्यन्त करै हैं । बहुरि अनिवृत्तिकरणके अनंतर समय अर अंतरायामके प्रथम समयको प्राप्त होतें दर्शनमोहनीय अर अनंतानुबंधी चतुष्क इनके प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभागनके समस्तप तें उपशम होने तें औपशमिक तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकों पाइ (य) जीव उपशम सम्यग्दृष्टी होय है । उपशम सम्यग्दृष्टी भावकों प्राप्त होय है । तहां प्रथम समय विषै उपरितन स्थिति विषै तिष्ठता मिथ्यात्वका द्रव्य ताकों गुण संक्रमण भागहारका भाग देइ, एकभाग काढ़ि, ताकों असंख्यातका भाग देइ बहुभाग तो द्रव्य मिथ्यात्वरूप ही परणमावै है । बहुरि एकभावको असंख्यातका भाग देइ बहुभाग मिश्रमोहिनीय रूप परणमावै है, अर एकभाग सम्यक्त्वमोहिनी रूप परणमावै है । एसैं संख्यात आवलीप्रमाण संक्रमणका काल हैं । तहां पर्यंत मिथ्यात्वके द्रव्यकों समय--समय असंख्यात २ गुणों द्रव्य गुणसंक्रमण भागहारका भाग देइ देइ काढि काढि मिथ्यात्वरूप सम्यङ्मिथ्यात्व रूप परणमावै । बहुरि गुणसंक्रमणकालके अंतसमयपर्यंत मिथ्यात्व बिना अन्य सर्व कर्मनकी गुणश्रेणी वा स्थितिकांडकघात वा अनुभागकांडकघात पाइये है । बहुरि गुणसंक्रमणके अनन्तर अवशेषरह्या मिथ्यात्वका द्रव्य ताकों विध्यातसंक्रमण भागहारका भाग दिये जो प्रमाण आवै तितनें द्रव्यकों मिश्रमोहिनी, सम्यक्त्व--मोहिनी रूप परणमावै इहां विशुद्धता मंद भई तातैं बड़े भागहारको भाग दिया, द्रव्य थोड़ा आवै, तहां द्रव्यकों तिन--

रूप परणमावै, दर्शनमोहका उपशम करनेवाला जो जीव ताका मरण न होय है। बहुरि उपशम सम्यक्त्वके काल विषैं उत्कृष्ट छह आवली अर जघन्य एकसमय अवशेष रहैं, अनंतानुबंधी क्रोधादिकषाय विषैं एक कोईका उदय होतैं सम्यक्त्व कों विराध मिथ्यात्वकों न प्राप्त होय है बीचमें सासादन होय, यहां मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधीका उदय है सो या सासादनका जघन्य काल एकसमय, उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण है सो अपने योग्यकाल सासादन विषैं तिष्ठि फेरि नेम करि मिथ्यात्वकों प्राप्त होय हैं, जैसें वृक्ष तें टूटा फल नेम करि अपने अंतरालके कालकों बीचमें भोगि पृथ्वी विषैं आय पड़े है, तैसें सम्यक्त्वरूप वृक्ष तें टूट्यो कहिये परिणमन भयो अनंतानुबंधीकषायभावरूप जो आकाश ताकों प्राप्त भयो तहां अपने योग्य कालकूं भोगि मिथ्यात्वरूप भूमिका कों प्राप्त होय है। अर जो जीवकैं उपशमसम्यक्त्वके काल विषैं जो अनंतानुबंधीको उदय न आवै तो सासादन न होय है। बहुरि उपशमसम्यक्त्वको अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण हुया पाछे नेमकरि जीव संक्लेशताने प्राप्त होय, ताकरि अंतरायामको अंतके निषेकनतैं ऊपर निषेकन विषैं तिष्ठतो तीन प्रकार मिथ्यात्व, सम्यङ्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृतिरूप जो मिथ्यात्वको द्रव्य ताकों अपकर्षणभागहारका भाग देय, एकभाग प्रमाण द्रव्य काढ़ि ताविषैं बहुतसंक्लेशभाव होय तो मिथ्यात्वके द्रव्यकों तो उदयावलीका प्रथम समयका निषेक सों लगाय अंतरायामकों पूरि ऊपरले सर्वनिषेकन विषैं दे है। अर मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनीके द्रव्यनैं उदयावलीके बाह्य निषेकन विषैं दे है, अर अंतरायामकों मिथ्यात्वके द्रव्यसों पूरे है, जातैं उपशमसम्यक्त्वके कालसों अंतरायामको काल संख्यातगुणो है, तातैं अवशेष रह्यौ अंतरायामको काल ताको ज्योंका त्यों मिथ्यात्वके द्रव्यसहित करै है, सो तो जीव सम्यक्त्वसूं छुटि मिथ्यात्वगुणस्थानकों प्राप्त होय है। तहां विपरीत श्रद्धानी होय है, ताही काल तें धर्मरुचिका अभाव होय। जैसें ज्वरवालेकों मिष्टरस न रुचै, तैसें धर्मविषैं अरुचिताकों प्राप्त होय है। धर्म जो अनेकांतवस्तुका स्वभाव वा रत्नत्रय रूप सो रुचै नाहीं, अर जिसतें कोई जीवकों घाटि संक्लेशता होय सो जीव मिश्रमोहनीके द्रव्यने तो उदयावलीके प्रथमसमय तें लगाय सर्व अंतरायाम ने पूरि ऊपरि स्थिति विषैं दे है, अर मिथ्यात्व-

मोहनी सम्यक्त्वमोहनी के द्रव्य तैं उदयावलीका बाह्य निषेकनसौं लगाय अंतरायामने पूरि ऊपरास्थिति विषैं दे है, ताकूं सम्यक्त्वसूं छुटि तीसरो मिश्रगुणस्थान होय है । तहां मिश्रमोहनीका उदय होतैं जीव एक ही समयमें तत्व अर अतत्वको मिश्ररूप श्रद्धै है । जैसें दही गुड़ मिला हुवा और ही रसान्तरको प्राप्त होय है, तैसैं यहां सत्य–असत्य श्रद्धान मिला हुवा जानना, अर यातें भी कोई जीवकें संक्लेशता घाटि होय सो जीव सम्यक्त्वमोहनीके द्रव्यकों तो उदयावलीके प्रथमनिषेकसौं लगाय सर्व अंतरायाम नैं पूरि उपरस्थिति विषैं दे है, अर मिथ्यातमोहनी मिश्रमोहनीके द्रव्यकों उदयावली बाह्यका प्रथम निषेक सौं लगाय सर्व अंतरायामने पूरि उपरि स्थिति विषैं दे है, ताकैं सम्यक्त्वमोहनी को उदय होतैं क्षयोपशमसम्यक्त्वको अंगीकार करै है । तहां चल मल अगाढ़ रूप तत्वार्थकों श्रद्धै है अर सम्यक्त्व-मोहनीके उदयतैं श्रद्धान विषैं चपलपनो होय है, वा मल लागै है, वा शिथिलभाव होय है, परन्तु मूलश्रद्धानका घात न होय है, या करि ही जीव आप विशेष न जानता अज्ञातगुरुके निमित्ततैं आप असत्य श्रद्धानभी करै परन्तु यहां सर्वज्ञ की आज्ञा ऐसैं होय है ऐसैं जानि श्रद्धान करै तातैं सम्यग्दृष्टि होय है । अर जो कदाचित् कोई २ ज्ञातगुरु सूत्र तैं सम्यक्स्वरूप दिखावै अर हठादिक तैं श्रद्धान न करै तो तिसही काल तैं लगाय सो मिथ्यादृष्टि होय है ऐसें उप-शमसम्यक्त्वभावका स्वरूप कहा है । कैसा है उपशमसम्यक्त्वभाव ? अनादि को लागो जो महा उद्धत मिथ्यात्वनामा कर्म ताके उदयका अभाव करि प्रगट भया है । बहुरि कैसा है ? चल, मल, अगाढ़ दोषतें रहित निर्मल है । बहुरि कैसा है ? तोड़ी है संसारकी आगल जिननैं, अर सर्वसिद्धीको कारण है । बहुरि कोई जीव वेदक सम्यग्दृष्टि होय क्षयोपशमसकल चारित्रका ग्रहण करि उपशमश्रेणी चढ़नेकों सन्मुख होय, सो फेरि द्वितीय उपशमसम्यक्त्वकों करै है । तहां अप्रशस्त ऐसे ही तीन करण करे है । तहां अधः प्रवृत्तकरण विषैं समय २ अनंतगुणी विशुद्धता १ स्थितिबंधापसरण २ प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनंतगुणां बधता बंध करै ३ अप्र-शस्त प्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनंतवेंभाग करै ४ ऐसे चार आवश्यक करे । बहुरि अपूर्वकरण विषैं गुणश्रेणी

निर्जरा १ स्थितिकांडकघात २ अनुभाग कांडकघात ३ ए तीन आवश्यक करै अर अनिवृत्तिकरण विषैं उपशमकरण १ अर अंतरकरणादि विधान सर्व प्रथमोपशम सम्यक्त्ववत् करे । इहां विशेष इतना कि प्रथमोपशमसम्यक्त्व विषैं तो एक मिथ्यात्वको ही अन्तर करै हैं । अर द्वितीय उपशम सम्यक्त्व विषैं मिथ्यात्व १ सम्यङ्मिथ्यात्व २ सम्यक्-प्रकृतिमिथ्यात्व ३ इन तीन प्रकृतिका अंतर करै, और सर्व विधान समान जानना । बहुरि अनिवृत्तिकरणके अंत-समय विषैं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकों प्राप्त होय है । तहां और विधान तो समान है, प्रथम उपशमसम्यक्त्व विषैं गुणसंक्रमण (भागका) भागसहित मिथ्यात्वके द्रव्यकों अपकर्षण कर तीन प्रकृतिरूप करै था, इस विषैं विध्यातादि भाग जानना, ऐसा यह उपशमसम्यक्त्वभाव वेदक सम्यग्दृष्टी जीवकें उपशमसम्यक्त्वीके सन्मुख अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीवकें होय, सो द्वितीयोपशमसम्यक्त्व कहिये । उपशम सम्यक्त्वभाव वर्तमानभी सुखका कारण है अर आगामी स्वर्ग–मोक्ष का कारण है । यह उपशमसम्यक्त्वभावके गुणस्थान तो असंयतसों लगाय उपशांत कषाय एकादशमगुण-स्थान पर्यन्त आठ गुणस्थान विषैं पाइये, अर मार्गणा गति ४ जाति पंचेन्द्रिय १ काय–त्रस १ योग ४ मन का, ४ वचन का, औदारिक काययोग, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र, कार्माण १२, वेद ३ कषाय अनंतानुबंधी चतुष्कविना २१, ज्ञान—मति, श्रुत, अवधि ३, संयम—परिहारविशुद्धि विना ६, दर्शन केवलविना ३, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व-स्वकीय १, संज्ञी १, आहारक २, इनविषैं पाइये । इति श्रीभावदीपकाका उपशमभावाधिकारविषैं उपशमसम्यक्त्व-भावाधिकार प्रथम समाप्त भया । आगैं उपशमचारित्रभावाधिकार निरूपिये हैं—

दोहा—उपशम श्रेणीमांड के कियो मोह वेहाल । तोर जोर एकनि चढ़ै तिन पद ढोक त्रिकाल ॥१॥

उपशमचारित्रभाव, द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसहितभी होय है, अर क्षायिक सम्यक्त्व सहित भी होय, जातैं उप-शमश्रेणी द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टीभी मांडै अर क्षायिक सम्यग्दृष्टीभी मांडै । तहां अप्रमत्तगुणस्थानविषैं अत्यन्त परिणामन की विशुद्धतासहित होय, अनंतानुबंधीके चतुष्कविना अवशेष इक्कीस चारित्रमोहकी प्रकृति तिनकै उपशमा-

वने कौ उद्यम करे है, अन्य प्रकृतिनका उपशम होता नाहीं, तातैं तिनकैं उपशमकरण नाहीं है। तहां सप्तम गुणस्थानविषैं अधः प्रवृत्तिकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ये तीन करण करे है, अर स्थितिबंधापसरण १ क्रमकरण २ देशघातिकरण ३ अंतःकरण ४ उपशमकरण ५ एसैं आठकरण करै हैं याहीतैं आठ अधिकार चारित्र--मोहका उपशमविधानविषैं पाइये है। तहां अधः प्रवृत्तकरणका लक्षण अर ताकरि किये जे कार्य जैसें उपशमसम्यक्त्वकौं सन्मुख होतें कहे है तैसें ही जानने। बहुरि अपूर्वकरणके प्रथम समय विषैं स्थितिबंध अर स्थितिसत्व अंतःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण हैं, तहां विशेष इतना कि स्थितिबंध तैं स्थितिसत्व संख्यातगुणां हैं, यहां उदयावलीतें वांझि (बाह्य) गलितावशेष गुणश्रेणीका आरंभ भया, अर गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघात ए आवश्यक होय हैं, सो अपूर्वकरणके आदिसमयतें लगाय अंतसमय पर्यन्त संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण हैं। बहुरि अनिवृत्तिकरणकौं प्राप्त होय है तहां सर्वही कर्मनका उपशम १ निधत्ति २ निकाचन ३ इन तीनकरणका अभावभया सर्व ही कर्म उदीरणा, संक्रमण, अपकर्षण, उत्कर्षण करने योग्यभये, यहां पल्यका संख्यातवांभाग प्रमाणस्थितिबंधापसरण करतां संतां संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण करि अनिवृत्तिकरणके कालके असंख्यातवें भाग अवशेष रह्या तहां क्रमकरण होय है। क्रमकरण कहिये कर्मनका स्थितिबंध पूर्व जिस अनुक्रमतें होता था तिसही अनुक्रम करिभया, या भांति अनेक नाना अनुक्रम स्थापि बंध करै है, जैसें पूर्व मोहनीका स्थितिबंध अधिक होताभया अन्यप्रकृतिनका घाटि होता था अर कभी तिनके समान होय है एसा अनुक्रम स्थापैं हैं, अर कभी तिनतैंभी घाटि अनुक्रम स्थापै हैं, तिनतैं घाट स्थितिबंध करै है, उनका बाधि (ज्यादा) होय है ऐसैं अनेक अनुक्रमस्थापि जघन्यस्थिति चारघातियाकी अंतर्मुहूर्त वेदनीकी बारामुहूर्त नामगोत्र की आठमुहूर्त तैं दूनी बंध होन हैं, सो क्रमकरण कहिये ४ बहुरि देशघातिकरण करे है—घातियाकर्मनका शैल अस्थि दारु लता चतुःस्थान अनुभागबंध होता था ताकौं मेटि दारु, लता द्विस्थानबंध वा एक लताभागस्थान अनुभागबंध करै है, सो देशघातिकरण कहिये ५ बहुरि अन्तरकरण कहिये है—चारित्रमोहकी अनं-

तानुबंधचितुष्क विना इकवीस प्रकृतिका अंतरकरण करै है सूक्ष्यसांपराय गुणस्थानका अनंतवर्ती समय तैं लगाय उपशांतकषाय गुणस्थानका कालप्रमाण समयनि विषैं तिष्ठता चारित्रमोहनीकी इकईस प्रकृति तिनका द्रव्य ताका अंतर--करण करे है—कितनाक द्रव्य तो सूक्ष्मसांपरायका अंत पर्यन्त स्थापि जो प्रथम स्थिति जि (ति) न विषैं पूरकरि क्षीण कर दे हैं अर कितनाक द्रव्य उपशान्तकषायका अंतका अनन्तरवर्ती निषेकतैं लगाय उपरितन स्थितिविषैं दे है। अर उपशान्तकषायका कालप्रमाण निषेक मोहका द्रव्य रहित करै हैं सो अंतरकण कहिये ७। बहुरि उपशमनकरण करै है। उदीरणा होय उदय न आवै एसा करे हैं; प्रथम ही अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान आठ कषायनकों उपशमावै है, पीछे नपुं-सकवेद १, स्त्रीवेद १, हास्यादिक ६, पुरुषवेद १, संज्वलनक्रोध १, मान १, माया १, लोभ १ एसैं अनुक्रमसों उपश-मावै है सो उपशमन करण कहिये। बहुरि यहां ही पूर्वस्पर्धकनके अपूर्वस्पर्धक करै है, पूर्वस्पर्धकनकै अनन्तवैंभाग अनु-भागराखै है। बहुरि अनिवृत्तिकरणके अंतपर्यन्त लोभकषायकी सूक्ष्मकृष्टि करै है। अपूर्वस्पर्धकनके अनन्तवैंभाग अति-सूक्ष्म अनुभाग राखै है इत्यादि अनेक क्रिया अनिवृत्तिकरणविषै करतां संतां समाप्ति करै है। बहुरि सूक्ष्मसाम्पराय गुण-स्थानकों प्राप्त होय हैं—तहां सूक्ष्म है लोभकषायकी अनुभागशक्ति जिनविषैं, ऐसी सूक्ष्म प्रकृतिनकूं भोगवै हैं। बहुरि सूक्ष्मसाम्परायकों समाप्त करि उपशान्तकषाय गुणस्थानको प्राप्त होय है। तहां यथाख्यातचारित्रकों अंगीकार करै है। मोह-भाव रहित होय है, सिद्ध-समान आत्मीकसुख अवस्थाकों प्राप्त होय है। फिर तातैं पड़ै है, सो पड़ना दोय प्रकार ही है, भवक्षयतैं १, कालक्षयतैं २, जो आयुका अन्त होतैं मारणकों पाय गिरै तो देवगतिकों प्राप्त होय है। तहां असंयत गुण-स्थान होय, सो तो भवक्षयतैं पड़ना होय १, अर जहां उपशांतकषाय गुणस्थान काल पूरा भयां पड़ना होय, सो कालक्षय तैं पड़ना भया २, इनबिना और कोई संक्लेशादि पड़नेका कारण नाहीं, कालक्षयतैं गिरै है सो अनुक्रमतैं गिरै है प्रथम उपशान्तकषायतैं सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानकों प्राप्त होय, तहां सूक्ष्मलोभकों भोगवै है, तहां ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ४, अन्तराय ५, उच्चगोत्र १, यशस्कीर्ति १। इन सोलह प्रकृतिनका बंध ते अभावभयाथा सो बंध होने लगा, सो तिस

स्थानक जितना बंध करै था, तिस स्थानकतैं दूना स्थितिबंध होने लगा, तैसें ही अनुभागबंध अप्रशस्तप्रकृतियोंका अनन्तवें भाग समय २ करै था, सो समय २ अनन्तगुणां होनेलगा। अर प्रशस्तप्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनन्तगुणांबंध होता था, सो अनन्तवें भाग होने लगा। बहुरि अनिवृत्तिकरणकों प्राप्त होय तहां उपशमनकरणका अभाव होय है, तहां संज्वलनचतुष्क अर पुरुषवेदका उदय होय है, तहां बादर अनुभागसहितनकों भोगवै है। बहुरि देशघातियाकरणको अभाव होय, चतुःस्थानरूप अनुभागबंध करै हैं। बहुरि क्रमकरण उलटा होय हैं, चढ़तां जिस अनुक्रमसों स्थितिबंध करै था, तिसतै उलटै क्रमतें करने लगा, स्थितिबंधापसरण विपरीत होय, स्थितिबंध घाटि करे था सो अधिक अधिक करनेलगा, तैसे ही स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात विपरीत होनेलगा, पहले स्थितिअनुभाग घटाय २ कांडक करै था सो अधिक अधिक स्थितिअनुभागसहित कांडक करने लगा। बहुरि गुणसंक्रमण, गुणश्रेणी निर्जरा असंख्यातगुणां होता था सो समय २ प्रति असंख्यातवें भाग होने लगा। इत्यादि उपशमश्रेणी चढ़तां जो क्रिया होती थी सो उतरतां सर्व क्रिया विपरीत होय है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका अभाव होय, अपूर्वकरणकों प्राप्त होय है, बहुरि अपूर्वकरणका अभावकरि अधःप्रवृत्तकरण विषैं आवै। यहां पर्यन्त तो अनुक्रमतें उतरे, यहांते फेर नेम नाहीं, फेर विशुद्धता बाधै तो फेर श्रेणी मांड दे, ताकरि ऊपरके गुणस्थानकों प्राप्त होय, एक जीव एक पर्यायमें बहुत मांडै, तो दोयबार उपशमश्रेणी मांडे, अर अनेक पर्यायन विषैं चार बार मांडे, प्रत्याख्यानका उदय आय जाय तो देशसंयतगुणस्थान होय है, अर अप्रत्याख्यान-चतुष्कका उदय आय जाय तो असंयतकों प्राप्त होय, अर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका उदय आय जाय तो सासादन होय जाय इत्यादि नेम नाहीं। बहुरि क्रोधादि चार कषाय विषैं एक कोई कषाय अर तीन वेदन विषैं एक कोई वेद सहित श्रेणी मांडे है, तातैं श्रेणी मांडनेवाला बारा प्रकार होय है, सो ए तो लोभकषाय पुरुषवेद सहित श्रेणी मांडनेवालेकी अपेक्षा संक्षेपकथन लिखा हैं, अन्य प्रकार श्रेणी मांडनेवाला के कोई २ क्रियाविशेष है, सो सर्व विधानका विशेषकरि कथन लब्धिसार नामा ग्रन्थतें जानना। इस प्रकार उपशम चारित्रभावका कथन किया सो उपशमचारित्र भाव जगत्पूज्य वर्तमान

भी सुखरूप है अर आगामी सौधर्मादि स्वर्गतें लेय सर्वार्थसिद्धि पर्यन्तकूं कारण है, अर परम्पराय मोक्षकूं कारण है। उपशमचारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरणतें लेय उपशांतकषाय पर्यन्त चार गुणस्थानविषैं पाइये है, अर मार्गणा--विषैं—गति मनुष्य १ जातिपंचेन्द्रिय १ काय—त्रस १ योग मन के चार ४ वचन के चार ४ अर औदारिककाय--योग १ एसें ९, कषाय संज्वलनचतुष्क ४ हास्यादिक ६, बेद तीन ३, ज्ञान केवलविना ४, संयम सामायिक छेदो--पस्थापना सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यात ४, दर्शन केवलविना ३, लेश्या शुक्ल १, भव्य १, सम्यक्त्व उपशमक्षायिक २, संज्ञा १, आहारक १ इन विषैं पाइये है । इति श्रीभावदीपकाका उपशमभावाधिकारविषैं उपशमचारित्रभावाधिकार दूजा समाप्त भया । एसें दोय अधिकारन विषैं उपशमभावाधिकार छट्ठा पूर्णभया ६ ।

अथ क्षायिकभावाधिकार प्रारम्भते—जे कर्म के क्षय होतें आत्मा विषैं भाव प्रगट होय हैं सो क्षायिकभाव कहिये । इस क्षायिकभाव के नव भेद हैं केवलज्ञान १ केवलदर्शन २ क्षायिकसम्यक्त्व ३ क्षायिकचारित्र ४ बहुरि दान १ लाभ २ भोग ३ उपभोग ४ वीर्य ५ ए पांच क्षायिकलब्धि ५ एसैं नव भाव हैं तिन विषैं प्रथमही क्षायिक सम्यक्त्वभावाधिकार लिखिये है ।

दोहा:—अनंतानुबंधीचतुष्क दर्शनमोहमहंत । तिनको क्षयकरि धारि बल चारितमोह दहंत ॥१॥
तिनके पद मन वचथकी सीस धारि परिणाम । करूं त्रिकालमंगल करन सवविधि पूरनकाम ॥२॥

जो मनुष्य कर्मभूमि विषैं उपज्यो होय सो केवली श्रुतकेवली के पादमूल विषैं तिष्ठतो होय सो ही दर्शन--मोहकी क्षपणाको प्रारंभक होय है, यातैं अन्यत्र ऐसी विशुद्धता न होय है । अधः करण के प्रथमसमय तें लगाय जावत मिथ्यात्वमोहनी अर मिश्रमोहनी को द्रव्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होय संक्रमण करै, तावत् अन्तर्मुहूर्त के दर्श-नमोह की क्षपणा को प्रारंभक कहिये, सो दर्शनमोह की क्षपणा के पहले तीन करण विधान करि अनंतानुबंधीचतु--ष्कको विसंयोजन करै, तिनके द्रव्य कों चारित्रमोह की अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलनरूप बाराकषाय छह हास्या-

दिक तीन वेद इन प्रकृतिनविषैं गुणसंक्रमणभागहार को भाग देइ २ अपकर्षण करि समय २ असंख्यातगुणां क्रमने लियां संक्रमण करै—तद्रूप करैं एसा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त संक्रमण विधान करि परिणमावैं, अनंतानुबंधी चतुष्क कों अनिवृत्तिकरणके अंत में अभाव करैं, ताका नाम विसंयोजन कहिये, सो विसंयोजन असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, वा अप्रमत्त चार गुणस्थानवर्ती बेदकसम्यग्दृष्टी जीव करे है। तहां पहले अधः प्रवृत्तकरण करै, तहां समय २ अनंतगुणी परिणामन की विशुद्धता करतां संतां सर्वविधान स्थितिबंधापसरण अनुभाग बंधापसरणादि सर्व-क्रिया करतां संतां संख्यातहजार स्थितिकांडकघात अनुभाग कांडकघात इत्यादि आवश्यकादि क्रिया करते संतां अपूर्वकरण काल अन्तर्मुहूर्त पूरा करि अनिवृत्तिकरणने प्राप्त होय। यहां गुणसंक्रमण अनंतानुबंधी का ही है, और प्रकृतिन का नाहीं है। तहां अनंतानुबंधीका स्थितिसत्व ताका चार पर्व स्थितिघटने की मर्यादा करि चार विधान होंय हैं अपूर्वकरण के प्रथम समय विषैं अंतः कोड़ाकोड़ी प्रमाण कर्मन का स्थितिस्वरूप ताकों अनेक स्थितिकांडक-घात करि घटाय अनिवृत्तिकरणके पहले समय अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्व पृथक्त्वलक्षसागर प्रमाण राखै, एक पर्व तो यह भया १-पीछे संख्यात हजार स्थितिखन्डभये असंज्ञीपंचेन्द्रियका स्थिति समान हजार सागर राखै, पीछे फेर संख्यातहजार स्थितिखन्ड भये चौइन्द्रियका स्थितिसत्व समान सौ सागर राखै, एसै ही तेंद्रियका पचास सागर, बेंद्रियका पचीस सागर, एकेंद्रियका एक सागर प्रमाण स्थितिसत्व रहे है। बहुरि पल्य प्रमाण स्थितिसत्व रहे है, यह दूसरा पर्व भया २। बहुरि हजारों स्थितिखन्ड होतां संतां पल्यका असंख्यातवांभाग मात्र स्थितिसत्व रहै, ए तीसरा पर्व भया ३। बहुरि संख्यात हजार स्थितिखन्ड भये उच्छिष्टावली हैं नाम जाका एसा आवलीमात्र अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्व रहै है सो चौथा पर्व भया ४। सो यहां पर्यन्त तो समय २ असंख्यात असंख्यातगुणां द्रव्य गुणसंक्रमणकरि अनन्तानुबन्धीकों इकईसप्रकृति रूप संक्रमणकरि परिणमावै। बहुरि उच्छिष्टावली मात्र निषेकनके द्रव्यकों एक एक समय विषैं एक एक निषेककों बारह कषाय, नो कषायरूप परिणमाय अभाव करै है, एसैं अनंतानुबंधीको विसंयोजन करै है, पीछे अंतर्मुहूर्त काल विश्रामकरि

करि अन्य क्रिया करि, तहाँ पीछे बहुरि तीन करण करि अनिवृत्ति करण काल विषैं मिथ्यात्व १ मिश्रमिथ्यात्व २ सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व ३ इन तीनप्रकार मोहनी कों क्रम तें नाश करे हैं सो ही कहिये है दर्शनमोह की क्षपणाके सन्मुख होत संतै जीव समय २ अनंतगुणी विशुद्धतायुक्त होय दर्शनमोह के उपशमन विषैं जैसें विधान कह्या तैंसें सर्वजानना। अधःप्रवृत्तकरण करि पीछे अपूर्वकरण कों प्राप्त होय, अनिवृत्तिकरण कों प्राप्त होय है, तहां मिथ्यात्वमोहनी अर मिश्रमोहनी के द्रव्य कों गुणसंक्रमण करि सम्यत्त्व मोहनी रूप परिणमावे है, यहां दर्शन-मोह की स्थितिरूप पृथक्त्व लक्षसागर प्रमाण है । बहुरि यातैं परै दर्शनमोह की स्थिति पल्य प्रमाण रहैं तहां पर्यन्त स्थितिकांडकायाम का प्रमाण पल्यके संख्यातवें भाग मात्र है, तहां संख्यातहजार संख्यातहजार कांडक करतैं २ असंज्ञीपंचेन्द्रिय, चौन्द्रिय, तेइन्द्रिय, वेंन्द्रिय, एकेन्द्रियप्रमाण हजार सागर, सौ सागर, पचाससागर, पचीससागर, एकसागर १००—५०—२५—१ सागर प्रमाण दर्शनमोह की स्थिति सत्व राखै है, एसैं चार पर्व करै हैं । तहां दर्शनमोह के द्रव्यकों उदीरणा कर असंख्यात २ समयप्रवद्ध प्रमाण द्रव्य उदयावली विषैं दीजिये है। बहुरि संख्यातहजार स्थितिकांडक भयें मिथ्यात्वकी स्थिति तहां उच्छिष्टावलमात्र अवशेष रहै है । बहुरि संख्यातहजार स्थितिकांडक भयें मिथ्यात्वकी स्थितिके अंत कांडककी स्थिति अष्ट वर्षप्रमाण रहै है। बहुरि मिथ्यात्व प्रकृति का अंतकाडक की अंतफाली हो है तासमैं मिश्रमो-हनी की स्थिति उच्छिष्टावली मात्र अवशेष रहै है, सम्यत्त्वमोहनी की स्थिति अष्टवर्षप्रमाण रहै है। बहुरि मिथ्यात्व प्रकृति के अंतकांडक की अन्तफाली जिससमय मिश्रमोहनी विषैं संक्रमण होय है तिस समय मिथ्यात्व का तो अभाव होय है, अर मिश्रमोहनी का द्रव्य उत्कृष्ट होय है, अर मिश्रमोहनी के अंतकांडक की अन्तफाली को द्रव्य सम्यत्त्वमोहनी विषैं संक्रमण होय है, तिससमय मिश्रमोहनी को अभाव होय हैं, तिससमय सम्यक्त्वमोहनींका द्रव्य उत्कृष्ट होय है, किंचि-दून द्व्यर्द्धगुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण होय हैं। बहुरि गुणश्रेणी, गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघातादि अनेक क्रिया होत संते सम्यक्त्व मोहनी की स्थिति अन्तर्मुहूर्त रहै हैं, तहां सर्वक्रिया का अभाव होय है, अर अनिवृत्तिकरणकी समाप्ति

होय हैं, गलितावशेष गुणश्रेणीआयाम कृतकृत्यबेदक का कालप्रमाण रहै है । तहां यह जीव कृतकृत्यबेदक सम्यग्दृष्टी होय है, जातै किये हैं करने योग्य कार्य जानैं तातैं कृतकृत्यबेदक नाम पावै है । यहां पर्यन्त दर्शनमोहकी क्षपणा को प्रारम्भ करै हैं, यहांपर्यन्त मरण नाहीं है, अर कृतकृत्यबेदककाल में आयु का अंत होय तो मरण करै, अब जो कृतकृत्यबेदक काल विषैं ही अपने आयु के अन्त के वश थकी मरण कौं प्राप्त होय, तो सम्यक्त्वग्रहण तें पहले जो आयु बांधा था ताकैं वश तैं मरण करि चारों गतिन विषैं उपजे हैं, कृतकृत्यबेदककाल के चारभाग एक २ अंतर्मुहूर्तमात्र कहिये । तहां प्रथम भाग विषैं मूवा जीव देवगति बिषैं ही उपजैं । बहुरि दूसरे भाग विषैं मूवा जीव देव मनुष्य दोऊ गतिविषैं उपजैं । बहुरि तीसरे भाग में मूवा जीव मनुष्य देव तिर्यंच तीनगतिविषैं उपजै, अर चौथेभागमें मूवा जीव चारोंगतिन विषैं उपजै । जो गति पूर्वैं बांधी होय ताहीके अनुसार परिणाम होंय, तिनके योगकालविषैं मरण होय । बहुरि अधः करणके प्रथम समय विषैं दर्शनमोह की क्षपणा का आरंभक जीव के पीत पद्म शुक्लेश्या जो होय सो समय २ अनंतगुणी विशुद्धता के क्रम करि अनिवृत्तिकरण के अन्तसमय विषैं तिस लेश्या का उत्कृष्ट सम्पूर्ण होय, ताकैं पूर्वैं देवायु बंधी होय, ताकै चारों ही भाग में मरै तो लेश्या पलटै नाही, सर्वभाग का मूवा कल्पवासी देव होय, अर जिनकै तीन अन्य आयु बंधी होय, सो दूसरे तीसरे चौथे भाग में मरै, सो शुभ लेश्या की क्रम तैं हानि होय करि मरण होय, ता समय कापोत लेश्या का जघन्य अंश होय, जातैं यहां जाकै पूर्व मनुष्य तिर्यंच आयु बंधी होय तो भोगभूमियां मनुष्य तिर्यंच होय, अर जाकै पूर्व नरकायु बंधी होय सो चौथे भाग में मरण करि प्रथम नरक विषैं उपजै, आगै न उपजै । सो जा गति विषैं उपजै, ता गति विषैं निष्ठापन करि क्षायिकसम्यक्त्व कों प्राप्त होय है । अर मरन नहीं होय तो तहां ही अंतर्मुहूर्त-कालप्रमाण कृतकृत्यबेदक दशा कों भोगि निष्ठापन करि क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त होय, अर एसैं अनंतानुबंधीचतुष्क दर्शनमोहत्रिक इन सात प्रकृतिन के क्षय तैं क्षायिक सम्यक्त्व होय है । सो कैसा है क्षायिक सम्यक्त्व ? निःकम्प है, निश्चल है, बहुरि निर्मल है, शंकादिमल रहित है, अक्षय है, शिथिलता के अभाव तैं गाढ़ा (ढ़) है अनंत कहिये अन्त

रहित है, दर्शनमोह के क्षय होतें क्षायिकसम्यग्दृष्टी जीव तिसही भव विषैं वा तीसरे भव विषैं, वा चौथे भव विषैं, नेम करि सिद्धपद कों पावै। एसा यह क्षायिकलब्धिरूप क्षायिकसम्यक्त्वभाव है सो ए भाव वर्तमान विषैं भी सुख के कारण हैं, अर आगामी मोक्षसुख के कारण हैं। बहुरि गुणस्थान तो असंयत सो लगाय अयोगीपर्यन्त ग्यारहगुणस्थान पर्यन्त पाइये हैं। मार्गणा—गति ४ जातिपंचेन्द्रिय १ काय—त्रस १ योग १५ वेद ३ कषाय २१ ज्ञान सुज्ञान ५ संयम ७ दर्शन ४ लेश्या ६ भव्य १ सम्यक्त्व स्वकीय १ संज्ञी १ आहारक १ इनविषैं पाइये।

इति श्रीभावदीपिका का क्षायिकभावाधिकार विषैं क्षायिकसम्यक्त्वभावाधिकार पूर्णभया १ इति

अब क्षायिक चारित्रभावाधिकार लिखिये है

दोहा:—मोह अरी को क्षय करन ध्याये सिद्ध सुधीर। मार लियो क्षण एक में नमूं महँत बरवीर ॥१॥

चारित्रमोहकी इकईस प्रकृतिनका क्षय होतसंतैं जो भाव निपजै ताका नाम क्षायिकभाव चारित्र कहिये। चारित्रमोह की क्षपणा विषैं षोड़श करण होय हैं १६ अधः करण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ बंधापसरणकरण ४ सत्वापसरणकरण ५ क्रमकरण ६ अष्टकषाय षोड़शप्रकृतिनका क्षपणाकरण ७ देशघातिकरण ८ अन्तरकरण ९ संक्रमणकरण १० अपूर्वस्पर्धककरण ११ बादरकृष्टिकरण १२ सूक्ष्मकृष्टिकरण १३ कृष्टिअनुभवनकरण १४ ज्ञानावरणादिकर्मक्षपणा करण १५ योगनिरोधकरण १६ इति षोड़शकरण।

मोहकी सप्तप्रकृतिनका नाश करि क्षायिकसम्यग्दृष्टी चारित्रमोहकी इकईस प्रकृतिन का सत्व सहित होय अप्रत्याख्यानचतुष्क ४ प्रत्याख्यानचतुष्क ४ संज्वलनचतुष्क ४ हास्यादिक ६ वेद ३ सो जीव संसारमें जघन्य रहै तो अंतर्मुहूर्त अधिक न रहै, अर उत्कृष्ट रहै तो अंतर्मुहूर्त सहित अष्टवर्ष करि हीन दोय कोड़ि पूर्व अधिक तेतीससागरकालप्रमाण रहै, अधिक न रहै, सो जीव कोई कालमें चारित्रमोहकी क्षपणाकों योग्य जे विशुद्धपरिणाम तिनकरि सहित होय। कैसें होंही? मुनिपद को अंगीकार करि अप्रमत्तगुणस्थानको प्राप्त होंही। बहुरि अप्रमत्तसौं प्रमत्त विषैं हजारों

वार गमनागमन करै, महामुनि सो ही भये चक्रवर्ती सो यथाख्यातचारित्ररूप एक छत्रराज करने के अर्थि क्षपकश्रेणीरूप दिग्विजय करने के सन्मुख होत संतां प्रथम सातिशय अप्रमत्तगुणस्थान विषैं अधः करणरूप प्रस्थान करै हैं। कैसा है क्षपणकरण ? अतिविशुद्ध है परिणामजाका चार मन के योगन विषैं कोई एक मनयोग, चार वचन योगन विषैं कोई एक वचनयोग होय, अर औदारिक काययोग होय । बहुरि कैसा है ? संज्वलन चार कषायन के विषैं कोई एक हीयमान कषाय होय । बहुरि कैसा है ? बहुत मुनिन कौं प्रसिद्ध उपदेश करता श्रुतज्ञान उपयोग होय, बहुरि शुक्ल-लेश्या होय, बहुरि तीन वेदन विषैं कोई एक वेद होय, द्रव्यपुरुषवेद ही होय, बहुरि कैसा होय ? दर्शनमोह की प्रकृति ३ अनंतानुबंधी चतुष्क ४ भुज्यमानमनुष्यायु बिना तीन आयु ३ ऐसी दशप्रकृतिनका सत्व रहित होय । बहुरि जहां कर्मन की स्थितिसत्व, अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण होय, बहुरि अनुभागप्रशस्तप्रकृतिन का गुड़, खन्ड, शर्करा, अमृत रूप चतुःस्थानिक अर अप्रशस्तप्रकृतिन विषैं घातिया का दारु, लता, अर अघातिया का निंब, कांजीर रूप द्विस्थानक सत्व होय है। प्रदेशसत्व अजघन्य व अनुत्कृष्ट है इत्यादि भावनरूप सामग्रीयुक्त जीव चारित्रमोह का क्षपणाको आरंभ करै है, सो प्रथम अधः प्रवृत्ति करण करै है। तहां प्रशस्तप्रकृतिनका समय २ प्रति अनंत गुणा क्रम लिये विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होय है, समय २ अनंतगुणां क्रमलिये चतुः स्थानिक अनुभागबंध करै हैं, अप्रशस्तप्रकृतिनका अनन्तवांभाग क्रमलिये द्विस्थानक अनुभागबन्ध करै है। बहुरि पूर्वस्थितिबन्धमें पल्यका संख्यातवांभाग मात्र स्थितिबन्ध घटाय एक अन्तर्मुहूर्तकाल पर्यन्त समय २ समान बन्ध होय, सो यह एक स्थितिबन्धापसरण भया। ऐसैं संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण अधः प्रवृत्तकरण विषैं होय हैं। इति अधःप्रवृत्तकरण।

आगे अपूर्वकरणका वर्णन करिये है—यहां पृथक्त्ववितर्क वीचारनामा शुक्लध्यानको प्रथम पाद प्रगट होय है। बहुरि यहां गुणश्रेणी १, गुणसंक्रमण २, स्थितिखंडन ३, अप्रशस्तप्रकृतिनका अनुभागखन्डन ४। ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि अधःप्रवृत्तकरणके अन्तसमय विषैं जो स्थितिबन्ध होता था तातैं पल्यका संख्यातवांभाग घटता और ही

स्थितिबंधापसरण को प्रारंभ होय है । बहुरि गुणश्रेणी आयाम का प्रमाण अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, क्षीणकषाय इन चार गुणस्थानन का मिलाया हुवा काल के प्रमाण ते साधिक है, सो उदयावली तें बाह्य गलितावशेषरूप जो एहु (?) गुणश्रेणीआयाम ता विषैं गुणश्रेणी का अपकर्षण किया द्रव्य का असंख्यातगुणां क्रम नें लियें समय २ विषैं निक्षेपण करै है । बहुरि गुणसंक्रमण करै है, जिन प्रकृतिनका यहां बंध न पाइये ऐसी जे अप्रशस्तप्रकृति तिनका द्रव्य समय २ असंख्यातगुना क्रम लिये तिनका यहां बंध पाइये ऐसी जे प्रशास्तप्रकृति तिनके विषैं संक्रमण करे है तद्रूप परिणमै है, जैसें असातावेदनीका द्रव्य सातावेदनी रूप परिणमै, एसें ही अन्य प्रकृतिनका जानना । बहुरि स्थिति-कांडक घात करै है, ताका आयाम पल्य के संख्यातवेंभाग मात्र है, तथापि जघन्य तें उत्कृष्ट संख्यातगुणा है । बहुरि अनुभागकांडक घात करै हैं, एक स्थितिकांडकघात का कालविषैं संख्यातहजार अनुभागकांडक घात होय है, सो एक २ अनुभागकांडक विषैं अनुभागसत्व अनंतवेंभाग २ अप्रशस्त प्रकृतिन का खंड करि राखै है, प्रशस्त प्रकृतिन का अनुभागखंड नेम तें न होय है, जातैं विशुद्धपरिणामन तैं शुभप्रकृतिनके अनुभागका घटावना संभवै नाहीं । इति अपूर्वकरण ।

अब अनिवृत्तिकरण कहिये हैः—इहां अपूर्वकरण के अन्तसमय तें घटता और ही स्थितिकांडक अनुभागकांडक घात होय हैं । बहुरि यहां अप्रशस्त प्रकृतिन को उपशम १ निधत्ति २ निकाचना ३ इन तीन करणनि का अभावभया अब सर्व ही कर्म उदीरण, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण करने योग्य भये । अब क्रमकरण कहिये है—(नि) वृत्तिकरण विषैं संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण भयें, जहां अनिवृत्तिकरणके काल का संख्यात बहुभाग तो व्यतीत होय अर एक संख्यातवांभाग अवशेष रहै, तहां कर्मन का स्थितिबंध असंज्ञी पंचेन्द्रिय समान हजार सागर होय । बहुरि संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण होतां होतां चौन्द्रियप्रमाण सौ सागर १००, तेंद्रिय प्रमाण पचाससागर ५०, बेंद्रिय प्रमाण पचीससागर २५, एकेंद्रियप्रमाण एकसागर १ । तहां पर्यन्त तो कर्मनका स्थितिबंध पूर्वोक्त प्रकार भया, दर्शनमोहतें चारित्रमोहका चार सातवां भागमात्र, ज्ञानावरणादि चार प्रकृतिनका तीनसातवां भागमात्र, नामगोत्रका दोयसातवां भागमात्र अनुक्रम था

सो भया, जातैं कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थितिबंध दर्शनमोह की सत्तर कोड़ाकोड़ीसागर की बांधै, तहां नेम करि चारित्रमोह की चालीसकोड़ाकोड़ी, ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनी, अन्तराय चार कर्मनकी, तीसकोड़ाकोड़ी, नामगोत्रकी बीस कोड़ाकोड़ी सागरकी बंधैं । ताही अनुसार जहां दर्शनमोहकी जेती स्थितिबंध होय, ताकों सातका भाग दीजै, जोप्रमाण आवै, ताकौं सात कर गुणे जो प्रमाण आवै, तितनी दर्शनमोहकी, अर चार करि. गुणैं जो प्रमाण आवै तितनी चारित्र मोहकी, अर तीन करि गुण्यां जो प्रमाण होय सो तीसयनिकी, अर दोय करि गुण्यां जो प्रमाण आवै सो बीसयनि की स्थितिबंध होय है, सो यहां पर्यन्त तो एसा ही अनुक्रम रहा । यहां पीछे संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण, और न (?) भये तहां बीसयन का पल्य मात्र स्थितिबधभया, तहां तीसयनका डयोढ़ा चारित्रमोहका दूना ऐसें अनुक्रमसों स्थितिबंध होने लगा, एसैं अनेक प्रकार अनुक्रम पलटि स्थितिबंध होय है, एसा ही स्थितिसत्वका अनुक्रम होय है । बहुरि ज्हां पल्य का संख्यातवांभाग प्रमाण स्थितिबंध होय, तहां असंख्यात समय प्रबद्धनकी उदीरणा होय है ।

आगै क्षपणाधिकार कहिये है—अनिवृत्तिकरणके क्षपणा भागन विषैं प्रथम भागमें स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला ए तीन तो दर्शनावरणी, नरकगति १, नरकगत्यानुपूर्वी १, तिर्यग्गति १, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी १, एकेंद्रिय १, वेंद्रिय १, तेंद्रिय १, चौंद्रिय १ ए चार जाति अर आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण ये तेरह नामकी, एसै सोलह प्रकृति के सत्वका अभाव भया । बहुरि दूसरे भागमें अप्रत्याख्यान प्रत्यारव्यान आठ प्रकृति चारित्रमोहकी सत्वका अभाव भया । बहुरि देशघातिकरण कहिये हैं—मनःपर्याय ज्ञानावरणीकूं आदि देय बारह प्रकृति पूर्वैं द्विस्थानगत सर्व-घाति अनुभागबन्ध होता था, अब स्थानगत देशघातीबन्ध होने लगा । आगैं अन्तरकरण कहिये है—देशघाती करणतें संख्यात हजार स्थितिकांडक भयैं चार संज्वलन अर नव नो कषाय इन तेरह प्रकृतिनका अन्तर करै हैं, औरनका अन्तर न होय है, नीचले ऊपरले निपेकनकों छोड़ि अन्तर्मुहूर्तमात्र बीचके निषेकनका अभाव करना सो अन्तरकरण जानना, सो एक स्थितिकांडकोत्करण मात्र काल विषैं अन्तर कों पूर्ण करै है । संज्वलन चतुष्क विषैं कोई एक कषाय, अर तीन वेदन

विषैं कोई एक वेदसहित श्रेणी मांडै ते तौ उदयप्रकृति हैं, तिनकी तौ अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथमस्थिति पावै, अवशेप जिनका उदय न पाइये ऐसी ग्यारह प्रकृति तिनकी आवलीमात्र प्रथमस्थिति स्थापै सो वर्तमान समय सम्बन्धी निषेकतैं लगाय प्रथमस्थिति प्रमाण निपेकनकों नीचे छोड़ि तिनके ऊपरके निषेकनका अन्तर करैं, तिन अन्तररूप निषेकनके द्रव्यकों अन्तरकरण कालके प्रथम समयतैं लगाय अन्तरसमय पर्यन्त समय २ असंख्यातगुणां क्रमने लियां अंतर करै है, तिन कितनेक प्रकृतिनके द्रव्यकों प्रथम स्थिति विषैं दे है, अर कितनेक प्रकृतिनके द्रव्यकों अन्तरकरणके अन्तसमयके अनन्तरवर्ती समयतैं लगाय उपरितन स्थितिविषैं दे है, अर कितनीक प्रकृतिनका द्रव्य प्रथमस्थिति वा उपरितनस्थिति दोनों विषैं दे है। अन्तर्मुहूर्तकालमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरायाम मोहिनीका द्रव्यरहित करै। इति अन्तरकरण।

अब संक्रमणकरण कहिये है——यहां सात करणका प्रारम्भ युगपत् होय है, मोहिनीका बन्ध और उदय तो केवल लताभागरूप होता भया, दोय करण तो ए भये २, अर मोहिनीका स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवांभाग प्रमाण होता था सो घटि संख्यातवर्ष मात्र होने लगा ३, बहुरि मोहनीकी प्रकृतिनका पूर्वैं जहां तहां सजाती प्रकृतिन विषै संक्रमण होता था सो आनुपूर्वी संक्रमण होनेलगा ४। बहुरि पूर्वैं लोभका अन्य प्रकृतिन विषैं संक्रमण होता था अब न होय ५। बहुरि नपुंसकवेदको आव्रतसंक्रमणकर याकों अन्य प्रकृतिरूप परिणमाय नाशकरनेका उद्यमी भया ६। बहुरि पूर्वैं कर्म बंधे पीछे आवली व्यतीत भयें ही उदीरणा होती थी, अब छह आवली व्यतीत भये पीछे ही उदीरणा होय ७। स्त्रीवेद नपुंसकवेदका द्रव्य तो पुरुषवेद विषैं संक्रमण होय है, पुरुषवेद छह हास्यादिक ऐसैं सात नो कषायनके द्रव्य संज्वलन क्रोध विषैं संक्रमण करै है। बहुरि क्रोध-मान विषैं, मान-माया विषैं मायाकालोभ विषैं संक्रमण होय है ऐसैं प्रकृतिनका द्रव्य अन्यअन्य प्रकृतिन संक्रमण होय है, आप नाशकों प्राप्त होय, येहु आनुपूर्वी संक्रमण जानना। बहुरि जहां बत्तीसवर्ष मात्र स्थितिबन्ध होने लागै तहां स्थितिबन्धापसरण अन्तर्मुहूर्तमात्र है। बहुरि अपूर्वस्पर्धकविधान कहिये——कर्मरूप परिणये जे पुद्गलपरमाणूं सो एक २ परमाणु विषैं अपने अपने रस देनेकी शक्तिके अविभाग प्रतिच्छेद अनन्तानन्त हैं परंतु अधिकहीन प्रमाणकों लिये हैं सर्व ही

परमाणुन विषैं अविभागप्रतिच्छेद समान नाहीं, तातैं अनेक नानाप्रकार गणनारूप शक्तिका अविभाग प्रतिच्छेदकों धरैं परमाणु सो वर्ग कहिये। तहां समान अविभाग प्रतिच्छेद के धारक वर्गनके समूहका नाम वर्गणा कहिये, जातैं एक एक वर्गणा विषैं अनंतानंतवर्ग हैं, वर्गणानके समूहका नाम स्पर्धक कहिये। एक २ स्पर्धक विषैं अनन्तवर्गणा हैं। जिस वर्ग विषैं घाट सों घाट शक्तिके अविभागप्रतिच्छेद होंय सो जघन्यवर्ग कहिये। जघन्यवर्गके समूह का नाम जघन्यवर्गणा कहिये। जघन्यवर्गतें एक २ अविभागप्रतिच्छेद जिन वर्गन विषैं बधता होय तिनके समूहका नाम द्वितीयवर्गणा कहिये। बहुरि उसतें भी एक २ अविभागप्रतिच्छेद जिन वर्गणि विषैं बधता होय तिनके समूहका नाम तृतीय वर्गणा कहिये। ऐसैं अनंतवर्गणा होंय। बहुरि जहां जघन्य वर्गणा विषैं जितने अविभागप्रतिच्छेदकों धरैं वर्ग हैं तिनतैं दूणां अविभाग-प्रतिच्छेद जिनवर्गन विषैं पाइये तिनके समूहकों धारैं द्वितीय स्पर्धककी जघन्य आदि वर्गणा हैं। इहांतैं आगै दूसरे स्पर्धकका आरम्भ भया यहां पहली २ प्रथमस्पर्धककी वर्गणा कहिये—एसैंही द्विगुणां, तिगुणां, चौगुणां, पंचगुणां इत्यादि प्रमाणकों धऱ्यां जघन्य वर्गनतैं जहां जहां वर्गनका समूहरूप वर्गणा होय तहां तहां अन्य २ स्पर्धक जानना। एसैं प्रथम स्पर्धकका नाम जघन्यस्पर्धक कहिये, अर अंतके स्पर्धकका नाम उत्कृष्ट अनुभागको धरैं उत्कृष्ट स्पर्धक कहिये। मध्यके अनंत भेद हैं। एसैं एक २ स्पर्धक विषैं अनंतीवर्गणा हैं, अर एक २ वर्गणा विषैं अनंतेवर्ग हैं, अर एक २ वर्ग विषैं अनंतानंत शक्तिके अविभागप्रतिच्छेद हैं, जो प्रथम जघन्य जघन्यवर्गणाके वर्ग विषैं अविभागप्रतिच्छेद हैं तासों ताही स्पर्धककी उत्कृष्ट वर्गणाका वर्ग विषैं अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद हैं। बहुरि जो प्रथम जघन्यवर्गणा विषैं अविभाग प्रतिच्छेद पाइये तासों अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद ताही स्पर्धककी अंतकी उत्कृष्टवर्गणा विषैं पाइये। बहुरि जघन्यस्पर्धक विषैं जो अविभाग-प्रतिच्छेद जितने प्रमाण कूं लियां होय तासों अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद अंतके उत्कृष्टस्पर्धक विषैं पाइये। बहुरि वर्गणावर्गणा प्रति वर्ग जघन्य सों लेय उत्कृष्टपर्यंत चयचयप्रमाण घटताघटता है, एसै स्पर्धकरूप शक्तिकों धरैं कर्म सर्व संसारी जीवनके सत्व विषैं तिष्ठैं हैं, एसा तो पूर्वस्पर्धकका स्वरूप है। बहुरि अपूर्व स्पर्धक इहां करै है चारों संज्वलनकषायनिका युगपत्

अपूर्वस्पर्धक देशघाती जघन्यस्पर्धक तैं नीचे अनंतगुणां घटता अनुभागरूप करै है, पूर्वस्पर्धकनि विषैं जघन्यस्पर्धक की ज्यों जघन्यवर्गणा थी ताकै नीचै घटता अनुभागलियें कोई वर्गणा थी नाहीं सो ही अब यहां जघन्यस्पर्धककी जघन्यवर्गणाकें नीचे अपूर्वस्पर्धकनकी वर्गणानकी रचना भई, तहां पूर्वस्पर्धकनकी जघन्यवर्गणातेंभी अपूर्वस्पर्धकनकी उत्कृष्टवर्गणा विषैं अनुभागके अविभाग प्रीतच्छेद अनंतवांभागमात्र हैं। एसैं अपूर्वस्पर्धक अनंतप्रमाण करै है, जघन्य अपूर्वस्पर्धकतें उत्कृष्टअपूर्वस्पर्धक विषैं अनुभाग (अविभाग) प्रतिच्छेद अनंतगुणे जानने। इति अपूर्वस्पर्धक करण। बहुरि बादर कृष्टिकरण कहिये हैं—यहां अपूर्वस्पर्धकनकों भोगवतां संतां जीव बादरकृष्टि करै है, जहां कर्मनका अनुभाग कृष कहिये हीन करिये सो कृष्टि कहिये पूर्व अपूर्व स्पर्धकनरूप तिष्ठता जो सत्तामें द्रव्य ताकों अपकर्षण भागहारका भाग देई द्रव्य का अपकर्षण करि तांकों पल्य के असंख्यातवें भागका भाग देइ बहुभागमात्र द्रव्य की तो बादर कृष्टि करैं, अर एकभागमात्र द्रव्य पूर्व अपूर्वस्पर्धकरूप परिणमावै है, सो एकस्पर्धक विषैं जो वर्गणानका प्रमाण पाइये ताका घटता एसा अनंतवां भागमात्र कृष्टि करै है सो कृष्टिविषैं द्रव्य चय चय प्रमाण घटता है, अर अनुभाग कृष्टि २ प्रति अनंतगुणा घटता है जो अपूर्वस्पर्धक जघन्य विषैं अनुभाग है ताके अनंतवें भाग कृष्टि अनुभाग उत्कृष्ट बादर कृष्टि विषैं है, ताके अनंतवेंभाग अनुभाग जघन्य बादर कृष्टि विषैं है सो कृष्टिनका प्रमाण अनंत जानना। इहां चारों कषायन विषैं एक २ कषायन के विषैं तीन २ तो संग्रहकृष्टि हैं, अर एक २ संग्रहकृष्टि विषैं अंतर कृष्टि अनंतानंत हैं। तहां नीचे ही नीचे लोभकी कृष्टि है, ताके ऊपर मायाकी अर ताके ऊपर मानकी अर ताके ऊपर क्रोधकी कृष्टि पाइये है, एसैं कृष्टि रचना होय है। बहुरि नोकषाय के द्रव्यकी कृष्टि होय है सो क्रोधकी कृष्टिन विषैं जुडी हुई है, जातैं नोकषायनका सर्वद्रव्य संज्वलनक्रोधरूप संक्रमण भया है, बहुरि जो जीव क्रोधके उदय सहित श्रेणी मांडै सो तो बारह संग्रहकृष्टि करैं, अर जो मानके उदय सहित श्रेणी चढ़े सो क्रोधकी तीन संग्रहकृष्टि नाहीं करै, नव ही करैं, तातैं क्रोधका पहले ही संक्रमण करि क्षय करै है। बहुरि तैसैं ही जो मायाके उदय सहित श्रेणी चढ़ै ताके क्रोध मानका पहले ही संक्रमण करि क्षय होय जाय है, तातैं दोय कषायनकी छह ही संग्रहकृष्टि

चौदह कर्मनका सत्व अर उदयका अभावभया, बहुरि क्षीणकषायके प्रथम समयतें लगाय शरीरविषैं तिष्ठते निगोदजीव अनन्ते मरैं हैं, तातैं द्वितीयादि समयन विषैं अधिक अधिक मरैं हैं, वा क्षीणकषायके पिछले भागनविषैं असंख्यागुणे क्रमनैं लियां जीव मरैं हैं, तहां अन्तके समय सर्वनिगोद जीवनका अभाव होतें केवलीका शरीर निगोद रहित होय है। यहां शुक्ल-ध्यानके बलकरि तिनके निपजनेका निरोध ही हैं, अर पहली उपजे थे ते स्वयमेव अपने आयुके नाश होतें मरैं हैं। यावत् निगोदजीवनका जघन्य आयु मात्र क्षीणकषायका काल अवशेष रहै, तावत् निगोदजीव तहां उपजैं भी हैं अर पूर्व उपजे जीव मरैं भी हैं, तहां पीछे फेर उपजैं नाहीं, आयुनाशतें केवल मरैं ही हैं, एसैं क्षीणकषायके अन्तसमय विषैं घातियाकर्मन का नाश करि ताकै अनन्तर सयोगकेवली जिन ही सर्वज्ञ सर्वदर्शी होंय हैं, घातियाकर्मनका चतुष्टयका नाश होतें अनन्त-चतुष्टयकी उत्पत्ति होय है—

अनन्तज्ञान १, अनन्तदर्शन २, अनन्तसुख ३, अनन्तवीर्य ४ एसैं विशेषगुणनकों प्राप्त होंय हैं। ज्ञानावरण १, दर्शनावरण २ इन दोनोंका नाशकरि केवलज्ञान अर केवलदर्शन होय है। सो कैसा है केवलज्ञाल ? इन्द्रिय वा मन वा प्राकाशादिकके सहाय रहित है सूक्ष्म, अन्तरित, दूर आदि सर्व पदार्थनकों प्रत्यक्ष युगपत् जानैं हैं। बहुरि तैसें ही केवल-दर्शनकर देखैं हैं, जैसे चन्द्रबिम्ब विषैं शीतस्पर्श अर शीतवर्णपनौ युगपत हैं तैसें जिनेंद्र विषैं केवलज्ञान केवलदर्शन युगपत् होय है। बहुरि वीर्यान्तराय कर्मके क्षयकरि अनन्तवीर्य होय हैं। समस्तज्ञेय पदार्थनकों सदाकाल जाननेतें भी खेद नाहीं उपजे हैं, अर काहू कर घाती न जाय एसी सामर्थ्य ताकों धारैं हैं। बहुरि नव नोकषाय अर दानादि अन्तराय चतुष्कके क्षयतें अनन्तसुख होय हैं। कैसा सुख होय हैं ? जो अन्यत्र एसा न पाइये, तातैं अनोपम्य हैं। बहुरि काहूकर बाधित नाहीं, तातें अव्यबाध हैं। बहुरि आत्माकर उत्पन्न हैं तातें आत्मसमुत्थ हैं। बहुरि इन्द्रिय विषय प्रकाशादिककी अपेक्षा रहित हैं तातें निरपेक्ष हैं। एसा ज्ञान वैराग्य ताकी उत्कृष्टताकों प्राप्त भया जो केवलीजिन, दयालू हैं लक्षण जाका एसा अनन्तसुख प्राप्त होय हैं। यहां नव क्षायिकभाव सम्पूर्ण प्रगट होंय हैं, पहले तो चौथे वा पांचवे वा छटे वा सातवें गुणे-

स्थान विषैं तीन दर्शन मोह औंर अनंतानुबंधी को चंतुष्क इन सप्तप्रकृतिनका निक्षेप (क्षय) करि क्षायिकसम्यक्त्व भाव भया था सो तो यहां परमावगाढको प्राप्त भया होय हैं। बहुरि त्रिकालवर्ती सर्वत्र तिष्ठते एसे द्रव्यगुण पर्याय तिनकों युगपत् जाने ऐसे केवलज्ञान केवलदर्शन ए दोयभाव प्रगट भये । बहुरि इकईस प्रकृतिरूप संपूर्ण चारित्रमोह का अपने स्वभाव विषैं तिरोभुत एसा क्षायिक चारित्रभाव भया, बहुरि पंच क्षायिक लब्धिभाव प्रगट भया दान १ लाभ २ भोग ३ उपभोग ४ वीर्य ५ । त्याग दिये हैं परद्रव्य अर परभावस्वभाव जानै वा अनंतसंसार छूटने का करै हैं उपदेश सो क्षायिकदानलब्धि कहिये १ बहुरि भया है अनंतसुखका लाभ सो क्षायिकलाभलब्धि कहिये २ बहुरि अनुभवै हैं आस्वादैं हैं समय २ स्वाभाविक आत्मजन्य सुख सो क्षायिकभोग लब्धि कहिये ३ बहुरि ताही सुख कों वारंवार निरंतर आस्वादै हैं, धारै हैं सो क्षायिक उपभोगलब्धि कहिये ४ बहुरि अंतरहित शक्ति को धारै हैं सो क्षायिकवीर्य लब्धि कहिये ५ एसैं नव क्षायिक भावप्रगट भया । यहां कोई आशंका करै कि केवली के असातावेदनी के उदय तें क्षुधादि परीषह पाइये हैं, तातें आहारादि क्रिया संभवै हैं ? ताका उत्तर—नोकपाय अर अन्तरायचतुष्क इनके उदय बल करि दुःख रूप असातावेदनी आदि अशुभप्रकृतिनका उदयकरि उपजा एसा इंद्रियनके द्वारा होय खेद आकुलता ताका नाम दुःख है । सो केवली के नाहीं संभवै है । बहुरि जो नोकपायका उदय अर अंतरायचतुष्कका क्षयोपशमके बल करि सातावेदनीं आदि शुभप्रकृतिनके उदय करि उपजा जो इन्द्रियनके संतोष किछु निराकुलता ताका नाम इन्द्रियजनित सुख हैं । सोभी केवलीके नाहीं संभवैं है, जातैं केवली के राग—द्वेप नष्ट भया है । बहुरि इंद्रियजनित ज्ञानभी नष्टभया हैं तातैं साताअसातावेदनीय के उदय करि निपज्या जो इंन्द्रियजनित एसा सुख—दुःख सो केवली के नाहीं है, इस हेतु तैं यह सिद्ध भया कि जो कारण के सद्भाव तें केवली के असाताबेदनी के उदय तें उपजैं एसे परीसह उपचारमात्र कहिये है, तथापि तिनकें दुःख नाहीं व्यापैं किन्तु घातिया कर्मन के उदय के बल तें बेदनीयके उदय तें सुख—दुख व्यापै हैं, जैसे अपघात परघात नामा नामकर्म के उदय तें भी घातिकर्म के उदयबल बिना अपना वा अन्य का घात न होय जो एसें न होय तो परीसह के निमित्त तें

केवली कौं दुःख होय तब लोभके अर्थ कार्य करै तें जैसे मूल नासै है तैसें एहू कार्य भया, सो असंभव है, तातैं केवली कें आहार है एसा वचन अयुक्त है। बहुरि केवली के एक समयमात्र स्थिति लियें सातावेदनीका बंध होय है, सो उदयरूप ही है, तातैं ताकै असाताका उदय है सोभी साता रूप होय परिणमे है, तातें यहां परमविशुद्धता कर साताके अनुभागकी बहुत अधिकता पाइये है, तातै असाताजनित क्षुधादि परीसहकी बेदना नाहीं है, वेदना विना ताका प्रतीकार रूप आहार कैसें संभवै ? अर केवलीकों आहारक कहिये है, सो औदारिकशरीर संबंधी तो जो समयप्रबद्ध बांधे है, ग्रहण करै है, सो नोकर्मवर्गणाका ग्रहण ही का नाम आहारमार्गणा है। ताका सद्भाव केवली के है, जातैं उज्ज १ लेप २ मानस ३ कवल ४ कर्म ५ नोकर्म ६ भेद तें आहार छह प्रकार हैं। तिन-विषैं कर्म नोकर्म एह दोय प्रकार आहार केवलीकें संभवे है। अब केवलीकें समुद्घात कब होय है सो कहैं हैं—ईर्यापंथबंधको कारण एसा योग तिसकर सहित केवली तीर्थंकर भया सो समोशरण विषैं मंडपके मध्य तीन पीठके ऊपर जो सिंहासन तिस विषैं विराजमान अष्ट प्रातिहार्य, चौंतीस अतिसय सहित हैं, धातु मल रहित, परम औदारिकशरीर सहित, लोक पूज्य है, बहुरि एकयोजन विषैं तिष्ठते एसै दूर वा निकटवर्ती तिर्यंच वा मनुष्य वा देव तिनकी अठारह महाभाषा, सातसौ क्षुल्लक भाषा, ताकों अकारित परिणमी एसी जो दिव्यध्वनि ताकरि आसन्नभव्य जीवनकों संसारसमुद्र तें पार करै है, जेसें इच्छा चन्द्रमा समुद्रकों बढ़ावै है, तैसें अबुद्धिपूर्वकपनैं केवली जगतके हितकों करै है। बहुरि भगवान् बिहार करैं तब आकाश विषैं दोयसौ पचीस २२५ कमलनके ऊपर स्वयमेव गमन करै हैं, सो या प्रकार उत्कृष्ट तो किंचिदून कोड़िपूर्व अर जघन्य प्रथक्त्ववर्ष प्रमाण तीर्थंकर केवली—सयोग गुणस्थान विषैं जाननी। सामन्यकेवलीके अतिशय आदिक यथासंभव जानने, जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्त जाननी, तहां सयोगीके प्रथमसमय तें लगाय उदयादि अवस्थित गुणश्रेणीनिर्जरा पाइये है। तहां अंतर्मुहूर्त आयु का अवशेष रहै तहांपर्यन्त समय २ समान द्रव्य अपकर्षण करि गुणश्रेणिआयाम तिन विषैं असंख्यातगुण लिये कर्म दीजिये है सो क्षीणकषाय तें असंख्यातगुणे हैं, बहुरि अपना आयुका अंतर्मुहूर्त अवशेष रहैं केवली समुद्घातक्रिया करे है। तहां दंड—

कपाट प्रतर लोकपूर्ण रूप समुद्घात क्रियाकों करै हैं, दंडसमुद्घात करने के काल के अंतर्मुहूर्त काल पहले आवर्जितनामा-करण होय है, सो जिनेन्द्रदेवके जो समुद्घातक्रिया कों सन्मुखपना सो ही आवर्जितकरण कहिये है। आवर्जितकरण करनेके पहले जो स्वस्थान तिसविषैं अर आवर्जितकरण विषैं भी सयोगकेवली के कांडकादि विधानकरि स्थिति अनुभागका घात नाहीं है। बहुरि आवर्जितकरण पहले स्वस्थानकेवली करि अपकर्षण किया गुणश्रेणी के द्रव्य तें आवर्जितकरणयुक्त केवली करि अपकर्षण किया द्रव्य असंख्यात गुणश्रेणी आयाम संख्यातगुणा है। बहुरि आवर्जितकाल के अंतर्मुहूर्तकाल पीछे समुद्घात क्रिया होय है, सो अघातियाकर्मनकी स्थिति समान करने के अर्थ जीवके प्रदेशनका समुद्गमन—फैलना ताका नाम समुद्घात हैं, सो दंड कपाट प्रतर लोकपूरण भेद तें चार प्रकार है ४ सो समुद्घात करनेवाले जीव दोय प्रकार हैं, पूर्वसन्मुख १ उत्तरसन्मुख २ बहुरि पद्मासन आसनयुक्त वा कायोत्सर्ग आसनयुक्त सो प्रथम समय विषैं दंड समुद्घात करैं हैं तहां कायोत्सर्ग स्थिति उत्कृष्ट अवगाहनायुक्त केवली का शरीर एकसौ आठ १०८ प्रमाणांगुल प्रमाण ऊंचो होय ताके नवमैंभाग चौड़ा होय सो बारह अंगुल चौड़ाईकी सूक्ष्मपरिधि तेंतीस अंगुल अर एक अंगुलका एकसौ तेरहवां भागमें पिच्याणवें भागमात्र होय। बहुरि पद्मासनस्थितकी चौड़ाई का प्रमाण तासौं तिगुणा छत्तिस अंगुल हैं, ताकी सूक्ष्म परिधिका प्रमाण एकसौ तेरह अंगुल अर एक अंगुलका एकसौ तेरहभागमें सत्ताईसभाग मात्र होय है। अर किंचिदून चौदह राजू ऊंचे प्रदेश होय हैं। यहां नचिले ऊंचले वात बलयन विषैं जीवके प्रदेश न फैलें हैं, तातैं किंचिदून कह्या है, एसें दंड समुद्घात कह्या। बहुरि द्वितीय समय विषैं कपाट समुद्घात करैं है, तहां पूर्वदिशा सन्मुख कायोत्सर्ग आसनयुक्त केवली के प्रदेश किंचिदून चौदह राजू ऊंचे अर सात राजू चौड़े बारह अंगुल मोटे होय हैं। बहुरि पूर्वसन्मुख पद्मासन स्थित केवलीके प्रदेश ऊंचे, चोड़े पूर्वोक्त मोटे, छत्तीसअंगुल होंय हैं। बहुरि उत्तरसन्मुख कायोत्सर्ग स्थित केवलीके प्रदेश किंचिदून चौदहराजू ऊंचे, सातराजू क्रमतें घटि मध्यलोक निकट एकराजू, बहुरि क्रमतें बधि ब्रह्मस्वर्ग निकट पांचराजू, क्रमतें घटि ऊपर एकराजू चौडे अर बारह अंगुलमोटे प्रदेश होंय हैं। बहुरि उत्तरसन्मुख पद्मासनस्थित केवलीके प्रदेश ऊंचे चौड़े

तैसै ही मोटे छत्तीस अंगुल होंय हैं एसैं कपाट समुद्घात कह्या। बहुरि तीसरे समय प्रतर करै है तहां वातवलय विना अवशेष सर्वलोक विषैं आत्माके प्रदेश फैलें हैं। बहुरि याका नाम मथान भी है। बहुरि चतुर्थ समय विषैं लोकपूरण होय है, वातवलय सहित सर्वलोक विषैं आत्माके प्रदेश फैलें हैं। एसैं चार समय विषैं दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण होय हैं। यहां स्थितिकांडकघात अनुभाग कांडकघात होय हैं, ताका आयाम अंतर्मुहूर्तमात्र है, अर यहां समय २ अपवर्तन होय है, समय २ स्थिति अनुभाग घटावै है, बहुरि पांचवें समय लोकपूरणकों समेटि प्रतररूप आत्मप्रदेश करै है। बहुरि छठे समय प्रतर समेटि कपाटरूप आत्मप्रदेश करैं हैं। अर सातवें समय कपाट समेटि दंडरूप आत्मप्रदेश करे है, अर अष्टम समय दंडसमेटि सर्वप्रदेश मूलशरीर विषैं प्रवेश करै हैं, तहां कग्ने समेटने दंडके दोय समयन विषैं औदारिककाययोग है। कपाटके दोय समयन विषैं औदारिकमिश्रकाययोग हैं। अर प्रतरका दोय समय अर लोकपूरणका एक समय इन तीन समय विषैं कार्माणकाययोग हैं। इहां नोकर्मका ग्रहण नाहीं है, तातैं अनाहारक है, एसा जानना। एसैं समुद्घातक्रिया का वर्णन किया।

अब शरीरविषैं प्रवेश हुवा पीछे अन्तर्मुहूर्तकाल तहां विश्राकर तहां संख्यात हजार स्थितिकांडक करै पीछे योगनका निरोध करैं हैं। इहां निरोधनाम नाशका जानना, वादरकाययोग रूप होय वादरमनयोग, वचनयोग, उस्वास काययोग इन चारोंको क्रमतै नष्ट करैं हैं। बहुरि सूक्ष्म काययोग रूप होय तिन चारूं सूक्ष्मनकों क्रमतैं नष्ट करैं हैं, सो ही कहिये है— केवली भगवान वादर काययोगरूप प्रवर्ततो संतो पहले वादर मनोयोगकूं नष्टकरि सूक्ष्म करै है, पीछे वादरकाययोगकों नष्टकरि सूक्ष्म करै हैं। याप्रकार जो वादररूप इनकी शक्ति पूर्वैं थी, ताकों घटाय सूक्ष्मकरि, बहुरि केवली सूक्ष्मकाययोग रूप प्रवर्ततो संतो वचनयोगकों पीछे सूक्ष्म उस्वासकों, पीछे सूक्ष्मकाययोगकों नष्ट करैं हैं। एक २, वादर वा सूक्ष्म मनोयोगादिककों निरोधकरनेका काल प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तमात्र जानना। बहुरि सूक्ष्मकृष्टिरूप काययोगका बेदक जो सयोगी जिनसों इहां तीसरा सूक्ष्मक्रिया प्रतिपातिनामा शुक्लध्यानकों ध्यावैं हैं, इहां सूक्ष्मकृष्टिकों प्राप्त काययोग जनित परिस्पन्दरूप

क्रिया पाइये है, अर अप्रातिपाति कहिये पड़नेतें रहित हैं, तातैं या ध्यानका नाम सार्थक है, या ध्यानका फल योगका निरोध होना ही जानना। यद्यपि प्रत्यक्ष निरंतर केवलज्ञानीकें चिंतानिरोध लक्षण रूप ध्यान संभवे नाहीं, तथापि योगनका निरोध होतें आस्रव निरोध होने रूप ध्यानफलकों देखि उपचारतें केवली के ध्यान कहा है, अथवा छद्मस्थनकें चिंताका कारण योग है, तातें कारण विषैं कार्यका उपचार करैं, योगका भी नाम चिंता है, याका इहां निरोध होय है, तातेंभी ध्यान कहना संभवे है, छद्मस्थनकें चिंता का निरोध का नाम ध्यान है। केवलीकें योगनिरोधका नाम ध्यान है एसा जानना। सयोगी गुणस्थानका अंतर्मुहूर्तमात्रकाल अवशेष रहैं वेदनीय नाम गोत्रका अंतः स्थितिकांडककों ग्रहैं हैं। ताकरि सयोगीका अवशेष काल रहा सो, अर अयोगीका सर्वकाल मिलायें जो प्रमाण होय, तितने निषेकनिको छांडि अवशेष सर्वस्थितिके गुणश्रेणी शीर्ष सहित जे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकों लांछित करै हैं—नष्टकरनेको प्रारम्भे है, तहां अंतकांडकका द्रव्यकों अपकर्षणकरि असंख्यातगुणाकरि असंख्यातगुणां क्रम तें उदयनिषेकतें लगाय अंतनिषेक पर्यन्त दीजिये है, ता समय फालिका करि द्रव्यका निक्षेपण करै है। तहां सयोगीके अंतसमय विषैं तिनके अंत फालीका पतन होय है। एसें सयोगीके अन्तसमय विषैं अघातिया कर्मनकी अंतकांडककी अंत फालीकाका पतन अर योगका निरोध अर सयोग गुणस्थानकी समाप्तिता युगपत् होय है, याके ऊपर सयोग गुणस्थानक विषैं गुणश्रेणी अर स्थितिअनुभागका घात नहीं है, अधःस्थित गलन करि एक २ समय विषैं एक २ निषेक क्रमतें उदयरूप होय है। इहां अयोगीजिनकी आयु समान तीन घातियानकी स्थिति होय है, सो अयोगीजिन चौथा समुच्छिन्नक्रियानाम शुक्लध्यानकूं ध्यावै है, समुच्छिन्न कहिये उच्छेदभई है मन वचनकायकी क्रिया अर निवृत्ति जो प्रतिपात ताकरि रहित यह ध्यान है तातें याका नाम सार्थक है, यहां भी ध्यानका उपचार पूर्वोक्तप्रकार जानना। इहां भी समस्तआस्रव रहित केवलीके अवशेष कर्म निर्जराका कारण जो स्वात्मविषैं प्रवृत्ति ताहीका नाम ध्यान है। समस्त शील गुणका स्वामीपना होनेतें शैलेश अवस्थाकों प्राप्तभया है। यद्यपि सयोगी जिनके समस्त शीलगुणका स्वामीपना संभवै है। परन्तु योगनका आस्रव पाइये है तातैं सकलसंवरके न संभवनेतैं ताकों शैलेश्य अवस्था

का अभाव है। अयोगीके योगास्रव भी न पाइये है, तातैं सकलसंवरण होने तैं ताकैं शैलेश्य अवस्था संभवै है। बहुरि सो अयोगी जिन निरोधे हैं समस्त आस्रव जानैं एसा है। बहुरि कैसा है अयोगी जिन ? कर्मबंधरूपी रजकरि रहित है, अयोगीका काल पंच ह्रस्व अक्षर जेते कालकरि उच्चारण करिये तेता है। तहां एक २ समय विषैं एक २ निषेक गलनरूप जो अधःस्थितिगलन ताकरि क्षीण भई तिसकालके द्विचरम समय विषैं बहत्तर प्रकृति अर अन्तसमय विषैं तेरह प्रकृति शुक्लध्यान रूपी ज्वलन जो अग्नि ताकरि भस्म करै है, वेदनी १ देवगति १ देवगत्यानुपूर्वी १ शरीर १ बंधन ५ संघात ५ संस्थान ६ अंगोपांग ३ संहनन ६ वर्णादिक २० अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उच्छ्वास १ विहायोगति १, अपर्याप्त १ प्रत्येक १, स्थिर १, अस्थिर १, शुभ १, अशुभ १, सुस्वर १, दुःस्वर १, दुर्भग १, अनादेय १ अयस्कीर्ति १, निर्माण १ नीचगोत्र १, एवं बहत्तर ७२ प्रकृति तौ द्विचरम समय विषैं क्षय भई। वेदनी १, मनुष्यति १, मनुष्यगत्यानुपूर्वी १ मनुष्यायु १, पंचेंद्रियजाति १, त्रस १, बादर १, पर्याप्त १, सुभग १, आदेय १, यशस्कीर्ति १, तीर्थंकर १, उच्चगोत्र १ ये तेरह प्रकृति अन्तसमय विषै क्षयभई। एसैं क्षयकरि ताके अनन्तरसमय विषैं सिद्ध होय हैं, जैसैं कालिमारहित शुद्ध सुवर्ण निष्पन्न होय है, तैसैं सर्व कर्ममलरहित कृतकृत्यदशारूप निष्पन्न आत्मा होय हैं, सो जीव ऊर्ध्वगमन स्वभावकरि तीन लोकके शिखर विषैं ईषत्प्राग्भार नाम जाका ऐसी जो आठवीं पृथ्वी ताके ऊपर एक समय मात्र कालकरि जाय तनुवातवलयका अंतविषैं विराजमान हो हैं। कैसीक है वह पृथ्वी ? मनुष्यपृथ्वीके समान पैंतालीस लाख योजन चौड़ी गोलाकार है, बहुरि आठ योजन ऊंची है, बहुरि स्थिर है, बहुरि छत्रके आकार स्वेतवर्ण है, अर वीचमें मोटी चौहटै छेहड़े पतली एसी मनोहर है, ईषत्प्राग्भार नामा अष्टमी पृथ्वी घनोदधि वातवलयपर्यन्त है, तिस पृथ्वीके बीच पाइये है एसी जो सिद्धशिला ताका एसा स्वरूप है। धर्मास्तिकायके अभावते तहांतैं ऊपर गमन न होय है, तहां ही चरम शरीरतें किंचिदून आकारस्वरूप जीवद्रव्य अनंतज्ञानानंदमय विराजै हैं।

बहुरि कैसेक हैं सिद्धभगवान ? त्रिभुवनकरि पूजित अर बुद्ध कहिये सर्वका ज्ञाता, अर निरंजर कहिये कर्ममलरहित,

अर नित्य कहिये विनाशरहित एसा जो सिद्धभगवान सो मुझकों उत्कृष्टज्ञान दर्शन चारित्रकी शुद्धता, अर समाधि कहि अनुभवदशा वा सन्यासमरण ताकों प्राप्त करो। इहां मोक्ष अवस्था सर्वकर्मका सर्वथा नाशतें सम्पूर्ण आत्मस्वरूपकी प्राप्तिरूप जाननी। याप्रकार नव क्षायिकभावका संक्षेप कथन किया। विशेषकथन क्षपणासार नामा ग्रन्थतें जानना। ये क्षायिकभाव वर्तमान भी परमसुखको कारण है अर आगामी मोक्षका कारण है। बहुरि क्षायिकचारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरण सों ले अयोगकेवली गुणस्थान पर्यन्त छह गुणस्थान विषैं पाइये, अर मार्गणा गति-मनुष्य १ जाति-पंचेन्द्रिय १ काय त्रस १ योग-मनका चार ४ बचनका चार ४ औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण ११, बेद-अविृत्तिकरणगुणस्थान तक तीन, ऊपर वेदकी नास्ति, कषाय--अष्टम नवम गुणस्थान विषै १३ अनिवृत्तिकरण विषैं ७ अर सूक्ष्म साम्परायमें सूक्ष्मलोभ, ऊपर कषायको अभाव, ज्ञान-सुज्ञान ५ संयम - सामयिक छेदोपस्थापना सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यात ४ दर्शन ४ लेश्या शुकल १ भव्य १ सम्यक्त्व क्षायिक १ सञ्ज्ञी १ आहारक अनाहारक २ इन विषैं पाइये हैं। इति श्री भावदीपिकाका क्षायिक भावाधिकार विषैं क्षायिक-चारित्र भावाधिकार दूसरा समाप्त भया २। बावनभाव सहित क्षायिकभावाधिकार सातवां पूर्ण भया ७।

अब चूलिका अधिकार लिखिये है—

दोहा—अनादिकालतें जे थये सिद्ध शिला सिधथोक। सहजानंद जगमुकुटमणि अंतरहित नित धोक ॥१॥

इसप्रकार अनेक विशेषण सहित कहे जे जीवके तिरेपनभाव ते तीन प्रकार हैं, तीनप्रकार पारिणामिकभाव हैं, ते तौ जीवके स्वाभाविकभाव हैं, जातैं ये कर्मकी सापेक्ष्य रहित स्वभाव ही तें उत्पन्न है। बहुरि इकईस औदयिकभाव अर अठारह क्षयोपशमभाव अर दोय उपशमभाव ये इकतालीसभाव हैं, जातैं ये कर्म सापेक्षसहित हैं, सो शुभाशुभभेदकरि दोय प्रकार हैं। उदयभावनविषैं मनुष्यगतिभाव १ देवगतिभाव १ अर पीत १ पद्म १ शुक्ल १ लेश्या तीन ऐसैं पांचभाव अर क्षयोपशमभावन विषैं तीनकुज्ञान विना पंद्रहभाव अर उपशमभाव दोनो एसैं ये बाईस तो शुभभाव हैं अर अवशेष सोलह औदयिकभाव अर क्षायोपशमके तीनकुज्ञान एसैं उगनीस अशुभभाव हैं। बहुरि नव क्षायिकभावतें सुद्धभाव हैं

एसें ये स्वभाव, विभाव, सुद्धभाव तीनप्रकार स्वरूपकों धरें जीवके तिरेपनभाव हैं. तातैं इनकों भलीभांति जानि श्रद्धान करना, त्यजन ग्रहण करना—अशुभभावनकों छोड़ना शुभभावनका ग्रहण करना, जातें इनभावन ही का निमित्तपाय कर्म दश प्रकार अवस्थाकों प्राप्त होंय हैं, सोही कहिये हैं——बन्ध १ सत्व २ उदय ३ उदीरणा ४ उत्कर्षण ५ अपकर्षण ६ संक्रमण ७ उपशांत ८ निधत्ति ९ निकाचना १० ये कर्मकी दश अवस्था हैं। सो जीवके भावके निमित्ततें होय हैं।

प्रथमही बंध अवस्था कहिये है——नवीनकर्म परमाणूनकी जीवके प्रदेशनसों एक क्षेत्रावगाहसम्बन्ध होना सो बन्ध कहिये, सो बन्ध चार प्रकार है प्रदेशबंध १ प्रकृतिबंध १ स्थितिबंध १ अनुभागबंध १। जो सिद्धराशिके अनन्तवें भाग अर अभव्यराशितें अनन्तगुणा एसा कर्मरूप होने योग्य पुद्गल परमाणूनका समय २ ग्रहण होय सो समयप्रबद्ध कहिये, ताका ग्रहण होय, आत्मप्रदेशनसों एकक्षेत्र अवगाहसम्बन्ध होना सो प्रदेशबन्ध कहिये १। बहुरि ते पुद्गल कर्म-परमाणू ज्ञानावरणादि मूल उत्तर प्रकृतिरूप होय परणवें सो प्रकृतिबन्ध कहिये २। बहुरि अपनी अपनी जघन्य मध्यम उत्कृष्ट स्थिति धार तिष्ठना सो स्थितिबन्ध कहिये ३। बहुरि अपने अपने कार्यरूप रस देनेकी शक्तिका मध्यम जघन्य उत्कृष्ट अविभाग कहिये अंश ताका उत्पन्न होना सो अनुभागबन्ध कहिये ४। एसा चार प्रकार बन्धका स्वरूप जानना। तहां प्रदेशबन्ध अर प्रकृतिबन्ध तौ योगनतें होय हैं, नामकर्मके उदयतें उत्पन्न भये जीवके द्रव्य, मन, वचन, काय तिनकी चेष्टाका निमित्त पाय आत्माका प्रदेश चंचल होय ताकरि आत्माकें कर्म ग्रहणशक्ति होय ताका नाम योग है, ताकरि पुद्गलकर्म वर्गणानिका ग्रहण होय सो प्रदेशबन्ध कहिये। सो मन, वचन, कायकी चेष्टा कहिये। प्रवृत्ति शुभाशुभ प्रवृत्तिरूप दोय प्रकार हैं, सो आत्माका शुभाशुभ भावनतें होय है। तहां आत्मा शुभलेश्यादि बाईस शुभभावनरूप परणवै, तहां मन, वचन, कायकरि शुभकार्यरूप प्रवृत्ति होय ताका नाम शुभयोग कहिये, अर अशुभ लेश्यादि उगनीस अशुभभावनरूप परणवै तहां मन, वचन, कायकी अशुभ कार्यरूप प्रवृत्ति होय ताका नाम अशुभयोग कहिये। शुभयोग के होतें शुभ कर्मपरमाणूका बंध होय है, तहां शुभ ही सातावेदनी आदि कर्म प्रकृतिनका बन्ध होय है, अर अशुभ

योग होतैं अशुभकर्मपरमाणूका बंध होय है। तहां अशुभही असातावेदनी आदि कर्मप्रकृतिनका बंध होय है। बहुरि स्थितिबंध अनुभागबंध कषाय तैं होय है, सो आत्माके शुभाशुभ भावनके अनुसार ही कषायनकी तीव्र मंद प्रवृत्ति होय है। जब आत्मा शुभलेश्यादि शुभभावनरूप परणवै है तहां कषाय मंद होय प्रवर्तै हैं। तब सातावेदनी आदि पुण्य प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग बहुत बंध होय है, अर ज्ञानावरणादिक चार घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातिया की पापप्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अल्पबंध होय है। बहुरि जब आत्मा अशुभलेश्यादि अशुभभावन रूप परणवै है, बहुरि तहां कषाय तीव्र होय प्रवर्तै हैं, तब ज्ञानावरणादि चारि घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातियाकी पाप प्रकृतिनकी स्थिति अनुभागबंध बहुत होय है, अर साता वेदनी आदि पुण्य प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अल्पबंध होय है, जैसा २ उत्कृष्ट मध्यम जघन्य अनुभागकों धरैं शुभाशुभभावनरूप आत्मा परणमै है तिनहीके अनुसार उत्कृष्ट मध्यम जघन्य स्थिति अनुभागकों धरैं शुभाशुभ कर्मबंध होय है। अर जहां आत्मा निःकषायभाव रूप होय है, तहां स्थितिबंध अनुभागबंधका अभाव होय है। अर जहां आत्मा योग रहित होय प्रवर्तै है तहां प्रदेशबन्ध प्रकृतिबंधका अभाव होय है। आत्माके जिस २ भावनका निमित्त पाय जिस २ कर्मका बंध होय है, तहां तिस २ भावनका अभाव होतें तिस २ कर्मके बंधका अभाव होय है, तातैं कर्मबंधकों कारण आत्माके भावही जानना। इति कर्मबन्ध अवस्था।

आगैं सत्व अवस्था कहिये—

बंध कालतें लगाय अपनी स्थितिका अंत पर्यन्त जावत् कर्मत्वशक्तिकों धरैं पुद्गलपरमाणु (तिष्ठैं) उदयकों न प्राप्त होंय हैं, तावत्काल कर्मकी सत्त्व अवस्था कहिये। जिसकाल चार प्रकार विशेषकों धरै कर्मबंध होय हैं, तिसकालमों लगाय अपनी २ योग्य आबाधाकाल छोड़ि निषेक रचना होय है, जेती २ स्थिति पड़ै ताका जेता २ समय होय तिन समयनप्रति आदिके समयतें लगाय अंतका समयपर्यन्त गुणहानि रचनाका अनुक्रम धरै चय चयप्रमाण घटता द्रव्य अर वर्गणा स्पर्धक गुणहानिका अनुक्रमधरैं अनुभाग समय २ प्रति वढ़तो होय तिष्ठै है, ताका नाम निषेक कहिये। तहां प्रथम

निपेक की स्थिति एकसमय अधिक आवाधा काल प्रमाण है, दूसरा निषेककी स्थिति दोय समय अधिक आवाधाकालप्रमाण है। एसैं ही निपेक २ प्रति एक एक समयकी स्थिति अधिक है, अंतनिषेककी स्थिति अपनी २ आवाधाकाल अधिक सम्पूर्ण स्थितिप्रमाण है, सो जावत् जिस २ कर्मकी स्थिति पूर्ण होय उदयकों प्राप्त न होय, तावत् कर्मका संचयरूप रहना सो सत्व कहिये। सो सत्वभी चार प्रकार है—प्रदेशसत्व १ प्रकृतिसत्व १ उदयसत्व १ अनुभागसत्व १ सो स्थितिसत्व आदि इन चारे प्रकार सत्वकों भी जीवका भाव ही कारण है, जीवभावका निमित्त पाय चारों ही प्रकार सत्व घटैं हैं उत्कृष्ट तें मध्य जघन्य, मध्य तें उत्कृष्ट, जघन्यतें उत्कृष्ट, मध्य नानाप्रकार अवस्थाकों प्राप्त होंय हैं, शुभभाव होतें साता-वेदनी आदि शुभप्रकृतिनका स्थितिअनुभागादि सत्वविषैं बधि जाय है, ज्ञानावरणादि चार घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातियाकी अशुभप्रकृतिनका स्थिति अनुभागादि घटि जाय है, अशुभभाव होतें अशुभप्रकृतिनका स्थिति अनुभा-गादि सत्व बधि जाय है, अर सातावेदनी आदि शुभप्रकृतिनकी स्थिति अनुभागादि सत्व घटि जाय है। इति सत्व अवस्था

आगै उदय अवस्थाको कहिये है—

ज्हां कर्म अपनी स्थिति पूरीकर फलदेय क्षरनेको सन्मुख होय, तहां उदय कहिये। सो उदय भी चार प्रकार है—प्रदेशउदय १, प्रकृतिउदय १ स्थितिउदय १, अनुभागउदय १, तहांभी जीवकें परिणमनिकों निमित्त पाय रस देय वा विना रस दिये ही कर्मपरमाणूनका खिरजाना सो प्रदेशउदय कहिये। अर मूलतें कर्मप्रकृतिनका खिरजाना सो प्रकृतिउदय जानना। अर स्थितिका क्षीण होजाना सो स्थितिउदय कहिये। अर जघन्य, मध्य, उत्कृष्ट अपना अपना रसदेय खिरजाना सो अनुभाग-उदय जानना। एक २ समय विषैं एक २ निषेक अपना अपना रस देय उदयकों प्राप्त होय रसदेय खिरजाना सो ही सविपाक निर्जरा कहिये। वा जो जीव सम्यक्त्व चारित्रादि विशुद्धभावनरूप परणमै तहां एक २ समय विषै असंख्यात २ निषेक उदय होय, विना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिरैं हैं ताको अविपाक निर्जरा कहिये। असंख्यात २ समय प्रबद्धको बांधो द्रव्य एक २ निषैक विषैं भेला होय उदयकों प्राप्त होय ता निषेक विषै सर्व ही शुभ—अशुभ कर्मनका

सत्व है, परन्तु जीवके गत्यादिक भावनके अनुसार मुखता गौणता लियें शुभाशुभ कर्मनका उदय होय हैं। जो जीव नरकगति विषैं तिष्ठैं हैं तहां नरकगतिभावने आदि दे सर्व नरकगति सम्बन्धी अति संक्लेशभावनरूप आत्मा परणमै है। तहां असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनके उदयकी तो मुख्यता है, अर सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव देवगति विषैं तिष्ठैं हैं तहां देवगति भावने आदि दे सर्व देवगति सम्बन्धी मंदकषायादि रूप भावयुक्त आत्मा हैं, तहां सातावेदनी आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता है, अर असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनके उदयकी अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव तिर्यंच गतिविषैं तिष्ठैं हैं, तहां तिर्यंचगति भावने आदिदे सर्व तिर्यंचगतिसंबन्धी भावरूप परणवैं हैं। तहां घनांकाल संबंधी तो असातावेदनी आदि अशुभकर्मनका उदयकी मुख्यता है। अर थोड़ा कालसंबंधी कदाकाल किंचित् अनुभागकों धरैं सातावेदनीं आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होयहै। बहुरि जो जीव मनुष्यगतिविषैं तिष्ठैं है तहां मनुष्यगतिभावने आदि दे सर्व मनुष्यगतिसंबंधी भावनरूप परणवै है, तहां उदयने प्राप्त भया जो निषेक ताविषैं अशुभ कर्मनका अनुभाग अधिक होय तो असातावेदनी आदि अशुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होय, अशुभकर्मनका उदय होय, अर शुभकर्मनका प्रदेशउदय होय, अर जो उदयरूप निषेकविषैं शुभकर्मका अनुभाग अधिक होय तो सातावेदनी आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होय, शुभकर्मका उदय होय, अर असाता-वेदनी अघातिया अशुभ कर्मनका प्रदेश उदय अर ज्ञानावरणादिक घातिया-कर्मनका यथायोग्य उदय होय वा शुभलेश्यादि विशुद्ध भावनरूप परणवतां जीवके सातावेदनी आदि शुभकर्मके उदयकी मुख्यताभी होय वा असातावेदनी आदि अशुभकर्मनकी भी अत्यन्त अनुभागका जोरतें मुख्यता होय तो कछु अनुभाग क्षीण होय, उपसमने प्राप्त होई अर सातावेदनीय आदि शुभकर्मनिका अनुभाग अधिक होइ उदयने प्राप्त होय, अर कदाचित् अत्यन्त विशुद्धभावरूप परणमै ताजीवके असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनका सातावेदनी आदि सुभकर्मनिरूप होइ ऊपजै हैं वा परदेसउदय होइ खिर जाइ, बहुरि कृष्णादिक अशुभ लेश्यादि अशुभ भावनिरूप परिनवते जीवके असातावेदनी आदि

अशुभ कर्मनिका उदयकी मुख्यता होय वा सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी भी अत्यन्त अनुभागके जोरतैं मुख्यता होय तो कछु अनुभाग क्षीण होय उदयने प्राप्त होय, अर असातावेदनी आदि अशुभकर्मनका अनुभाग अधिक होय उदयनें प्राप्त होय, अर कदाचित् अत्यन्त संक्लेशभावरूप परणवता जीवके सातावेदनी आदि शुभकर्म असातावेदनी आदि अशुभ कर्मन रूप होय उदय होय है वा प्रदेश उदयसों खिरजाय एसी नानाप्रकार कर्मनकी उदयअवस्था भी जावभावनका निमित्तपाय होय है । इति उदयअवस्था समाप्त हुई ।

आगैं कर्मनकी उदीरणा अवस्था कहिये है—

ऊपरके निषेकनका कर्मस्वरूप पुद्गलद्रव्य उदयवाली विषैं आय प्राप्त होय है सो उदीरणा कहिये । जो कर्म घनां कालकी स्थिति धरैं निषेकरूप सत्तामें तिष्ठै था, सो जीवभावका निमित्त पाय उदयरूप निषेक ते आवली प्रमाण निपेक तिनकों उद-यावली कहिये । ता विषैं आय प्राप्त होय आवलीकाल पर्यन्त उदयरूप होय सो उदीरणा कहिये । सो कर्मनकी उदीरणा योग्य जीवका भाव दोय प्रकार है—एक तो अंतरंग तीव्र मंद अनुभाग कों धरैं मोहादिक कर्मनका उदय होय, ताके अनुसार मद कषायादिकभाव होय, ताकरि कर्म की उदीरणा होय है । अरु एक बाह्यकर्मनकी उदीरणा योग्य परद्रव्यरूप सामग्री मिलै ताका निमित्त पाय ताहीके अनुसार उदीरणा योग्य जीवका कषायभाव होय, कर्मनकी उदीरणा होय है । तहां तीव्रअनुभागकों धरैं मोहादिक मोहकर्मनका उदय होय, तब आत्माका तीव्रकषायरूप संक्लेशभाव होय है, जब आत्मा कृष्णादि अशुभलेश्यादि अशुभभावनरूप प्रवर्तै है तब सातावेदनी आदि शुभकर्मका उदय मिटि अर असातावेदनी आदि अशुभ-कर्मकी उदीरणा होय उदय होय, जब जैसे दुःखके कारण पदार्थनकों अवलंबन करै है तब जीव सुखी तैं दुःखी होय जाय है, रागी तैं द्वेषी होयजाय है, द्वेसी तैं रागी होयजाय, ज्ञानी तैं अज्ञानी होयजायहै, संयमी तैं असंयमी होयजाय है, क्रोधी मानी, मायावी, लोभी तैं अन्य २ क्रोधादिकषाय रूप होय जाय है प्रसन्नता तैं शोकी होय जाय है, रतिभाव तैं अतिभाव कों प्राप्त होय, अवेदभाव तें सवेदभावकों प्राप्त होयजाय, क्षुधातृषादि रहित भाव सों क्षुधातृषादिसहित भाव कों प्राप्त होय, इत्यदि उदरिणा होय, कर्मनकी

पलटन होते ही भावनकी पलटन हो जाय है। अर भावनकी पलटन होतैं कर्मकी पलटन होय जाय, एसा कर्मनका उदय अर जीवभावमें निमित्तनैमित्तिक सम्बन्ध है। बहुरि जहां मन्द अनुभागकों धरैं मोहादिक कर्मनका उदय होय, तब आत्माका मन्दकषायरूप विशुद्धभाव होय हैं, तब आत्मा शुक्लादि शुभलेश्यादि शुभभावनरूप परणवे है, तब असातावेदनी आदि अशुभकर्मको उदय मिटि, अर सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी उदीरणा होय उदय होय है जब जैसैं ही सुखके कारण पदार्थनका अवलम्बन करै हैं, तब जीव दुःखी ते सुखी होय है, रागी तें विरागी, अज्ञानी तें ज्ञानी, असंयमी तें संयमी होय जाय है। क्रोधादि अन्य कषाय तें अन्य कषायरूप होय जाय हैं, शोकभाव मिटि प्रसन्नभाव होजाय, अरतिभाव तें रतिभाव, सवेदभाव तें अवेदभाव, क्षुधा–तृषादि सहित भावतें रहितभावकों प्राप्त होय हैं, उदीर्णा होतां ही इत्यादि भावनकी पलटन होय सो ई भांति तो अन्तरंग शुभ अशुभ कर्मके उदय होतैं शुभाशुभ भाव होंय, तिनहीके अनुसार शुभाशुभ कर्मनकी उदीरणा होय है, जो जीवके कर्मकी उदीरणा होय उदय होय, ताहीके अनुसार जीवका भाव होय है। इति। बहुरि शुभाशुभ कर्मकी उदीरणाकों कारण एसे बाह्य शुभाशुभ पदार्थनका निमित्त पाय शुभाशुभ कर्मनकी उदीरणा होय उदय होय ताही अनुसार जीवका भाव होय है। बहुत शास्त्र आप पढ्या है तिनका मद करने थकी, वा अन्य सम्यग्ज्ञानी पंडितनिमें ईर्षा करनेथकी कुपथके ग्रहण करनेथकी, कुपथका ग्रहण करि सम्यग्ज्ञानीन तें विवाद करनेथकी, अन्य कों कुपथका ग्रहण करावने थकी रूठना, जैन आम्नायसो विरुद्ध उपदेश देने थकी, वा मिथ्याशास्त्र, काव्य, श्लोकादि बनावने थकी वा शास्त्रके वेत्ता पुरुष वा अपने शास्त्रके पढ़ावनेहारा उपाध्याय हैं इनका अविनय करनेथकी वा ज्ञानचारित्रका आच्छादन वा घात करनेथकी वा आपकै विद्यागुरुकों छिपावने थकी वा यथातत्वतें दोष राखने थकी वा मूर्खन की संगति थकी वा बहुत विकथा प्रलाप करने थकी, बहुत विकथासक्त होने थकी, वा आलसी प्रमादी होने थकी वा बहुत क्रोध, लोभादि कषायनिके अभिनिवेश थकी, अर बहुत हास्य थकी वा रति, अरति, शोक, भय, ग्लानिके बहुत अभिनिवेश थकी वा बहुत कामासक्त होने थकी, बहुत आरम्भ करने थकी वा कामोद्दीपनाहार करने थकी वा अमलयुक्त-

वस्तुके खाने थकी इत्यादि बाह्य कारण थकी ज्ञानावरणी दर्शनावरणी कर्मकी उदीरणा होय उदयने प्राप्त होय है, तत्काल ज्ञानका नाश होय है, वा इन्हीं पूर्वोक्त बाह्यकारणनतें दर्शनावरण कर्मकी उदीरणा होय है, वा अन्य अभिप्रेतथकी अनुभयप्रेतथकी अनुभयप्रेत कहिये उपयोगके जोड़ने थकी, वा दही आदि निद्राके कारण वस्तुनके भखनेथकी, वा निद्राके कारण सुखशय्यादि सामग्री मिलावने थकी, वा निद्राकी इच्छाकरि लंबाहोय सोवने थकी, पंचनिद्रा आदि दर्शनावरणी कर्मकी उदीरणा होय उदयनें प्राप्त होय है, तहां सर्वपदार्थनके सामान्य अवलोकनका अभाव होय है। बहुरि दुःख शोकके कारण पदार्थनके देखने थकी, याद करने थकी, वा दुःख शोकादिकके कारण बाह्यपदार्थनको आपकी बुद्धिपूर्वक आपके संबंध करने थकी, असातावेदनी कर्मकी उदीरणा होय उदयनें प्राप्त होय, तब जीव सुखीतें दुःखी होय है। बहुरि सुखके कारण इष्टपदार्थनके देखने थकी, पवनादि करने थकी, वा असाताका उदय विषैं अपनी बुद्धिपूर्वक आपके सुखके कारण पदार्थनका संबंध करनेथकी वा देवगुरुधर्मादिक सम्बन्ध करनेथकी, वा सुमरण (स्मरण) ध्याने, चिंतवने, जाप आदि करने थकी इत्यादि थकी सातावेदनी कर्मकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय है, तब जीव दुःखीतें सुखी होय है।

बहुरि केवली शास्त्र देव गुरु धर्म चतुर्विध संघ अर जीवादिक इनका स्वरूप जानता थका भी अन्यथा कहने थकी अर कुगुरु कुदेव कुधर्मके धारक तिनकी सराहना करने थकी इत्यादि थकी दर्शनमोह जो मिथ्यात्वकर्म ताकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय है, तब ए जीव तत्काल सम्यग्दृष्टीतें मिथ्यादृष्टी होय है। बहुरि क्रोधादि तेरहकषायके बाह्य कारण पदार्थनके याद करने थकी वा दृष्टी कर देखने थकी तेरहें प्रकार भेदकों धारें चारित्रमोह नामा कर्म ताका जैसा २ भेद का कारन पदार्थनि का संबंध थकी ताका तैसा २ भेदकी उदीरणा होय उदय नैं प्राप्त होय है तहां तिसही भाव रूप होय आत्मा परणवै है, क्रोध के कारणसूं वा अपने कार्यके विगाड़नेवाला वा अपने मानादिक कषायके भंगकरनेवाला वा अपनी आज्ञाको लोपनहारा इत्यादि आपकों दुःखदायक पदार्थनकों याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होने थकी, वा संबंध करने थकी, तत्काल क्रोधनामा चारित्रमोहकी उदीरणा होय, ताहीसमें जीव क्रोधभावकों प्राप्त होय है। तैसें ही मानके कारण–

पदार्थनके संबंध तें मानके, मायाके कारणपदार्थनतें मायाका, वा लोभके कारण धनादिक इष्टसामग्रीके संबंधादिक होतें लोभका वा हास्यके कारण नकली बहुरूपियादिक वा रतिके कारण इष्ट स्त्री-पुत्र वा इष्ट भोजनादिक वा पांचूं ही इंद्रियनके मनोज्ञ विषमादिक वा अरतिके कारण अनिष्ट स्त्रीपुत्रादिक वा अनिष्ट भोजनादिक वा पांचही इंद्रियनका अनिष्ट विषयादिक वा शोकके कारण पदार्थन तें शोकका, वा भयके कारण पदार्थनतें भयका, वा ग्लानिके कारण दुर्गंधादिक सूंघना विष्ठा आदि द्रव्य वा अप्रिय पदार्थन तें जुगुप्साका, वा रूपवानस्त्रीनके याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होने थकी, वा मनका चलायमान संबंध करने थकी पुरुषवेदका, वा रूपवान रूप वस्त्र भूषणादि मंडित पुरुषकों देखने थकी स्त्रीवेदका, वा स्त्रीपुरुष दोनोंनके संबंधादि थकी नपुंसकवेद का इत्यादि जिसजिस चारित्र मोहकर्मके उदयका कारण पदार्थनका संबंधादिक होय तिस ही कर्मकी उदीरणा होय उदय होय है, ताहीके अनुसार भावनकी उत्त्पत्ति होय है। बहुरि खान पानादिक न मिलने थकी, वा रोगादिक होतें औषधादि प्रति कारनि के मिलने थकी वा अन्यथा मिलने थकी, वा अन्यथा क्रिया वा प्रकृतिविरुद्ध खान पानादि थकी,वा विषादिक खाने थकी, वा शास्त्रादिकके घात थकी वा जल अग्न्यादिकके संबंध थकी इत्यादि अनेक घातके कारण पदार्थनके संबंध होतें वा दृष्टिगोचर होतें वा सुमिरण होतें आयु कर्मकी उदीरणा होय मरणाकों प्राप्त होय हैं, जातैं इन पदार्थनका संबंधादि होतें वा न होतें जीवके वैसेही उदीरणा योग्य भाव होय हैं। तहां आयुकर्मकी उदीरणा होय है। अर जहां नाना प्रकार घातके कारण मिलतें वा घात ही तें जीवके आयुकर्मकी उदीरणा होनेयोग्य भावन न हों तो उदीरणा न हो है, तहां अनेक घातादिक होतैंभी मरण न होय हैं। बहुरि एसें ही नामकर्मकी उदीरणाके बाह्यकारण मिलतें नामकर्मकी वा गोत्रकर्मकी उदीरणाके वाह्यकारण मिलते गोत्रकर्मकी उदीरणा होय है। बहुरि अन्तरायकर्मकी उदीरणाके बाह्यकारण मिलते अंतराय की उदीरणा होय है, दान, लाभ, भोग, उपभोग वीर्यरूप कार्य होत संतें भयादिके कारण पदार्थनका निमित्तपाय दाना-दिक पंचभावन तें जीवके परिणाम अंहोठा होय तब तिन भावनिका निमित्तपाय दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय इन पंचप्रकार अंतरायकर्मकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय, तहां दानादिक कार्यनका अभाव

होय है, जो सुख–दुःखके कारण बाह्यपदार्थ अबुद्धिपूर्वक दुर्निवार आपही आप प्राप्त होय तहां तो अन्तरंग कर्मका उदय जघन्य जानना, अर जहां सुख–दुःखका कारण पदार्थनका बुद्धिपूर्वक संबन्ध होने थकी जो कार्य निपजै सो उदीरणा होय कर्मका उदय जानना, जातैं कर्मका उदय जैसा होय तैसाही बाह्य पदार्थनका सम्बन्ध होय, सो तो कर्मकी स्थिति पूर्ण होय कर्मका उदय जानना। अर जहां पहली बाह्यपदार्थनिका निमित्त होतें कर्मका उदय होय सो कर्मकी उदीरणा होय उदय जानना, जैसें पहली पुरुपवेदकी उदय होतें कामासक्त होय स्त्रीका सम्बन्ध करना, सो तो वेदका उदय ते जानना। अर जो पहली ही स्त्रीकों देखि विकारभाव होना सो उदीरणा होय वेदका उदय है एसें सब कर्मनका उदय उदीरणा जानना। बहुरि उदीरणा उदयप्राप्त कर्मनकी होय है जिस गति विषैं जिन कर्मनका उदय पाइये है तिनही कर्मनकी तो उदीरणा होय है, अर जिन कर्मनका उदय न पाइये है तिन कर्मनकी उदीरणा न होय। तहां वेदनी अर आयुकी तो उदीरणा छठा गुणस्थान पर्यन्त ही होय हैं आगै न होय, अर अन्य कर्मकी उदीरणा जहां पर्यन्त अपना उदय होय तहां पर्यन्त ही होय। इति उदीरणावस्था।

आगै उत्कर्षण वा अपकर्षण अवस्था कहिये है—

सत्तामें तिष्ठते जे ज्ञानावरणादिक रूप द्रव्यकर्म तिनका स्थिति वा अनुभाग जीवभावका निमित्त पाय बधिजाना अधिक होयजाना सो उत्कर्षण कहिये, अर घटिजाना–हीन होयजाना, सो अपकर्षण कहिये। जहां पीत, पद्म, शुक्ल लेश्यादि शुभभावनरूप जीव परणवै तहां सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिनका स्थिति व अनुभाग उत्कर्षण करि बहुत होय जाय, बंधिजाय अर ज्ञानावरणादिक चार घातियाका वा असातावेदनीय आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अपकर्षण करि अल्प होजाय--घटजाय। बहुरि जहां कृष्ण लेश्यादि अशुभ भावनरूप जीव परणवै तहां ज्ञाना–वरणादिक चार घातिया वा असातावेदनी आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनका स्थितिअनुभाग उत्कर्षणा करि बधिजाय–बहुत होजाय, अर सातावेदनी आदि शुभ प्रकृतिनका स्थितिअनुभाग अपकर्षण करि अल्प रहिजाय--घटिजाय। नीचले

निषेकनि विषैं जघन्यादि थोड़ी स्थितिअनुभाग धरैं तिष्ठैं थे जे ज्ञानावरणादि कर्मत्व रूप शक्तिको धरैं कर्मस्वरूप पुद्गल तिनकी स्थिति अनुभाग बधि, ऊपर निषेकन विषै उत्कृष्टादि स्थितिअनुभागको धरैं तिष्ठैं हैं जे कर्म तिनके समान बहुत होय जाय सो उत्कर्षण कहिये। बहुरि ऊपरले निषेकन विषैं उत्कृष्टादि बहुत स्थितिअनुभाग धरैं तिष्ठते जे कर्मस्वरूप पुद्गल तिनकी स्थिति अनुभाग घटि नीचले निषेकनि विषैं तिष्ठते जघन्यादिक स्थितिअनुभाग सहित कर्म तिनसमान हीन होय जाय सो अपकर्षण कहिये। एसा उत्कर्षण अपकर्षणका स्वरूप जानना। इति उत्कर्षण अपकर्षण अवस्था समाप्त।

अथ संक्रमण कहिये—

अन्य प्रकृतिनकी परमाणु अन्यप्रकृतिन रूप होय परणवै सो संक्रमण कहिये। जहां मतिज्ञानावरणीकी परमाणु श्रुतज्ञानावरणी रूप होय परणवै, श्रुतज्ञानावरणी की अवधिज्ञानावरणी रूप, अर अवधिज्ञानावरणीकी मनःपर्यय ज्ञानावरणीरूप, व मनःपर्यय ज्ञानावरणीकी केवलज्ञानावरणी रूप, केवलज्ञानावरणीकी मनःपर्यय आदि ज्ञानावरणीरूप होय परस्पर परणवै है, अर मतिज्ञानावरणादिक श्रुतज्ञानावरणादिक होय परणवै, श्रुतज्ञानावरणादिक, मतिज्ञानावरणादिक रूप होय परणावै, जातैं परस्पर सजातीय द्रव्यका सजाती विषैं संक्रमण होय, विजाती विषैं संक्रमण न होय, एसैं ही दर्शनमोह की तीन प्रकृतिनका दर्शनमोह की प्रकृतिरूप, चारित्रमोहकी पच्चीस प्रकृतिनका चारित्रमोहकी प्रकृतिरूप अंतरायकी पांच प्रकृतिनका अपनी अन्तरायकी प्रकृतिन रूप, वेदनीकी दोय प्रकृतिनका सातावेदनीको असातावेदनीरूप, असातावेदनीको सातावेदनीरूप, नामकर्मकी तिराणवे प्रकृति, परस्पर नामकर्मकी प्रकृतिरूप, गोत्रकर्मकी नीचगोत्रकी उच्चगोत्ररूप, उच्चगोत्रकी नीचगोत्ररूप होय, अपनी २ सजाती प्रकृतिनरूप होयपरस्पर संक्रमण होय हैं। विजाती प्रकृतिरूप न परिणवें हैं तैसे आयु कर्मके विना सात कर्मनिका परस्पर संक्रमण होय है अर आयु कर्मके संक्रमण करण नहीं है, तातैं आयुकर्मके संक्रमण करण विना नवकरण ही होय हैं। एसैं सत्तारूप तिष्ठतैं आयुकर्म विना सातकर्म तिनका अपनी २ प्रकृतिनका अपनी २ प्रकृतिन विषैं संक्रमण होय है। सो एसैं संक्रमण करणभी आत्माके भावनिके अनुसार ही है। जहां जो जीव

सुभ लेश्यादिक सुभभावनि रूप परिनवै हैं तहां असातावेदनी आदि असुभ प्रकृतिनका द्रव्य सातावेदनी आदि सुभ प्रकृतिन विषैं संक्रमण हो हैं। अर अशुभलेश्यादिक अशुभभावनरूप परणवै है, तहां सातावेदनी आदि शुभप्रकृतिनका द्रव्य असातावेदनी आदि अशुभप्रकृतिरूप होय परणवैं है एसा संक्रमण विषैं विधान जानना। इति संक्रमण करण।

अब उपशांत करण कहिये है——सत्ता विषै तिष्ठता अपनी २ स्थितिकों धरे हैं ज्ञानावरणादिक कर्मनका द्रव्य जा विषैं, जाकी जावत् काल उदीरणा नहोय, तावत्काल उपशांतकरण कहिये। जो शुभाशुभकर्म, आत्माके तीव्रमंदकषा--यनकों अनुभाग सहित शुभाशुभ भावनकरि जघन्य मध्य उत्कृष्ट स्थितिकूं धरैं बंध्या है सो दृढरूप होय तिष्ठैं है ताकी जावत् उदीरणा होने योग्य अधिकहीन अनुभागको धरैं आत्माके भावन होंय तावत् तिसकर्मकी उदीरणा करनेकों समर्थ न होय, तब वैसेही तीव्रमंद अनुभाग धरया। आत्माके उदीरणा योग्य भावहोंय तब तिसकर्मकी उदीरणा करनेंको समर्थ होय, तातैं जावत्काल जिसकर्मकी उदीरणातो नहोय अर और २ कषाय होय तावत्काल उपशांतकरण कहिये है। इति उपशांतकरण अवस्था।

अब निधत्तिकरण कहिये——सत्ता विषैं तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म तिन विषै तिस कर्मका जावत्काल उदीरणा भी होय, अर संक्रमण भी न होय, तावत् काल निधत्तिकरण कहिये। जो कर्म जैसी स्थितिअनुभागकों धरैं आत्माके शुभाशुभ भावनकरि धरया हैं तैसे ही जावत्काल अति दृढ़ होय निधत्तिकरणरूप होय तिष्ठै है, ताकी जावत्काल उदीरणा वा संक्रमण न करिसकै तावत् तिस कर्मकी निधत्तिअवस्था कहिये है। इति निधत्ति अवस्था।

अब निःकांचित अवस्था कहिये है—सत्तारूप तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म तिन विषैं जिस कर्मके द्रव्यका जावत् काल उदीरणा भी न होय, अर संक्रमण भी न होय, उत्कर्षण अपकर्षण भी न होय तावत् काल तिस कर्मकी निःकांचित अवस्था कहिये, जो कर्म जैसा स्थिति अनुभागकों धरैं आत्माके शुभाशुभ भावनिकरि भरया है--बंध्या है तैसेंही अत्यंतदृढ होय निःकांचित अवस्थाकों धरैं तिष्ठें है, ताकी जावत्काल उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण चारों करण करवाने अस-

मर्थ होय, आत्माका परिणाम, तावत्काल तिसकर्मकी निःकांचित अवस्था जाननी। इति निःकांचित अवस्था १०।

एसैं ए कर्मनकी दश अवस्था होय हैं। सो तिनकों जीवकाभाव ही कारण है। तहां अपूर्वकरण अष्टमगुणस्थान पर्यन्त तो सर्व द ही करण होय हैं ऊपर अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थान पर्यन्त उपशांतकरण, निधत्तिकरण, निःकांचितकरण ये तीनकरण न पाइये, तहां सात करण ही हैं, ऊपर संक्रमणकरणका भी अभावभया, तहां छह प्रकार करण ही है। अर 'उपशांतकषाय ग्यारहवें गुणस्थान विषैं संक्रमणकरण करै है, तातैं तहां सातकरण हैं, जातैं तहां मिथ्यात्वको संक्रमण पाइये है। तिसतैं ऊपर अयोगी विषैं सत्त्व अर उदय दोय करण पाइये है। इति कर्म अवस्था वर्णन।

अब पंच सामान्यभाव अर तिरेपन विशेषभाव, गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं लगावें हैं। प्रथम गुणस्थान पर लिखिये है—

सामान्य पंचभावन विषैं मित्यात्व, सासादन, मिश्र तीनगुणस्थानन विषैं औदयिक, क्षयोपशम, पारिणामक तीनभाव कहें हैं। बहुरि असंयतादि अप्रमत्तपर्यन्त चार विषैं वा उपशम श्रेणीके अपूर्वकरणादि उपशांतकषायपर्यन्त चार विषैं इन आठ विषैं उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, औदयिक, पारिणामिक ये पांचभाव हैं। बहुरि अपूर्वकरणादि क्षीणकषायपर्यन्त चार गुणस्थान विषैं उपशमभाव विना चार भाव पाइय है सयोगी अयोगी दोय विषैं औदयिक क्षायिक पारिणामिक ए तीनभाव पाइये है इति सामान्यभाव।

अब गुणस्थानन विषैं विशेषभाव कहिये है—मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं औदयिक २१ पारिणामिक २ कुमति १ कुश्रुत १ कुअवधि १ एसैं ये ३ तीन चक्षुदर्शन १ अचक्षुदर्शन १ अर क्षयोपशमलब्धि ५ दान १ लाभ १ भोग १ उपभोग १ वीर्य १ एसैं चौंतीस भावपाइये। सासादन विषैंपूर्वोक्त चौंतीस भावविषैं मिथ्यात्व अभव्य दोयभावविना बत्तीस भावपाइये। मिश्रविषैं मिथ्यात्व विना औदयिकका २० अर क्षयोपशमके ११ मति श्रुत अवधि मिश्रज्ञान, चक्षु अचक्षु अवधिदर्शन, क्षयोपशमलब्धि ५ अर जीवत्व भव्यत्व पारिणामिकके २ एसैं तेंतीसभाव पाइये ३ असंयत विषैं मिथ्यात्व

विना औदयिकका २० अर मति श्रुत अवधिज्ञान ३ केवलविना दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ ये बारह क्षयोपशमका अर पूर्वोक्त पारिणामिक का २ उपशमसम्यक्त्व १ अर क्षायिक सम्यक्त्व १ एसैं छत्तीसभाव पाइये। बहुरि देशसंयत विषैं मनुष्यगति-तिर्यंचगति २ कषाय ४ वेद ३ लेश्या पीत-पद्म-शुक्ल ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ए औदयिक का १४ क्षयोपशमका मति-श्रुत-अवधिज्ञान ३ दर्शन केवल विना ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ देशसंयम ए तेरह पारिणामिकका २ अर उपशम सम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतीसभाव पाइये। प्रमत्त विषैं पूर्वोक्त औदयिकका १४ विषैं तिर्यंचगति विना १३ क्षयोपशम विषैं पूर्वोक्त १३ तेरह विषैं देशसंयम विना १२ अर मनःपर्ययज्ञान अर क्षयोपशमचारित्र एसैं १४ पारिणामिकका २ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतीसभाव हैं। अप्रमत्त विषैं प्रमत्त-गुणस्थानवत् अपूर्वकरण विषैं मनुष्यगति १, कषाय ४, वेद ३, लेश्याशुक्ल १, अज्ञान १, असिद्धत्व १ एवं ११ औदयिक के केवलबिना सुज्ञान ४ केवल बिना दर्शन ३ लब्धि ५ एसैं क्षायोपशमिक के १२ पारिणामिक के २ उपशमके २ उपशम सम्यक्त्व उपशमचारित्र, अर क्षायिकके २ क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिकचारित्र एसैं उनतीस भाव हैं। अनिवृत्तिकरणमें २९ भाव हैं अपूर्वकरण गुणस्थानवत्। सूक्ष्मसाम्पराय विषैं मनुष्यगति १ लोभकषाय १ लेश्या शुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ये औदयिकके ५ क्षयोपशमके पूर्वोक्त १२ पारिणामिक के २ उपशम के २ क्षायिकके २ एसैं तेईस भाव हैं। उपशान्तकषाय विषैं मनुष्यगति १ लेश्या शुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ये औदयिकके ४ चार क्षयोपशमके पूर्वोक्त बारह १२ पारिणामिक के २ उपशमके २ क्षायिक का १ एसैं इकतीसभाव हैं। क्षीणकषाय गुणस्थान विषैं औदयिकके ४ क्षायोपशमिकके १२ पारिणमिक के २ क्षायिकका २ ऐसैं वीस भाव। सयोगकेवली विषैं मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ असिद्धत्व १ एसैं तीन औदयिकका पारिणामिकका २ क्षायिक के ९ एसैं चौदहभाव हैं। अयोग केवली विषैं पूर्वोक्त १४ चौदह विषैं लेश्या विना तेरहभाव हैं। गुणस्थानातीतसिद्ध केवलदर्शन १ केवलज्ञान १ क्षायिकसम्यक्त्व १ अनंतवीर्य १ एसा चार तो क्षायिक का अर जीवत्वपारिणामिक १ एसै पंचभाव पाइये। इति गुणस्थान विषैं भावनका निरूपण समाप्त।

अब मार्गणास्थान चौदह विषैं लगाइये है — मार्गणा विषैं नरकगति विषैं तेतीस भाव हैं — पारिणामिकके ३ औदयिकके १३ गतिनरक १ कषाय ४ नपुंसकवेद १ लेश्याशुभ ३ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ एवं तेरह। क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान, क्षयोपशमचारित्र देशसंयम तीन बिना १५ पन्द्रह, उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं तेतीस भाव हैं। तिर्यंचगति विषैं उनतालीस भाव हैं पारिणामिकके ३ औदयिकके ३ तीन गति बिना १८, क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञान अर क्षयोपशम चारित्रबिना सोलह १६ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं उनतालीस भाव हैं ।

मनुष्यगति विषैं तीन गति बिना सर्वभाव हैं। देवगति विषैं सैंतीस भाव हैं। पारिणामिकके तीन ३ औदयिकके तीनगति अर नपुंसकवेद इन चार बिना १७ क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञान, क्षयोपशमचारित्र, देशसंयम बिना १५ उपशम-सम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ यों सैंतीस भाव हैं । इंद्रियमार्गणा विषैं एकेंद्रियकें चौबीस २४ भाव हैं पारिणामिकके ३ औदयिकके १३ तिर्यंचगति १ कषाय ४ नपुंसकवेद १ लेश्या अशुभ ३ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ यों तेरह, क्षायोपशमिकके ८ कुमतिकुश्रुतज्ञान २ अचक्षुदर्शन १ लब्धि ५ यों आठ सर्व चौबीसभाव। बेंद्री तेंद्री कें भी पूर्वोक्त २४। चौंद्रियकें २५ पूर्वोक्त २४ अर चक्षुदर्शन १ असंज्ञीपंचेंद्रियकें २८ पारिणामिकके ३, औदयिकके तीन गति पद्म शुक्ल दोय लेश्या इन पांच बिना १६, क्षयोपशमके ९ कुमतिकुश्रुतज्ञान २ अर चक्षु अचक्षुदर्शन २ लब्धि ५ एवं ९ अैसैं अट्ठाईस भाव हैं । संज्ञी पंचेंद्रियके सर्व तिरेपनभाव हैं । इति इंद्रियमार्गणा।

कायमार्गणा विषैं पंचस्थावरकाय विषैं प्रत्येक में २४ भाव हैं एकेंद्रवित्। त्रसकाय विषैं सर्व ५३ भाव हैं। इति काम मार्गणा।

योगमार्गणा विषैं सत्यमन योग अनुभयमनयोग सत्यवचनयोग अनुभयवचनयोग इन चार योगन विषैं प्रत्येक २ सर्व तिरेपनभाव हैं। असत्यमनयोग उभयमनयोग असत्यबचनयोग उंभयबचनयोग इन चार योगनविषैं क्षायिक के

सातभाव विना अर क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र सहित प्रत्येक में ४६ भाव हैं। बहुरि औदारिककाय योग विषैं देव नरक दोयगति विना इक्यावनभाव हैं औदारिकमिश्रकाययोग विषैं ४५ उपशम के २ क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान १ अर अवधिज्ञान १ संयमासंयम १ क्षयोपशम चारित्र १ एवं ४ एसें पूर्वोक्त ५१ विषैं छह विना पैंतालीसभाव हैं ४५। वैक्रियक काय विषैं ३९ भाव हैं पारिणामिक के ३ औदयिक के मनुष्य १ तिर्यंच १ दोयगति विना १९ क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान १ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ तीनविना १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ यों गुणतालीस ३९। वैक्रियकमिश्र में विभंग विना ३८ भाव हैं। आहारक आहारकमिश्र विषैं प्रत्येक में २७ पारिणामिक के अभव्यभाव विना २ औदयिक के ११ मनुष्यगति १ चारकषाय ४ पुरुषवेद १ शुभलेश्या ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ और ११ ग्यारह अर क्षयोपशम के तेरह १३ सुज्ञान ३ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ और तेरह अर क्षायिक सम्यक्त्व १ यों सत्ताईस २७। कार्माणयोग विषैं ४८ भाव हैं। पारिणामिकके ३ औदयिकके २१ क्षयोपशमके १४ मनःपर्याय और विभंग दोय बिना ज्ञान ५ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ और १४ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकके ९ यों अड़तालीस भाव हैं। इति योगमार्गणा।

अब वेदमार्गणा विषैं कहिये हैं—पुरुषवेद विषैं ४३ पारिणामिकके तीन ३ औदयिकके नरकगति १ स्त्री नपुंसक दोय वेद इन तीन बिना १८ क्षयोपशमके १८ उपशमके दोय २ क्षायिकके २ यों तियालीस। स्त्रीवेद विषैं बयालीस ४२ पारिणामिकके ३ औदयिकके नरकगति १ पुरुष नपुंसकवेद २ इन तीन बिना अठारह क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञानबिना १७ उपशमके २ क्षायिकके २ यों बयालीस ४२। नपुंसकवेद विषैं ४२। पारिणामिकके ३ औदयिकके देवगति १ स्त्री--पुरुष दोय २ वेद इन तीन विना १८ क्षयोपशमके मनःपर्यायज्ञान बिना १७ उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं बयालीस ४२। इति वेदमार्गणा।

कषाय मार्गणा विषैं क्रोध मानमायालोभ विषैं प्रत्येक ४३ पारिणामिकके ३ औदायिकके स्वकीय रहित तीनकषाय

विना १८ क्षयोपशमके १८ उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं तेतालीस। इति कषायमार्गणा।

ज्ञानमार्गणा विषैं कुमति कुश्रुत विभंगविषैं प्रत्येक २ चौंतीसभाव हैं मिथ्यात्व गुणास्थानवत्, पारिणामिकके ३ औदयिक के २१ क्षयोपशमके १०—कुज्ञान ३ दर्शन २ लब्धि ५ एसैं ३४। मतिश्रुत अवधि तीन सुज्ञान विषैं ४१ पारिणामिकके २ अभव्यविना, औदयिकके मिथ्यात्वविना २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञान विना १५ उपशमके २ क्षाकिके २ एसैं इकतालीस ४१। मनःपर्ययज्ञान विषैं इकतीस ३१ पारिणामिकके २ औदयिकके ग्यारह ११ मनुष्यगति १ कषाय ४ पुरुषवेद १ लेश्याशुभ ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एसैं ग्यारह क्षयोपशमके १४ चौदह ज्ञान ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशम चारित्र १ एवं चौदह १४ उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं इकतीस। केवल ज्ञानविषैं चौदह १४ पारिणामिकके २ औदयिकके मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ असिद्धत्व १ एवं तीन क्षायिकके ९ एसैं चौदह १४।

संयम मार्गणाविषै सामायिक छेदोपस्थापना विषैं ३३ पारिणामिका २ औदयिकके १३ मनुष्यगति १ कषाय ४ वेद ३ लेश्या शुभ ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं तेरह क्षयोपशमके १४ ज्ञान केवलविना ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशम सम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ एवं चौदह उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं तेतीस, परिहार विशुद्धिविषैं २७ पारिणामिकके २ औदयिकके ११ मनुष्यगति १ कषाय ४ पुरुषवेद १ लेश्याशुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं ग्यारह, क्षयोपशम के तेरह १३ सुज्ञान आदि का ३ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ एवं तेरह, क्षायिकसम्यक्त्व १ एवं सत्ताईस। सूक्ष्मसांपराय विषै तेईस २३ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवत। यथाख्यात विषैं २९ पारणामिक के २ औदयिक के ४ मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं चार क्षयोपशम के १२ केवल विना ज्ञानचार ४ दर्शन ३ लब्धि ५ एवं बारह उपशम २ क्षायिक ९ एसैं उनतीस। संयमासंयम विषैं इकतीस ३१ देशसंयतगुणस्थानवत्। असंयम विषैं ४१ पारिणामिक के तीन ३ औदयिक के २१ क्षयोपशमके पद्रंह १५ मनः पर्ययज्ञान १ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ इन तीन बिना पन्द्रह १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतालीस ४१। इति संयममार्गणा।

दर्शनमार्गणा विषैं चक्षुदर्शनविषैं क्षायिक के सात विना ४६। अचक्षुदर्शन विषैंभी छयालीस ४६। अवधिदर्शन विषैं मतिश्रुतअवधिज्ञानवत् ४१। केवलदर्शन विषैं केवलीज्ञानवत् १४। इति दर्शनमार्गणा।

लेश्या मार्गणा विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या विषैं प्रत्येक प्रत्येक ३६ पारिणामिकके २ औदायिक पांच लेश्या बिना १६ क्षयोपशम मनःपर्ययज्ञान क्षयोपशमचारित्र देशसंयत इन तीन बिना १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिक-सम्यक्त्व १ एसें ३६। पीत, पद्म दोय लेश्या विषैं प्रत्येक प्रत्येक ३८ पारिणामिकके ३ औदायिकके नरकगति अर पांच लेश्या एसैं ६ बिना १५, क्षयोपशमके १८ अठारह, उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसें अड़तीस। शुक्कलेश्या विषैं नरकगति १ पांच लेश्या एसैं छह औदायिकका बिना ४७। इति लेश्या मार्गणा।

भव्यमार्गणा विषैं भव्यके अभव्यबिना ५२ अभव्यके भव्य भावबिना ३३ मिथ्यात्वगुणस्थानवत्। इति भव्यमार्गणा।

सम्यक्त्वमार्गणा विषैं उपशमसम्यक्त्व विषैं ३८ पारिणामिकके २ औदायिकके मिथ्यात्वबिना २० क्षयोपशमके १४ चौदह केवलबिना सुज्ञान ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ एव चौदह उपशम २ एसैं अड़तीस। क्षयोपशमसम्यक्त्व विषैं ३७ पारिणामिकके २ औदायिकके मिथ्यात्वबिना २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञानबिना १५ एसैं सैंतीस ३७। क्षायिक विषैं ४६ पारिणामिकके २ औदायिकके मिथ्यात्व विना वीस २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञान अर क्षयोशमसम्यक्त्व विना १४ उपशमचारित्र १ क्षायिकके ९ एसैं छियालीस। मिथ्यात्वमें ३४ मिथ्यात्वगुणस्थानवत्। सासादनमें ३२ सासादनगुणस्थानवत्। मिश्रमें ३३ मिश्रगुणस्थानवत्। इति सम्यक्त्वमार्गणा।

संज्ञी विषैं सर्व तिरेपन ५३ असंज्ञी विषैं २८ पारिणामिकके तीन ३ क्षयोपशमका ९ कुज्ञान २ दर्शन २ लब्धि ५ एवं नौ, औदयिकक मनुष्य नरके देव तीन गति अर पद्म, शुक्क, दोय लेश्या इन पांच विना सोलह १६ एसैं अट्ठाईस २८।

आहारकमार्गणा विषैं आहारक विषैं सर्व ५३। अनाहारक विषैं ४८, विभंग १ मनःपर्यय १ दोय ज्ञान अर क्षयोपशमचारित्र अर देशसंयम इन चार विना क्षयोपशमके १४ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकके ९ पारिणामिकके ३ औदयिक

के २१ यों अड़तालीस । इति आहारमार्गणा ।

एसैं गुणस्थान मार्गणास्थान विषैं संभवते भाव कहे । अब एकैंकाल एकजीव के अठारह भाव पाइये—तीन पारिणामिकभाव विषै दोय भाव पाइये जीवत्व १ भव्यत्व १, वा जीवत्व १ अभव्यत्व १, औदायिकभाव विषैं ७ पाइये चार गति विषैं एक गति १ चार कषाय विषैं कषाय १ तीनवेद विषैं वेद १ छह लेश्या विषैं लेश्या १ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एसैं सात । बहुरि पांच संयम विषैं असंयम १ देशसंयम ? क्षयोपशम चारित्र १ उपशमचारित्र १ क्षायिकचारित्र १ ईर्यापथ एक होय, अर आठ ज्ञान विषैं एकज्ञान होय १ चारदर्शनमें एकदर्शन होय १, उपशम क्षयोपशम क्षायिक तीन सम्यक्त्व विषैं सम्यक्त्व १, लब्धि ५ एसैं अठारह होंय । तहां नरकगति विषैं सत्तरह १७—पारिणामिक के २ तीन कुज्ञान विषैं १ तीनसुज्ञान विषैं १ तीन दर्शन विषैं ? गति नरक १ कषाय १ वेद नपुंसक १ तीन अशुभलेश्या विषैं १ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ लब्धि ५ तीन सम्यक्त्व विषैं १ एसैं सत्तरहभाव पाइये १७ । तहां मिथ्यात्वगुणस्थान विषैं सोलह १६ सम्यक्त्व विना । सासादन मिश्र विषैं मिथ्यात्व विना १५ । असंयत विषैं सुज्ञान तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्वसहित १६ ही पाइये । तिर्यंचगति विषैं १७—पारिणामिक के २ तिर्यंचगति १, तीनवेद विषैं १, कषाय १, छहलेश्या विषैं १, मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ संयम असंयम देशसंयम विषैं १, छहज्ञान विषैं ३ दर्शनविषैं १ लब्धि ५ तीन सम्यक्त्व विषैं १, एसै सत्तरह १७ । तिन विषैं मिथ्यात्वमें सम्यक्त्व विना असंयमसहित १६. सासादनमें मिथ्यात्व विना १५ मिश्रमें पन्द्रह १५ असंयममें तीन सम्यक्त्वमें एक सम्याक्त्व सहित, सुज्ञान सहित १६ देशसंयत विषैं—देशसंयमसहित तीन शुभलेश्या में एक लेश्या सहित १६ इति । मनुष्यगति विषैं—मनुष्यगतिसहित सर्व १७ भाव पाइये । मिथ्यात्वगुणस्थानमे—सम्यक्त्व विना सोलह १६, सासादनमें मिथ्यात्व विना १५, मिश्रमें १५, असंयत मे सुज्ञान सहित अर तीनसम्यक्त्व मे एक सम्यक्त्वसहित १६ देशसंयतमें असंयमरहित देशसंयम सहित अर तीन शुभलेश्या में एक लेश्या सहित १६ । प्रमत्त अप्रमत्त में चारज्ञान तीनदर्शनमें एक क्षयोपशमचारित्र सहित १६ । अपूर्वकरण

अनिवृत्तिकरण उपशमश्रेणिमें उपशमसम्यक्त्व वा क्षायिक सम्यक्त्व दोय विषैं एक, उपशमचारित्र शुक्लेश्यासहित १६, अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण क्षपकश्रेणिमें--क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्रभाव १६ पाइये। बहुरि सूक्ष्मसांपराय उपशमश्रेणि में एक वेद रहित १५ भाव पाइये। बहुरि उपशांतकषाय विषैं एककषाय विना १४ भावपाइये। बहुरि सूक्ष्मसांपराय क्षपक श्रेणीमें वेदविना १५ भाव पाइये, क्षीणकषाय विषैं कषाय विना १४ भाव पाइये। सयोगकेवलीके मनुष्यगति १ शुक्ल-लेश्या १ असिद्धत्व १ केवलज्ञान १ केवलदर्शन १ क्षायिकसम्यक्त्व १ क्षायिकचारित्र १ अर पांच क्षायिक लब्धि ५ पारिणामिक के २ एसें चौदहभाव पाइये। अयोगकेवलीके लेश्या विना १३ भाव पाइये इति। देवगति विषैं--देवगति-सहित अर पुरुष स्त्री दोय वेद विषैं एकवेद सहित १७ भाव पाइये, तहां मिथ्यात्वगुणस्थान विषैं सम्यक्त्व विना १६, सासादन में मिथ्यात्वविना पन्द्रह १५, मिश्र विषै १५, असंयत विषैं सुज्ञान सहित अर तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्व एसें सोलहभाव पाइये, एसैं एकै काल एकै जीव के चारों गति विषैं भावसंभवनेका निरूपण किया।

या प्रकार सर्वभावनके अन्तर्यामी सर्वदर्शी सर्वज्ञ एसें जिनेन्द्र तिनने जीवनके संसारतें उद्धार करनेके अर्थ जीवनके भावनकी संख्या, भावनका स्वरूप, भावनकी प्रवृत्ति, भावनका कार्य, भावनका फल, हेय उपादेयसहित दिखाया सो एसा भगवन्त वाक्य, मुनि जे सुधी पुरुष हैं तिनको तजन करना ग्रहणकरना, जे भाव हेय हैं तिनका तजन करना, जे भाव उपादेय हैं तिनका ग्रहण करना।

इहां शिष्य प्रश्न करै है--हे स्वामी! इनविषैं हेयभाव कौनसे हैं? अर उपादेयभाव कौनसे हैं? अर इनका तजनं, ग्रहण, हमसे अशक्त जीवन ते कौन मार्गतैं बनै, सो कृपा करि संक्षेपतैं उपदेश कीजिये? एसा प्रश्न होतें गुरु उत्तर करैं हैं---एक ही जीवके तिरेपनभाव, तिनविषैं पारिणामिक भावका तो ग्रहण करना जातैं ये जीव के कर्मन की सापेक्षा रहित स्वभाव भाव हैं, कर्मजन्य-उत्पन्न भये जे विभावभाव तिनही रूप होय अनादिकालको प्रवृत्यो ताकरि इनकी भावन-की गौनता होय, इनरूप प्रवृत्ति अनादि हीतें छूट गई, इनरूप अवस्था कदे भई नही, ताहीते संसार समुद्र विषैं डूबा नाना

प्रकारके दुःखहिं सहतो नहिं दीखे पार जाको । बहुरि तहां तिष्ठता नानाप्रकार कर्म बांधि तिनके फलको नानाप्रकार भोगता संता पारिणामिक भाव अतिक्षीण भये तापरभी नाशको प्राप्त न भया एसा जो तूं स्वयमेवही कर्मकी उलट पलट होतैं इस मनुष्यभवकों प्राप्त भया, उपदेश धारणेंकों योग्य भया, जातैं चेतना तीन प्रकार है-कर्मफलचेतना १ कर्मचेतना २ ज्ञानचेतना ३ अपने शुभाशुभ परिणामनकरि बांधे पूर्वे शुभाशुभकर्मनतैं सत्ता रूप थे ते अपनी स्थितिके क्षीण होतैं इस उदय मनुष्य-भवको प्राप्त भया शुभाशुभकर्म ताकरि सुखदुःखके कारण पदार्थनका संबंध भया ताकरि उत्पन्न भया सुखदुःखरूप कर्म(उदय)का फल ताको पुरुषार्थरहित अनुभवता जीवका ज्ञान सो कर्मफलचेतना कहिये १, सो कर्मफलचेतनाके धारक एकेन्द्री है, नही है सुखदुखके कारण पदार्थनके जानने रूप ज्ञान जिनकै, अर नहीं है सुखके कारन पदार्थके मिलावने की इच्छा अर शक्ति जिनकै अर नही है दुखके कारण पदार्थनकों परिहार करने कों वा भाज (ग) ज्ञानेकी इच्छा अर शक्ति जिनकें एसे एकेन्द्री जीव कर्मके उदयकरि उत्पन्न भया सुख अर दुःखरूप फल ताको आ (अ) शक्त हुवा भोगवै है, तातैं इनके कर्मफल चेतना कहिये । बहुरि शुभाशुभकर्मके उदयते संबंध रूप भये वा उत्पन्न भये सुखदुखके कारण शुभाशुभपदार्थ तिनके मिलावनेकी वा परिहार करनेकी भाज जानेकी इच्छा व शक्ति सहित ज्ञान सो कर्मचेतना कहिये, सो कर्मचेतनाके धारक वेंद्रि आदी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त त्रस जीव है, जातैं सुखके कारण पदार्थनकों मिलावने अर सुखी होने की इच्छा करै हैं।

बहुरि शक्तिको धरै हैं ताकरि परिहार करै हैं भाजी जाय है तातैं इनको कर्मचेतना कहिये२ बहुरि जिनके शक्ति रहित भये हैं अर नाशकों प्राप्तभये है सुखदुखके कारण शुभाशुभ अघातिया कर्म, अर क्षयकों प्राप्त भये हैं मोह आदी घातिया कर्म, ताकरि सर्वज्ञ सर्वदर्शी रागद्वेष रहित अनंत शक्तिको धरे ज्ञाता द्रष्टा भावकों प्राप्त भया तिनका ज्ञान सो ज्ञान चेतना कहिये । जातै ज्ञानचेतनाके धारक संसार विषैं तिष्ठते एसे सयोगी अयोगी भगवान हैं । एसा तीन प्रकार चेतनाका स्वरूप है । सो कर्मफलचेतनाके धारक एसे एकेन्द्रि जीव, ते तो सर्व प्रकार असमर्थ हैं तातैं उपदेश योग्य ही नाहीं । बहुरि कर्मचेतनाके धारक एसे वेद्री तेद्री चौइन्द्री असज्ञीपंचेन्द्रीय तिनके मन आदिका रहितपमा थकी सुखी होने थकी,

चौवीस भावन का तौ तजन करना बहुरि उगनीस भावनका ग्रहण करना प्रथम ही मति ज्ञान वा श्रुतज्ञान कों पुष्टकरना, तिनकी पुष्टताका कारण अर क्षयोपशम चारित्रभावरूपमुनिपद का कारणभूत सम्यक्त्वसहित देशसंयमका ग्रहण करना, बहुरि मतिज्ञानकी श्रुतज्ञानकी अत्यंत पुष्टता का कारण अर चक्षु अचक्षु अवधि तीन दर्शनकी पुष्टताका वा उत्पत्तिका कारण एसा क्षयोपशमचारित्रभावरूपमानिपद ताका ग्रहण करना बहुरि क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र का कारणभूत उपशमसम्यक्त्व अर उपशमचारित्रभावका ग्रहण करना, बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र केवलज्ञान केवलदर्शन अर पंच क्षायिक लब्धि ए सप्तकार्य रूपभावनि को कारण एसे क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र तिनकूं ग्रहण करना इन भावन पर्यन्त जीव अंतरात्मा है बहुरि क्षायिकचारित्र का बल करि चार घातियाकर्मन को नाश करि केवलज्ञान १ केवलदर्शन १ लब्धि ५ इन सप्तभावन का प्रगट होना तहां ए जीव परमात्मा होय है जहांपर्यन्त या जीवकें मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधीचतुष्क का उदयपाइये हैं तहांपर्यंत तो यह पर्यायदृष्टी है उदयका कर्मजन्य सेतीं उदयपावै है वा जैसी अन्य जीव पुद्गलादिक की पर्याय का संबंध मिलै है ताही रूप होय प्रवर्तै हैं तातैं जाके बाह्यदृष्टि हैं अंतरदृष्टि दिव्य नाहीं मिथ्याज्ञान है सम्यक्ज्ञान नाहीं मिथ्यादर्शन है सम्यक् श्रद्धान नाहीं मिथ्याप्रवृत्ति नै सम्यक् प्रवृत्ति नाहीं तहांपर्यंत बहिरात्मा कहिये १ बहुरि जिसकाल तैं याकैं तत्वज्ञानभया सम्यग् दर्शन की प्राप्तिभई ताही बल तैं बाह्यपर्यायदृष्टि छूटी अर अंतरद्रव्यदृष्टि भया यथाश्रद्धान यथाज्ञान यथाप्रवृत्ति होताभया यथा अयथादेवगुरुधर्म आप्त आगमपदार्थ विषैं सांचा जानताभया ताहीकालतें चतुर्थगुणस्थानतें ले क्षिणिकषाय बारमा गुणस्थानपर्यंत ये अंतरात्माकहिये ।

बहुरि मलरूप चारघातियाकर्मनका नाशहोतें अपने अनंतचतुष्टयरूप स्वस्वभावप्रगट भया तहां तें ले सिद्धभगवान पर्यंत परमात्मा कहिये एसा परमकल्याणका कारण शिष्यप्रति उपदेश होताभया । या प्रकार जीवके स्वभावभाव १ विभावभाव १ शुद्धभाव इन तीनभावनका अर परभाव जेवर्णादिकका पुद्गल भावनका प्रकाशरूप एसाये सार्थक नामका धारक "भावदीप" नामाग्रन्थ ताकी रचनाभई । सो ये कपोल कल्पित नाहीं है सर्वभावनके अंतरजामी एसे श्री वर्धमानदेवाधिदेव तिनके मुख-

रूप चन्द्रमा थकी उत्पन्नभई सोये कपोलकल्पितनाहीं हैं दिव्यध्वनिरूप चांदनी करि प्रकाशितभये जीवके सुद्धभावपरम कल्याण के कारण रूप रत्न, तिनकों सर्वसंघ के नायक एसे श्री गौतमगणधर देव ते द्वादशांगरचना विषैं मुख्यपनैं धरते-भये जातैं सर्वमोक्षमार्ग विषैं भाव ही प्रधानरूप है जातैं स्वपर का भाव ही तें विभाग होय है भावविना स्वपरका जानना होता नाहीं स्वपर कों जाने विना स्वभाव परभाव का ज्ञाता होय नाहीं। स्वभाव परभाव का ज्ञान विना परभाव कों त्याग करि अपने स्वभान विषैं स्थिरीभुत होय केसे तिष्ठै बहुरि स्वभावविषैं थिरीभूतभये विना रागादिकविभावभाव अर ज्ञानावरणा-दिकपरभाव का रुकना कैसें होय। बहुरि कर्म की निर्जरा न होय तव मोक्ष कहां ते होय । तातैं भावन के जानने ही कों परमकारणपना संभवै है ताही तें मोक्ष के कारणजीवादिक सप्ततत्वन विषैं जीव अजीव ही दोय तो द्रव्यरूप मूलतत्व कहे अर आस्रवादि पंच, भाव तत्व कहे हैं बहुरि मोक्ष के कारण बाह्यदेवगुरुधर्म आप्त आगमपदार्थ तिनका यथा अय-था का जानना वा तिनविषैं यथाश्रद्धान वा तिनविषै यथावत् प्रवृत्ति भावन के जानने ही तें होय हैं बहुरि पूजा दान शील तप संयम जप सर्वधर्म अंग, भावन के ज्ञान विना अयथा होंय हैं सर्व ही धर्म अंग स्वभावभावसहित होतसंते स्वर्ग मोक्ष के कारण होंय सुफल होंय परभाव सहित होत ऐसे निष्फल होंय हैं विभावभाव सहित होतसंते नरकनिगोदरूप खोटे फल के दाता होंय हैं तातैं भावका जानना प्रधानभुत जानि गणधरस्वमी द्वादशांग विषैं इनकी प्रधानरचनाकरि ताके अनु-सार सम्यक्ज्ञानी बड़े २ आचार्य ग्रंथन विषैं रचना करते आए तिनही अनुसार आचार्य श्री नेमिचन्द्रादिकन करि रचित चार अनुयोग रूप जिनकी अवार प्रवृत्ति पाइये एसे गोम्मटसारादिक शास्त्र तिनके अनुसार रचना करी है सो या विषैं कोई मेरी बुद्धि की मंदता के वश तें अन्यथाभी रचनाभई होसी सो मैं कषायन तैं अन्य रचना नहीं करी है मेरी अज्ञा-नता का दोष जानि सम्यक् ज्ञानी पंडितजन हैं ते मेरे पर अनुग्रह करि शुद्ध कर लैना अज्ञानी जान रोष न करना जे महंत बड़े पुरुष हैं ते बालकन की नानाप्रकार कुचेष्टा होतें भी तिनपर रोष नाहीं करैं हैं।

इस "भावदीपक" ग्रन्थकी भाषा वचनिका करि रचना करी सो हम सारिखे अल्पबुद्धीन के पढ़ने अर्थि वा

इसतैं सम्यक्ज्ञान करने के अर्थि वा सुगमता तैं धारण रहने कै अर्थि वा अर्थ विस्मरण होतसंतैं शीघ्र यादकरने के अर्थि करी है कोई क्रोध मान माया लोभ जग बड़ाई आदि कपायपोपने के अर्थि नाहीं करी है बहुरि मूर्खनके अर्थि नाही करी है सम्यमक्ज्ञानी पंडितनके अर्थि करी है वा भद्रपरिणामी अपने कल्याण के अर्थि अज्ञानीन के ज्ञान करने के अर्थिं करी है। कैसे हैं मूरख, नाहीं जानैं हैं जैनमत का रहस्य आम्नाय अर किंचित् शब्दज्ञानकरने तें दग्धभये हैं—पंडिताई के अभिमान विषैं, क्रूर हैं स्वभाव जिनका नाहीं देख सकैं है परायेगुणरूपभाव, अर दोष ही का ग्रहण है जिनकें, नाहीं सुहावै है पराया कर्त्तव्य जिनकों बिना देखे, बिना विचारे दूरही तजें हैं पराये गुणरूप कार्यमें लगावे है दोष जिनको ऐसे ए सकषाय स्वपरके अकल्याण के कारण तिनके अर्थि भावदीप की रचना नाहीं करी है १ बहुरि कैसे हैं मूर्ष, मिथ्यादृष्टि कुबुद्धिपंडितन करि ग्रहण कराया अर्थ ताकों अनेकप्रकार पंडितनकरि शीख दीजिये है अर बातन पर ही धरैं हैं दृष्टि अर ताहीं कों सत्यमानें हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है २ बहुरि कैसे हैं मूर्ख, आयगये है कुबुद्धि मिथ्यादृष्टि विषयिन विषैं, नहीं है गुणदोप का ज्ञान जिनको तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ३ बहुरि कैसे हैं ? मूर्ख, खोटे अर्थ का ग्रहण जानते थकी भी हठ करना ही है पक्ष जिनकी तिनके अर्थ भी भावदीपक की रचना नाहीं करी है ४ बहुरि कैसे हैं ? मूर्ख, नहीं हैं आप विषैं ज्ञानादि गुण का लेश तौभी आपको गुणवानमाने हैं आपकों गुणवान जनावने के अर्थ मूरखन सों चर्चा करते फिरैं हैं झगड़ते फिरैं हैं ज्ञानीन सों लड़ते फिरैं हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ५ बहुरि कैसे हैं ? मूरख नाहीं है परभवकी आस्था जिनके इसही भव के कार्यन विषैं संतुष्ट हैं नाहीं सुनैं हैं सन्मुख होय सिद्धान्त का बचन, तिनके अर्थ भी भावदीपक की रचना नाहीं ६ बहुरि कैसे हैं ? मूरख, ज्ञानकर हीन हैं अनेकप्रकार उपदेश होतैंभी रंचमात्रभी नाहीं समझैं हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ७

बहुरि कैसे है ? मूरख, मान महंतता वा पेटभरनेके अर्थ धऱ्या हैं खोटा भेषजिन वा अयथा जिनमततें जोड़ी है आजी-

विकाजिन ताके अर्थ आप महंतबन आप खोटाउपदेशदेय भोलेजीवनका तन, धन, मन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान घोटे धर्म विषैं प्रवर्तावैं हैं ताकरि तिनका अकल्याण करैं हैं एसे कुबुद्धि मूरखनके अर्थ या भावदीपक की रचना नाही करी है ८ इत्यादि इन अष्टप्रकारादि मूरखन कैं सत्यधर्म का ग्रहण सर्वथा होय नाहीं। इति तो कौन के अर्थ करी हैं ? जे सम्यक्ज्ञानी, गुणदोष के जानन हारे, नहीं हैं पुरुषनसों राग–द्वेष जिनके, जिनमत की रहस्य आम्नाय जाननहारे पंडितपुरुष तिनके अर्थ करी है वा जे भद्रपरिणामीमंदकषाय अपने अकल्याण के अर्थिभये हैं जिनमतके सन्मुख, तिनके ज्ञान होने के अर्थ भावदीपक की रचना करी है। इहां प्रश्न जो तुमकरि तो इन भावन की रचना करी नाहीं तो इनकी रचना सम्यक्ज्ञानीपंडितन करि किये संस्कृतप्राकृरूपमहानग्रन्थ तिनविषैं तो थी ही अब इनकों भाषा वचनिका विषैं काहे को करी वा और महंत ग्रन्थन की अन्यजीवनकरि करी देशभाषा ताका प्रयोजन कहा (क्या ?) संस्कृत प्राकृतरूप भाषा तीन लोक विषैं प्रसिद्ध ताकूंछेड़ि अपरभ्रमरूप देशभाषा विषैं शास्त्ररचना काहे को करिये ताका समाधान कालदोसतैं सम्यक्ज्ञानी वीतरागप्रवृत्तिके धारक यथार्थवक्तानकातो अभावभया अर अवसर्पिणी कालका निमित्ततं जिनमत विषैं कुलिंगके धारक, प्रचंड हैं क्रोध मान माया लोभादिक कषाय जिनके अर पंच इंद्रियनके विषयमैं हैं आसक्तभाव जिनके साक्षात् गृहीत मिथ्यात्वके पोसने तें जिनमतके विषैं वक्ताभये अधिष्ठाता भये, जिनसूत्रके अर्थ अन्यथा करनेलगे ताकरि भोले जीव तिनकी बताईप्रवृत्ति ताही विषैंप्रवर्तते भये, नहीं है सत्यसूत्रका ज्ञान जिनकों ताकरि महंतशास्त्रनका ज्ञान तिनतें अगोचरभया ताकरि मूढताप्राप्तभये हीनशक्तिभये सत्यवक्ता सांचोंजिनोक्तसूत्रके अर्थग्रहणकरावनेहारा कोई रहा नाहीं तातैं सत्य जिनमतका तो अभावभया तब धर्मतें परान्मुखभये तब कोई कोई गृहस्थ सुबुद्धि संस्कृतप्राकृतका वेत्ता भया ताकरि जिनसूत्रनको अवगाह्या तब एसा प्रतिभासता भया जो सूत्रके अनुसार एकभी श्रद्धान ज्ञान आचरणनकी प्रवृत्ति न करैं हैं अर बहुतकाल गया मिथ्याश्रद्धान ज्ञान आचरणकी प्रवृत्तिकों, ताकरि अतिगाढ़तानैं प्राप्तभई तातैं मुख करि कही मानैं नहीं तब जीवनका अकल्याण होता जानि करुणाबुद्धि करि देशभाषाविषैं शास्त्ररचना करि तब केई

विषैं ग्रह व्यंतरादिककौं बाधि पाहाड़ी शीतलादिककौं देव मानना, इनके अर्थि तन, मन, धन बहुत उल्लास सेती बहुत खरचना, वा थोड़ा खरचना अरु बहुत प्रगट करनो, वा पहिलाकूं देखता बहुत भक्ति करनी, अरु न देखतां न करनी इत्यादि देवविषैं माया जाननी ।

बहुरि उपासक तौ निर्ग्रंथ गुरुका रहना, अरु बाह्य कुलिंगी पाखंडीनकूं सेवना, वा गुरु पास निंदा गर्हा करनी इत्यादि गुरुविषैं माया है ।

बहुरि व्रत, तप, संयम, आखड़ी, अनेक प्रकार यम नियम बाह्य तौं यथावत दिखावना, अरु अंतरंग विषैं यथावत न धारना इत्यादि धर्मविषैं माया जाननी ।

बहुरि सत्यवक्ताके मुखथकी धर्मका तथा तत्वका यथावत कथनसुनि आरंभ करना, व सराहना, अरु पाछै श्रद्धान असत्य वक्ताकरि कह्या तत्वनका करना, ताकी सराहना करनी, अरु सत्यवक्ता तथा सत्यकथनकी निंदा करनी इत्यादि आसविषैं माया जानना ।

बहुरि आगमविषैं निरूपण तौ औरही भांत है, अर ताका कथन और भांति करना, शास्त्रका अर्थ झूंठा करना, अपने अभिप्रायकूं पोषता शास्त्र रचना, अरु शास्त्रविषैं नाम बड़े आचार्यका धरना, वा कपोलकल्पित मिथ्या श्लोक काव्य बनाय शास्त्रमें धरना, वा लोकनकूं सुनावना, अर नाम शास्त्रको लेना, ये आगम आचार्यके कीये हैं, आगमके शास्त्रका कह्या वचन है, श्लोक है, काव्य है, इत्यादि आगमविषैं माया करनी ।

बहुरि तत्वनका स्वरूप और है, अरु लोकन प्रति औरही कहना, हेयको उपादेय कहना अरु उपादेयको हेय कहना, इत्यादि पदार्थनिविषैं माया जाननी ।

— इति अनंतानुबंधी माया कषायभावः —

— आगे अनंतानुबंधी लोभ कषाय कहिये है —

अति तीव्र अनंतानुबंधी लोभ कषाय कर्मके उदयकै वशीभूत होता हुआ आत्मा तीव्र लोभको विस्तारै है। नहीं दीखै है इसभव तथा परभव संबंधी अकल्याण, आपकूं जो धनादिककी वांछा करत संतो अनंतानुबंधीके अनेक विषम कार्य करै है, चोरी करै है, धाड़ा दे है, गांव तथा गैलामारे है, मनुष्य मारै है, राजद्वार विषैं चोरी करै है, पराये मंदिरविषैं धसि जाय है, नाहीं धोरहै आस जीतव्यकी। बहुरि राजादिकनकी चाकरी करै है। तहां स्वामीके घर विषैं चोरी करना, स्वामीका बिगाड़करि खोंस लेना, वा झूठेका पक्षी होय खोंसि लेना, झूठी दगा लगाय डर दिखाय खोंसि लेना, वा थोड़ी जमा विषैं बहुत इजारा बांधि रैयतको लूटि लेना, वा राजहिस्साका सख्त हासिल लेना, प्रजाका धनादि खोंस लेना, लोभके वशीभूत होय राजा--प्रजाका विध्वंस करावना, वा राजका हासिलकी चोरी करना, वा चौरकने हिस्सा लेना, चोरी करावनी, गैला मरावना, धाड़ा दिवावना, गांव मरावना, वा लोभ कषायकरि अंधा होता हुआ, राजद्रोह, स्वामीद्रोह, धर्मद्रोह, मित्र--द्रोह, कृतघ्नी होता ऐसे पाप करैं हैं। अगम्यागम्य कहिये ऐसा कार्य किसीकी दृष्टिमें न आया होय, न सुण्या होय, ऐसे कार्य कर बैठै है इत्यादि राजविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना १।

बहुरि लौकिक व्यवहार विषैं अन्याय लोभ करना, झूंठा लेखा लिखना, रकम चुरावना, लिखा सिवाय बांधि खेंचना, वा धनका संग्रह करना, अरु लौकिक व्यवहारादिक विषैं धन न खरचना, वा अपने विषयके अर्थि धन न खरचना, सूम रहना, वा अपनी आजीविकाकी बाहुल्यता होत संते भी विषम व्यवहार करना, घरका सुख छोड़ि देशान्तर जाना, समुद्रमें प्रवेश करना, विषम स्थानमें जाना, वा और अनेक महापापके व्यवहार करना, अपना पद उलंघि निंद्य व्यवहार करना, अपने पास होते संते भी पराया देना, न देना, राखि मेलनेकी बुद्धिसे पराया करज लेना, धरोहर दबाना, वा लोभके वशीभूत होय अपने व्यवहारादिक कार्य बिगाड़देना, वा लोभके वशीभूत भया अपने कुटुम्बादिकनकौं दुःख देना, बहुत

धन जाता जातिभी तुच्छ धन न देना, धनादिकके अर्थि अपना बहुत अपमान कराना, इत्यादि लोकविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना २ ।

बहुरि परलोकके अर्थि धर्मविषैं धनादिक न खरचना, वा थोड़ा खरचना, वा धर्मकार्य तो बड़ा प्रारम्भ करना अरु धन सूमतासूं खरचना, थोड़ा खरचना, धर्मकार्य विषैं लोभके वशीभूत होता हुआ बिगाड़ देना, वा मैला दिखावना, पूजनादि धर्मकार्य विषैं सूमतासौं धन खरचना, लोभके वशीभूत भया थका पंचनमें सूम बाजना, वा धर्मके आश्रय लोभ करना इत्यादि धर्मविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषायभाव जानना ३ ।

बहुरि राजादिक महत पुरुषनकी हांसी करना, वा माता पितादिक लौकिक गुरुजनकी हांसी करना, वा परस्पर मर्मछेदनके वचन कहि हास्य करना, वा बिनाउपाय अन्यायके विषय, कषाय कार्यनकी आपकूं प्राप्ति होना, ताकरि प्रसन्न होना, वा मुनिजनां की हास्य करना, वा साधर्मीनकी हास्य करनी, वा धर्मस्थानकन विषैं वा अंगन विषैं हास्य करना इत्यादिक अनंतानुबंधीका हास्यभाव जानना ।

बहुरि सप्त व्यसनानि विषैं अति आसक्त होय सेवना, वा पंच इंद्रियनके अन्याय विषै बहुत आशक्त रहना वा पांच इन्द्रियनके अन्याय विषैं भी धर्म, अर्थ, पुरुषार्थ बिगाड़ अति आशक्तहोय सेवना, धर्मविषैं भी कषाय पोषने इत्यादि अनंतानुबंधीका रति कषायभाव जानना ।

बहुरि माता--पितादिकन सौं रोगादिक अवस्था होते संतै वा वृद्ध अवस्था होत संतै अरुचि करना, वा पाप उदय होत संतै बंधुजनादिकसौं, वा मित्रसौं, वा साधर्मीनसौं, वा और कोई महंत पुरुषनसो अरुचि करना, वा धर्मअंगनसौं अरुचि करना, अरुचि करना कहिये छोड़ देना, अलहदा होजाना, तिनविषैं उपकार न करना इत्यादि सौ अनंतानुबंधी अरति कषायभाव जानना ।

बहुरि व्यसनादिकके साधकका वियोग होतैं शोक करना, वा अन्यायकार्य प्ररूपा था तिसका बिगाड़ होतैं शोक

बहुरि परपुरुष सौं रमनेकी इच्छा व रमना, वा बलवान पुरुष सौं रमनेकी इच्छा वा रमना, वा द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अयोग्यता सहित रमनेकी इच्छा वा रमना सो अनंतानुबंधीका स्त्री वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि स्त्री पुरुष दोनोंसूं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो नपुंसक वेद कषाय भाव है । सो यह भाव सर्वथा प्रकार व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप हूवो थको अनंतानुबंधीको भाव है । जातैं यह भाव अप्रत्याख्यानादि तीन कषायनविषैं व्यक्त-रूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप न होय है इस भावको अव्यक्त उदय होय है । ये अनंतानुबंधीका नपुंसक वेद कषाय भाव जानना ।

ऐसैं ये कहे जे अनंतानुबंधीके स्वरूप प्रगट बुद्धिपूर्वक कार्य रूप भाव, ते अनंतानुबंधी चारित्र मोहके तीव्र उदय विषैं होय है, तातैं इन भावनको प्रगट न होने देना, अरु इनके नाशका उद्यम करना, जातैं यह मनुष्य पर्याय पाई है, तातैं यहां इसके नाश करनेके सर्व उपाय मिलैं हैं । अरु यह मनुष्य पर्याय बिजलीके चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तातैं पर्याय छूटें इनका उपाय होय सक्ता नाहीं, अरु अनंतानुबंधीके उत्कृष्ट कषाय भाव इसभव परभव विषैं सर्व अकल्याणके कारण हैं इस भव विषैं तौ राजादिकों करि दंड पावै है, धन संपदा कुटुंबादिकका वियोग होय है, स्थानतैं भ्रष्ट होय है, अर लोक निंद्य होय है, दुःखी होय है, अरु आगमी नरकगति अरु निगोदादि तिर्यंचगतिको कारण है, तातैं इनके छोड़ने-का उपाय करना । इस अनंतानुबंधीका वासना काल संख्यात असंख्यात अनंतभव पर्यंत चला जाय है । एक बार किसी जीव पर किया जो क्रोधादिक भाव सौ अनंतकाल तांई दुःखदाई है, तातैं इनके उपजनेका कारण घटावना, इनके अभाव होनेका कारण मिलावना, सुसंगतिमें रहना, कुसंगतिमें न रहना, इनके नाशका प्रथम उपाय तो यह है, पीछे जैसैं बने तैसैं इनके छोड़नेका उपाय करना ।

बहुरि अनंतानुबंधीके मंद उदय मैं कार्य रहित आप गोचर भाव होय हैं । तहां छहों लेश्या पाइये है । ये भाव चारों गतिके कारण हैं, बहुरि अनंतानुबंधीके मंदतर उदयमें आपके अगोचर भाव होय हैं, तहां पीत, पद्म, शुक्ल तीन

धन जाता जातिभी तुच्छ धन न देना, धनादिकके अर्थि अपना बहुत अपमान कराना, इत्यादि लोकविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कपायभाव जानना २ ।

बहुरि परलोकके अर्थि धर्मविषैं धनादिक न खरचना, वा थोड़ा खरचना, वा धर्मकार्य तो बड़ा प्रारम्भ करना अरु धन सूमतासूं खरचना, थोड़ा खरचना, धर्मकार्य विषैं लोभके वशीभूत होता हुआ बिगाड़ देना, वा मैला दिखावना, पूजनादि धर्मकार्य विषैं सूमतासौं धन खरचना, लोभके वशीभूत भया थका पंचनमें सूम बाजना, वा धर्मके आश्रय लोभ करना इत्यादि धर्मविरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कपायभाव जानना ३ ।

बहुरि राजादिक महत पुरुपनकी हांसी करना, वा माता पितादिक लौकिक गुरुजनकी हांसी करना, वा परस्पर मर्मछेदनके वचन कहि हास्य करना, वा विनाउपाय अन्यायके विपय, कपाय कार्यनकी आपकूं प्राप्ति होना, ताकरि प्रसन्न होना, वा मुनिजनां की हास्य करना, वा साधर्मीनकी हास्य करनी, वा धर्मस्थानकन विषैं वा अंगन विषैं हास्य व रना इत्यादिक अनंतानुबंधीका हास्यभाव जानना ।

बहुरि सप्त व्यसनानि विषैं अति आसक्त होय सेवना, वा पंच इंद्रियनके अन्याय विषैं बहुत आशक्त रहना वा पांच इन्द्रियनके अन्याय विषैं भी धर्म, अर्थ, पुरुपार्थ बिगाड़ अति आशक्तहोय सेवना, धर्मविषैं भी कषाय पोपने इत्यादि अनंतानुबंधीका रति कपायभाव जानना ।

बहुरि माता--पितादिकन सौं रोगादिक अवस्था होते संतै वा वृद्ध अवस्था होत संतै अरुचि करना, वा पाप उदय होत संतै बंधुजनादिकसौं, वा मित्रसौं, वा साधर्मीनसौं, वा और कोई महंत पुरुपनसौं अरुचि करना, वा धर्मअंगनसौं अरुचि करना, अरुचि करना कहिये छोड़ देना, अलहदा होजाना, तिनविषैं उपकार न करना इत्यादि सौं अनंतानुबंधी अरति कपायभाव जानना ।

बहुरि व्यसनादिकके साधकका वियोग होतैं शोक करना, वा अन्यायकार्य प्ररूपा था तिसका बिगाड़ होतैं शोक

करना इत्यादि अनंतानुबंधीका शोक कषायभाव जानना।

बहुरि अन्यायरूप प्रवृत्तिके निमित्तैं भयकौं होत संते भय कंप होना वा दुष्टनके भयतैं भयकंप होई अपना न्याय धर्म वा क्रिया धर्म वा आषडी धर्म वा अणुव्रत महाव्रत धर्म छोड़ि देना, वा पद योग्य शक्त्यनुसार सम्यक्त्वादि अंगीकार न करना वा अपने शरणें राख्याकों सोंपि देना इत्यादि अनंतानुबंधी भय कषाय भाव जानना।

बहुरि रोगादिक अवस्था होतैं मुनिजनादिक चतुर्विध संघकी वा साधर्म्मीनकी ग्लानि करनी, वा माता-पितादि लौकिक गुरुजनांकी ग्लान करनी, तिनका वैयावृत्य न करना, नावारिसि (?) (अशुभ) रूप पापका है उदय जिनकैं, नहीं मिलै हैं खानपान वस्त्रादिक तिनकौं, अर रोग करि ग्रस्त है शरीर जिनका, ऐसे तिर्यंच मनुष्यनकी ग्लानि करनी, तिनकी दया न पालनी, उपकार न करना, वा साधर्मीन सूं वा धर्मावलंबी जनोंसे ग्लानि भाव करना इत्यादि अनंतानुबंधीकी जुगुप्सा कषाय जाननी।

द्रव्य क्षेत्र कालभावकी अयोग्यता सहित स्त्रीनसौं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो अनंतानुबंधीका पुरुष वेद कषाय है।

बहुरि परस्त्रीन सौं रमना वा रमनेकी इच्छा करनी। तहाँ पूरण गर्भवती स्त्री, प्रसूतीवान स्त्री, वा रजस्वला स्त्री, वा रोग सहित स्त्री, बालक स्त्री, वा कुमारी स्त्री इत्यादि स्त्रीन सौं रमना सो द्रव्य की अयोग्यता जाननी।

बहुरि चैत्यालयादिक विषैं वा तीर्थक्षेत्र विषैं वा अशुद्ध क्षेत्रविषैं रमना सो क्षेत्रकी अयोग्यता है।

बहुरि अष्टमी चौदश चार परवनिविषैं, वा अष्टान्हिकाविषैं, वा भादवां विषैं, वा तीर्थंकरां का पंचकल्याणक काल जो द्रव्यमान होय द्रव्य प्रवृत्तिमान होय तिन विषैं रमना सो काल की अयोग्यता है।

बहुरि तपके काल विषैं, वा प्रवृत्तिके काल विषैं, वा शील संयम आखड़ीके काल विषैं, वा राजादिक महंत पुरुषनके मरन काल विषैं, वा साधर्मीके मरन काल विषैं, वा इष्टके मरण काल विषैं इत्यादि भाव विषैं रमना सो भावकी अयोग्यता कहिये। इत्यादि स्थान विषैं जो रमनेकी इच्छा सो अनंतानुबंधीका पुरुष वेद कषाय भाव जानना।

बहुरि परपुरुष सों रमनेकी इच्छा व रमना, वा बलवान पुरुष सौं रमनेकी इच्छा वा रमना, वा द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अयोग्यता सहित रमनेकी इच्छा वा रमना सो अनंतानुबंधीका स्त्री वेद कषाय भाव जानना।

बहुरि स्त्री पुरुष दोनोंसूं रमनेकी इच्छा वा रमना, सो नपुंसक वेद कषाय भाव है। सो यह भाव सर्वथा प्रकार व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप हूवो थको अनंतानुबंधीको भाव है। जातैं यह भाव अप्रत्याख्यानादि तीन कषायनविषैं व्यक्त-रूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप न होय है इस भावको अव्यक्त उदय होय है। ये अनंतानुबंधीका नपुंसक वेद कषाय भाव जानना।

ऐसैं ये कहे जे अनंतानुबंधीके स्वरूप प्रगट बुद्धिपूर्वक कार्य रूप भाव, ते अनंतानुबंधी चारित्र मोहके तीव्र उदय विषैं होय है, तातैं इन भावनको प्रगट न होने देना, अरु इनके नाशका उद्यम करना, जातैं यह मनुष्य पर्याय पाई है, तातैं यहां इसके नाश करनेके सर्व उपाय मिलैं हैं। अरु यह मनुष्य पर्याय बिजलीके चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तातैं पर्याय छूटे इनका उपाय होय सक्ता नाहीं, अरु अनंतानुबंधीके उत्कृष्ट कषाय भाव इसभव परभव विषैं सर्व अकल्याणके कारण हैं इस भव विषैं तौ राजादिकों करि दंड पावै है, धन संपदा कुटुंबादिकका वियोग होय है, स्थानतैं भृष्ट होय है, अर लोक निंद्य होय है, दुःखी होय है, अरु आगमी नरकगति अरु निगोदादि तिर्यंचगतिको कारण है, तातैं इनके छोड़ने-का उपाय करना। इस अनंतानुबंधीका वासना काल संख्यात असंख्यात अनंतभव पर्यंत चला जाय है। एक बार किसी जीव पर किया जो क्रोधादिक भाव सौ अनंतकाल तांई दुःखदाई है, तातैं इनके उपजनेका कारण घटावना, इनके अभाव होनेका कारण मिलावना, सुसंगतिमें रहना, कुसंगतिमें न रहना, इनके नाशका प्रथम उपाय तो यह है, पीछे जैसैं बने तैसैं इनके छोड़नेका उपाय करना।

बहुरि अनंतानुबंधीके मंद उदय मैं कार्य रहित आप गोचर भाव होय हैं। तहां छहों लेश्या पाइये है। ये भाव चारों गतिके कारण हैं, बहुरि अनंतानुबंधीके मंदतर उदयमें आपके अगोचर भाव होय हैं, तहां पीत, पद्म, शुक्ल तीन

लेश्या ही पाइये है। जातैं मंदतर उदयमें द्रव्य सम्यक्त्व अरु द्रव्य अणुव्रत महाव्रत योग्य होय हैं, तातैं ये भावमनुष्य देव दोय गति कूं ही कारण हैं। अरु वर्तमान विषैं सर्व ही कषाय भाव दुःख हीके कारण हैं, अनंतानुवंधी कषाय-गुणस्थान तौ मिथ्यात्व अरु सासादन दोय विषैं ही हैं। बहुरि मार्गणास्थान विषैं गति ४ जाति ५ काय ६, योग-आहारकद्विक विना १३, वेद ३, कषाय २५ कुज्ञान ३ असंयम १ दर्शन-चक्षु अचक्षु दोनों, लेश्या छहूं ६, भव्य-अभव्य दोय, सम्यक्त्व-मिथ्यात्व, अरु सासादन २, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २ विषैं प्रवर्तें है। ऐसें अनंतानुवंधी कषायभाव निरूपणादि समाप्त।

— अप्रत्याख्यानादि कषायभाव निरूपिये हैं —

अनंतानुवंधी रहित अप्रत्याख्यानादि तीन कषायका उदय होतैं यो जीव महापापके कारण अन्यायरूप जो चंचल-भाव ताकूं छोड़ि विमलतानैं प्राप्त होय है। न्यायरूप निश्चल भावविषैं तिष्ठै है। यहां यह जीव सम्यग्दृष्टी होय है, तहां सम्यक्भावका ग्रहण है। सर्वही तेरा प्रकार कषायभाव न्यायरूप प्रवर्तै है चारों कषायनके कार्य तो होय हैं, परन्तु न्याय-रूप होय हैं। पांचौं इंद्रियनके विषय तो सेवै है परन्तु न्यायपूर्वक सेवै है। सो भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित कार्य होय है। कषायकार्यनि विषैं अर विषयकार्यनि विषैं अति आसक्त होय मूर्च्छाभावकों न प्राप्त होय है। अयोग्य कार्यनकूं कदाचित् भी न करै है। राजविरुद्ध १, लोकविरुद्ध २, धर्मविरुद्ध ३, ऐसे जे कषायकार्य वा विषयकार्य वा सप्तव्यसनादि जाकै सर्वथा न होय हैं इस कषायके होतैं इतना सचेत रहै है।

— प्रथमही अप्रत्याख्यान क्रोधभाव कहिये है —

अपने राज्यादि न्यायकार्यन विषैं क्रोध करै है, वा अपनी आज्ञा मानने योग्य हैं अर आज्ञाकूं न मानै हैं ता

(तिन) पर क्रोधभी करै है वा अपने राज्यादि न्यायकार्यके बाधक वा अपने धन, प्राण, संपदा, रत्नादिकके बाधक हैं, वा अपना मानभंग करनहारे हैं, वा प्रजाके बाधक हैं, वा कुटुम्बादिकके बाधक हैं, वा गरीब, दुखित, भुखित मनुष्यनके वा तिर्यंचादिक जीवनके सतावन हारे है तिनपर क्रोध करे है। वा धर्मबाधक चतुर्विध संघकूं दुःख दैनहारे, वा मिथ्याधर्म के पोषक, वा सत्यधर्मके उत्थापक, तिनपर क्रोध करै है इत्यादि योग्य स्थानकों पर क्रोधभाव करै है सो भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यतासहित करै है, क्रोधके वशीभूत न होय है, कार्यके अंतविषैं ही शांत होय है। याका वासना-काल उत्कृष्ट छह मास पर्यंत है पीछे उपशांतही होय है।

॥ इति अप्रत्याख्यान क्रोधभावः ॥

—अब अप्रत्याख्यानमान कहिये है—

अपने पद योग्य मान करै हैं, राजविरुद्ध १, लोकविरुद्ध २, धर्मविरुद्ध ३ मान नाहीं करै है सो भी द्रव्य क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित करै है। बहुरि देव, गुरु, धर्मादिकके निकट अष्ट प्रकार मद नाहीं करे है, चतुर्विधसंघ सों मद नाहीं करै है, तहां निर्मद होय है। बहुरि अपने पदके थांभने विषैं मान करै है, तहां प्राण-जातां भी मान नाहीं तजै है, बिना प्रयोजन किसीका मान भंग नाहीं करै है, किसीसूं बिना प्रयोजन अदेखसका भाव नाहीं राखै इत्यादि अप्रत्याख्यान मानभाव जानना।

॥ इति अप्रत्याख्यान मानभावः ॥

– अब अप्रत्याख्यान मायाभाव कहिये है–

जहां अपने राज्यादि न्याय कार्यकी सिद्धिकै अर्थि माया करै है, पहलाके ठिगनेकै अर्थि माया नाहीं करै है, वा अपना धन, सम्पदा, प्राणादि राखनेके अर्थि माया करै है, वा अपने धर्म राखनेके अर्थि माया करै है, सोभी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित करै है। पराया धन, प्राण, स्त्री, संपदादि हरणेके अर्थि माया नाहीं करै है इत्यादि माया करै है सो अप्रत्याख्यान माया भाव जानना ३।

॥ इति अप्रत्याख्यान मायाभावः ॥

॰॰॰॰ अब अप्रत्याख्यान लोभ कहिये है ॰॰॰॰

जहाँ अपने राज्यादि न्यायकार्यन विषैं लोभ करै है, तहां भी द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित करै है, अन्याय लोभ नाहीं करै है, । बहुरि जिन कार्यन विषैं महा पाप उपजै ऐसा न्याय लोभ भी नाहीं करै है, अपने यश होनेका वा अपने धर्म वा धनका लोभ करै है इत्यादि लोभ करै है सो अप्रत्याख्यानलोभ भाव जानना ४

अर जहां अपने राज्यादि कार्यन विषै मूर्ख है तिनप्रति वा अपने स्त्रीजन आदिं परिवार विषैं हास्य कषाय करै है, वा अपने हास्य योग्य पुरुषनि प्रति हास्य करै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता देखि करै है इत्यादि कषाय सो अप्रत्याख्यान हास्य कषायभाव जानना ५

बहुरि अपने स्त्री पुत्रादिकन विषैं वा अपने योग्य पांच इंद्रियनके विषय तिन विषैं वा अपने योग्य विषय–सामग्री वा राज्यादि सामग्री तिनविषैं रति करै है, सोभी अति आसक्त होय नाहीं करै है, किंतु द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता सहित रति करै है इत्यादि अप्रत्याख्यान रति कषाय भाव जानना ६।

बहुरि दुर्जन पापी पुरुषनिविषैं राजके बाधक प्रजाके बाधक धर्मके बाधक पराई चुगली खानहारे, पराई निंदा वा अपनी प्रशंसा करनहारे मिथ्यामार्गके पोषक, अन्यायके प्रवर्तक इत्यादि जीवन विषैं अरति करै है वा अन्यायके विषय विषैं वा अन्याय कषाय सामग्री वा विषय सामग्री तिन विषैं, वा सप्त व्यसनादि विषैं वा सदोष वा अक्रिया करि निपजौ भोजन खान-पान तिन विषैं वा मिथ्यामार्ग विषैं इत्यादिकन विषैं अरतिभाव करै है। ऐसा अप्रत्याख्यान अरति कषाय भाव जानना ७।

बहुरि अपने मानखंडादि विषैं, वा अपने न्यायमार्गतैं उल्लंघन भया होय, वा धर्मका उल्लंघन भया होय, तहां शोक करै है, वा इष्ट, पुत्र, स्त्री, आदिकके वियोग विषैं भी मिथ्यात्वभाव रहित किंचित् काल शोक करै, वा साधर्मी गुरुजनके मरण विषैं, वा वियोग विषैं शोक करै, अपने धन, संपदादि, राज्यादि, विभूति, वा अपने प्राणके जातां भी शोकवंत नाहीं होयहै इत्यादि अप्रत्याख्यान शोक कषाय भाव जानना ८।

बहुरि न्यायके उल्लंघनका तथा धर्मके उल्लंघनका है भय जिसकूं, वा पाप विषैं प्रवर्तनका, वा चतुर्गति संसार विषैं भ्रमणका है भय जाकूं, अर सप्त भयकरि वर्जित होय इस भवका नाहीं है भय जिनके १ बहुरि परभव संबंधी भी नाहीं है भय जिनकूं २, बहुरि मरणका भी भय नाहीं ३, रोगका भी भय नाहीं ४, नाहीं है रक्षक कोई हमारा सो भय भी नाहीं ५, बहुरि धन, संपदाके चोरका भी भय नाहीं ६, अरु अकस्मात् भय भी नाहीं ७ ऐसा अप्रत्याख्यान भय कषायभाव जानना ९।

बहुरि परधन, परस्त्री, वा अन्यायके कषाय वा, अन्यायके विषयकार्यन तैं है अहोठाभाव जिनकै, बहुरि पापकार्यन तैं, वा पापी पुरुषनि तैं मिथ्यात्वके पोषनहारे तिन विषैं धारै हैं जुगुप्सा, वा पापप्रवृत्ति विषैं, वा पापप्रवृत्तिके प्रवर्तनहारे विषैं, वा चतुर्गति संसार विषैं, आहोठा भावकूं धरै हैं। बहुरि सदोष आहार वा अक्रियाकरि निपजा भोजन ताविषैं भी ग्लानि करै है इत्यादि विषैं भी ग्लानि करै है ऐसा जुगुप्सा का अप्रत्याख्यान कषायभाव जानना १०।

बहुरि अपनी स्त्रीसूं है रमनेकी वांछा जाकैं, वा अपनी स्त्रीसहित रमण क्रीड़ा करै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल भावकी योग्यता सहित रमै है, अति आसक्त होय मूर्छाभावकों नाहीं धारै है, ऐसा पुरुषवेद अप्रत्याख्यान कषायभाव जानना ११।

बहुरि अपने भतारसौं रमनेकी है वांछा जाकैं, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी योग्यता सहित रमै है, [illegible] स्त्रीवेद कषायभाव जानना १२।

[illegible] निपजै है स्त्री–पुरुष सों कार्यरूप रमनेकी वांछा जाकैं ऐसा नपुंसकवेद अप्रत्याख्यान कषायभाव [illegible]।

[illegible] कारण ऐसे अप्रत्याख्यान कषायके स्थानक तिन विषैं, उत्कृष्ट [illegible] स्थानक उदासीनभावकौं भजै हैं, तिन विषैं तो बहु [illegible] अभिलाषा जिनकैं, ते तो शनैः [illegible] नाहीं।

[illegible] कारण है।

ऐसें प्रत्याख्यान लोभ कषा[illegible]

बहुरि अपने भावनका विशुद्धता होत संत [illegible]

संतै वा शास्त्रके नवीन अर्थकी सिद्धि होत संतै इत्यादि कार्यनकै [illegible]

होय है।

॥ इति प्रत्याख्यान हास्यभाव समाप्त ॥

बहुरि धर्म संबंधी कार्यन विषैं रतिभाव है, वा धर्मके धारकन विषैं रतिभाव है, है और ठौर रतिभावको अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान रति कषायभाव जानना ६।

बहुरि सर्व सांसारीक कार्यनसौं अरुचिता भजै है। वा धर्मके विध्वंसकन विषैं वा मिथ्याधर्मके पोषण विषैं,

अब प्रत्याख्यान कषायभाव प्ररूपण कीजिये है--

अप्रत्याख्यान कषाय सहित दोनों कषायोंका तौ भया है अभाव जाकैं अरु प्रत्याख्यान सहित दोय कषायका है उदय जाकैं, सो जीव सर्व सांसारीक विषय, कषाय, कार्यनतै भया है उदास परन्तु प्रत्याख्यानके उदयके जोरतें सकल संयमकूं नाहीं ग्रहण कर सके हैं, तातैं बहु आरम्भ, बहु परिग्रहका त्यागकरि, अल्पसा परिग्रह अरु अल्प आरंभ प्रमाण सहित अंगीकार करै है, सो अल्पारम्भ भी क्षुधादि रोग निवृत्तिके अर्थ है, विषय सेवनके अर्थ नाहीं है, तहां तेरह प्रकार कषाय ऐसी अवस्थासौं प्रवर्तै है सो कहिये है।

तहां प्रथमही प्रत्याख्यान क्रोध कहिये है—

उद्यमकरि त्रस स्थावर जीवनकी हिंसाके अर्थि क्रोध नाहीं करै है, अपने धन, प्राणकी रक्षाके अर्थि क्रोध नाहीं करै है, कोई अपना लौकिक कार्य बिगाड़ दे है तापर भी क्रोध नाहीं करै है, तो कहां क्रोध उत्पन्न होय है? धर्मके बाधकनि विषैं, मिथ्यात्वके पोषकनि विषैं, चतुर्विध संघकौं कष्ट देनहारेनि विषैं इत्यादि धर्मपक्ष विषैं तो क्रोध उत्पन्न होयभी, अन्य लौकिक कार्यनि विषैं प्रत्याख्यान क्रोधकी उत्पत्ति होय नाहीं, जातैं या कषायके उदयमें एकदेश जीवकी शक्ति प्रगट होय है।

॥ इति प्रत्याख्यान क्रोध कषायभाव निरूपणम् ॥

बहुरि प्रत्याख्यान मान कषाय भाव कहिये....

दूर भये हैं आठोंही प्रकारके मद जिनकैं, अरु दूर भया है परसौं मद भाव जिनकें, ताकरि बहुत प्रकार भया है मानका अभाव जिनकें, कोई अल्प अंश मान करै है, ताकरि अपने देश संयम भावकी रक्षा करै है, अनेक कष्ट आताप आये भी कोईभी कष्ट निवारणकी सामग्री काहूपास भी जांचै नाहीं, तथा अपनी हीनता काहु प्रकार भी प्रगट करै नाहीं

पैलो चलाय आप उपकार करावै ही है कोईभी राजा रंक सों आपकूं छोटा बड़ा नाहीं मानै है, अपने पद कूं कोई प्रकारभी नींचा नाहीं दिखावै है। ऐंसा प्रत्याख्यानमान कषाय भाव जानना।

बहुरि प्रत्याख्यान माया कषायभाव कहिये है :—सर्व प्रकार पहिले कूं ठगिनेके आर्थि माया नाहीं करै हैं, कै तो अपने धन प्राणकी रक्षाके अर्थि कोई अवसर आय पड़े तो माया करै, ना भी करै वा अपना धर्म राखिनेके अर्थि वा धर्मके रक्षाके अर्थि वा चतुर्विध संघकी रक्षाके अर्थि वा पर जीवनकी रक्षाके अर्थि इत्यादि कार्यनके आश्रय माया कषाय-भावका सद्भाव है और प्रकार नाहीं। इति प्रत्याख्यान माया कषायभावः।

•••• अब प्रत्याख्यान लोभ कषायभाव कहिये है ••••

जो आजीविका न्यायरूप प्रमाण सहित राखी है ताहि विषैं न्यायरूप लोभ हैं। तिस मर्यादको उलंधि लोभ नाहीं करैं। ना बनै तो अपना धन प्राण कुटुम्बादिककी रक्षाकौं भी लोभ करैं है वा अपने तथा परके धर्म बंधावनेका भी लोभ है वा अपने अपूर्व शास्त्रकी सिद्धिका भी लोभ है इत्यादि योग्य लोभ भाव पाइये है।

ऐसें प्रत्याख्यान लोभ कषायभाव जानना।

बहुरि अपने भावनका विशुद्धता होत संते श्री गुरु साधर्मीका संगम होत संते वा जिन धर्मकी बधवारी होत संतै वा शास्त्रके नवीन अर्थकी सिद्धि होत संतै इत्यादि कार्यनके विषैं प्रसन्नता होय है, अन्य कार्यनके विषैं प्रसन्नता न होय है।

॥ इति प्रत्याख्यान हास्यभाव समाप्त ॥

बहुरि धर्म संबंधी कार्यन विषैं रतिभाव है, वा धर्मके धारकन विषैं रतिभाव है, वा शास्त्रके अर्थविषैं रतिभाव है और ठौर रतिभावको अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान रति कषायभाव जानना ६।

बहुरि सर्व सांसारीक कार्यनसौं अरुचिता भजै है। वा धर्मके विध्वंसकन विषैं वा मिथ्याधर्मके पोषण विषैं,

इत्यादिकन विषैं अरतिभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान अरति कषायभाव जानना ७।

बहुरि धर्मकौं विघ्न होतैं, वा साधर्मीको, वा चतुर्विध संघकौं उपद्रव होत संतै, वा गुरुजन साधर्मीका मरणादि वियोग होत संतै, वा अपने धर्मविषैं दोष लगते शोक होय है और प्रकार शोक न होय है। इति प्रत्याख्यान शोक कषायभाव जानना ८।

अपने संयम विषैं दोष लागनेका है भय जिनकें और प्रकार भय नाहीं प्रवर्तै है। ऐसा प्रत्याख्यान भय कषाय-भाव जानना ९।

बहुरि सांसारीक सुखसौं है ग्लानि जिनकैं, वा मिथ्याधर्मसौं, वा मिथ्याधर्मके धारकनसौं, वा मिथ्याधर्मके पोषकनसौं है अहोठा भाव जिनकैं इत्यादि प्रत्याख्यान जुगुप्सा कषायभाव प्रवर्तै है १०।

बहुरि मिटगये हैं सर्व काम विकारभाव जिनके, बुद्धिपूर्वक बार बार कामचेष्टा नाहीं करै है, पुरुषवेद नामा मोहकर्म तीव्र उदय होय तहां निज स्त्रीका संबंध है ते तो विषय सेवन कदा काल उदासीन भाव युक्त करैभी अर जिनकें निज स्त्रीका संबंध न होय, तौ अपने सम्यग्ज्ञान भावसौं जैतै मंद पाड़े तिनको फिर तीव्र उदय न होय। ऐसा पुरुषवेद प्रत्याख्यान कषायभाव जानना ११।

बहुरि जे देश संयमकूं धारैं हैं, ऐसी श्री महाभाग्य स्त्री तिनके स्त्रीवेद नामा मोह कषायका तीव्र उदय होय, अरु निज भरतारका संबंध होय तौ भरतारकी इच्छापूर्वक विषय सेवन होय, अरु जिनकैं भरतारका संबंध नाहीं तिनकें स्त्रीवेदका तीव्र उदय होय नाहीं, जातैं परिणाम जिनके अति विशुद्ध हैं सौही है कारण जिनकों, ऐसा स्त्रीवेद प्रत्याख्यान कषायभाव जानना १२।

बहुरि नपुंसकवेदका है उदय जिनकैं, ऐसे प्रत्याख्यान कषाय भाव सहित पंचम गुणस्थानवर्ती देशसंयमी जीव तिनकैं भावनकी अति विशुद्धता थकी बुध्दिपूर्वक नपुंसक वेदके उदयका अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान नपुंसक वेद

कषायभाव जानना १२ ।

इत्यादि कथन किया सो देशसंयम योग्य स्थानक प्रत्याख्यान कषायके असंख्यात लोकप्रमाण स्थानक हैं तिन विषैं उत्कृष्ट अनुभाग सहित स्थानकनके उदयकी अपेक्षा किया है जातैं देशसंयमके घातक सर्वघाती प्रत्याख्यान कषायके असंख्यात लोकप्रमाण स्थानक तौ अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान कषायकी लारही उदयके अभावकूं प्राप्त भये हैं तिनिका तौ यहां उदय नाहीं, अरु मंद अनुभाग सहित उदय स्थानकनका उदय होतैं कार्यका सद्भाव होय नाहीं, बहुरि मंदतर स्थानकनिका उदय विषैं बुध्दिपूर्वक भी प्रत्याख्यानका भाव होता नाहीं। केवलीगम्य ही भाव होय हैं। तातैं कार्य रूप भाव तीव्र अनुभाग सहित उदय स्थानकन विषैं ही हैं, तातैं दूसरी व्रत प्रतिमा विषैं देशसंयम योग्य तीव्र स्थानकनका उदय है ।

बहुरि तीसरी सामायिक प्रतिमा सूं लगाय अष्टम आरंभत्याग प्रतिमा पर्यन्त मंद अनुभाग सहित स्थानकनके उदय हैं। अरु परिग्रहत्याग नवमी प्रतिमा तैं लगाय दशमी एकादशमी प्रतिमा विषैं मंदतर अनुभाग सहित स्थानकनका उदय जानना। यह प्रत्याख्यान कषाय भाव वर्तमान तौ दुःख हीके कारण हैं, अरु आगामी देवगतिके कारण हैं।

बहुरि प्रत्याख्यान कषायका गुणस्थान तो एकदेश संयम ही है। पंचम गुणस्थान विषैंही प्रत्याख्यान कषाय भाव प्रवर्तें है। अरु मार्गणा स्थानकन विषैं **गति** मनुष्य, तिर्यंच, **जाति** पंचेन्द्रिय व, **काय** त्रस, **योग** ९ चार मनोयोग चार वचनयोग औदारिक काय योग, **वेद** ३, **कषाय** अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान आठ बिना १७, **ज्ञान** सुज्ञान ३ मति श्रुत अवधि एवं तीन, संयम-देशसंयम १, दर्शन–चक्षु अचक्षु अवधि ये तीन, लेश्या ३, पीत पद्म शुक्ल। भव्य १, **सम्यक्त्व** ३ उपशम १ क्षयोपशम १ क्षायिक १ **सञ्ज्ञी** १, आहारक १ इन विषैं प्रवर्तें है ।

॥ इति प्रत्याख्यान कषाय भाव समाप्तः ॥

अथ संज्वलन कषाय भाव प्रारंभः—

तहां सकल संयमके स्थानक संज्वलन कषायके सर्वघाती स्थानकनका तौ अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान कषायनकी लार ही उदयका अभाव भया, अरु जहां मंद अरु मंदतर अनुभाग कौं धरै ऐसे स्थानकनका जिन जीवनके उदय होय, ते जीव सकल संयम विषैं ही उदय हैं। तहां किंचित् प्रमाद उपजै है। तहां हार विहारादि कार्य-रूप प्रवर्तै है, तहां चारित्रका कारण जो शरीर ताकी रक्षाके अर्थि तौ आहारादि रूप प्रवृत्ति करै है। बहुरि मोहके अभावके अर्थि वा तीर्थयात्रा वा गुरु पूजनादि कै अर्थि विहारादि रूप प्रवृत्ति करै वा जिनमतके प्रवर्तनके अर्थि वा जीवनके उपकार निमित्त उपदेशादि प्रवृत्ति करै, बहुरि इन ही प्रवृत्तिन विषैं पंचाचार वा अट्ठाईस मूलगुणादि रूप प्रवर्तै है, तहाँ प्रवर्तै है। इन त्रयोदश प्रकार संज्वलन कषाय कार्यरूप होय भी प्रवर्तै है।

बहुरि सप्तम गुणस्थान सौं लेय क्षूक्ष्मसाम्पराय दशम गुणस्थानपर्यन्त तेरह कषायनका मंद अरु मंदतर स्थान-कनका उदय है, तहां कार्यरूप वा बुद्धिपूर्वक इन कषायनका उदय ही नाहीं, अति मंद प्रमाद उपजावनेकी शक्ति रहित अबुद्धिपूर्वक उदय होय है, ऐसा इन संज्वलन कषायनका संक्षेपरूप कथन किया।

यह संज्वलन कषाय वर्तमान तो दुःखहीका कारण है अरु आगामी देव गतिकौ कारण है। बहुरि संज्वलन कषायभाव प्रमत्त १, अप्रमत्त २, अपूर्वकरण ३, अनिवृत्तिकरण ४, सूक्ष्म साम्पराय ५, इन पांच तौ गुणस्थानकन विषैं प्रवर्तै है। बहुरि मार्गणानि विषैं मनुष्य **गति** १ पंचेन्द्रिय **जाति** १ **त्रसकाय** १ मनोयोग ४ वचनयोग ४ औदारिककाय योग १ आहारक १ आहारकमिश्र १ ऐसे ११, **वेद** ३ कषाय १३ **ज्ञान** केवल बिना ४ मति १ श्रुत १ अवधि १ मनःपर्यय १ **संयम** सामायिक १ छेदोपस्थापना १ परिहारविशुद्धि १ शूक्ष्मसाम्पराय १ इन च्यारि विषैं, **दर्शन** चक्षु १ अचक्षु २ अवधि ३ इन तीन विषैं, लेश्या ३ पीत, पद्म, शुक्ल, भव्य १, सम्यक्त्व—उपशम १ क्षमोपशम १ क्षायिक १ संज्ञी १ आहारक १

इन मार्गणा विषैं प्रवर्तैं है। ऐसे इन चार कषाय भावनका निरूपण किया। सो ये भाव हेय जानि तजने।

॥ इति श्रीभावदीपिकाके औदयिकभाव विषैं तीसरा कषायाधिकार समाप्त हुआ ॥



अथ लेश्या भावाधिकार प्रारम्भः ~

दोहा –

लेश्या अशुभ मिटायकैं शुभ लेश्यामय होई।
कर्म सु मलक्षय कर नमूं ठये अलेश्या सोई॥

कषाय रंजित योगनकी प्रवृत्तिका नाम लेश्या है, जातैं आत्मा कूं कर्मनि सैंती लिप्त करैं ऐसे योग अर कषाय तातैं इनका नाम लेश्या है। नाम कर्मके उदयतैं द्रव्यमन द्रव्यवचन द्रव्यकाय निपजैं हैं, तिनकी चेष्टा कहिये प्रवृत्ति होते संतैं आत्माके प्रदेश चंचल होय हैं। प्रदेश चंचल होतैं कर्मके ग्रहणकी शक्ति निपजै है, ताकरि कर्म वर्गणानिका ग्रहण होय। आत्माके प्रदेशांसे एक क्षेत्रावगाहसंयोग होय है, तातैं इनका नाम योग है। इन योगँन–की कषाय सहित प्रवृत्ति ताकौं लेश्या कहिये, ऐसा लेश्याका स्वरूप है सो ही शास्त्रनि विषैं कह्या है।

बहुरि योग कषायनकी प्रवृत्ति तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर इन च्यार प्रकार होय है। ताके अनुसार आत्मा पंच पाप रूप कार्य विषैं प्रवर्तैं है। हिंसा १ अन्टत २ स्तेय ३ अब्रह्म ४ परिग्रह—विषयतृष्णा ५ इन पंच पाप रूप जो तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर, कार्य ताके अनुसार कृष्ण १ नील २ कापोत ३ पीत ४ पद्म ५ शुक्ल ६ ऐसे दृष्टान्त पूर्वक लेश्याके छह नाम है।

बहुरि कषाय चार प्रकार है—क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ सो ये क्रोधादि कषाय उत्कृष्ट अनुभागकों धरैं उदय होंय हैं, तब आत्मा उत्कृष्ट पंच पाप मन वचन काय करि करै है। तहां तिस भावका नाम कृष्ण लेश्या कहिये। तातैं ये कषाय भाव महापापरूप प्रवर्तैं हैं, तातैं इनकों **कृष्ण** कहिये। बहुरि जहाँ क्रोधादिक कषाय मध्य अनुभागकों धरैं उदय होंय हैं, तब आत्मा मन वचन काय करि किछु घाटि पंच महापाप करै है। तहां तिस भावका नाम **नील** लेश्या है। जातैं ये कषाय भाव कृष्णलेश्यासों किछु घाटि महापाप रूप हैं, तातैं याकौं नील कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय तासैं भी नीचला मध्य स्थानकन विषैं मध्य अनुभाग कों धरैं उदय होंय हैं तब आत्मा मन वचन काय करि जघन्य पंच पाप करै है। तहां आत्माका किछु ज्ञान चमकै है। जैसें कापोत कहिये कबूतर ताकी पंख काली हैं, तथा पीत विषैं सफेदी का अंश चमके है तैसें सो ज्ञान पंच पाप रूप कालिमा सहित है तैसें आत्माका ज्ञान अंश चमके है, तथापि पंच पाप रूप कालिमा सहित है। किछु कार्य कारी नाहीं। तातैं याकौं **कापोत** लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादिक कषाय मंद अनुभाग कौं धारैं उदय होंय, तब आत्मा मन वचन काय करि पंच पाप मंद करै है। तहां किछु धर्मानुराग युक्त होय तिस भावका नाम **पीत** लेश्या कहिये।

बहुरि जहाँ क्रोधादि कषाय अति मंद अनुभागकौं धरैं उदय होंय तब आत्मा मन वचन काय करि पंच पापन कौं अति मंद करै है। तहां किछु अधिक हीन त्याग भाव प्रवर्तै है। तहां तिस भावका नाम **पद्म** लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय मंदतर अनुभागकौ धरैं उदय रूप होंय तब आत्मा बुद्धिपूर्वक पंच पापन कूं नाहिं करै है। सब लौकिक कार्यन विषैं उदासीन भाव धरै। तहां आत्माके भावकौं शुक्ल लेश्या कहिये। अर क्रोधादि कषाय चार चार प्रकार होय प्रवर्तैं हैं। अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ, एवं सोलह भेद कषाय भावके भये। जहाॅं अनंता–

नुबंधी सहित अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन कषाय प्रवर्तै है तहां कृष्णादिक छहों लेश्या पाइये है। सो लेश्या अनंतानुबंधीकी कहिये। तहां कृष्णादि एक एक लेश्या क्रोधयुक्त, कृष्ण लेश्या १, मानयुक्त कृष्ण लेश्या २, मायायुक्त कृष्ण लेश्या ३, लोभयुक्त कृष्ण लेश्या ऐसे एक एक लेश्या च्यारि २ प्रकार हैं। ऐसे अनंतानुबंधी विषैं लेश्याके चौबीस भेद भये। तैसें ही अप्रत्याख्यान कषायन विषैं कृष्णादि छहों लेश्या पाइये है। तातैं अप्रत्याख्यान विषैं भी चौबीस भेद हैं। बहुरि प्रत्याख्यान वा संज्वलन कषायन विषैं पीत १, पद्म २, शुक्ल ३, ये तीन २ लेश्या ही पाइये है। तातै इन विषैं क्रोध मान माया लोभ करि १२–१२ भेद हैं। ऐसे लेश्याभावके ७२ भेद भये।

बहुरि लेश्याके असंख्यात लोक प्रमाण भेद हैं। जातैं कषायनके उदय स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं ते ही लेश्याके स्थानक जानने।

अब कहे जे लेश्याके बहत्तर भेद तिनका स्वरूप, लक्षण, कार्य, फल इत्यादि निरूपण कीजिये है....

प्रथमहिं अनंतानुबंधी के चौबीस भेद कहिये है। तिनहिं विषैं अनंतानुबंधीकी कृष्ण लेश्या कहिये हैं–

कृष्णलेश्या वाला जीव अतिप्रचंड, क्रोधी होय, बैर न छौडे, भीड़नेका तथा लड़नेका जाका सहज स्वभाव होय, झूठवचन बौले, बहुरि दयाधर्म करि रहित होय, अदेखसका भाव बहुत होय, पराया पुण्य उदय तथा पुण्य सामग्रीकूं देखि न सकै, बहुत छलबल करि युक्त होय ताकरि किसीके बसि न होय, निःशंक होय, स्वच्छन्द होय, कोईका कह्या न माने, वा ज्ञान चातुर्य करि रहित होय, क्रियारहित, दया रहित, अशुद्ध निःशंक जाका खानपान होय, सप्त व्यसननि विषैं आसक्त होय, स्पर्शादि पांच इन्द्रियनके विषयन विषैं अति लंपट होय, बहुत मानी होय, पैलेका मान भंग करै, अपना

मान पोषै, बहुत मायावी होय, बहुत लोभी होय, पराये धन संपदा हरनेकी जाकैं शाश्वती वांछा रहैं, बहुत कामी होय। पराई स्त्री सौं विषय सेवनकी, वा हरनेकी जाकैं सदाकाल वासना रहै, पूर्वापर विचार रहित होय, मूर्ख होय, क्रियाकरि भ्रष्ट होय, जाकै अभिप्रायकौं और न जानैं। पंच पाप जे हिंसा, झूंठ, चोरी, कुशील, परिग्रह, इनके करनेकी सदाकाल वांछा प्रवर्तै इत्यादि लक्षण करि युक्त होय। बहुरि पंच पापके कार्यरूप प्रवर्तै, लोभके अर्थि वा मानके अर्थि, विपयके सेवनके अर्थि, वा विना प्रयोजन ही हिंसा करनी, मनुष्यकूं मारना, तिर्यंच विनाशना, गैला मारना, संग्राम करना, मरना मारना, अपघात करना, परघात करना, अनेक प्रकार जीवनकौं दुःख देना, सताना, वा अनेक प्रकार अन्यायरूप हिंसाका कारण आरम्भ करना इत्यादि हिंसा महापाप करना।

बहुरि अनेक प्रकार झूंठ बोलना, बहुरि चौरी करना, औड़ा देना, धाड़ा दैना, गैला लूटना, पराये घरसूं वस्तु आदि उठाय लावना, भीले मारना, रकम चुराना, परस्त्री तथा पर पुत्रादिक हर लावना, जोरावरी खोस लेना, पराया धन खोंस लेना, इत्यादि चौरी करनी, परस्त्री सौं विपय सेवना, बहुरि हिंसा, झूंठ, चौरी करवा और अनेक प्रकार अन्याय करि पाप करि, परिग्रहका संग्रह करना इत्यादि पंच पाप क्रोधयुक्त होयकरि निःशंक करना, वा मायाचारी करना, तहां अन्याय-रूप पंच पाप निःशंक करना, वा पैला पास करावना, वा पंच पाप करने वालेकी सराहना करना, प्रसन्न होना इत्यादि महा-पापरूप अनंतानुबंधीकी कृष्ण लेश्या जाननी।

बहुरि अन्य धर्म बुद्धि पंडितकी रक्षाकरि ताका अपकार करनेके अर्थि, वा अपना मान पोषनेके अर्थि, वा लोभादिके अर्थि शास्त्रका अर्थ अन्यथा करना, झूंठा उपदेश देना, मिथ्या शास्त्र बनावना, अन्य कृत शास्त्र विषैं अपना अभिप्राय पोषना, श्लोक काव्यादि मेलना, इत्यादि कार्यकरि भव भव विषैं जीवनका घात करना, आपका घात करना, आपकैं, परकैं, पंच पापनकी संतति खड़ी करनी, सोभी महापापका मूल अनंतानुबन्धीकी कृष्ण लेश्या जाननी।

बहुरि जिन मंदिरमें रहना, स्त्री आदिन सों विषय करना, सोवना, भोजनादि करना, पंच इंद्रियनका

विषय सेवन करना, सप्त व्यसन सेवना, रार करना, संग्राम करना, विवाहादि कार्य करना, अपने तिर्यंचादिकन कूं मंदिरमें बांधना, अपना धनधान्यादि सामग्री मंदिरमें धरनी । बहुरि देव गुरु धर्मादिकका अविनय करना, निर्माल्य द्रव्य खाना, जिन मंदिरका द्रव्य चुराकर ले जाना सोभी अनंतानुबंधी कृष्ण लेश्या जाननी । इत्यादि अनंतानुधीकी कृष्ण लेश्याके पंच पापनि रूप कार्य जानना । ऐसैं पंच पापन रूप मन वचन कायकी प्रवृत्ति क्रोधकी वासना सहित प्रवर्तै है वा क्रोध सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी क्रोध युक्त कृष्ण लेश्या कहिये ।

बहुरि जो मानकी वासना सहित प्रवर्तै, वा मान सहित प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी मान युक्त कृष्ण-लेश्या कहिये ।

बहुरि जो मायाकी वासना सहित प्रवर्तै वा माया सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंभीकी माया युक्त कृष्ण लेश्या कहिये ३ ।

बहुरि जो लोभकी वासना सहित प्रवर्तै वा लोभ सहित प्रवर्तै हैं सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त कृष्ण-लेश्या कहिये ४ ।

अब अनंतानुबंधीकी नील लेश्या कहिये है —

नील लेश्यावालेके सर्व लक्षण कृष्ण लेश्यावालेके लक्षण वत समान जानने । विशेष इतना कि—नील लेश्यावाला आलसी होय, निद्रा जाकै बहुत होय, पहिला कूं ठगना जाकैं बहुत होय, कुटुम्ब विषैं जाकैं स्नेह बहुत होय । पंच इंद्रियनिके विषयनि विषैं अति आशक्त होय, धनधान्यादिककी तीव्र वांछा सहित होय, तथा धनधान्यदिक विषैं अति आसक्त होय, ताकी रक्षाविषैं तत्पर होय, भयकरि युक्त होय, बहुरि पच्चीस विकथा विषैं आरूढ़ होय, तहां पच्चीस-विकथाके नाम—

स्त्रीकथा १ अर्थ कथा–धनादिककी कथा २ भोजन कथा ३ राजकथा ४ चोर कथा ५ वैर करनहारी कथा ६ पराया खंडनरूप परखंड कथा ७ देशकथा ८ भाषा कहानी आदि कथा ९ पराया गुण प्रगट न होय ऐसी कथा गुण–बंध कथा १० धियाड़ी, शीतला, चंडी, मुंडी आदिकी कथा सो देवी कथा ११ कठोर वचनरूप निष्ठुर कथा १२ दुष्टता-रूप पर पैशुन्य कथा १३ कामादिरूप कंदर्प कथा १४ देशकाल विपरीत सो देशकालानुचित कथा १५ निर्लज्जता रूप सो भंड कथा १६ मूर्खतारूप सो मूर्ख कथा १७ अपनी बड़ाईरूप सो आत्मप्रशंसा कथा १८ पराई निंदारूप सो परपरिवादक कथा १९ पराई घृणारूप सो पर जुगुप्सा कथा २० परकों पीड़ा देनहारी रूप सो पर पीड़ा कथा २१ लड़ने रूप सो कलह कथा २२ परिग्रह कार्यरूप सो परिग्रह कथा २३ खेतीका आरंभरूप सो कृष्यारंभ कथा २४ नृत्य-संगीत वादित्रादिरूप संगीत वादित्रादि कथा २५ इति पचीस कथा नाम समासः।

इत्यादि विशेष नील लेश्यावाले विषैं और प्रवर्त्तैं हैं, तातैं कृष्णलेश्या वालोंकी अपेक्षा याकों पंच पापन विषैं कषायभी थोड़ा लागै है, तातैं पंच पापनरूप याके कार्य भी किछु हीण होय हैं, यातैं याको नील लेश्या कहिये है।

बहुरि आजीविकाके निमित्त नानाप्रकार खोटा भेष धारणा, तहां पंचेंद्रियनके विषय पोषनैं, धन संचय करना, दश प्रकार परिग्रह राखना, आपको पूज्य मानना, बलात्कारै पुजावना, जो भक्ति करै तासौं संतुष्ट होना, ना करै तासौं द्वेष करना वा लोभके अभिनिवेश सहित धर्म प्रवृत्ति करनी इत्यादिक कार्य करना सो नील लेश्या जाननी, इत्यादि कार्य अन्याय वा पांच पाप जहां मन वचन काय करि वा कृत कारित अनुमोदना करि क्रोधकी वासना सहित वर्तै, वा क्रोध–सहित वर्तै सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त नील लेश्या कहिये ५।

बहुरि जहां मानके अभिनिवेश सहित वा मान सहित वर्तै तहां अनंतानुबंधीकी मान युक्त नील लेश्या कहिये ६।

बहुरि जहां मायाके अभिनिवेश सहित वा माया सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी माया युक्त नील

लेश्या कहिये ७।

बहुरि जहां लोभकी वासना सहित प्रवर्तै वा लोभ सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी लोभ युक्त नील लेश्या कहिये ८।

अब अनंतानुबंधीकी कापोत लेश्या कहिये है....

निरर्थक पैला ऊपर क्रोध किया करै, पैलाकी बहुत प्रकार निंदा करै, पैलाने बहुत प्रकार दुखावै, शोक जाकै प्रबल होय, भय जाकैं बहुत होय, अदेखसका भाव जाकैं बहुत होय, पैलाकी पुण्य सामग्री वा पैलाका पुण्य उदय सुहावै नाहीं, पैलाका अपमान करना, अपनी बड़ाई करनी, किसीका विश्वास न करना अरु अपनी कोई योग्य निंदा करै तौभी न सुहावै, जो कोई अपनी बड़ाई करै तापर संतुष्ट होय, अपनी पराई हानि-वृद्धि न समझै, युद्धविषैं मरण कूं चाहै, अपनी प्रशंसा करनेवालेकों बहुत धन देना, जस बड़ाई के अर्थ धन खरचना, व्यवहारादिक कार्यनके विषैं बहुत धन खरचना, शरीरादिककी रक्षाके अर्थि वा बलपराक्रमादिके अर्थि धन खरचना, जस बड़ाईके अर्थि संग्राम विषैं युद्ध करना, मरना मारना, बांधवादिकके अर्थि अपघात करना, जस बड़ाईके अर्थि दान दैना, जस बड़ाई मानादिकके अर्थि पूजा करना, प्रतिष्ठा करना, जिन मंदिर बनवाना, तीर्थंजात्रा करनी, शील पालना, संयम धारना, तप करना, शास्त्राभ्यास करना, इत्यादि धर्मकार्य करना, कार्य अकार्यकों न जानै, हेय उपादेयकों न जानै, न्याय अन्याय तथा पांचों इंद्रियनके विपयन विषैं अति आसक्त रहै तिनके अर्थि बहुत धन खरचै, सप्त विसन सेवै, तहां बहुत धनादिक लगावै, बहुरि अनेक प्रकार नृत्यादि कौतूहल करना करावना, कौतूहल देखने विषैं आसक्त रहना, अपने पुण्यउदय विषैं बहुत मग्न रहना, वा अपने आजीविकाके कार्यनिविषैं मग्न रहना, आसक्त रहना, परलोकके अर्थि धर्मकी वासना ही न धरनी धनादिक उपजावनेकों वा आजीविकादिक उपजावनेकों, वा विवाहादिक कार्य वा विपयादिक कार्यनके अर्थि बहुत वांछा सहित अहर्निश

संकल्प–विकल्प कियो करै। लौकिक कार्यनके आश्रय पैलाका जस करना, वड़ाई करनी बहुरि स्त्रीपुत्रादिक जे कुटुम्ब तिनसौं स्नेह करना, पुत्रादिकनको श्रृंगार करना, स्त्रीकौं शोभा सहित राखणी, आप शोभा सहित रहना, हवेली वनवानी, बाग वनवाना, कूवा तालाव कुंड वनवाना इत्यादि कार्यनाविपैं क्रोधादि कषाय जन्य होय प्रवर्तै तिनके अर्थि पंच पाप जघन्य सेवन करै, सो कापोत लेश्या कहिये। तहां ए कहे कार्य ते वा इनके अर्थि पंच पाप तहां क्रोध सहित होय सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त कापोत लेश्या है ९।

अर जहां मान सहित होय सो अनंतानुबंधीकी मानयुक्त कापोत लेश्या कहिये १०।

अर जहां माया सहित होय सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त कापोत लेश्या कहिये ११।

अर जहां लोभ सहित होय सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त कापोत लेश्या कहिये १२।

अब अनंतानुबंधीकी पीत लेश्या कहिये है :—

मंद भये हैं क्रोधादि कषाय जाकै, अर नहीं है उद्यमकरि पंचपाप करने की वांछा जाकैं, अर उपजा है परभव संबंधी नरकादिकनका भय जाकों, अर उत्पन्न भई है पर भव संबंधी स्वर्गादिकनके विपैं विपयनका चाह जाकैं, वा तिनहीके हेत कार्य अकार्यकों विचारै है, हेय उपादेयकों विचारै है, सेवने योग्य तथा न सेवने योग्यका ज्ञान करै है, जाकूं पुण्यरूप सुकार्य जानै ताकूं तो करै, अर जाकूं पापरूप अकार्य जानै सो न करै, जाकूं त्यागने योग्य जानै ताकूं त्यागै, अर जाकूं उपादेय जानै ताकों ग्रहण करै, अर जाकूं सेवन योग्य पदार्थ जानै ताकूं सेवै, न सेवने योग्य होय ताकूं न सेवै, सर्वविपैं समदर्शी होय, काहू सों द्वेपभाव व ईर्पाभाव नाहीं करै है, सर्व जीवन पर दयाभाव राखै। बहुरि कपायरहित परलोकके अर्थि दुखित सुखित जीवांनैं वा जिनकों पूज्य मानै तिनकों दान देय, मन वचन काय जाका मदरहित कोमल होय, मन तो जाका पापके विचार रहित होय, अर वचन जाका मिष्ट होय, काय

अर्थि पंचपापन विषैं निःशंक होय प्रवर्तना सो कृष्णलेश्या कहिये।

इन कार्यन विषैं प्रवर्तें क्रोधकषाय सहित होय सो अप्रत्याख्यान कषायका क्रोधरूप कृष्ण लेश्या कहिये १।

जो मान कषाय सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यानमानरूप कृष्ण लेश्या कहिये २।

अर जहां माया सहित प्रवृति होय सो अप्रत्याख्यानकी माया रूप कृष्ण लेश्या कहिये ३।

अर जहां लोभ सहित प्रवृत्ति होय सो अप्रत्याख्यानकी लोभरूप कृष्ण लेश्या कहिये ४।

अब अप्रत्याख्यानकी नीललेश्या कहिये है :—

जहां कृष्ण लेश्या करि कहे कार्य तिनविषैं किछु मंदकषाय रूप आलस सहित प्रवर्तें, किछु पूर्वापर विचार सहित भी प्रवर्तें, सो नील लेश्या कहिये ५।

अर जहां क्रोधसहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधरूप नील लेश्या है ६।

अर जहां मानसहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मान रूप नील लेश्या है ७।

अर जहां मायासहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी माया रूप नील लेश्या ८।

बहुरि लोभसहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यान की लोभरूप नील लेश्या कहिये ९।

अब अप्रत्याख्यानकी कापोतलेश्या कहिये है :—

जो अपने कार्यका बिगाड़ करै ता ऊपर क्रोध करै, दोष सहित होय ताकी निंदा करै, जो महादोषवान पुरुष है ताकौ पराभव करै, इष्ट वियोग विषैं शोक करै, जहां अपना पराभव होता दीखे तहां भयवन्त होय पंच पाप रूप जहाँ मंद भावन सहित प्रवर्तें, अपने न्याय कार्यके बाधक थकी अदेखसका भाव राखै, अपने न्याय कार्यन विषैं

मर्याद रूप क्रोध मान माया लोभ रूप भी प्रवर्तें, अपनी न्याय रूप आजीविका के अर्थि, असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्पादिक तथा दास, पशुपालनादि षट् कर्मन विषैं प्रवर्तें, न्यायरूप आजीविका कार्य करै, पापरूप अपने पंचेन्द्रियके विषय सेवै, विवाहादि कषाय कार्यभी करै इत्यादि प्रवृत्ति विषैं प्रवर्तना कापोत लेश्या जानना ।

अरु जहां इन कार्यन विषैं क्रोध सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यान क्रोध युक्त कापोतलेश्या कहिये ९ ।

अरु जहां मान सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यान मानयुक्त कापोतलेश्या कहिये १० ।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त कापोतलेश्या कहिये ११ ।

बहुरि जहां लोभ सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त कापोतलेश्या कहिये १२ ।

अब अप्रत्याख्यानकी पीतलेश्या कहिये हैं....

जहां क्रोधादि कषाय मन्द होय प्रवर्तें, राज्यादिक जे आजीविकाके कार्य, वा संग्राम विवाहादिक कषाय कार्य, वा विषय कार्य तिनसौं उदासभाव होय, अरु पूजा, प्रभावना, तीर्थयात्रा, तप, संयमादि विषैं शुचि होय तहां हर्ष-करि प्रवर्तें, अणुव्रत महाव्रत ग्रहण करनेकी अरु संसारके छोड़नेकी वांछा प्रवर्तें, हिंसा अनृत, स्तेय, कामसेवन, जहां मंद होय, परिग्रहके भारको छोड़ो चाहै, पात्र विषैं च्यार प्रकार दान देनेकी निरंतर प्रवृत्ति होय इत्यादि भाव पीतलेश्या विषैं प्रवर्तें हैं । तहां इन भावनरूप प्रवर्तावना, जहां क्रोध कषाय होय तहां अप्रत्याख्यानकी क्रोध सहित पीतलेश्या कहिये १३ ।

अरु जहां मान सहित प्रवृत्ति होय सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त पीतलेश्या कहिये १४ ।

बहुरि जहां माया सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी माया सहित पीतलेश्या कहिये १५ । अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तें सो अप्रत्याख्यानकी लोभ सहित पीतलेश्या कहिये १६ ।

अब अप्रत्याख्यानकी पद्मलेश्या कहिये है :—

भये हैं क्रोधादि कषाय अति मंद जहाॅ, अरु त्याग दिये हैं आजीविकाके कार्य वा कषाय कार्य वा इंद्रियनके विपय, अरु निरन्तर प्रवर्तै हैं देशसंयम वा सकलसंयमके ग्रहण करनेकी वांछा, अरु मुनिजन तथा गुरुजन वा चतुर्विध संघका वैयावृत्य करने विषै तत्पर होय, अरु भया है संयम भाव उत्पन्न जहाॅ, इत्यादि भाव पद्म लेश्याके हैं। जहाॅ इन भावन विषैं क्रोध कषाय प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये १७।

अरु जहाँ मान कपाय प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये १८।

जहां माया सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये १९।

अरु जहाॅ लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये २०।

अब अप्रत्याख्यानकी शुक्ललेश्या कहिये है....

क्रोधादि कषाय जहां बहुत मंद होंय, सर्व कुटुंबादिक सों स्नेहका अभाव होय, सर्व सामग्री विषैं अरुचि होय, मन वचन काय अति निश्चल होंय, विपयवासनाकौ जहाॅ अभाव होय, सप्त भय वजित होय, इसभव परभव विपैं भोमनकी वांछा रहित होय, अरु सर्व पदार्थन विपैं राग—द्वेष रहित समभाव होय इत्यादि भाव शुक्ल-लेश्याके हैं।

अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २१।

अर जहां मान सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी मानयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २२।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये २३।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ललेश्या कहिये २४। अरु अनंतानुबंधीकी पीत पद्म शुक्ललेश्या विषैं अनंतानुबंधी अति मंदरूप प्रवर्तै है। तहां तत्व श्रद्धानरूप द्रव्य सम्यक्त्व होय हैं, ताका माहात्म्य थकी अणुव्रत महाव्रत बुद्धिपूर्वक मोक्षके अर्थही धारै है। अरु बिधिपूर्वक अंतरंग बाह्य निर्मल दोषरहित पालै है, तथापि अनंतानुबंधीके मंद उदयके माहात्म्यथकी वा मिथ्यात्वके मंद उदयथकी अंतरंग अभिप्रायमें अबुद्धिपूर्वक कोई अंश अन्यथा अभिप्रायको वा अन्यथा प्रवृत्तिको चाल्यो जाय है, ताथकी मोक्ष मार्गका अभाव ही है ।

अब प्रत्याख्यान विषैं कषायनकी अपेक्षा लेश्याके बारह भेद कहिये हैं :—

जातैं प्रत्याख्यान कषाय भावन विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्याका अभाव है, अरु पीत, पद्म, शुक्ल इन तीन लेश्याओंका सद्भाव है, तातैं बारह भेद हैं। संज्वलन कषाय सहित प्रत्याख्यान कषाय अति मंद कषायनके स्थानकन विषै प्रवर्तै। प्रत्याख्यान कषाय सहित जीव संसार शरीर, भोगसों विरक्त होय, बहुरि बहुत आरंभ परिग्रह छोड़ि अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह विषैं तिष्ठैं, एकादश प्रतिमाका ग्रहणरूप जो देश संयम ताकौ ग्रहण करै, जातैं इहां देश संयम के घातक अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है।

बहुरि सकल संयम लेनेकी जाकै वांछा होय बहुरि च्यारि प्रकार हिंसा विषैं उद्यमी हिंसा, संकल्पी हिंसा, विरोधी हिंसा, इन तीन हिंसाओंका तौ अभाव होय, अरु आरंभी हिंसा भोजनादि क्रिया विषैं वा अल्पारंभके अर्थि अल्प विहारादिक कार्यन विषैं वा धर्म कार्यनिके प्रवृतिन विषैं अल्प होय है सो जतनाचार पूर्वक है । लौकिक कार्यनि विषैं अरुचि है, धर्म कार्यनि विषैं प्रीत सहित है। पांचों इंद्रियनकी प्रवृत्तिकै तौ राग अर्थि है वा धर्म अर्थि है, विषयके अर्थि नाहीं है इत्यादि लक्षणनि सहित प्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं। तहां इन कार्यन विषैं प्रवृत्ति भावरूप होय है, सो पीत लेश्या कहिये, सो पीत लेश्या क्रोध सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १।

बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं माया कषाय प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मायाभाव है २३ ।

बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं लोभ कषाय प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको लोभभाव है २४ ।

॥ इति अनंतानुबंधीके लेश्याके २४ भेद कहे हैं ॥

अब अप्रत्याख्यानकी लेश्याके चौबीस भेद कहिये है :–

जहां न्यायरूप विषयकार्य वा कषाय कार्य वा पांचों पाप प्रवर्तै, बहुरि सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होजाय, जातैं इहां सम्यक्त्वका घातक अनंतानुबंधी वा अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है, तहां क्रोधादि भावकों प्राप्त होय प्रवर्तै, तहां अप्रत्याख्यानका लेश्याभाव जानना, जातैं कार्यके अंत जाकै क्रोधादि कषाय शांततानैं प्राप्त होंय, दयाधर्म करि सहित होय, सत्यवादी होय, पराये पुण्य उदय विषैं अदेखसा भाव नाहीं करै, सुज्ञान चातुर्यता करि मंडित होय, क्रिया-वान शुद्ध भोजनको भक्षक होय, सप्त व्यसनादि करि वर्जित होय, अष्ट मद कर रहित होय, सरल होय, अन्याय लोभ कर रहित होय, देव, गुरु, धर्मादिकका भक्त होय, शरणागत प्रतिपालक होय, उदार होय इत्यादि भावन सहित अप्रत्या-ख्यान कषाय प्रवर्तै हैं । तहां प्रथम ही अप्रत्याख्यानकी कृष्णलेश्या कहिये है ।

जहां न्याय कषाय कार्यनके अर्थि, वा विषय कार्यनके अर्थि, मरना–मारना, संग्राम करना, अति प्रचंड क्रोधादि कषाय करना, अपना घात करना, पैलाका घात करना, झूंठ बोलना, चुरा लावना, चुरा मंगावना, स्वस्त्री सों आसक्त होय भोग करना, अनेक स्वस्त्रीन सों भोग करनेकी वांछा करनी, तातैं अनेक स्त्री परणनी, अपने मिले भोगन विषैं अतृप्त होना, न्याय पूर्वक बहुत परिग्रह बधावना, अपने न्यायरूप कार्यनके बाधकनकों वा प्रजाके बाधकनकों अनेक प्रकार दंड दैना, राजनसूं दंड लैना, मरना–मारना, मुलक इजारैं करना, जावत् वशमें न आवै तावत् अदेखसा भाव राखना, पांच इंद्रि-यनके विषयनकूं आसक्त होय सेवना, कौतूहल करना इत्यादि न्याय कषाय कार्यन विषैं वा विषय कार्यन विषैं वा तिनके

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो अप्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ललेश्या कहिये २४ । अरु अनंतानुबंधीकी पीत पद्म शुक्ललेश्या विषैं अनंतानुबंधी अति मंदरूप प्रवर्तै है । तहां तत्व श्रद्धानरूप द्रव्य सम्यक्त्व होय हैं, ताका माहात्म्य थकी अणुव्रत महाव्रत बुद्धिपूर्वक मोक्षके अर्थही धारै है । अरु विधिपूर्वक अंतरंग बाह्य निर्मल दोषरहित पाले हैं, तथापि अनंतानुबंधीके मंद उदयके माहात्म्यथकी वा मिथ्यात्वके मंद उदयथकी अंतरंग अभिप्रायमें अबुद्धिपूर्वक कोई अंश अन्यथा अभिप्रायको वा अन्यथा प्रवृत्तिको चाल्यो जाय है, ताथकी मोक्ष मार्गका अभाव ही है ।

अब प्रत्याख्यान विषैं कषायनकी अपेक्षा लेश्याके बारह भेद कहिये हैं —

जातैं प्रत्याख्यान कषाय भावन विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्याका अभाव है, अरु पीत, पद्म, शुक्ल इन तीन लेश्याओंका सद्भाव है, तातैं बारह भेद हैं । संज्वलन कषाय सहित प्रत्याख्यान कषाय अति मंद कषायनके स्थानकन विषैं प्रवर्तै । प्रत्याख्यान कषाय सहित जीव संसार शरीर, भोगसों विरक्त होय, बहुरि बहुत आरंभ परिग्रह छोड़ि अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह विषैं तिष्ठै, एकादश प्रतिमाका ग्रहणरूप जो देश संयम ताकौ ग्रहण करै, जातैं इहां देश संयम के घातक अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है ।

बहुरि सकल संयम लेनेकी जाकै वांछा होय बहुरि च्यारि प्रकार हिंसा विषैं उद्यमी हिंसा, संकल्पी हिंसा, विरोधी हिंसा, इन तीन हिंसाओंका तो अभाव होय, अरु आरंभी हिंसा भोजनादि क्रिया विषैं वा अल्पारंभके अर्थि अल्प विहारादिक कार्यन विषैं वा धर्म कार्यनिके प्रवृतिन विषैं अल्प होय है सो जतनाचार पूर्वक है । लौकिक कार्यनि विषैं अरुचि है, धर्म कार्यनि विषैं प्रीत सहित है । पांचों इंद्रियनकी प्रवृत्तिकै तो राग अर्थि है वा धर्म अर्थि है, विषयके अर्थि नाहीं है इत्यादि लक्षणनि सहित प्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं । तहां इन कार्यन विषैं प्रवृत्ति भावरूप होय है, सो पीत लेश्या कहिये, सो पीत लेश्या क्रोध सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १ ।

बहुरि जहां स्वर्गादिकके लोभकी वासनायुक्त होय वा तिस काल लोभ कषाय सहित होय सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये २०।

अब अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्या कहिये है....

नहीं है इसभव संबंधी सुख—दुःख विषैं हरष विषाद जाकैं, अर नहीं है परभव संबंधी दुःखका भय अर सुखकी वांछा जाकैं, अर समभावकी प्राप्ति भई हैं, अर मिट गये हैं त्रयोदश प्रकार कषाय जाकैं, अर मिट गया है पुत्रकलत्रादिक सौं स्नेह भाव जाका, अर नहीं करै है पक्षपात काहूसौं, अर नहीं करै है पराई निंदा वा प्रशंसा, अर समान हैं बैरी, मित्र, सुख—दुःख, राजा, रंक, रत्न अर ठीकरी जाकैं, अर समान है जीवो अर मरवो इत्यादि जाकैं, अर नहीं इष्ट अनिष्ट पदार्थन विषैं राग—द्वेष जाकैं, अर धारै हैं शील, व्रत, तप, संयम, अणुव्रत, महाव्रतादिक बुद्धिपूर्वक जानैं, तिनकौं भलीभांति निःशंकता सहित समभावसौं पालै हैं, नहीं लगावैं हैं दोष जिनकौं, अर नहीं है इसभव परभव संबंधी इष्ट अनिष्ट पदार्थनसौं राग—द्वेष जाकैं, इत्यादि भाव शुक्ल लेश्याके हैं।

बहुरि जहां भले भोगन विषैं अति मंदराग प्रवर्तै है, भोगनके उपार्जन करनेकी उपाय करि नाहीं है वांछा जिनकी, अर अति निश्चल है मन, वचन, शरीरकी चेष्टा जिनकी, अर नाहीं प्रवर्तै है अष्ट प्रकार मद विषैं कोईभी मद जिनकैं, अर नाहीं प्रवर्तै है कोई भी हीणता जिनकैं, अर सप्त भयकरि वर्जित हैं चित्त जिनका, अर गुणविषैं ही है राग अर ग्रहण जिनकैं इत्यादि भाव शुक्ललेश्याके हैं।

अर जहां क्रोधादिभाव अति मंद होय प्रवर्तै तहां शुक्ललेश्या कहिये।

अर जहां इन भावन विषैं जिस समय क्रोध प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको क्रोध है २१।

अर जिसकाल इन भावन विषैं मान प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मानभाव है २२।

बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं माया कषाय प्रवर्तै है सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको मायाभाव है २३।
बहुरि जिसकाल इन भावन विषैं लोभ कषाय प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधीकी शुक्ललेश्याको लोभभाव है २४।

॥ इति अनंतानुबंधीके लेश्याके २४ भेद कहे हैं ॥

अब अप्रत्याख्यानकी लेश्याके चौबीस भेद कहिये है :—

जहां न्यायरूप विषयकार्य वा कषाय कार्य वा पांचों पाप प्रवर्तै, बहुरि सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होजाय, जातैं इहां सम्यक्त्वका घातक अनंतानुबंधी वा अप्रत्याख्यान चारित्रमोहके उदयका अभाव है, तहां क्रोधादि भावकों प्राप्त होय प्रवर्तै, तहां अप्रत्याख्यानका लेश्याभाव जानना, जातैं कार्यके अंत जाकै क्रोधादि कषाय शांततानैं प्राप्त होंय, दयाधर्म करि सहित होय, सत्यवादी होय, पराये पुण्य उदय विषैं अदेखसा भाव नाहीं करै, सुज्ञान चातुर्यता करि मंडित होय, क्रियावान शुद्ध भोजनको भक्षक होय, सप्त व्यसनादि करि वर्जित होय, अष्ट मद कर रहित होय, सरल होय, अन्याय लोभ कर रहित होय, देव, गुरु, धर्मादिकका भक्त होय, शरणागत प्रतिपालक होय, उदार होय इत्यादि भावन सहित अप्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तै हैं। तहां प्रथम ही अप्रत्याख्यानकी कृष्णलेश्या कहिये है।

जहां न्याय कषाय कार्यनके अर्थि, वा विषय कार्यनके अर्थि, मरना-मारना, संग्राम करना, अति प्रचंड क्रोधादि कषाय करना, अपना घात करना, पैलाका घात करना, झूंठ बोलना, चुरा लावना, चुरा मंगावना, स्वस्त्री सौं आसक्त होय भोग करना, अनेक स्वस्त्रीन सौं भोग करनेकी वांछा करनी, तातैं अनेक स्त्री परणनी, अपने मिले भोगन विषैं अतृप्त होना, न्याय पूर्वक बहुत परिग्रह बधावना, अपने न्यायरूप कार्यनके बाधकनकों वा प्रजाके बाधकनकों अनेक प्रकार दंड दैना, राजनसूं दंड लैना, मरना-मारना, मुलक इजारैं करना, जावत् वशमें न आवै तावत् अदेखसा भाव राखना, पांच इंद्रियनके विषयनकूं आसक्त होय सेवना, कौतूहल करना इत्यादि न्याय कषाय कार्यन विषैं वा विषय कार्यन विषैं वा तिनके

जाकी विनय युक्त होय, नरकादिकके दुःख सौं डरि छोड़े हैं पंचपाप अर सप्त व्यसनादिक जानै, बहुरि स्वर्गादिक के सुखके अर्थकरे हैं, जिनभाषित दान पूजादिक षट् आवश्यक जानै, तथा मंद भये हैं चारों ही कषाय जाकै, बहुरि आपकूं प्राप्त भये जे पंच इंद्रियनके भोग तिनकूं पंच पाप रहित वा हठ रहित मगन होय आसक्त होय न सेवै है, कौतूहलादि करि प्रसन्न रहैं, पराये धनादिक भोग सामग्री देखि अदेखसका भाव नाहीं करै है—इच्छा नाहीं करै है, कौतूहलादिकके निमित्त वा दुखित जीवनके निमित्त, वा सम्यक्त्व संयमादिके धारक जीवनके दुःख निवारणके अर्थि दुष्टनकों दुःख भी देय संग्राम भी करै इत्यादि भाव पीत लेश्याके हैं। सो ये कार्य जहां दुःखसौं खुणास खाय संसारीक सुखके अर्थि धर्म कार्य करै सो क्रोधके अभिनिवेश सहित होय वा क्रोधसहित होय सो अनंतानुबंधीकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १३।

अर जहां मानके अभिनिवेश सहित होय वा मानसहित होय, सो अनंतानुबंधीकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये यहां स्वर्गादिक विषैं अपना मान बधावनेका अभिप्राय जानना १४।

अर जहां माया सहित होय तहां माया कहिये। एक तो स्वजन परजनके भय थकी धर्म कार्य दानादिक तें अपरछन्न (प्रच्छन्न गुप्त) करै अर चौड़े और भांति करै, बहुरि एक माया अंतरंग तो स्वर्गकी चाह सहित अभिप्रायकों धारै है, अर मुख थकी मोक्षके अर्थि विस्तारै, सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये। यहां स्वर्गादिक विषैं अपने विषय सेवनेका आभिप्राय जानना १५।

अर जहां लोभके अभिनिवेश सहित होय, वा लोभसहित होय, सो अनंतानुबंधीकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये १६। इंहां स्वर्गादिकके सुखका लोभ जाननां। इति।

अब अनंतानुबंधी पद्म लेश्या कहिये है --

परभव विषैं नरकादिक संबंधी दुःख निवारणके अर्थि अर स्वर्गादिकके सुखके अर्थि त्याग दिये हैं एकदेश सर्व-देश विषय सुख जानै, तथा त्याग दिये हैं एकदेश सर्वदेश संसारीक कषायनके कार्य जानैं, अर उपशम गये हैं क्रोध मान माया लोभ व छह हास्यादिक वा तीन वेद ऐसें तेरह कषाय जाकैं, बहुरि भले-पुण्य कार्य करनेका ही है परिणाम जाकैं, अर शुभ कार्यनके करने रूप ही है उद्यम जाकैं, बहुरि अणुव्रत महाव्रतका जाकैं ग्रहण होय, अत्यंत कष्टरूप जो परीसह आपके प्राप्त होंय तिनकों समभाव सों सहै। बहुरि मुनि गुरुजनकी सेवा विषैं प्रीतिवन्त होय इत्यादि भाव पद्म लेश्याके जानने।

बहुरि मिले भोगनकों भोगवै है, आसक्तता नाहीं धारै है। किसीकों दुःख नाहीं देय है, किसीकों सतावै नाहीं है, चंचलता रहित धीर है मन जिनका, तथा कृपणता रहित उदार है चित्त जिनका, बहुरि अलभ सामग्रीकी वांछा नाहीं करै है, परोपकार करने विषैं तत्पर है, गुण हीका है ग्रहण जिनके, किसीका दोष ग्रहण कर पराई निंदा नाहीं करै है। किसी पास हीनता नाहीं करै है इत्यादि भाव पद्म लेश्याके हैं।

जहां क्रोध सहित कषाय अति मंद होय प्रवर्तै तहां पद्मलेश्या कहिये। सो ए भाव जहां संसारीक दुःख सौं खुणास खाय तहां पैदा होय है, वा जहां क्रोध सहित प्रवर्तै तहां अनंतानुबंधीका क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये १७।

अर जहां स्वर्गादिक विषैं मान बधावनेके अर्थि होय वा इन भावनविषैं जिस काल मान वर्तै सो अनंतानुबंधी-की-मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये १८।

बहुरि जहां एभाव प्रवर्तै तो हैं अंतरंग स्वर्गादिकके सुखके अर्थि अर सुख थकी मोक्षके अर्थि कहना वा जिस-काल माया कषाय सहित प्रवर्तै सो अनंतानुबंधीकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये १९।

जहां मान सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये २।
अरु जहां माया सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये ३।
अरु जहां लोभ सहित होय सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये ४।

अब पद्मलेश्या कहिये :—

जहॉ पूर्वोक्त कार्यनि विषैं त्याग रूप प्रवर्तै है सो पद्म लेश्या कहिये है। तहां जो लेश्या क्रोध सहित प्रवर्तै सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ५।
अरु जहॉ मान सहित प्रवर्तै तहॉ प्रत्याख्यानकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये ६।
अरु जहां माया सहित प्रवर्तै तहां प्रत्याख्यानकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये ७।
अरु जहॉ लोभ सहित प्रवर्तै सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ८।

अब प्रत्याख्यानकी शुक्ललेश्या कहिये है :—

पूर्वोक्त कार्यनि विषैं जहॉ समभाव होय राग–द्वेष रहित निश्चल भाव होय सो शुक्ल लेश्या कहिये। सो शुक्ल लेश्या जहॉ क्रोध कषाय सहित होय सो प्रत्याख्यानकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ९।
अरु जहॉ मान कषाय सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मान युक्त शुक्ल लेश्या कहिये १०।
अरु जहॉ माया सहित होय सो प्रत्याख्यानकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ११।
अरु जहां लोभ सहित होय सो प्रत्याख्यानकी लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये १२।

अब केवल संज्वलन कषाय सहित लेश्याके बारह भेद कहिये है -

जहां क्रोधादि कषाय अति मंद वा मंदतर स्थानकन विषैं प्रवर्तैं हैं। संज्वलन कषाय सकल संयमका घातक नाहीं, यथाख्यात चारित्र का घातक है। तातैं सकल संयमका ग्रहण होय, जातैं सकल संयमका घातक प्रत्याख्यान कषायके उदयका अभाव है। अट्ठाईस मूलगुण वा पंचाचारादि रूप प्रवृत्ति होय। षष्ठम गुणस्थान सौं लेय दशम गुणस्थान पर्यंत आरूढ़ होय, सामायक १ छेदोपस्थापना २ परिहारविशुद्धि ३ सूक्ष्मसाम्पराय ४ ये चार संयम होंय, चौरासी लाख उत्तर-गुण युक्त होय, द्वाविंशति परीषह विषैं सहनशील होय इत्यादि भावयुक्त मुनि होय। जहां ये भाव प्रवृत्तिरूप हैं तहां पीत लेश्या कहिये।

अरु जहां क्रोध कषाय सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये १।
अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी मानयुक्त पीत लेश्या कहिये २।
अर जहां माया सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी मायायुक्त पीत लेश्या कहिये ३।
अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये ४।

अब संज्वलन कषायकी पद्मलेश्या कहिये है -

जहां पूर्वोक्त भाव त्याग रूप प्रवर्तैं सो पद्म लेश्या कहिये।
अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ५।
अरु जहां मान सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये ६।
अरु जहां माया सहित प्रवर्तैं सो संज्वलनकी मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये ७।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ८।

अब संज्वलन कषायकी शुक्ललेश्या कहिये है....

जहां पूर्वोक्त प्रवृत्तिका अभाव होय, उपयोगकी राग—द्वेष युक्त प्रवृत्ति न होय, जहां मन वचन कायकी निश्चलता होय इत्यादि भाव सो शुक्ल लेश्या कहिये।

अरु जहां क्रोध कषाय प्रवर्तै सो संज्वलनकी क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ९।

अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मान कपाय युक्त शुक्ल लेश्या कहिये १०।

अरु जहां माया कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ११।

अरु जहां लोभ कषाय सहित प्रवर्तै सो संज्वलनकी लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये १२।

बहुरि कषाय रहित गुणस्थान जे उपशांत कषाय एकादशम वा क्षीण कपाय द्वादशम वा सयोगकेवल त्रयोदशम इन तीन गुणस्थाननि विषैं जो शुक्ल लेश्या कहिये है सो योगोंकी अपेक्षा उपचार करि कहिये है। ऐसे ये बहत्तर भेद कहे। अब इनके अंतर्भूत अनेक भेद कहे हैं ते सर्व लेश्या भाव जानने।

अब इन लेश्या भावनका फल कहिये है....

अनंतानुबंधीकी उत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि तौ आत्मा उत्कृष्ट स्थिति वा उत्कृष्ट अनुभाग सहित नरकायुको बांधे है। अरु इस ही लेश्या सहित जीव मरण को पाय सप्तम नरक विषैं उपजै है, अरु अनुत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि आत्मा अनुत्कृष्ट स्थिति अनुभाग सहित नरक गति तथा नरकायु बांधे है। अरु इस हीं लेश्यामें मरण करै तौ पंचम नरकके अंत पाथड़ासे लगाय छटवें नर्कके अंत पाथड़ा पर्यन्त उपजै है। बहुरि अजघन्य कृष्ण लेश्या भाव

करि आत्मा मनुष्य तिर्यंच आयु बांधि मनुष्य तिर्यंच दोय गतिविषैं उपजै है अर जघन्य कृष्ण लेश्या भाव करि जीव देवायु बांधि भवनात्रिक देवगति विपैं उत्पन्न होय है।

बहुरि अनंतानुबंधी नील लेश्या के उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायु बांधै है।

बहुरि याही लेश्यामें मरण करै तो पंचम नरक विषैं उपजे है। अरु अनुत्कृष्ट नीललेश्याके भावकरि आत्मा मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायुकौ बंध करै हैं।

बहुरि इस ही लेश्यामें मरणकरि तृतीय नरकके अंत पाथड़े सों लेय चतुर्थ नरकके अंत पर्यंत उपजै है।

बहुरि जघन्य नीललेश्या भावकरि जीव मनुष्य तिर्यंचायु बांधै है। मरण करि मनुष्य तिर्यंच गति विषैं ही उत्पन्न होय है। अर जघन्य नीललेश्या भावकरि जीव देवायुको बांध करि भवनत्रिक देव गति विषैं ही उपजै हैं २।

बहुरि अनंतानुबंधी कापोतलेश्याके उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायु बांधि मरण करि तृतीय नर्क विषैं उपजै है। बहुरि अनुत्कृष्ट कापोतलेश्या भावकरि आतिमान (परिवर्तमान) जघन्यस्थिति अनुभाग सहित नरकायुका बंध करि मरणकों पाय प्रथम नरकसों लगाय दूसरे नरक पर्यंत उपजै है। बहुरि कापोतलेश्याके अजघन्य भाव करि जीव मनुष्य तिर्यंचायु बांधि मनुष्य तिर्यंचगति विषैं उत्पन्न होय है। बहुरि कापोतलेश्याके जघन्य भाव करि आत्मा देवायुको बांध करि भवनात्रिक देवन विपैं उपजैं है।

बहुरि अनंतानुबंधी पीतलेश्या के भावनकरि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण कर कल्पवासी देव होय हैं अर देव याही लेश्याके स्थानकन थकी मनुष्य तिर्यंच आयु वांधि मरण कर मनुष्य तिर्यंच दोनों गति विषें उपजैं हैं ४।

बहुरि अनंतानुबंधी पद्मलेश्या भाव करि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण करि कल्पवासी देव होंय हैं। अर देव याही लेश्या भाव करि मनुष्य तिर्यंचायु बांधि मरण कर मनुष्य तिर्यंच दोनों गति विषैं उपजै है २।

बहुरि अनंतानुबंधी शुक्ललेश्याभावकरि मनुष्य तिर्यंच तौ देवायु बांधि मरण कर कल्पवासी देव होंय हैं, अर देव याही लेश्याभाव करि मनुष्यगति आयु बांधि मनुष्यगति विषैं उपजैं हैं ६।

बहुरि अप्रत्याख्यानकी छहू लेश्याभाव करि मनुष्य—तिर्यंचकैं तौ देवगति देवायुका ही बंध है, अर मरण विषैं विशेष है, कृष्ण नील लेश्या भावन विषैं तो मरण ही नाहीं, बहुरि कापोत लेश्याके उत्कृष्टादि भावन सहित जीव प्रथम नरक विषैं उपजै, अर मध्यभावन विषैं मर्यो जीव भोगभूमिविषैं तिर्यंच होय, अर जघन्यादि भावन सहित मर्यो जीव भोगभूमि विषैं मनुष्य होय।

बहुरि पीत पद्म शुक्ल लेश्या भावन करि मर्यो जीव कल्पवासी देव ही होय, बहुरि नारकी कृष्ण नील कापोत लेश्या भाव धरैं हैं। अर ममुष्यगति विषैं ही उपजैं हैं, अर देव पीत पद्म शुक्ल लेश्या भावन करि मनुष्य-आयु ही वांधैं हैं। अर मरण करि मनुष्यगति विषैं ही उपजै हैं २।

बहुरि प्रत्याख्यानकी पीत, पद्म, शुक्ललेश्या भावन करि मनुष्य वा तिर्यंच देव आयु ही वांधैं हैं, अर मरण कर उत्तम कल्पवासी देवन विषैं उपजैं हैं।

बहुरि संज्वलनकी पीत पद्म लेश्या वाला मनुष्य मुनिपद विषैं तिष्ठता देव आयु ही बांधै है, अर मर कर कल्पवासी देव उत्तम इंद्रादिक होय है। अर शुक्ल लेश्या वाला उत्तम देव आयु बांधि मरण करि कल्पातीत जो नौग्रीवक वा नौ अनुदिश विमान वा सर्वार्थसिद्धि सहित पंच अणुत्तर विमान तिन विषैं उपजै है। अर वर्तमान विषैं कृष्ण, नील, कापोत ए तीन लेश्या तौ दुख हीकी कारण है। अर पीत, पद्म, शुक्ललेश्या सुख ही की कारण हैं।

इति फलवर्णनम्।

बहुरि कृष्ण, नील, कापोत ए तीनलेश्याभाव, गुणस्थान तौं असंयतपर्यन्त हैं, मार्गणा गति ४ जाति ५

योगन विषैं सामान्यपनै तो तीनों ही वेद भावनिकी अपेक्षा हैं, द्रव्यकी अपेक्षा नाहीं। कषाय २५, ज्ञान पुरुष वेद विषैं तो केवल विना ७ पाइये, अर स्त्री नपुंसक वेद विषैं मनःपर्ययज्ञान विना छह ही ज्ञान पाइये।

अर संयम—सूक्ष्मसाम्पराय वा यथाख्यात विना ५, अर दर्शन—केवल विना ३, लेश्या—छह ६, भव्य अभव्य २ सम्यक्त्व ६, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २, इन विषैं पाइये है।

॥ इति श्री भावदीपकका औदयिक भावाधिकार विषैं वेद भावाधिकार पांचवां समाप्त भया ॥

अथ असंयम भावाधिकार प्रारम्भ :—

दोहा

असंयमभाव परभावकों मेटि र संयम भाव
स्वभाव भावकों सिद्धकरि नमौं मुक्तिके राव ॥

अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोह कर्मके उदयतैं जीवकै असंयमभाव होय है। तहां पांच इंद्रिय अर छठे मनकी स्वच्छंद प्रवृत्ति होय, जातैं पांच इंद्रिय छठे मनका विषय स्वच्छन्द होय सेवै है। नहीं है हेय उपादेयका विचार जहां, अर नहीं है त्यजन ग्रहणकी प्रवृत्ति जहां, बहुरि नहीं है षट कायके जीवनकी दया जाकैं, ऐसी जहां निःशंक प्रवृत्ति होय सो असंयमभाव कहिये। सो असंयमभाव दोय प्रकार है—एक तो अनंतानुबंधी चारित्रमोहके उदयतैं होय है। तहां तो योग्य-अयोग्य, न्याय–अन्याय, हेय–उपादेयको, विवेक रहित विषय कार्यन विषैं वा कषाय कार्यन विषैं प्रवर्तै है। स्वच्छन्द दयारहित त्रस स्थावर जीवनकी हिंसा करै है, ऐसा असंयमभाव है।

बहुरि दूसरा असंयमभाव अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोहकर्मके उदयतैं होय है, तहां विषयकार्य वा कषाय

कार्य वा त्रस--स्थावर जीवनकी हिंसा न्यायपूर्वक योग्य अयोग्यके विचार सहित होय हैं। तहां त्यजन ग्रहणका प्रतिज्ञा वाक्य तो नहीं काटि (काढ़ि) सकै है परन्तु हेय उपदेयके विचार सहित होय है। तातैं अपने पद योग्य न्यायकार्यैन विषैं तो प्रवर्तें है, अर पद योग्य अन्याय कार्यनि विषैं नाहीं प्रवर्तें है, ऐसा असयंमभाव तो अप्रत्याख्यानके उपरले स्थानकन विषैं होय हैं। अर अप्रत्याख्यानके मंद उदयमें किंचित् त्यजन ग्रहण रूप आखड़ी, व्यसनादिक का त्याग, अभक्ष्य उदंवरादिकका त्यागरूप इत्यादि प्रतिज्ञाभी होय है। परन्तु पंच पापनका एकदेश वा सर्वदेश त्याग नाहीं कर सकै है। तातैं असंयम ही कहिये हैं।

ए असंयमभाव वर्तमान विषैं भी दुःखरूप हैं, अर आगामी चतुर्गति संसारके कारण हैं। बहुरि एक (अ) संयमभाव जो अनंतानुबंधी चारित्रमोहके उदय ज (घ) न्य है, सो तौ मिथ्यत्व अरु सासादन दोय गुणस्थान विषैं पाइये, अर अप्रत्याख्यानावरण मोहकर्मके उदयज (घ) न्य है, सो मिश्रगुणस्थान अर असंयत इन दोय गुणस्थानन-विषैं पाइये, तातैं सामान्य असंयमभाव, गुणस्थान तौ आदिके चार विषैं पाइये, अर मार्गणा गति ४ जाति ५ काय ६ योग आहारकाद्विक विना १३ वेद ३ कपाय २५ ज्ञान ६—कुज्ञान ३ सुज्ञान ३, असंयम १, दर्शन ३—चक्षु १ अचक्षु २ अवधि ३ एवं ३, लेश्या ६, भव्य अभव्य २ सम्यक्त्व छह ६, संज्ञी असंज्ञी २, आहारक अनाहारक २, इन विषैं प्रवर्तें है। इति श्रीभावदीपकाका औदायिक भावाधिकार मध्ये असंयम भावाधिकार छट्ठा पूर्ण भया।

अब अज्ञान भावाधिकार लिखिये है....

दोहा—

अनादि अज्ञाम विभावको मूलनाश कर देव
केवल ज्ञान स्वभावकों प्रगट कियो प्रणमेव ॥१॥

जो ज्ञानावरण दर्शनावरण करमके क्षयोपशमतैं जेतो ज्ञानभाव जीव कैं प्रगट है सो तो क्षयोपशमभाव कहिये, अर ज्ञानावरण दर्शनावरणके उदय तैं जेतो ज्ञान अभावरूप है सो अज्ञानभाव कहिये । जातैं जीवको संपूर्ण ज्ञानभाव तो केवलज्ञान है, ताविषैं जेता ज्ञानके उपरि ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके सर्वघाति स्पर्धकनिका उदय है ताको तो अभाव है, जेते ज्ञानके ऊपर ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके देशघाति स्पर्धकनका उदय हैं सो ज्ञान खुलासा है, ताकों क्षयोपशमभाव कहिये । सो अज्ञानभाव क्षीणकषाय द्वादशम गुणस्थानके अंत पर्यंत जानना । तहां संपूर्ण ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके क्षय होतैं संपूर्ण ज्ञानभाव जीवकौ केवलज्ञान प्रगट होय है । तहां सयोगकेवल त्रयोदशम गुणस्थान विषैं अज्ञानभावका अभाव है, तातैं अज्ञानभाव गुणस्थान तौ क्षीणकषाय पर्यन्त बारा १२ विषैं पाइये, अर मार्गणा–गति. ४, जाति ५, काय ६, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवलज्ञान बिना ७, संयम सर्व, दर्शन केवल बिना ३, लेश्या ६, भव्य अभव्य दोय २, सम्यक्त्व छह ६, संज्ञी असंज्ञी ए दोय २, आहारक अनाहारक दोय २ इन विषैं पाइये है । ए अज्ञानभाव वर्तमान काल विषैं भी दुःखरूप हैं अर आगामी चतुर्गति संसारका कारण हैं ।

॥ इति श्री भावदीपकाका औदयिक भावाधिकार मध्ये अज्ञान भावाधिकार समाप्त भया ॥

अब असिद्ध भावाधिकार लिख्यते:—

दोहा

सब कर्मनको नाश करि असिद्धभाव खय कीन ।
सब स्वभावकी सिद्धितैं सिद्ध नमूं गुण लीन ॥१॥

जावत् सर्व कर्मनका क्षय न होय तावत् सम्पूर्ण स्वभाव भावकी असिद्धि है तातैं असिद्धभाव कहिये । जावत्

असिद्ध भाव है, तावत् जीव संसार विषैं तिष्ठै है। बहुरि जिस समय असिद्ध भावका अभाव होय, ताही समय जीव संपूर्ण स्वभाव भावमई होय मुक्त होय है। बहुरि असिद्ध भावके अभावका कारण जिनधर्म है, तातैं यथाशक्ति जिनधर्मकों यथावत् ग्रहण करि असिद्ध भावका अभाव करना योग्य है। जिन जीवनकैं असिद्धत्व भावका अभाव भया है, तिनकैं जिनधर्मके प्रसाद करि ही भया है, अन्य धर्म असिद्ध भावके अभावके कारण नाहीं। तातैं भलीभांति सत्यधर्म जो जिन-धर्म ताहि सेय अर असिद्ध भावका नाश करना सर्व ग्रंथनका ऐसा तात्पर्य है। ए असिद्धभाव वर्तमान विषैं दुःखका कारण हैं, अर आगामी चतुर्थगति संसारका कारण हैं। बहुरि ए असिद्धभाव गुणस्थान तो सर्व गुणस्थान अयोग केवल गुणस्थान पर्यंत पाइये, बहुरि सर्व मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं।

इति श्री भावदीपकाका औदयिक भावाधिकार विषैं असिद्ध भावाधिकार अष्टम पूर्ण भया। ये आठ अधिकार औदयिक भावाधिकार विषैं कहे हैं। इति श्री भावदीपकाका अष्टाधिकार चतुर्थ पूर्ण भया।

अब क्षयोपशम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

अष्टादश भावन सहित वर्तै जीव विभाव।
नाम क्षयोपशम तास हर बंदू चितधरि चाव ॥१॥

— प्रथमही सामान्य क्षयोपशम भावका स्वरूप कहिये है —

जीवके स्वभाव भावके अभावका कारण जो प्रतिपक्षी कर्म ताका जहां सर्वघाती स्पर्द्धकनका उदय है, तहां तौ प्रतिपक्षी गुणका सम्पूर्ण अभाव प्रवर्तै हैं, अर जहां स्वभाव गुणके प्रतिपक्षी कर्मके सर्वघाती स्पर्धकनकै तौ उदयका

अभाव होय जातैं उदयकों प्राप्त भये जे सर्वघाति स्पर्धक ते बिना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिर जांय, अरु सत्ता-में तिष्ठते जे सर्वघाती स्पर्धक ते उपशांतकरणकों प्राप्त होंय, जातैं तिनकी उदीरणा होय उदयमें न आय सकैं, अर देशघाती स्पर्द्धकनका उदय होय, ताकरि किंचित् सत्ताकों धरें किंचित् गुणका प्रगटपना होय, वाका नाम क्षयो-पशम भाव कहिये। ऐसा सामान्य क्षयोपशमभावका स्वरूप जानना। अब क्षयोपशम भावके भेद अष्टादश हैं—तहां कुमतिज्ञान १ कुश्रुतज्ञान १ कुअवधिज्ञान १ सुमतिज्ञान १ सुश्रुतज्ञान १ अवधिज्ञान १ मनः पर्ययज्ञान १ क्षयोपशम लब्धि पांच प्रकार——दान लब्धि १, लाभ लब्धि १, भोग लब्धि १, उपभोग लब्धि १, वीर्य लब्धि १, क्षयोपशम सम्य-क्त्व १, देशसंयम १, क्षयोपशम चारित्र १, दर्शन ३ ऐसे ये अठारह भाव हैं, तिनका भिन्न-भिन्न वर्णन कीजिये है तिन विषैं प्रथम ही क्षयोपशम ज्ञान भावाधिकार प्ररूपिये है——

जीवकौं जानना मात्र ऐसा जो सामान्य ज्ञान भाव पारिणामिक भाव ताका पंच प्रकार कर्मका वश थकी पांच अवस्था होय हैं। तहां मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तौ अपने अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयोपशमतैं होंय हैं, अर केवलज्ञान प्रतिपक्षी कर्मके क्षयतैं होय है, सोही कहिये हैं। तहां मिथ्यात्व निमित्तकरि उत्पन्न भये ऐसे प्रथम ही कुमति १ कुश्रुति २ कुअवधि ३ ऐसे तीन कुज्ञानाधिकार कहिये है——

दोहा

निज ज्ञानभाव मिथ्यात्व तैं उलट भयौ दुःख दाय।
तिस मिथ्यात्व ध्वंसको प्रभु नमूं चरन चित लाय ॥१॥

दर्शन ३ ——चक्षुदर्शन १, अचक्षुदर्शन १, अवधि दर्शन १। प्रथम मतिज्ञानका वर्णन कीजिये है—

जो पांच तौ द्रव्येन्द्रिय अरु अनिंद्रिय कहिये, द्रव्यमन इनके द्वार होय जो आत्माके ज्ञानकी प्रवर्ति ता ज्ञानके भावका नाम मतिज्ञान कहिये । सो मतिज्ञानके भेद ३३६ ऐसे ही कहिये है । ज्ञेय प्रति जीवका मतिज्ञान ऐसे प्रवर्तै है । पहिले तौ अवग्रह होय । अवग्रह कहिये पदार्थकों किंचित विशेष सहित जानै, जैसे दूर आकाशमे तिष्ठता पदार्थको ऐसा देखा जो ये कछु श्वेत वस्तु है १ पीछे संशय उपजा जो यह बगुलाकी पंक्ति है कि ध्वजा है, इस ज्ञानका नाम ईहा है २ । पीछे निश्चय भया कि बगुलाकी पंक्ति ही है या ध्वजा ही है, इस ज्ञानका नाम अवाय होय है ३ । बहुरि निश्चय भया पदार्थकों किताक काल न भूलना इस ज्ञानका नाम धारणा है ४ । इस प्रकार अवग्रह ईहा अवाय धारणा ये ज्ञानका च्यार भेद भया । अब मतिज्ञानके मूल दोय भेद है—अर्थावग्रह १ व्यंजनावग्रह १ तहां इन्द्रिय और मन के द्वारा जो पदार्थ जीवके व्यक्त रूप होय, प्रगटरूप होय, बुद्धिपूर्वक ताकौं जाने जो मेरे स्पर्शभया, मैं आस्वाद्या, मोकूं बास आई, मैं देख्या, मैं सुन्या, मैं मनकरि जान्या, ऐसा ज्ञानका नाम तो अर्थावग्रह है १ अरु जो इंद्रिय और मनकरि पदार्थका अबुद्धिपूर्वक ज्ञान जो पदार्थ सो अव्यक्त भिड़भेंट भया ऐसा सूक्ष्म ज्ञान जो आपके बुद्धि गोचर भया नाहीं, तृणस्पर्शवत् रहा है । जैसें कोमल तृण स्पर्शे तौ भया, पर आपको गम्यमान नाहीं भया, ऐसा सूक्ष्म शब्दादि-का समूह प्रति अव्यक्त ज्ञान ताकौं व्यंजनावग्रह कहिये २ । सो प्रथम ही तौ अर्थावग्रह ज्ञानके भेद दोय सै अठयासी कहिये । अर्थावग्रहकों अवग्रह ईहा अवाय धारणा इन चार करि गुणा च्यार ही भये, इनकों पांच इन्द्रिय अरु मन इन छह करि गुणैं चौवीस भेद भये । बहुरि मतिज्ञानका विषयभूत ज्ञेय बारह १२ बहु १, अबहु २ बहुविधि ३ एकविधि ४ निसृत ५ अनिसृत ६ क्षिप्र ७ अक्षिप्र ८ उक्त ९ अनुक्त १० ध्रुव ११ अध्रुव १२ एवं बारह । इन थकी चौबीसको गुणैं दोय सो अठासी भेद तौ अर्थावग्रहके भए, बहुरि व्यंजनावग्रह ज्ञानके अवग्रह ही होय, ईहादि तीन न होंय, तातैं अवग्रहकौं स्पर्शन रसना १ घ्राण १ श्रोत्र १ इन चार इन्द्रियानिसौं गुणैं तो चार ही भये जातैं नेत्र इन्द्रियके अरु मनके अर्थावग्रह ही है, व्यंजनावग्रह नाहीं, जातैं ये अपने दूर तिष्ठते विषयको प्रगटपने ही

ग्रहण करै है। जातैं इनका विषय बधस्पर्शी है। बधस्पर्शी कहिये विषय और विषयीके भिड़भेंट भया अपने विषयका ज्ञान होय है। तातैं पहिले तो विषयका सूक्ष्म ज्ञान होय पीछै स्थूल होय तब बुद्धिपूर्वक प्रगट होय, तातैं तहां पर्यंत सुक्ष्म रहै व्यक्त न होय, वा सूक्ष्म ज्ञान ही होय अर ज्ञान ज्ञेयका संबंध छूट जाय तहां व्यंजनावग्रह कहिये तातैं चार इन्द्रिय करि बहुरि बहु आदि बारह ज्ञेयकों गुणें अडतालीस भेद व्यंजनावग्रहका भया। ऐसैं मतिज्ञानके भेद तीन सैं छत्तीस भये। बहुरी ये बारह प्रकार ज्ञेय अनेक भेद रूप हैं तातैं जितना मतिज्ञानका विषय भूत ज्ञेय तितने ही मतिज्ञानके भेद जानने।

अब श्रुतज्ञान कहिये है....

'श्रुतं मतिपूर्वकं' पहिले मतिज्ञान होय तब श्रुत ज्ञान होय, ऐसा सिद्धान्तका वचन है। सो श्रुतज्ञान दोय प्रकार है-एक अक्षरात्मक, एक अनक्षरात्मक। तातैं वर्ण सौं वर्णांतरका, शब्द सौं शब्दान्तरका, पद सौं पदांतरका, अर्थ सौं अर्थान्तरको ज्ञान होय ताकौं श्रुतज्ञान कहिये। जैसे ककार वर्ण ने देखा सो तौ मतिज्ञान कहिये। बहुरि ताकरि ककार-वर्णकौ ज्ञान होय, ताकरि ककार वर्ण मांडै सो श्रुतज्ञान कहिये।

बहुरि जीव ऐसा पद देख्या सुन्या सो मतिज्ञान कहिये, ताकरि जीव द्रव्यकों जानै सो श्रुत ज्ञान कहिये। बहुरि अर्थ सौं अर्थान्तरको ज्ञान होय सो अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहिये। जैसे भयके कारण वा दुःखदायक पदार्थ जो सिंहादिक वा शत्रु आदि तिनको देख्या सो मतिज्ञान कहिये। यह मोकूं सुखदायी नाहीं तिन सौं भाज जाना लुक जाना सो श्रुतज्ञान कहिये वा शीत—उष्णका स्पर्शन भया सो मतिज्ञान कहिये ये सुखदायी नाहीं तिनसों दूर रहना भागना सो श्रुतज्ञान कहिये सो इनको अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान जानना। ऐसें श्रुतज्ञान दोय प्रकार जानना।

अब अवधिज्ञान कहिये—जहां द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद—पूर्वक रूपी पुद्गलद्रव्यकों वा पुद्गलद्रव्यका

संबंधको धरैं संसारी जीव द्रव्यकों प्रत्यक्ष जानै सो अवधिज्ञान कहिये ।

जेता जेता द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लिये अवधिज्ञानकी शक्ति उत्पन्न भईहोय, तेता तेता अपने विषय योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लिये जानै, ऐसा अवधिज्ञानका स्वरूप हैं ।

ये मतिज्ञान श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान क्षयोपशमभाव हैं । अपने अपने प्रतिपक्षी कर्मका जेता जेता क्षयोपशम होय, तेता तेता ये ज्ञान प्रगट होय है । जेता मतिज्ञानावरण अर वीर्यान्तरायका क्षयोपशम होय तेता मतिज्ञान प्रगट होय, जेता श्रुताज्ञानावरण अर बीर्यान्तरायका क्षयोपशम होय तेता श्रुतज्ञान होय, जेता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यान्तरायका क्षयोपशम होय, तेता अवधिज्ञान होय । ये तीनौं ही ज्ञान दर्शनमोहका उदय करि उत्पन्न भया जो जीवके तत्वज्ञान रहित अतत्त्वश्रद्धान रूप मिथ्यात्वभाव ता सहित होय प्रवर्तै । तहां इनकों कुमति ज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कु अवधिज्ञान कहिये । अर ये ही ज्ञान जहां मिथ्यात्व भाव रहित सम्यक्त्व भाव अर तत्व ज्ञान सहित होय प्रवर्तै, तहां इनही कों सुज्ञान कहिये । ये तीनौं कुज्ञानभाव वर्तमान भी दुःखके कारण हैं अर आगामी चतुर्गति संसारका कारण हैं ।

बहुरि ये तीनों कुज्ञान भाव गुणस्थान तौ मिथ्यात्व अर सासादन दोय विषैं पाईये है । अर मार्गणा गति ४ जाति ५ काय ६ योग आहारकद्विक बिना १३ वेद ३ कषाय २५ ज्ञान स्वकीय, कुज्ञान ३ असंयम १ चक्षु-अचक्षु दर्शन २ लेश्या ६ भव्य २ सम्यक्त्व–मिथ्यात्व १ सासादन २ संज्ञी २ आहारक २ ।

॥ इति भावदीपकाका क्षयोपशमभावाधिकार विषैं तीन कुज्ञानाधिकार प्रथम पूर्ण भया ॥



अब पंच स्वज्ञानाधिकार लिखिये है....

दोहा

सम्यक् सहित प्रमाण जे च्यार ज्ञान तैं धीर ।
घाति कर्मको ध्वंस करि नमूं केवली वीर ॥ १ ॥

सो ही तीन सैं छत्तीस भेद युक्त मतिज्ञान अपना स्वभाव जो सम्यक्भाव ता सहित होत संते स्वज्ञान होय प्रमाणताकौं प्राप्त होय है, जीवकों सुखदाई होय है, मोक्षका कारण होय है । बहुरि याही मतिज्ञान पूर्वक उत्पन्न भया जो श्रुतज्ञान सो भी प्रमाणताको प्राप्त होय हैं । सो प्रमाण श्रुतज्ञानका भेद २—अंगप्रविष्ट अर अंगबाह्य ।

तहां अंग प्रविष्टके द्वादश भेद हैं—आचारांग १ सूत्रकृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग ५ ज्ञातृधर्मकथांग ६ उपासकाध्ययनांग ७ अन्तःकृतदशांग ८ अनुत्तरउपवाददशांग ९ प्रश्नव्याकरणांग १० विपाकसूत्रांग ११ दृष्टिवादनामध्येयांग १२ इति अंग प्रविष्ट भेद ।

अथ अंगबाह्य प्रकीर्णक भेद १४

सामायिक १ स्तवन २ वन्दना ३ प्रतिक्रमण ४ वैनयिक ५ कृतकर्म ६ दशवैकालिक ७ उत्तराध्ययन ८ कल्पव्यवहार ९ कल्पाकल्प १० महाकल्प ११ पुंडरीक १२ महापुंडरीक १३ निषधिक १४ इति । ये दोनों मिल सम्पूर्ण श्रुतज्ञानके भेद होय हैं । सो सम्पूर्ण श्रुतज्ञानके अपुनरुक्त अक्षर एक घाटि इकट्ठी प्रमाण हैं । इकट्ठी कहा कहिये, सो कहिये है ।

पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस ६५५३६ ते पण्णट्ठी कहिये । बहुरिं पण्णट्ठी प्रमाणकों पण्णट्ठी प्रमाण तैं गुणैं

बादाल होय है। ६५५३६×६५५३६=४२९४९६७२९६ इन दोनों सम प्रमाणकूं गुणैं चारसौ उनतीस कोडि गुणचास लाख सडसठ हजार दोयसौ छिंणवै होय हैं। तहां बादाल प्रमाणको बादाल प्रमाण सौं गुणिये, तब एकट्ठी होय है। तिस एकट्ठी प्रमाणमें सूँ एक अक्षर घटाय दीजै, तब इतने अक्षर प्रमाण होंय १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ इतना अक्षर प्रमाण सर्व श्रुतका जानना।

बहुरि एक पदके अक्षर सोलासौ चौंतीस कोडि तिरयासी लाख सात हजार आठसौ अठासी होय हैं। १६३४८३०७८८८ इनका भाग सर्व श्रुतके अक्षरनकौं दीजिए तब एकसौ बार कोडि तिरयासी लाख अठावन हजार पांच ११२८३५८००५ पद भये। अवशेष अक्षर जे आठ कोडि एक लाख आठ हजार एकसौ पिछहत्तर ८०१०८१७५ इन अक्षरनकौ बत्तीसका भाग दीये पचीस लाख तीन हजार तीनसौ अस्सी २५०३३८० तो श्लोक भये, अर पन्द्रह अक्षर अधिक रहै इतने श्लोकन प्रमाण चौदा प्रकीर्णक जाननी।

बहुरि एक पदके श्लोक इक्यावन कोडि आठ लाख चौरासी हजार छहसौ साठ अर २१ अक्षर होंय। तहां प्रथम ही आचारंग सूत्रके अठारह हजार पद हैं १८००० । ताविषैं मुन्याचारका वर्णन है। कैसें चलिये, कैसें खडा रहिये, कैसें बैठिये, कैसें सोइये, कैसें वचन बोलिये, कैसें खाइये, कैसें मलमूत्र खेपिये, ए सत्त प्रकार मुनिपद विषैं प्रवृत्ति है तिनका वर्णन है। सूत्रकृतांग दूसरा अंग ताकै छत्तीस हजार पद है ३६०००, तिन विषैं संक्षेप अर्थको सूचै ऐसा जो परमताकीं निर्विघ्न अध्ययनकी सिद्धिकै अर्थि ऐसी जे कारणभूत वैनायिक क्रिया विशेष तिनका वर्णन है २।

स्थानांग तीसरे अंगके बयालीस हजार पद हैं ४२०००, ता विषैं जीव पुद्गलके एक एक स्थानक बधता वर्णन है। जैसे जीव संग्रह नय करि एक है और व्यवहार करि संसारी अर सिद्ध ऐसे दोय स्थानक हैं उत्पाद १ व्यय२ ध्रौव्य ३ ऐसे तीन हैं, अर गति अपेक्षा चार हैं ४, उपशमादि पंच भावयुक्त हैं ऐसे पांच हैं, छह दिशा विषै श्रेणीवद्ध

गमन करन हारे हैं ऐसे छह हैं, अर सप्त भंग बाणी करि उपयुक्त ऐसे सात हैं, आठ कर्म करि युक्त हैं, ताते आठ है, नौ पदार्थ रूप है विषय जाका, ऐसे नवस्थानक हैं। बहुरि ऐसैं ही पुद्गल सामान्यपने करि एक १ अर विशेषपने अणु-स्कंध दोय २, इत्यादि एक एक स्थानक बधता अनेक भेदका वर्णन है ३।

बहुरि समवायांग चौथे अंग विषैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी समानताका वर्णन है। ताकै पद एक लाख चौंसठ हजार हैं १६४०००, तहां द्रव्य विषैं धर्म द्रव्य अधर्म द्रव्य समान हैं। संसारी संसारी समान हैं। मुक्तजीव मुक्तजीव समान हैं इत्यादि। क्षेत्रापेक्षया प्रथम नर्कके प्रथम पाथडेको सीमन्तकनामा इन्द्रकाबिला, अढाई दीप, प्रथम स्वर्गके प्रथम पाथड़ेका ऋतु नामा इंद्रकाविमान, सिद्धशिला, सिद्धक्षेत्र ये पंच क्षेत्र पैंतालीस-लाख योजन प्रमाण समान हैं। बहुरि सातवें नर्कका इंद्रकाविला, जम्बूदीप, सर्वार्थसिद्धि ए तीन स्थानक लाख योजनके समान प्रमाण वाले हैं। बहुरि कालापेक्षया—समय समय समान हैं। आवली आवली समान है। प्रथम नर्क, भवन-वासी, व्यंतरदेव इनविषैं दश दश हजार वर्षकी जघन्यआयु समान है। सप्तम नर्क विषैं वा सर्वार्थसिद्धि विषैं तैंती-स सागर उत्कृष्ट आयु समान है इत्यादि। बहुरि भावापेक्षा करि केवल ज्ञान केवल ज्ञान समान हैं इत्यादि समानता के अनेक भेदका बर्णन है ४।

बहुरि व्याख्याप्रज्ञप्ति पंचम अंग ताके पद दोय लाख अट्ठाईस हजार हैं, ता विषैं गणधर महाराज भगवान प्रति साठ हजार ६०००० प्रश्न किये, जीवादि द्रव्य अस्तिरूप हैं कि नास्तिरूप हैं? नित्य हैं कि अनित्य हैं? एक हैं कि अनेक हैं? व्यक्त हैं कि अव्यक्त हैं? इत्यादि प्रश्न कीये तिनका भगवान उत्तर दीया, तिनका वर्णन है ५।

बहुरि ज्ञातृधर्म कथा नामा षष्ठम अंग है, ताकैं पांच लाख छप्पन हजार पद हैं ५५६०००, ता विषैं नाथ जो परम यथार्थ भट्टारक श्री तीर्थंकर देव तिनका धर्म तथा जीवादि पदार्थनका स्वभाव तिनका वर्णन है, वा रत्नत्रय तथा दश लक्षणीक आदि धर्म तिनका वर्णन है, वा तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदिक सलाका पुरुषनिकी धर्म संबंधी कथा तिनका

वर्णन है इत्यादि कथन है ६।

बहुरि उपासकाध्ययन सातमां अंग ताके पद ग्यारह लाख सत्तरहजार हैं ११७०००० तहां उपासक जे श्रावक, चतुर्विधसंघकी दान पूजादिक करि सेवैं तिनका कथनका वर्णन है। ताविषैं दर्शन प्रतिमा कूं आदि देइ एकादशप्रतिमा रूप श्रावकका चार वर्णन है ७।

बहुरि अंतःकृतदशांग अष्टम अंग ताके पद तेईस लाख अट्ठाईस हजार हैं २३२८०००, ता विषैं एक एक तीर्थंकरके वा दश दश अंतःकृतकेवली भये, तिनका ज्ञानकल्याणक अर निर्वाण कल्याणक साथ ही भया तिनका वर्णन है ८।

बहुरि अनुत्तर उपपादकदशांग नवमां अंग ताके पद बाणवै लाख चवालीस हजार हैं ९२४४०००, ता विषैं एक एक केवलीके वारै दश दश मुनि घोर उपसर्ग जीति अनुत्तर विमानन विषैं उपजे तिनका वर्णन है ९।

बहुरि प्रश्नव्याकरण दशम अंग ताके पद तिराणवे लाख सोलह हजार हैं ९३१६०००, तिस विषैं लौकिक संसारी जीव आय प्रश्न पूछैं, आगामी शुभाशुभको, वा गई वस्तुको, वा झूंठीकी आदि अपरिछिन्न (प्रच्छन्न) वस्तुकों ताका उत्तर देनेके विधानका वर्णन है। वा आक्षेपणी १ धर्मकी स्थापक,, निक्षेपणी २ धर्मकी उत्त्थापक, संवेगिनी ३ धर्म तथा धर्मात्मासूं प्रीति रुचिकी बढ़ावनहारी, निर्वेदनी ४ संसार शरीर भोगनसूं वैराग्य करावनहारी, ऐसी जे चार सुकथा तिनका वर्णन है।

बहुरि विपाकसूत्र ग्यारवां अंग ताके एक कोड़ि चौरासी लाख पद हैं १८४०००००, ताविषैं कर्मोंका विपाक तीव्र मंद जघन्य मध्यम उत्कृष्ट ताका वर्णन है। ऐसैं चार कोड़ि पंद्रह लाख दोय हजार ४१५०२०००, पद तो ग्यारह अंगनके हैं। अर अवशेष एक सौ आठ कोड़ि अड़सठ लाख छप्पन हजार पांच १०८६८५६००५ पद, दृष्टिवाद नामधेय बारहवां अंगका है—मिथ्या दर्शनका निराकरण जा विषैं। तिन विषैं दृष्टिवाद नामा बारहवां अंगका पांच भेद हैं।

परिकर्म १, श्रुत (सूत्र) २, प्रथमानुयोग ३, पूर्वगत ४, चूलिका ५। तहां परिकर्मके पद एक कोड़ि एक्यासी लाख पांच हजार पद हैं १८१०५०००, प्रथम तो ताविषैं गुणकार भागहार रूप गणित ज्ञान होय, तिस कारण ऐसे करण सूत्र तिनका वर्णन हैं।

बहुरि ताके भेद पांच ५—चन्द्रप्रज्ञप्ति १, सूर्यप्रज्ञप्ति २, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति ३, द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति ४, व्यख्या प्रज्ञप्ति ५ एवं पांच भेद हैं। तहां प्रथम चंद्र प्रज्ञप्तिके छत्तीस लाख पांच हजार पद हैं ३६०५०००, ताविषैं चन्द्रमाके विभव आदिका वर्णन है।

बहुरि दूसरे सूर्य प्रज्ञप्तिके पांच लाख तीन हजार ५०३००० पद हैं, ताविषैं सूर्यके विभवादिका वर्णन है।

बहुरि तीसरा जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति है, ताकै पद तीन लाख पच्चीस हजार हैं, ३२५००० ताविषैं जम्बूद्वीपका वर्णन है।

बहुरि चौथा द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति हैं, ताके बावन लाख छत्तीस हजार पद हैं ५२३६०००, ताविषैं असंख्यात द्वीप समुद्रका वर्णन है।

बहुरि पांचवां व्याख्या प्रज्ञप्त्यंग है, ताकै चौरासी लाख छत्तीस हजार पद हैं ८४३६०००, पद हैं ताविषैं जीव अजीवादि रूपी अरूपी पदार्थनका वर्णन है, वा भव्य अभव्य जीवनके प्रमाणका वर्णन है। इति परिकर्म भेद।

बहुरि दूसरा भेद श्रुत ताके पद अठासी लाख ८८००००० हैं, ताविषैं मिथ्यादृष्टि कुवादीनके तीनसौ त्रेसठ ३६३ भेदनका वर्णन है। कुवादी कहिये सर्वथा एकान्तवादी, जीव अस्ति ही है, जीव नास्ति ही है, नित्य ही है, अनित्य ही है, एक ही है, अनेक ही है, व्यक्त ही हैं, अव्यक्त ही है, ज्ञात ही है, अज्ञात ही है, परप्रकाशक ही है, स्व प्रकाशक ही है, अबन्ध ही है, बंधा ही है, कर्ता ही है, अकर्ता ही है, भोक्ताही है, अभोक्ता ही है, गुण सहित ही हैं निर्गुण ही हैं। इत्यादि एकान्तवादका वा तिनके निराकरणका कथन है।

बहुरि तीसरा भेद प्रथमानुयोग ताके पांच हजार पद हैं ५००० ताविषैं त्रैसठ शलाका पुरुषनके चरित्रका वर्णन है।

बहुरि चौथा भेद पूर्वगत हैं, ताकै साढ़े पिच्यानवैं कोड़ि पांच पद हैं ९५५०००००५, ताकै भेद चौदह १४– उत्पादपूर्व १ आग्रायणी २ वीर्यानुवाद ३ अस्तिनास्तिप्रवाद ४ ज्ञानप्रवाद ५ सत्यप्रवाद ६ आत्मप्रवाद ७ कर्मप्रवाद ८ प्रत्याख्यान ९ विद्यानुवाद १० कल्याणवाद ११ प्राणवाद १२ क्रियाविशालवाद १३ लोकविंदुसार १४ ऐसें चौदह पूर्व जानने इन चौदह पूर्वन विषैं एक सौ पिच्याणवें वस्तु हैं १९५, तहां प्रथमपूर्व विषैं दश वस्तु हैं १०, दूसरे विषैं १४, तीसरे विषैं ८, चौथा विषैं १८, पाचवें विषैं १२, छठें विषैं १२, सातवें विषैं १६, आठवें विषैं २० नवमें विषैं ३० दशमें विषैं १५ ग्यारवें विषैं १० बारहवें विषैं १० तेरहवें विषैं १०, चौदहवें विषैं १०, ऐसे चौदह पूर्व विषैं एक सौ पिच्याणवें वस्तु हैं १९५, बहुरि एक एक वस्तु विषैं वीस वीस प्राभृत हैं। तहां एक सौ पिच्याणवें नैं बीस करि गुणैं तीन हजार नव सौ प्राभृत भये १९५×२०=३९००। बहुरि एक २ प्राभृत विषैं चौबीस चौबीस प्राभृतप्राभृत हैं, तहां तीन हजार नवसौं कूं चौबीस करि गुणैं तिरानवें हजार छह सौ प्राभृतप्राभृत चौदह पूर्वविनि विषैं जानने ३९००×२४=९३६००।

अब प्रथम उत्पाद पूर्वके १००.०'०० एक कोड़ि पद हैं। ताविषैं उत्पाद-व्यय, ध्रौव्य, आदि अनेक धर्मनका कथन है, तहां जीवादि वस्तुनका नाना प्रकार नयविवक्षा करि क्रमवर्ती युगपत अनेक धर्म तिनकरि भये जे उत्पाद–व्यय ध्रौव्य ३ तीनों काल अपेक्षा नव धर्म भये। इन धर्मरूप परिणया वस्तु सो भी नव प्रकार होय है, उपजा १, उपजै है २, उपजेगा ३, नष्ट भया १, नष्ट होय है २, नष्ट होयगा ३, स्थिर भया १, स्थिर होय है २, स्थिर होगा ३, ऐसे नव प्रकार द्रव्य भया, इन एक एक द्रव्यके उत्पन्नादि नव नव धर्म, ऐसें नवकौं नव करि गुणैं इक्यासी भेद लिये द्रव्य ताका वर्णन है १।

बहुरि दूसरा पूर्व आग्रायणी ताकै छिनवै लाख पद हैं ९६०००००, ता विषैं, द्वादशांग विषैं प्रधानभूत जो वस्तु तिनका ज्ञान होय है, जातै अैसै सात सौ सुनय अर दुरनय बहुरि सप्त तत्व, नव पदार्थ, षट् द्रव्य इत्यादिकनका वर्णन है २।

बहुरि तीसरा पूर्व वीर्यानुवाद ताकै पद सत्तर लाख ७०००००० ता विषैं जीवादि वस्तुनकी सत्य सामर्थ्य ताका वर्णन है। जहां आत्माका वीर्य, परका वीर्य, क्षेत्र वीर्य, काल वीर्य, भव वीर्य, तप वीर्य, इत्यादि द्रव्य गुण पर्यायनका शक्तिरूप वीर्यका वर्णन है ३।

बहुरि चौथा पूर्व अस्ति–नास्तिप्रवाद–ताके पद साठ लाख हैं ६००००००, ता विषैं अनंतगुणात्मक जो जीवादिक वस्तु तिनका अस्ति नास्ति, नित्य अनित्य आदि अनेक स्वभाव तिनकरि सप्तभंग थकी वस्तुकों साधकरि सिद्धकरी है, तहां सप्त भंगके नाम ७ अस्तिनास्ति भाव की अपेक्षा। अस्ति १ नास्ति २ अस्तिनास्ति ३ अवक्तव्य ४ अस्ति अवक्तव्य ५ नास्ति अवक्तव्य ६ अस्तिनास्तिअवक्तव्य ७ ऐसें वस्तु सप्तभंग स्वरूप है। यहां हरेक भंगके आदिमें "स्यात्" पद लगाना अर जो वस्तुकों सर्वथा अस्ति ही है, वा नास्ति ही है, वा अस्तिनास्तिही है वा अवक्तव्यही है वा अस्ति अवक्तव्य ही है, वा नास्ति अवक्तव्य ही है, वा अस्तिनास्ति अवक्तव्य ही है अैसा मानैं है सो ही मिथ्यात्वभाव हैं। अर स्यादस्ति १ स्यान्नास्ति २ स्यादस्तिनास्ति ३ स्यादवक्तव्य ४ स्यादस्तिअवक्तव्य ५ स्यान्नास्तिअवक्तव्य ६ स्यादास्तिनास्ति अवक्तव्य ७ अैसैं कथंचित् प्रकार अस्ति है १ कथंचित् प्रकार नास्ति है २ कथंचित् प्रकार अस्ति नास्ति है ३। कथंचित् प्रकार अवक्तव्य है ४। अैसै ही नित्य अनित्य भावन करि साधिये। तहां स्याद्वाद सम्यक्वाद है, अैसा कथन या पूर्व विषैं हैं।

बहुरि पांचवां पूर्व ज्ञानप्रवाद—ताके पद एक घाटि एक कोड़ि ९९९९९९९. ता विषैं आठ ज्ञानका स्वरूप–भेद–स्वामी–विषय–फल–प्रमाण–अप्रमाण इत्यादि ज्ञानका वर्णन हैं।

बहुरि छठा पूर्व सत्यप्रवाद–ताके पद एक कोड़ि अर छह प्रमाण है १००००००६। ताकै विशेष चिन्ह बचनकी

मुख्यता लिये वर्णन है ताके अर्थ बचनगुप्ति बचन संस्कारके कारण वचनकें प्रयोग बारा प्रकार भाषा, दश प्रकार सत्य--वचन, बहुत प्रकार मिथ्यावचन, बारा प्रकार भाषा वचन, बोलने वाले जीवन के भेद इत्यादि कथन है। सत्य बोलना वा मौन धरना सो बचनगुप्ति कहिये। बहुरि बचन संस्कारके कारण दोय २-स्थान १, प्रयत्न २। तहां स्थान आठ प्रकार हृदय १ मस्तक २ जिह्वामूल ३ दन्त ४ नासिका ५ कंठ ६ तालु ७ ओठ ८। बहुरि प्रयत्न चार प्रकार हैं—अंग का अंग तैं स्पर्श भयें बोलिये सो स्पृष्टता १ किंचित् स्पर्श भयें बोलिये सो ईषत् स्पर्शता २ अंगकों उघाड़ि बोलिये सो विवृतता ३ अंगकूं अंगतें ढकि बोलिये सो ईषत् विवृतता ४। बहुरि वचन प्रयोग दोय प्रकार स्पष्टरूप भलावचन १ दुष्ट-रूप बुरा वचन २। बारा प्रकार भाषा "इन ऐसा किया है" ऐसा अनिष्ट वचन सो अभ्याख्यान कहिये १ जाकरि विरुद्ध होय सो कलुष वचन है २ परका दोष प्रगट करनहारा सो पैशून्य वचन ३ धर्म--अर्थ--काम--मोक्ष इन चार प्रकार पुरुषार्थ रहित बचन सो परताप वचन ४, इंद्रियनके विषयन विषैं रति उपजावै सो रति वचन ५, इंद्रियनके विषयन विषैं अरति उपजावै सो अरति वचन ६, व्यवहार विषैं ठगनरूप वचन सो निष्ठुर वचन ७, तप ज्ञानादि विषैं अविनयका कारण वचन सो अप्रणति वचन ८, चौरीका कारण सो मोष वचन ९, भला मार्गका उपदेशरूप वचन सो सम्यग्दर्शन वचन १०, मिथ्या मार्गके उपदेशरूप वचन सो मिथ्यादर्शन वचन ११।

नोट—बारहवां वचन किसी प्रति में मिला ही नहीं है।

बहुरि दस प्रकार सत्य वचन—

[illegible] विषे [illegible] और और नाम हैं सो ही कहना सो जनपद सत्य कहिये १।
[illegible] तैसें ही [illegible] सर्व [illegible] विषैं समान रूढ़ि नाम सो संवृति सत्य कहिये या [illegible] १।
वा उत्तर [illegible]

बहुरि नवमा प्रत्याख्या[illegible]

बहुरि अन्य विषैं अन्यकूं स्थापन करि तिस मुख्य वस्तुका नाम कहना सो स्थापना सत्य कहिये ३।

रत्नादिकर निर्मापित चंद्र प्रभ तीर्थंकरकी प्रतिमाकूं चद्रप्रभ कहिये। अर जहां अन्य अपेक्षा रहित केवल व्यवहार निमित्त जिसका जो नाम होय सो कहना सो नाम सत्य कहिये ४।

अर जो पुद्गल विषैं अनेक गुण होते संतै जहां रूपकी मुख्यता लिये वचन कहिये सो रूप सत्य कहिये, जैसैं किसी पुरुषको शुक्ल कहिये यद्यपि वाके केशादिक श्याम हैं वा, रसादिक गुण पाइये है तिनकी मुख्यता न करी ५।

बहुरि विवक्षित वस्तुकूं अन्य वस्तुकी अपेक्षा करि हीन अधिक लघु, दीर्घ, सूक्ष्म, स्थूल आदि कहिये सो प्रतीति सत्य है। या ही का नाम आपेक्षिक सत्य कहिये, जातैं जाकूं लघु दीर्घादिक कहियें तासौं अन्य द्रव्य लघु दीर्घादिक पाइये है, परन्तु ताकी विवक्षा न लगाई ६।

बहुरि जो नैगमादि नयकी प्रधानता लिये वचन कहिये सो व्यवहार सत्य कहिये। जैसें नैगमनयकी प्रधानता करि ऐसा कहिये " भात पचैं है " सो भात तौ पचे पीछे होगी अभी तौ चांवल ही हैं, थोरे ही कालमें भात होना है, तातैं नैगमनयकी विवक्षा करि भात पर्याय करने योग्य द्रव्य अपेक्षा कहिये नयनके व्यव-हारकी अपेक्षा जैसैं सत्वरूप कहिये, असत्वरूप कहिये इत्यादि वचन सो व्यवहार सत्य कहिये ७।

बहुरि जो वस्तु विषैं शक्ति तो पाइये है अर क्रिया नाहीं करै है तो पण भी शक्तिकी अपेक्षा तिस क्रियाको कर्ता कहिये ऐसें संभावना सत्य कहिये। जैसें इंद्र, जम्बूद्वीपके पलटावनेको समर्थ है ऐसा कहना असंभव है, ताकी शक्तिकी अपेक्षा परिहारकरि वस्तु स्वभावका विधानरूप जो संभावना सो संभावना सत्य कहिये ८।

बहुरि अतीन्द्रिय पदार्थन विषैं सिद्धांतके अनुसार विधिनिषेधका संकल्परूप जो परिणाम सो भावसत्य कहिये। जैसें सूका, पचा, पीसा, यंत्रकरि पैल्या, वा खटाई लूनकरि मिश्रित भया, वा भस्मीभूत भया होय जो

वस्तु सो प्रासुक कहिये । यद्यपि तिन विषैं इंद्रिय अगोचर सूक्ष्म जीव पाइये है, तथापि आगमप्रमाण तैं प्रासुक अप्रासुकका संकल्प रूप भावके आश्रित ऐसा वचन सो सत्य कहिये ९।

बहुरि जो किसी प्रसिद्ध पदार्थकी किसीविषैं समानता कहिये सो उपमासत्य कहिये १०।

बहुरि बेंद्रिय आदि वक्ता वचन बोलने वालेनके भेद इत्यादि कथन है।

बहुरि सातवां आत्मप्रवाद पूर्व, ताके पद छब्बीसकोड़ि प्रमाण हैं २६०००००००, ताविषैं आत्माका प्ररूपण हैं, आत्मा जीव है सो जीव व्यवहार करि दश प्राण थकी निश्चयनय करि चेतना प्राण थकी जीव आया, वर्तमान विषैं जीवै है, आगै जीवैगा, तातैं जीव कहिये । व्यवहार नय करि शुभाशुभ कर्मकों करै है अर निश्चयनय करि चैतन्य पर्यायकों करै है, तातै कर्त्ता कहिये । बहुरि व्यवहार करि सत्य—असत्य बचन बोले है तातैं वक्ता कहिये । अर निश्चयनय करि आत्मा वक्ता नाहीं, बहुरि निश्चय व्यवहार करि प्राण याकै पाइये है तातैं प्राणी कहिये। बहुरि व्यवहार-करि शुभाशुभकर्मफलको भोगै है अर निश्चय नय करि निजस्वरूपकों भोगवै है तातैं भोक्ता कहिये । बहुरि व्यवहार करि कर्म नोकर्म पुद्गलकों पूरै हैं गालै है तातैं पुद्गल कहिये । निश्चय नय करि आत्मा पुद्गल है नाहीं। बहुरि निश्चय व्यवहार दोऊ नयन करि लोकालोक संबंधी त्रिकालवर्ती सर्व कों जानै है तातैं वेदक कहिये । बहुरि व्यवहार करि अपने देहको केवलसमुद्धातकरि सर्वलोककों अर निश्चयनय करि ज्ञानमें सर्व अलोककों व्यापै है तातैं विष्णु कहिये । बहुरि व्यवहार करि कर्मके वशते यद्यपि संसार विषैं परिणमे है तथापि निश्चय नय करि आत्मा स्वयं आप ही आप विषैं ज्ञान दर्शनरूप करि परिणमै है, तातैं स्वयंभू कहिये, इत्यादि आत्माका वर्णन है ७।

बहुरि आठवां कर्मप्रवाद पूर्व ताके पद एक कोड़ि अस्सीलाख हैं १८००००००, ता विषैं कर्मनकी मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति वा बंध, उदय, सत्वादिकका वर्णन है।

बहुरि नवमा प्रत्याख्यान पूर्व ताके पद चौरासी लाख हैं ८४०००००, ताविषैं प्रत्याख्यानका वर्णन है। प्रत्या-

ख्यान कहिये निषेधिये है पाप करि तातैं प्रत्याख्यान कहिये, तातैं नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। अपेक्षा
जीवनका संहनन, वीर्य, बल इत्यादिकनके अनुसार काल भयादि लिये वा जावज्जीव प्रत्याख्यानका उपदेश है ९।

बहुरि विद्यानुवाद दशमां पूर्व ताके पद एक कोड़ि दस लाख हैं ११००००००, ता विषैं पांचसौ रोहण्यादि
महाविद्या अर सातसौ क्षुद्र विद्या तिनका स्वरूप, सामर्थ्य, साधनभूत मंत्र, वा पूजाविधान सिद्धि भये उन विधानका
फल इत्यादि वर्णन है। बहुरि अष्ट प्रकार महानिमित्तज्ञानका कथन है १ ।

बहुरि ग्यारहवां कल्याणवाद पूर्व है, ताके पद छब्बीस कोड़ि हैं २६०००००००, ताविषैं त्रेसठ शलाका
पुरुषनके गर्भकल्याणकादि महा उत्सवका वर्णन है। बहुरि तिनके कारणभूत षोड़स भावना वा तपश्चरणादि क्रिया
तिनका वर्णन है, वा ग्रहादिकका गमन, ग्रहण, शकुनफल इत्यादि कथन हैं ११।

बहुरि बारहवां प्राणवाद पूर्व है—ताके पद तेरह कोड़ि है १३००००००००, ता विषैं चिकित्सा आदि आठ महा
प्रकार वैद्यक का वा भूतादि व्याधि दूर करनेके कारण मंत्रादिक वा विष दूर करनहारे मंत्र औषधादिक वा इला १
पिंगला २ सुषुम्ना ३ तीन पवन साधनेका विधान वा स्वरोदय रूप बहुत प्रकार श्वासोश्वासका भेद इत्यादि
वर्णन है १२।

बहुरि तेरहवां क्रियाविशाल नामा पूर्व ताके पद नव कोड़ि हैं ९००००००००, ता विषैं संगीत शास्त्र, छंद, अलं-
कारादि शास्त्र, बहत्तर कला, चौंसठ स्त्रीनका गुण, अनेक प्रकार शिल्पादि चातुर्यता, गर्भाधानादि चौरासी ८४ क्रिया,
सम्यग्दर्शनादि एक सौ आठ क्रिया १०८, देववंदनादि पच्चीस २५, वा नित्यनैमित्तक क्रिया इत्यादिका प्ररूपण है १३ ।

बहुरि चौदहवां लोकबिंदुसार पूर्व है ताके पद साढ़े बारह कोड़ि है १२५००००००, ता विषैं तीन लोक
का स्वरूप है, तथा छब्बीस परिकर्म २६, आठ व्यवहार ८, च्यार बीज ४ इत्यादि गिणती अर मोक्षका स्वरूप, मोक्षकी
कारणभुत क्रिया, मोक्षका सुख इत्यादि वर्णन है १४।

अब पंचम भेद चूलिका कहिये है....

ताके पद दश कोड़ि उनंचास लाख छियालीस हजार हैं १०४९४६००० ताके भेद पांच हैं--जलगता १ स्थलगता २ मायागता ३ रूपगता ४ आकाशगता ५। इनके एक एक भेदके दोय कोड़ि नव लाख नवासी हजार दोय सौ पद हैं २०९८९२००, तहां जलगता विषैं जलके स्तंभनका वा जलविषै प्रवेश करनेका, जल विषैं गमन करनेका, वा जल वर्षानेका, वा अग्नि विषैं प्रवेश करनेका, वा अग्निभग करने का, वा अग्नि प्रजालने का, वा अग्नि बुझावनेका, अग्नि बंध करनेका इत्यादिकनके कारणभूत मंत्र-तंत्र, औपधि क्रिया, तपश्चरणादिकका विधान वर्णन है १।

बहुरि स्थलगता विषैं मेरु आदिक पर्वतन विषै प्रवेश करनेका, वा शीघ्रगमन करनेका, वा पृथ्वी विषैं पैठ जाना इत्यादिकनके कारणभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, तपश्चरणादिकका वर्णन है २।

बहुरि मायागता विषै अनेक विक्रिया करनेका, वा इंद्रजालादि विद्याके साधनभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, क्रियादिका वर्णन है ३।

बहुरि रूपगता विषैं अनेक हस्ती, घोटक, सिंह, मृगादिक रूप पलटनेका, वा धातु रसादिक मारनेका, इत्यादिकनके साधनभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औपधि, तपश्चरणादिकका वर्णन है ४।

अरु आकाशगता चूलिका विषैं आकाश विषै गमन करनेका उपाय, मंत्र, तंत्र यंत्र, क्रिया, तपश्चरणादिका विधान वर्णन है। इति द्वादशांग निरूपणम्।

अब अंग बाह्य चौदह प्रकीर्णकनका स्वरूप कहिये है--

प्रथम सामायिक प्रकीर्णक विषै षट् प्रकार सामायिकका निरूपण नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ काल ५

भाव ६ इन छह प्रकार पदार्थन विषैं समभाव कह्या, इनकों राग–द्वेष रहित देखना, जानना, ताका नाम सामायिक है, ताका वर्णन है। बहुरि ताके साधनभूत द्रव्य क्षेत्र काल भाव संबंधी क्रिया आलंबन इत्यादि वर्णन है १।

स्तवनप्रकीर्णक विषैं चोवीस तीर्थंकरके स्तवन करनेका विधान वर्णन है २।

बहुरि वंदना प्रकीर्णक विषैं एक तीर्थंकरकी वा प्रतिमाजीकी वा चैत्यालयकी स्तुति करनेका विधान वर्णन है ३।

बहुरि प्रतिक्रमण प्रकीर्णक विषैं सप्त प्रकार प्रतिक्रमण करनेका विधान वर्णन है—दैवसिक १ रात्रिक २ पाक्षिक ३ चातुर्मासिक ४ सांवत्सरिक ५ ईर्यापथिक ६ उत्तमार्थक कहिये सर्व पर्याय संबंधी पापको मरन समय करै ७ इत्यादिका वर्णन है ४।

अरु वैनयिक प्रकीर्णक विषैं पंच प्रकार विनयका विधान है–दर्शनविनय १ ज्ञानविनय २ चारित्र विनय ३ तपविनय ४ उपचार विनय कहिये दर्शन ज्ञान चारित्र तपके धारक पंच परमेष्ठी तिनका विनय ५ इत्यादि वर्णन है ५।

कृतकर्म प्रकीर्णक विषैं श्रावककी क्रियाकौ विधान पंचपरमेष्ठीकी प्रदक्षिणा नमस्कार आवर्तन इत्यादि का वर्णन है ६।

बहुरि दशवैकालिक प्रकीर्णक विषैं मुनिका आचार आहारकी शुद्धताका लक्षण इत्यादि वर्णन है ७।

बहुरि उत्तराध्ययन प्रकीर्णक विषैं चार प्रकार उपसर्गका–देवकृत १ मनुष्यकृत २ तिर्यंचकृत ३ अकस्मात पुद्गल कृत ४ इनका बाईस परिषह कृत विधान वर्णन है ८।

बहुरि कल्प व्यवहार प्रकीर्णक विषैं योग्य आचरणका विधान वा अयोग्य आचरण होतैं प्रायश्चित प्ररूपिये है इत्यादि वर्णन है ९।

बहुरि कल्पाकल्प प्रकीर्णक विषैं द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अपेक्षा योग्य अयोग्य आचरणका विधान

वर्णन है १

अर महाकल्प प्रकीर्णक विषैं महानपुरुषनके योग्य आचरणका कथन है ११। बहुरि पुंडरीक प्रकीर्णक विषैं दान पूजा तपश्चरणादि अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादि रूप देव पर्यायका कारणभूत पुण्य ताका वर्णन है १२।

बहुरि महापुंडरीक प्रकीर्णक विषैं अहमिंद्रादि बड़े पद पावनेका कारण भूत पुण्य ताका वर्णन है १३।

बहुरि निषिध प्रकीर्णक विषैं प्रमाद करि किया दोष ताकै निराकरणकैं अर्थि प्रायश्चित्त विधानका वर्णन है १४। इति अंग बाह्य प्रकीर्णक कथनम्।

इति सर्वतश्रु कथन समाप्तः।

ये प्रमाणभूत एक सुश्रुत ज्ञान कह्या, जहां जैसा श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशम होय तैसा तैसा जीवकैं शास्त्रका ज्ञान होय है, तहां तैसा तैसा ही क्षयोपशमभाव कहिये। अब अवधिज्ञान क्षयोपशमिकभावका भेद कहिये है—अवधिज्ञानके भेद ३— देशावधि १ परमावधि २ सर्वावधि ३। तहां देशावधिके दोय भेद—एक भवप्रत्यय १ दूजा गुणप्रत्यय २

तहां भवही है कारण जाकूं सो भवप्रत्यय कहिये, सो देव कैं वा नारकीनकैं वा गृहस्थ अवस्था विषैं तीर्थंकरके होय। तातैं जो जीव देव नारकीकी पर्याय पावे ताकैं अवधि होय हैं, वा तीर्थंकर पदके धारककैं होय या भवप्रत्यय अवधिका विषय सर्व आत्म प्रदेशतैं है। सर्व ही आत्म प्रदेशन थकी अपने विषय योग्य पदार्थनकों जाने।

बहुरि सम्यक्त्व संयमादिकके प्रभावतैं होय सौ गुणप्रत्यय कहिये। सो गुणप्रत्यय अवधि मनुष्य वा पंचेन्द्रिय तिर्यंचकैं होय। याका विषय नाभि ऊपर शंखादिकके आकार धऱ्या कितनाक आत्मप्रदेशनितैं अपने योग्य

विषयकौं जानैं सर्व प्रदेशन सौं न जानै। ताका भेद ६ वर्द्धमान १ हीयमान २ अवस्थित ३ अनवस्थित ४ अनुगामिनी
५ अननुगामिनी ६। जो अवधिज्ञानका उत्पत्ति काल सो वंधता जाय सर्वावधि पर्यंत सो वर्धमान कहिये १ जो उत्पत्ति-
काल सौं घटता जाय अपने नाम पर्यंत सोही प्रमाण हीयमान कहिये २ अरु जो जैसे उपजा था तैसै ही रहै सो अव-
स्थित कहिये ३ बहुरि जो कदै घट जाय अरु कदै बढ़ जाय सो अनवस्थित कहिये ४। बहुरि अनुगामिनीके दो
भेद—जो सर्व क्षेत्र विषैं लार रहै सो क्षेत्रानुगामिनी कहिये। अर जो, परभव विषैं भी लार ही जाय सो भवानुगामिनी
कहिये ५। अननुगामिनीके दोय भेद—जो जिस क्षेत्र विषैं उपजा होय तिसही क्षेत्र विषैं रहै अन्य क्षेत्रमें अभाव होय
सो क्षेत्राननुगामिनी कहिये। बहुरि जो जिस भव विषैं उपजी होय तिसही पर्याय विषैं रहे अन्य पर्याय विषैं लार न जाय
सो भवाननुगामिनी कहिये ६।

बहुरि देशावधिके असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं। जहां जघन्य देशावधिवाले जीव द्रव्यापेक्षया तौ द्व्यर्धगुण-
हानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण औदारिक शरीरकी सत्ताको द्रव्य विश्रसोपचय प्रमाण सहित ताको लोकमात्र असं-
ख्यातका भाग दीजै जो प्रमाण आवे तितना स्कंधकी जानैं, इनतैं एक परमाणू घाटकी भी न जानै, अरु इनसौं वाध
स्कंध होय, ताकी तौ जानै ही जानै, अर क्षेत्रापेक्षया घनावलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण जो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि
अपर्याप्त जीवकै शरीरकी अवगाहना क्षेत्र तितने क्षेत्रकी जानै, अधिक क्षेत्रकी न जानै २।

बहुरि कालपेक्षया आवालिके असंख्यातवें भागकी जानै ३। अर भावापेक्षा भी आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण
भावांकी जानैं ४। ऐसा तो देशावधिका जघन्य १ बहुरि सिद्ध राशिके अनंतवें भाग अर अभव्य राशिसौं अनंतगुणा
ऐसा जो कोई अनंतप्रमाण ताकौं भाग देशावधिका जो जघन्य भेदका द्रव्य ताकौं दीजै जो प्रमाण आवै तितना द्रव्या-
पेक्षया दूजा भेदवाला जानैं। ऐसैं तिसही भागका दूसरे भेदके द्रव्यको दीये जो प्रमाण आवै तितने स्कंधको तीसरे भेद-
वाला जानैं, ऐसें ही पूर्व स्थानकनैं इस ही ध्रुव भागहारका भाग दीये जो जो प्रमाण आवै तितने तितने स्कंधको उत्तर उत्तर

भेद वाला जानै, सो असंख्यात स्थानक द्रव्यापेक्षया होय। तहां पर्यंत उतने ही क्षेत्र कालकी जानै, पीछै एक प्रदेश क्षेत्रकी अधिक जानै, पीछे बहुरि द्रव्यापेक्षा असंख्यात स्थानक होंय तहां पर्यन्त उतना ही क्षेत्रकी जानैं, पीछै एक प्रदेश और वधते क्षेत्रकी जानै, ऐसें क्षेत्रापेक्षा असंख्यात स्थानक होंय, तहां पर्यंत तो उतने ही कालकी जानै, पीछै एक समयाधिक कालकी जानै, ऐसैं फिर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात स्थानक होय चुकैं, तब एक २ समय बधते कालकी जानै, ऐसें क्षेत्र अपेक्षा असंख्यात स्थानक होंय, तब जहां एक हाथ क्षेत्र प्रमाण की जानैं तहां संख्यात घनावली–प्रमाण कालकी जानै। बहुरि जहां एक कोशकी जानैं, तहां अंतरमुहूर्त कालकी जानैं, बहुरि जहां एक जोजन की जानै, सो एक समय घाटि दोय घड़ी प्रमाण मुहूर्त्त ता प्रमाण कालकी जानै।

बहुरि जो पच्चीस जोजन क्षेत्र प्रमाणकी जानै, सो किछु घाटि एक दिन कालकी जानै, जो भरत क्षेत्रकी जानै सो एक पक्ष कालकी जानै, क्षेत्रापेक्षया जो जंबूदीपकी जानै सो एक मास काल की जानै, अर जो अढ़ाई द्वीपकी जानै, सो छहमास कालकी जानै, अर जो तेरह रुचिक द्वीप ताईंकी जानै सो सात आठ वर्ष कालकी जानै अर जो संख्यात द्वीप समुद्रांकी जानै, सो संख्यात वर्ष कालकी जानै, जो द्रव्यापेक्षया तैजस शरीरकीजानै, जो असंख्यात कोड़ि जोजनकी जानै, सो असंख्यात हजार वर्ष कालकी जानै। ऐसें असंख्यात लोक प्रमाण स्थानक होय चुकैं तब उत्कृष्ट देशावधि वाला द्रव्यापेक्षया तौ कार्माण वर्गणानैं एक भाग ध्रुव भागहारको भाग दीयां जो प्रमाण आवे तितने द्रव्य स्कंधकी जानैं, क्षेत्रापेक्षया लोक प्रमाण क्षेत्रकी जानै, अर कालापेक्षया एक समय घाटि पल्य प्रमाण कालकी जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण भावांकी जानै। प्रथम जघन्य स्थानक विषैं आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण भावांकी जानै, अर अपने विषय क्षेत्र विषैं तिष्ठते अपने विषय योग्य पुद्गल स्कंध तिनके अर्थपर्याय वा व्यजन पर्यायका जानै, पीछै स्थान प्रति असंख्यात भावांकी जानै।

अब चारों गति जीवों प्रति अवधिका प्रमाण कहिये है—

प्रथम—नरकगति विषैं कहिये है– सातवें नरकके नारकी एक कोश प्रमाण क्षेत्रकी जानैं, अर छठवें नरक वाला डेढ़ कोसकी, अर पाचवें वाला दोय कोसकी, अर चौथे वाला अढ़ाई कोशकी, अर तीसरे वाला तीन कोशकी, अर दूसरे वाला साढ़े तीन कोशकी अर पहिले वाला एक जोजनकी जानैं १

बहुरि तिर्यंचके जघन्य के भेदसों लगाय मध्यके भेदमें जहां तैजसशरीर प्रमाण द्रव्यापेक्षया जानै, क्षेत्रापेक्षया असंख्यात द्वीप समुद्रकी जानै, अर कालापेक्षया असंख्यात वर्षकी जानै २।

अर मनुष्य–गति विषैं जघन्य भेद सौं लगाय सर्वावधि पर्यन्त सर्व भेद होंय ३।

बहुरि देव—गति विषैं, भवन वासी जघन्य क्षेत्रापेक्षया तौ भवन वासी व्यंतरदेवन सौं संख्यात गुणा क्षेत्रकी जानै, अरु कालापेक्षया किछू अधिक कालकी जानैं, बहुरि उत्कृष्ट असुर कुमार जातिका देव क्षेत्रापेक्षया तौ असंख्यात कोड़ि जोजनकी जानै, अरु उर्ध्व मेरुके शिखर पर्यंतकी जानै, अरु नीचै बहुत स्तोक जानै, अरु कालापेक्षया असंख्यात वर्षकी जानै।

बहुरि नव जातिका भवनवासी देव अर आठ जातिका व्यंतर वा पांच प्रकारका ज्योतिषीदेव क्षेत्रापेक्षया तौ असंख्यात हजार जोजनकी जानै, अर असुर—कुमार सौं असंख्यातवां भाग कालकी जानैं।

बहुरि कल्पवासी देव सौधर्म ईशान प्रथम युगलका देव प्रथम नरक पर्यंत अवधिज्ञान करि देखे। बहुरि सानत्कुमार माहेन्द्र जुगलका देव दूसरे नरक पर्यंतकी जानै। बहुरि ब्रह्म ब्रह्मोत्तर अर लांतव कापिष्ट दोय जुगलनिका अवधिज्ञान तीसरे नरक पर्यंत है। बहुरि शुक्र–महाशुक्र अर सतार सहस्रार दोय युगलका चौथे नरक पर्यंत जानै। अर आनत प्राणत आरण अच्युत इन दोय जुगलन विषैं के देव पांचवें नरक पर्यंत की जानै।

बहुरि नव ग्रैवेयकके देव छठे नरक पर्यंत जानैं, अर अनुदिश विमान वाला देव सातवें नरक पर्यंत जानैं, अर पंच अनुत्तर विमान वाला देव लोकके अंत पर्यंत जानैं। बहुरि द्रव्य अपेक्षा अपना अपना अवधि—ज्ञानावरणी कर्मका द्रव्य विश्रसोपचय रहित ताकौं अपना अपना जितना अवधिका क्षेत्रका प्रदेश होय तितनी वार ध्रुव भागाहारका भाग दीजैं ऐसा करतैं जो प्रमाण आवै तितने तितने द्रव्य स्कंधकी जानैं। इति देशावधिज्ञानम्।

अब परमावधि कहिये—देशावधिका उत्कृष्ट भेद सो परमावधिका जघन्य भेद वाला द्रव्यापेक्षया तो देशावधिके उत्कृष्ट द्रव्य नैं ध्रुव भागहारका भाग दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्यको जानैं, अर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात गुना क्षेत्रकी जानैं, अर कालापेक्षया असंख्यात गुने कालकी जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात गुने भावोंकी जानै, बहुरि पीछै अनुक्रमतैं स्थान प्रति असंख्यात २ गुना क्षेत्र काल भावकी अवधि अधिक जानै। ध्रुव भागहार करि भाजित द्रव्यको जानै, या प्रकार परमावधिका स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण है। बहुरि उत्कृष्ट परमावधि वाला द्रव्यापेक्षया तौ ध्रुव भागहार प्रमाण द्रव्यकी जानै, अर क्षेत्रापेक्षया देशावधिका उत्कृष्ट लोक प्रमाण क्षेत्रकौं तीन वार असंख्यात लोकका गुणाकार प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण क्षेत्रको जानै। बहुरि कालापेक्षया समय घाटि आवलि प्रमाण कालकौं तीन वार असंख्यात लोक गुणित असंख्यात लोक प्रमाण कालको जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोककौं तीन वार असंख्यात लोक गुणित भावांकी जानै। इति परमावधिका कथन।

अब सर्वावधि कहिये—सर्वावधि वाला द्रव्यापेक्षया तो अविभागी पुद्गल परमाणुको जानै, अर क्षेत्रापेक्षया परमावधिका उत्कृष्ट भेद सो असंख्यात लोक गुना क्षेत्रको जानै, अर कालापेक्षया असंख्यात लोक गुना कालको जानै, अर भावापेक्षया असंख्यात लोक गुणा भावांको जानै। ऐसा इस सर्वावधिका स्वरूप है।

इति श्री अवधिज्ञानभाव निरूपणम्।

आगैं मनःपर्यय ज्ञान क्षयोपशम भावका निरूपण कहिये है—

मनः पर्यय ज्ञानावरणी कर्मका जैसा क्षयोपशमभाव होय है तैसैं ही भेदकौं लियें मनःपर्ययज्ञान जीव कैं होय है। सो याके भेद असंख्यात हैं। मूलभेद दोय हैं—एक ऋजुमति १ दूजा विपुलमति २।

अन्य जीवके मनविषैं चिंतवन रूप प्राप्त भया अर्थ कहिये रूपी पुद्गलद्रव्य वा पुद्गलसंबंधी (घ) कौं धर्‍यां संसारी जीवद्रव्य तिनकौं जानै सो मनःपर्यय ज्ञान कहिये ।

अर जहां त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्यकौं कोई जीव वर्तमानकाल विषैं चिंतवन करै है ताकौं जानै सो ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञान कहिये।

बहुरि त्रिकालसंबंधी पुद्गलद्रव्यकौं कोई जीव अतीत काल विषैं चिंतया था, वर्तमानकाल विषैं चिंतवै है, वा आधा सा चिंतया वा आगामी काल विषैं चिंतवैगा ऐसा विना चिंतया ताकौं जानै सो विपुलमतिमनः पर्ययज्ञान कहिये। जैसैं कोई जीव त्रिकाल संबंधी पुद्गल जीवों को मन करि चिंतया था, वा वचनकरि कह्या था वा काय करि किया था सो कालांतर विषैं भूलिगया, याद करने कौं समर्थ न भया, तब आय करि ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञानी कूं पूंछता भया वा पूंछने की इच्छाधारि मौन ही तैं खड़ा रहा, ताके सर्वचिंतवनकूं ऋजुमति मनः पर्यय ज्ञानी जानै सो प्रथम तो ईहा नामा मतिज्ञान करि ऐसा विचारै कि जो याके मनविषैं कहा हैं ? पीछैं सर्वजानै, जातैं मनविषै ही ईहादि मतिज्ञान होय हैं, अर मनही विषैं मनःपर्ययज्ञान होय हैं।

बहुरि कोई जीव त्रिकालसंबंधी पुद्गल द्रव्यकौं मन विषैं चिंतया था, वा वचन करि कह्या था, वा काय करि किया था, बहुरि कालांतर विषैं भूल गया, याद करने को समर्थ न भया, सो आय करि विपुलमति मनः पर्यय ज्ञानीको पूंछा वा पूंछनेका अभिप्राय धारि मौन ही तैं खड़ा रहा, ता नरका सर्व ही चिंतवनकूं विना ही ईहा मतिज्ञानके

मनः पर्यय विपुल मति ज्ञानी जानै ।

अब इन दोनों ही भेदनका द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अपेक्षा असंख्यत भेद हैं सो ही कहिये है—ऋजुमति-वालौ जघन्य द्रव्यापेक्षा तौ निरजारवा (?) योग्य औदारिकका समयप्रबद्ध तितने स्कंधके चिंतवनकी जानै, अरु क्षेत्रा-पेक्षया दोय तीन कोशकी वा कालापेक्षया दोय तीन भवकी भावापेक्षया आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण भावांके चिंतवनकी जानै, बहुरि उत्कृष्ट द्रव्यापेक्षया तौ निरजारवा (?) योग्य चक्षु इन्द्रिय कौं समयप्रबद्ध जो अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण स्कंधके चिंतवनकी जानै, अर क्षेत्रापेक्षया सात आठ जोजनकी जानै, अर कालापेक्षया सात आठ भवां की जानै, अर भावापेक्षा जघन्य सो असंख्यात गुणां भावांके चिंतवन की जानै । बहुरि विपुलमति वाला जघन्य तौ द्रव्यापेक्षया ऋजुमतिके उत्कृष्ट द्रव्यकौं ध्रुव भागहार जो मनो वर्गणा के अनंत भेद हैं ताका अनंतमां भाग प्रमाणको भाग दीयें जो प्रमाण आवै तितने स्कंधके चिंतवनकी जानै । बहुरि क्षेत्रापेक्षया आठ नौ योजनकी जानै, बहुरि भावापेक्षया उत्कृष्ट ऋजुमति वालो जितने भावांके चिंतवनकी जानै तासैं असंख्यात गुणे भावोंके चिंतवन की जानै । बहुरि दूसरे भेद वाला द्रव्यापेक्षा तो ज्ञानावरणादि आठ कर्मको समयप्रबद्ध ताकौं ध्रुव भाग हारको भगा दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्यके चिंतवनकी जानै । बहुरि ऐसे ही ध्रुव भागाहारको भाग दूसरे स्थानकके विपयभूत द्रव्य नैं दीजैं जो प्रमाण आवै तितने स्कंधके तीसरे भेद वाला जानै, ऐसे ही स्थान २ प्रति ध्रुव भागहारका भाग दिये जाना, तहां बीस कोड़ाकोड़ि सागर प्रमाण कल्पकालके जेते समय होंय तितनी बार ध्रुव भागहारकौ भाग दिया जो प्रमाण आवे तितने द्रव्य स्कंधके चिंतवनको उत्कृष्ट विपुलमतिमनः पर्यय ज्ञानी जानै । बहुरि क्षेत्रापेक्षया पैंतालीस लाख योजन प्रमाण चतुरस्र क्षेत्रकी जानै, तहां अढ़ाई द्वीप पैंतालीस लाख योजन गोल क्षेत्र है, तिन विषैं तिष्ठते सैनी पंचेंद्रियके मनकी जानै वा अढ़ाई द्वीपके बाहर चारों कोणनमें तिष्ठता देव तिर्यंच तिनके भी मनके चिंतवनको जानै । बहुरि कालापेक्षया आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण भावांको जानैं, अरु भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण

भावांको जानै, यह मनः पर्ययज्ञान परम संयमके धारक ऋद्धिधारी मुनिके होय है। बहुरि ऋजुमति तौ विशुद्ध है अर विपुल मति विशुद्ध है। बहुरि ऋजुमति तौ प्रतिपाति है, अरु विपुलमति अप्रतिपाति है, जातैं ऋजुमतिवाला कूं तौ तद्भव भी मोक्ष होजाय जो पड़ै तौ एक भव मनुष्यका, औग भीले अर विपुलमति तद्भव ही मोक्षगामी होय। इति।

अथ चार सुज्ञान––मति १, श्रुत २, अवधि ३, मनःपर्यय ४, क्षयोपशम भाव सौं वर्तमान भी सुखका कारण अरु आगामी मोक्षका कारण है। बहुरि मति श्रुत अवधि ये तीन ज्ञान तौ गुणस्थान चौथे असंयम सौं लगाय बारहवें क्षीण कषाय पर्यंत हैं। अर मार्गणा गति ४, जाति पंचेंद्रिय १, काय त्रस १, योग १५, वेद ३, कषाय अनन्तानुबन्धी चार बिना २१, ज्ञान स्वकीय १, संयम ७, दर्शन केवल बिना ३, संज्ञी १, आहारक, अनाहारक २ इन विषैं प्रवर्तें है। बहुरि मनःपर्यय ज्ञान गुणस्थान तौ छठवें प्रमत्त ते लगाय बारहवें क्षीण कषायपर्यंत सात गुणस्थान विषैं पाईये। अर मार्गणा–गति–मनुष्य १, जाति पंचेंद्रिय १, काय त्रस १, योग ९ चार मनोयोग, चार वचनयोग औदारिक काययोग, वेद पुरुष १, कषाय ४, संज्वलन चतुष्क अर छह हास्यादिक, अर पुरुष वेद १, ज्ञान स्वकीय १, संयम ४ सामयिक, छेदापस्थापना, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात। केवलबिना दर्शन तीन, लेश्या तीन, पीत १, पद्म २, शुक्ल ३, भव्य १, सम्यक्त्व क्षयोपशम १ क्षायक २ एवं दो २, संज्ञी १ आहारक १।

इति श्री भावदीपकाका क्षयोपशम अधिकार विषैं चार सुज्ञान क्षयोपशम भावाधिकार दूसरा समाप्त भया।

आगै तीन क्षयोपशम दर्शन भावाधिकार लिखिये है....

दोहा—

दर्शनावरण अति दुष्ट है, सर्व कर्ममें वीर।
ठगै ज्ञान सामान्य कूं, निन्दू ताहि धरिधीर ॥१॥

दर्शनावरण नामा कर्मके क्षयोपशमके अनुसार जीवके क्षयोपशम दर्शन भाव होय है। ता क्षयोपशम दर्शन भावके तीन भेद हैं—चक्षु-दर्शन १ अचक्षु-दर्शन २ अवधि-दर्शन ३।

तहां पदार्थके सामान्य अबलोकनका नाम दर्शन है। अर चक्षुदर्शनावरण कर्मके उदयतैं तो चक्षु-दर्शनका अभाव होय है। अर क्षयोपशमके अनुसार चक्षुदर्शनागुण प्रगट रहै है।

बहुरि तैंसें ही अचक्षुदर्शनावरण कर्मके उदय तैं तो अचक्षुदर्शनका अभाव होय है। अरु क्षयोपशमके अनुसार अचक्षुदर्शन गुण प्रगट रहै है।

बहुरि ऐसैं ही अवधिदर्शनावरण कर्मके उदय तैं अवधिदर्शनका अभाव होय है। अरु क्षयोपशमके अनुसार अवधिदर्शन गुण प्रगट होय है। जेता जेता अपने प्रतिपक्षी कर्मको क्षयोपशम होय तितना गुण प्रगट जानना। चक्षुदर्शनावरण कर्मको एकेन्द्रिय १ वेंद्रिय २ तींद्रिय ३ जीवनके तौ सम्पूर्ण उदय हैं तातैं तिनके संपूर्ण चक्षुदर्शनका अभाव होय है। अरु चौइन्द्रिय ४ पंचेन्द्रिय जीवन कैं उदय भी है अरु क्षयोपशमभी है सो जेता उदय है तेता तौ चक्षुदर्शनका अभाव है, अरु जेता क्षयोपशम हैं तेता चक्षुदर्शन गुण प्रगट होय है।

बहुरि अचक्षुदर्शनावरण को सर्व ही संसारी जीवनके उदय भी हैं अरु क्षयोपशम भी है, जेता जेता उदय है तेता तेता अचक्षुदर्शन गुण का अभाव है अरु जेता जेता क्षयोपशम हैं तेता तेता अचक्षुदर्शन प्रगट हैं तातैं अचक्षुदर्शनावरण कर्मका सम्पूर्ण उदय होय नाहीं, सम्पूर्ण उदय होय तौ वस्तूका अभाव होय जाय।

बहुरि तैंसे ही अवधिदर्शनावरण कर्मका जेता २ भाव उदय है तैता तैता अवधि दर्शनका अभाव है, अरु जेता २ क्षयोपशम होय तेता २ अवधिदर्शन प्रगट होय। तहां एकेन्द्रिय आदि असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत जीवनके तौ उदय ही हैं, क्षयोपशम नाहीं, तातैं तिनके तौ अवधिदर्शन का अभाव ही है। अरु संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवन विषैं जिनके सम्पूर्ण उदय है, तिनके तो अवधिदर्शनका अभाव है। अरु जिनके क्षयोपशम है तिनके क्षयोपशम अनुसार

अवधिदर्शन पाईये है । इतना दर्शन भावका स्वरूप व प्रवृत्ति कहिये । जातैं नेत्र इंद्रियकरि पदार्थका सामान्य अवलोकनसौं चक्षुदर्शन कहिये अर जो नेत्रैंद्रियबिना चार इंद्रियनकरि पदार्थनका सामान्य अवलोकन होय सो अचक्षुदर्शन कहिये । बहुरि अवधिदर्शन करि जो पदार्थनका सामान्य अवलोकन सो अवधिदर्शन कहिये । अैसें तीन भाव कहिये। तहां चक्षु अचक्षु दोय दर्शनभाव, गुणस्थान तो मिथ्यादृष्टि आदि क्षीण कषाय पर्यंत बारा गुणस्थान विषैं पाइये है, अर मार्गणा–गति ४ जाति विषैं चक्षुदर्शन तो चौंइद्रिय पंचेन्द्रिय दोय ही जाति विषैं पाइये । अर अचक्षुदर्शन, पांचों ही जाति विषैं पाइये । अर काय विषैं चक्षुदर्शन तो त्रसकाय विषैं ही पाइये, अर अचक्षुदर्शन काय ६, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवलीबिना ७, संयम ७, दर्शन स्वकीय १, लेश्या ६, भव्य २, सम्यक्त्व ६, संज्ञी २, आहारक अनाहारक २ । अवधि दर्शन–गति ४, जाति पंचेंद्रिय, काय त्रस १, योग १५, वेद ३, कषाय २५, ज्ञान केवल बिना ७, संयम ७, दर्शन–अवधि, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व ६, संज्ञी १ आहारक १, अनाहारक १ ।

॥ इति श्री भावदीपकका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं दर्शन क्षयोपशम भावाधिकार तीसरा पूर्णभया ॥

आगे पंच क्षयोपशमलब्धि लिखिये है

दोहा—

लब्धि अपूरण पंच-५ अंतराय वश थाय ।
ता विधिकों क्षयकर प्रभू नमौं पूर्ण रिधिपाय ॥१॥

पंच प्रकार अंतरायकर्म, ताका क्षयोपशमके अनुसार जीवकै पंचलब्धि होय हैं। पंचलब्धि कहिये पंचभावकी इच्छा के अनुसार सामग्रीकी प्राप्ति होय है पंचभाव कहिये—दान १, लाभ १, भोग १, उपभोग १, वीर्य १ इन पांच भावन

का जीवकैं उत्साह कहिये इच्छा उपजै। तहां उत्साहके अनुसार पंच प्रकार अंतराय कर्मको क्षयोपशम होय तो उत्साहके अनुसार ही प्राप्त होय, अर उत्साह भावसों अन्तराय कर्मको क्षयोपशम घाटि होय तौ घाटि प्राप्त होंय, अर उत्साह भावसों अंतराय कर्मको क्षयोपशम घाटि न होय तो बहुत प्राप्ति होय, अर उत्साहभाव अनुसार सामग्री पर अन्तरायको उदय होय तौ सामग्रीकौ विघ्न होय, वा सामग्रीकी प्राप्ति न होय, उत्साह भावको विघ्न होय, तातैं उत्साह भावको साधक तथा बाधक अंतरङ्ग तौ अन्तराय कर्मको क्षयोपशम भाव वा उदय होय है, अर बाह्य आपको मन वचन काय वा योग्य सामग्री वा अन्य द्रव्य चेतन अचेतन पदार्थ वा क्षेत्र काल भाव हैं। जैसे——सत्तर रुपया दान करनेका जीवके मन विषैं उत्साह उपज्या, तिसकाल तैसाही दानांतराय कर्मका क्षयोपशम होय तो सत्तर रुपया ही दान करे, अर दानान्तराय कर्मका क्षयोपशम भाव अधिक होय तो अभिप्राय तो सत्तर ७० रुपया देनेका था अर दोयसौ दे काढ़ै वा क्षयोपशम कर्मका घाटि होय तो अभिप्राय तो सत्तर रुपया देनेका था अर देय घाटि। अर सत्तर रुपया दान देनेका उत्साह किया अर दानांतरायकर्मका तिसकाल उदय होय, तौ किछूभी न दे सकै। बहुरि तैसाही—दानांतरायकर्मका क्षयोपशम उदयके अनुसार ही बाह्य आपका मन फिरजाय तैसाही वचन निकसै, तैसाही कार्य प्रवर्तै, ताहीके अनुसार बाह्य सामग्री दृष्ट पड़ै, ताही अनुसार अन्य चेतन अचेतन द्रव्य क्षेत्र काल भावकी परिणति होय। बहुरि तैसैंही जीव सहस्रधन उपार्जनका उत्साह किया था, तहां लाभांतराय कर्मका क्षयोपशम, उत्साह सादृश (सदृश) होय तो सहस्र धनकी प्राप्ति होय, अर क्षयोपशम अधिक होय तो उत्साहतैं अधिक प्राप्त होय, क्षयोपशम हीन होय तो हीन प्राप्तहोय, अर तिसकाल लाभांतराय कर्मका उदय होय तो कछुभी प्राप्त न होय, ताहि अनुसार बाह्य आपना मन वचन काय प्रवर्तै तैसैही सामग्री होय, तैसाही अन्य द्रव्य चेतन, अचेतन पदार्थ वा क्षेत्रकाल भावकी परनति होय। बहुरि तैसैंही भोग, उपभोग, वीर्य भावका उत्साहकी प्राप्ति अप्राप्ति जाननी। अर दानदिककी इच्छा हैं सो मोहजन्य है मोहकर्मके बशीभूत भया संसारी जीव दानादिककी इच्छा करै हैं, सो इच्छानुसार दानादिक कार्य बनिजांय तौ सुख मानै, अर जो इच्छानुसार दानादिक कार्य न बनैं तो दुःख

मानै, अर कार्यका बनना न बनना अंतराय कर्मके क्षयोपशमके अनुसार है, तातैं संसारी जीव मोहके वशीभूत हुवा वृथा ही दानादिक की इच्छाकरि सुखी–दुःखी होय है। तातैं ही जे सम्यग्ज्ञानी हैं ते पंच क्षयोपशमलब्धि की प्राप्ति अप्राप्ति विषैं हर्ष–विषाद नाहीं करै हैं। अर जे मिथ्यादृष्टि हैं, ते इन पंचलब्धिके उत्सव उठाय--उठाय अर इनकी प्राप्ति अप्राप्ति विषैं हर्ष--विषादकरि दुःखकों प्राप्त होय हैं इन पंच क्षयोपशम लब्धिके, अन्तराय कर्मके क्षयोपशमके अनुसार असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं। ये पंच क्षयोपशमलब्धिभाव अपने--अपने पंच अन्तराय कर्मके अनुसार सर्वही जीवनके क्षीणकषाय बारवें गुणस्थान पर्यंत सर्वही अवस्था विषैं पाइये हैं। अर सर्वही मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं।

॥ इति श्री भावदीपकाका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं पंचलब्धि भावाधिकार चौथा समाप्त भया ॥

अब क्षयोपशम सम्यक्त्व भावाधिकार कहिये है....

दोहा—

बेदक सम्यक् भावतैं धरि मुनि व्रत शुध भाय।
जीत लिये सब कर्म अरि तास नमूं शिवराय ॥ १ ॥

मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्वके निषेक सो प्रदेश उदय होय खिरैं सो ही तौ क्षय कहिये। बहुरि सत्ता में तिष्ठता जो मिथ्यात्व मोहनीय अर मिश्र मोहनीय कर्मको द्रव्य सो उपशांतकरनकों प्राप्त होय, उपशांत कहिये उदीरण होय, उदयमें आवें नहीं, अर देशघाती सम्यक्त्व प्रकृति मिथ्यात्वका उदय होय, तहां क्षयोपशम सम्यक्त्व भाव जीवके उत्पन्न होय हैं। जिन भाषित जीवादिक तत्व तिन विषैं रुचि कहिये श्रद्धा उपजे है प्रतीति होय हैं। जैसें सर्वज्ञकरि कहे जीवादिक द्रव्य भेद करि षट् प्रकार कहे अर अस्तिकाय भेद करि पंच प्रकार, अर तत्वभेद करि सप्त प्रकार वा

अर्थभेद करि नव प्रकार, बहुरि तिनका द्रव्य, गुण, पर्याय स्वरूप जैसा कह्या तैसा ही श्रद्धान करै है, तैसा ही जाने है, अर ताहि रूप तिन विषैं प्रवृत्ति करै है, अर यहां दर्शनमोहकी सम्यक्त्व मोहनीय प्रकृतिका उदय है, ता-करि मूल तत्व श्रद्धानका अभाव तौ नाहीं होय सकै है, अर श्रद्धान विषैं चल मल अगाढ़ ऐसें तीन प्रकार दोष उपजै हैं। सो दोषोंकी तारतम्यता तौ केवलीगम्य है, परन्तु तिनकी छद्मस्थ दिखावनेके अर्थि दृष्टान्त करि शास्त्र विषैं जो कह्या है सोही कहिये हैं। जैसे अपने केतेक जिनमंदिर जिनप्रतिमा वा शास्त्र वा अपने नातापन—पिता आदिक मुनि, तिन विषैं तौ भक्त्यादिक सरस करै, मनमें ऐसा जाने कि ये मेरे हैं। बहुरि अन्यके कराये जिन मंदिर जिन प्रतिमा वा शास्त्र वा अन्य मुनि, तिन विषैं प्रीतिभाव भक्त्यादि घाट होय, तिनकौं ऐसा मानै, ये अन्य हैं, ऐसी भ्रांति भाव उत्पन्न हुवो करै, मिटावो करै, जैसे जल विषैं उत्पन्न भई कल्लोल जल विषैं ही रहे, अन्य ठौर न जाय, तैसै सम्यक्त्वके साधकधर्म पदार्थ विषैं ही विकल्प उपजै, अर विनसि जाय, अर मिथ्यात्वके साधक पदार्थंन विषैं भ्रांति उपजै तो अनाचार होय, सम्यक्त्व जाता रहै ऐसा तो चल दोष जानना। बहुरि मल दोष पच्चीस प्रकार है तहां आठ तौ मल दोष ८ — शंका १ कांक्षा २ विचिकित्सा ३ मूढ़दृष्टि ४ अनुपगूहन ५ अस्थितिकरण ६ अवा-त्सल्य ७ अप्रभावना ८ बहुरि आठ मद दोष कुलमद १ जातिमद २ रूपमद ३ ऐश्वर्यमद ४ लाभमद ५ बलमद ६ तपमद ७ विद्यामद - ८। बहुरि षट् अनायतन—कुदेव कों सराहना १ कुदेवके धारकनकूं सराहना २ कुगुरुकों सराहना ३ कुगुरुके धारकनकूं सराहना ४ कुधर्मकूं सराहना ५ कुधर्मके धारकन कूं सराहना ६। बहुरि तीन मूढ़ता—देवमूढ़ता १ गुरुमूढ़ता २ लोक (समय) मूढ़ता ३। एवं पच्चीस। सो ये दोष धर्म प्रकरण विषैं उत्पन्न होय हैं। ताही सम्यक्त्व कूं अतिचार हैं, सो ही कहिये है। जहां जीवादि तत्वन विषैं संशय उत्पन्न होय, जो इनका स्वरूप, इनकी प्रवृत्ति, वा इन विषैं हेय उपादेय वा त्याजन ग्रहण फल इत्यादि कह्या है मो ऐसें ही है अन्यथा तौ न होय? ऐसा संदेह उत्पन्न होय पीछे बिनस जाय ताका नाम शंका दोष कहिये। बहुरि जहां ऐसा भाव उत्पन्न होय कि जो इस धर्मके

प्रसाद तैं मेरें लक्ष्मी होय वा सुंदर स्त्री वा पुत्रादिककी प्राप्ति होय, मेरे शरीरका रोग जाता रहे, वा मेरा शत्रु विलाय जाय इत्यादि इस भवसंबंधी वांछा वा परभव विषैं देव होऊं इन्द्रपदका सिंहासन पाऊं, भोगभूमि विषैं उपजूं, वा चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, कामदेव, विद्याधर इत्यादि पद पाऊं, अैसा इसभवपरभवसंबंधी संसारी वांछा सो बांछादोष कहिये। बहुरि जे आखड़ी, व्रत, शील, अनशनादि तप व अणुव्रत, महाव्रतका नेमरूप वा संयमरूप ग्रहण किया, तिन विषैं अहोठाभाव होय कि जो यह नेमका काल कब पूर्ण होय ? वा यह नियम, जप ग्रहण तौ करलिया अब याका निर्वाह कैसें होसी ? भारया लागै, वा मंदिरादिकका वा पूजाप्रतिष्ठादिकका वा तीर्थयात्राका इत्यादि धन संबंधी कार्यका प्रारंभ तो कर दिया, अर पाछे कार्य भाऱ्या लागै, धनादिक अहोठाभाव सौं कृपणता सहित खरचै' जैसें तैसें पूरा पाड़ा चाहै, वा चतुर्विध संघके विषैं रोग, दालिद्रादिक होत संतै तिनसौं ग्लानि करना इत्यादि भाव प्रवर्तैं सो विचिकित्सा दोष कहिये। बहुरि जहां धर्म कार्य, यथा—अयथा, योग्य—अयोग्य, विनय—अविनय, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके विवेक रहित करना सो मूढ़दृष्टि कहिये। बहुरि जहां चतुर्विधसंघ विषैं मुनि अर्जिका श्रावक श्राविका विषै कर्मके उदयकरि उत्पन्न भया जो दोष ताकौं प्रगट करना सो अनुपगूहन दोष कहिये। बहुरि मुनि आचार्य आर्यिका श्रावक श्राविका विषैं इन विषैं कोई कौं कोईभी प्रकार धर्म सौं शिथिल होय वा का कारण जानैं तनकरि धनकरि बचनकरि उपदेशादिकरि अपनी सामर्थ्य होतैं संतैं स्थिर न करना, वा अपनी सामर्थ्य न होतैं और पासि न करावना, सो अस्थितिकरन दोष कहिये। बहुरि धर्म अरु धर्मात्मा विषैं प्रीतिभाव न जोड़ना, सो अवात्सल्य दोष कहिये। बहुरि तन, मन, धन, बचन, ज्ञान, श्रद्धान करि वा तप, संयमादि प्रवृत्ति सम्यक् रूप करि आपकूं वा जिनमत कूं ऊंचा न दिखाना वा तन, मन, बचन, धन, कषाय,—ज्ञान, श्रद्धान, तप, संयमादिककी मिथ्या प्रतीतिकरि आपकूं वा जिनमार्गकूं हीन दिखावना सो अप्रभावना दोष कहिये।

इति अष्टमलदोषः।

अब अष्टमद दोष कहिये है....

आपतो बेटा राजादिकोंका है, अर अन्य धर्मात्मा कोई अन्य मनुष्यका पुत्र है, वा शुद्धकुलका हैं, अर श्रद्धान ज्ञान, तप, संयमादि विषैं आपसूं अधिक है, ताका कुलमदका जोर सों विनयसत्कारादि न करना, सो कुलमद कहिये १। बहुरि तैसें ही आप बड़े राजानका दोहिता है, ताका मदकरि आपसौं अधिक गुणवान सामान (सामान्य) जातिके वा शुद्धकुलके तिनका विनयसत्कारादि न करना सो जातिमद कहिये २। बहुरि तैसैं ही आप रूपवान है, अर अन्य आपसों अधिक गुणवान रूपकरि हीन है, तिनकों हीन जानना, आपकों अधिक मानना, सो रूपमद कहिये ३। बहुरि आप ऐश्वर्यवान हैं, राज्यलक्ष्मी करि युक्त है, तथा धनादि करि युक्त है, अर अन्य आपतैं अधिक गुणवान ऐश्वर्यकरि हीन हैं, वा धनादि करि रहित हैं, तिनका विनयसत्कारादि न करना सो ऐश्वर्यमद कहिये ४। बहुरि आपकें पूर्व पुण्यके उदय तैं नाना प्रकार अलभ्यका लाभ होय है, अर अन्य आप करि अधिक गुणवानकूं पूर्व पापके उदय करि लाभ न होय हैं, वा अलाभ होय है ताकों, दुर्भाग्य जानना, अर आपकों भाग्यरूप जानना, ताकों कटुक वचन कहना सो लाभमद है ५। बहुरि आप विषैं शरीरबल, राज्यबल, कुटंब बल, लक्ष्मीबल इत्यादि सप्त प्रकार बल पाइये हैं, ताका मद करि गुणवान धर्मात्माका पराभव करना, सो बलमद कहिये ६। बहुरि आप अनेक तप विषैं प्रवर्तै है, अर अन्य धर्मात्मा विषैं तप आदिक थोड़ा पाइये, वा न पाइये है, तहां ताकौं तो हीन मानना, अर आपकौं अधिक मानना सो तपमद कहिये ७। बहुरि आप तो अनेक शास्त्रका पाठी है, अर अन्य धर्मात्माको शास्त्रज्ञान समान (सामान्य–मामूली) है तहां आपकों महंत मानना, ताकों हीन मानना, सो विद्यामद कहिये ८।

इति अष्टमद निरूपणम्।

अब षट् अनायतनस्वरूप प्ररूपणम्

देवका भावसों रहित, विपरीत स्वरूपकों धरैं ऐसा जो कुदेव तिनकी सराहना करनी "कैसे शृंगारादि किये हैं, कैसी लक्ष्मी करि युक्त हैं, कैसी कंचुकीरची है, कैसे कटक, कुंडल, हार, भुजबंध आदि पहरैं हैं, बहुत सबल हैं, पूजनहारे की कामना पूर्ण करैं हैं, बहुत राजादिकौं करि सेवित है" इत्यादि सराहना करनी सो देवायतन-दोष जानना। १ बहुरि कुदेवके सेवक तिनकों सराहना "देखो इनकैं बड़ी शक्ति है, तन, मन, धन, बचन, घर, कुटंबादिक सब बार-दिये हैं, (न्योछावर कर दिये हैं) शास्वते भजनमें ही निमग्न रहे हैं, अैसे और पुरुष नाहीं" इत्यादि सराहना करनी सो कुदेव धारक (आराधक) आयतन दोष जानना २। बहुरि नानाप्रकार भेषके धारक अैसे कुलिंगी आप गुरुकी ठसक धरावैं, जगत पास पुजावैं, जगतके धनसंपदादिक वा जगतके ठगोरे, मानरूप पर्वतके शिखर बैठे, अनेक माया-के करन हारे, क्रोधरूप अग्निके पुंज, तिनकों सराहैं "ए बहुत विद्यावान् हैं, तपस्वी हैं, त्यागी हैं, निर्मोही हैं, शील-वान हैं, हिंसारहित हैं, अजाची हैं, नानाविध चमत्कारके धारक हैं, लक्ष्मीवान हैं, महंत हैं" इत्यादि गुणन विषैं कोई एक दोय गुण बाह्यदृष्टि गोचर देखि ताके आश्रय सराहना करनी सो कुगुरु आयतन दोष कहिये ३। बहुरि तिनके सेवकन कुं सराहना "ए उनकी बड़ी भक्ति करैं हैं, तिनके अर्थि धनादि खर्चैं हैं, बड़े फलकूं प्राप्तहोंयगे" इत्यादि सराहना करनी सो कुगुरु धारक अनायन कहिये ४। बहुरि धर्मकों सराहना "सर्व ही धर्म सेये हुए भले फल कों दैंय हैं, वा धर्म विषैं वह अच्छा मार्ग है, वा धर्म विषैं वे सदा ही प्रवर्तैं हैं, श्वेतांबरादिक के संवत्सरी आदि धर्म हैं, ढूंढियामत विषैं धन नाहीं राखैं हैं, शीलपालैं हैं, जीवनकी दया पालैं हैं, भिक्षा मांगि भोजन पाइये हे, ता विषैं मान अपमान नाहीं गिनैं हैं" इत्यादि कुधर्मकी सराहना करनी सो कुधर्म अनायतन दोष हैं ५। बहुरि पूर्वोक्त नाना प्रकार धर्मके सेवनहारे पुरुष तिनकी सराहना करनी सो कुधर्मधारक अनायतन कहिये ६।

अब तीन मूढ़तादोष कहिये है....

तहां सदोष, निर्दोष, सर्व देव समान जानने कछु विचार नाहीं, जैसे दिगम्बर आम्नायके प्रतिबिम्ब अर श्वेतांबर आम्नायके प्रतिबिम्ब वा देहरा (देवघर-मंदिर) समान जानना, सारे ही कूं बंदना द्रव्यादि विवेक रहित देवविषैं प्रवृत्ति सो देवमूढ़ दोष कहिये। बहुरि अट्ठाईस मूलगुण धारक परम दिगम्बर मुनि वा कुलिंग के धारक पाखंडी तिनको समान जानना, विनय सत्कारादि करना सो गुरुमूढ़ता कहिये। बहुरि सर्व शास्त्र समान मानना, यथा अयथाका विवेक न करना, यथा अयथा वक्ताका विवेक न करना, आम्नाय कुआम्नायका विवेक न करना, धर्म कुधर्मका विवेक न करना, तत्व कुतत्वका विवेक न करना, जा शास्त्र कूं संस्कृत वा प्राकृत रचित देखा वा बड़ा पाना सुन्दर अक्षरन करि लिखा देखा, बडे वंधने करि वेष्टित देखि इत्यादि अविधि पद देखि, बहुरि वक्ता ताकूं बडा पंडित देखि संस्कृत, प्राकृत, न्याय का ज्ञाता देखि, बडी गादी व बडे सिंहासन पर तिष्ठता देखि, बडे शब्दाडंबर ललितावाणी सहित देखि इत्यादि अविधिपनो सहित देखि, बहुरि जिस आम्नाय में घणा धन खरचता देखि, घने पंडित देखि परस्पर बहुत चर्चा देखि, बहुत तप संयमादि देखि बहुत गान नृत्य वादित्रादि करि भक्ति करते देखि वा बहुत मनुष्यनका संघट्ट देखि, इत्यादि अविधि पनो सहित देखि, बहुरि अनेक प्रकार विषय कषाय पोषक धर्म प्रवृत्ति, जा धर्म प्रवृत्ति विषैं पंच इंद्रियनके विषय सेवना अर ताकूं धर्म कहना, ऐसा विषय पोषक धर्म बहुरि ता धर्म प्रवृत्ति विषैं क्रोध मान माया लोभ पोषना, छह हास्यादिकके कार्य उघडते होंय, तीनों वेदनिकी मुख्यता होय, कोई कुशील का सेवन होय ऐसा कषाय पोषक धर्म प्रवृत्ति। बहुरि केई पच्चीस तत्वके साधक, अर केई षोड़श तत्वके, अर केई षट् तत्वके, वा चार, तीन, दोय, एक तत्वके साधक ऐसे मतन कूं देखि वा तिनकूं घने राजादिक मन विषैं मानतें वा अपने कुलाम्नाय में चला आया वा कोई चमत्कारादि देखि वा लज्जा कज्जा जश बड़ाई इत्यादि करि तिनकौं

वा जथा जिनशास्त्र वा जथा जिनवक्ता वा जथा जैनाम्नाय वा जथा जैनधर्म वा जथा जैन भाषित जीवादि तत्व इत्यादिकन कौं समान जानना सो समयमूढ़ कहिये। इति पंचविंशति दोषाः।

अब अगाढ़दोष कहिये है....

सर्व ही तीर्थंकर अनंतशक्तिके धारक हैं, तिन विषैं हीनाधिक जानना, जैसे "शांतिनाथ शांतिके कर्ता हैं, विघ्न हरनेको पार्श्वनाथ समर्थ हैं" ऐसा श्रद्धान शिथिलताकौं प्राप्त होय, जैसें वूढ़ा मनुष्यकी हाथकी लाकड़ी कांपैं अर छूटै नाहीं, तैसें सम्यक्त्व मोहनीय कर्मके उदयतैं श्रद्धान शिथिल होय, परंतु छूटै नाहीं, सो अगाढ़ दोष कहिये। इस प्रकार कहे जे चल मल अगाढ़ दोष ते सम्यक्त्व मोहनीय कर्मके उदयतैं उत्पन्न होंय, तिनकौं तत्वज्ञानके बल करि अभावकों प्राप्त करै है, सत्य प्रतीत रूप अवस्था होय है। देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ इनकों मोक्षके मूल कारणभूत पदार्थन विषैं संदेह होय है, अर इनके अनेक प्रकार विशेष तिन विषैं जो संदेह उत्पन्न होय है, ताकों देव गुरु शास्त्रके प्रसाद करि निवारण करै हैं, अर दिन दिन प्रति समता भाव है बंधता जाकैं, बहुरि आपापरका विचार विषैं कोई प्रकार भ्रम नाहीं पाइये है। बहुरि दूर भया है सर्व प्रपंचभाव जातैं ऐसी सरलताकों भजै है। ऐसा सम्यक्त्वभाव अष्ट अंगन सहित होय है। तहां अष्ट अंग कहिये है—निःशंकित १ निःकांक्षित २ निर्विचिकित्सा ३ अमूढ़—दृष्टि ४ उपव्रहण ही का नाम उपगूहन कहिये ५। स्थितिकरण ६ वात्सल्य ७ प्रभावना ८ इति।

अब इनका स्वरूप कहिये है—

सर्वज्ञ देव करि भाषित जे जीवादिक तत्व वा तिनका स्वरूप वा अनेक प्रकार द्रव्य, गुण, पर्यायन करि

वस्तुनिका स्वरूप तिन विषैं वा सूक्ष्म १ अंतरित २ दूरवर्ती ३ इन तीन प्रकार पदार्थन विषैं छद्मस्थकी इंद्रिय अगोचर सो सूक्ष्म कहिये १ अर जो अतीत काल विषैं होगये वा अनागत काल विषैं होंयगे सो अंतरित कहिये २ अर जे दूर क्षेत्रवर्ती वर्तमान हैं अर अपने देखनेमें न आयें ऐसे मेरु आदिक ते दूरवर्ती कहिये ३ वा हेय कहिये त्यागने विषैं उपादेय कहिये ग्रहण करने विषैं वा दुःख—सुखके कारणन विषैं वा संसार मोक्षके कारणन विषैं इत्यादि पदार्थन विषैं संशय नाहीं धरैं हैं सो निःशंकित अंग कहिये १।

अरु नहीं हैं धर्मके सेवन थकी इस भव परभव संबंधी सांसारिक सुखादिककी बांछा जानै, किंतु मोक्षके अर्थ ही सैवे है सो निःकांक्षित अंग कहिये ।

बहुरि जो धर्म अंग कूं सेवैं हैं सो उत्साह भावन सहित सैवें हैं, अर धर्मात्मा जो चतुर्विध संघ तिन विषैं अनेक प्रकार दरिद्र रोगादिक देखि ग्लानि नाहीं करैं हैं तिनकी भक्ति करैं हैं सो निर्विचिकित्सा अंग कहिये ३।

बहुरि जो धर्म प्रवर्त्ति करैं हैं सो विवेक सहित शास्त्रोक्त करैं हैं सो अमूढ़ दृष्टि कहिये ४।

बहुरि अपने धर्मका बधावना वा जिनधर्मका बंधावना सो उपबृंहण अंग कहिये, वा पराया दोष ढांकना सो उपगूह अंग कहिये ।

बहुरि स्थितिकरणके दोय भेद भये २ जो अपने परिणाम धर्म सौं डिगैं तौं शास्त्रोक्त ज्ञान करि अनुप्रेक्षा-दिकका चिंतवन करि आपकों धर्म तैं न डिगवा दे सो स्वस्थितिकरण कहिये १ अर अन्य जीवन कूं धर्म तैं चिगता देखि ताकौं जा प्रकार बनैं, जाकरि वाका समाधान होता दीखै ता प्रकार समाधान करि धर्म विषैं स्थिति करै सो परास्थितिकरण कहिये ।

बहुरि जहां धर्म, धर्मात्मा सौं बहुत प्रीति करै सो वात्सल्य कहिये।

बहुरि प्रभावना दोय प्रकार है, जहां आपकूं सर्व प्रकार ऊँचा दिखावै, कोई प्रकार भी नीचा न दिखावै सो

आत्म प्रभावना कहिये १ अर जिनमार्गकूं ऊँचा दिखावना सो मार्ग प्रभावना कहिये । ८

ऐसे अष्ट प्रकार अंगकरि युक्त है । बहुरि धनकूं विनाशीक जानि सप्त क्षेत्रन विषैं खरचैं हैं, निरन्तर खर्च करै हैं । अर देवन सूं पूज्य सर्व देवनके देव ऐसे श्री जिनेंद्र देव तिनकौं षट् प्रकार अष्ट द्रव्यनि करि भक्ति सहित पूजैं हैं—नामकरि १ स्थापनाकरि २ द्रव्यकरि ३ क्षेत्रकरि ४ कालकरि ५ भावकरि ६ इति ।

तिनके नाम को पूजे हैं, नामका उच्चार करि पुष्पांजलि क्षेपै हैं, नमस्कार करैं हैं, तिनके नामका जाप करैं हैं, ध्यान करैं हैं इत्यादि नाम करि पूजैं हैं १ । बहुरि तिनकी जे कृत्रिम, अकृत्रिम प्रतिमां तिनकौं अष्ट द्रव्यनकरि पूजैं हैं, नमस्कार करैं हैं, वंदना करैं हैं, स्तवन करै हैं, जाप करैं हैं, चिंतवन करैं हैं इत्यादि करि तिनकी स्थापनाकूं पूजैं हैं २ । बहुरि गृहस्थावास्था विषैं तिष्ठते जे तीर्थंकर तिनकौं द्रव्य पूज्य कहिये, तिनकौं यथाविधि पूजैं है, उनके निकट जानां नमस्कार करना, उनका अनुचर होना, उनके गुणनिका अनुरागी होय है ३ । बहुरि जिस क्षेत्र विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं, तिस क्षेत्रकों अष्ट द्रव्यनकरि पूजैं हैं, वा तिस क्षेत्र विषैं तिनकौं पूजैं हैं ४ । बहुरि जिस काल विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं तिस काल कौं अष्ट द्रव्यन करि पूजें हैं, वा तिस काल विषैं तिनकौं पूजैं हैं ५ । बहुरि जिस काल विषैं ज्ञानावरणादिक चार घातिया कर्मनका नाश करि अनंत चतुष्टय शक्तिकौं धारैं हैं, अर समोशरण लक्ष्मीयुक्त होय गंधकुटीके मध्य सिंहासन कमल परि अंतरीक्ष विषैं तिष्ठ करि कल्याण रूप मोक्ष ताके मार्गका उपदेश करैं हैं ते भाव पूज्य हैं । तिनकौं अष्ट द्रव्य करि पूजैं हैं, नमस्कार करैं हैं, वंदना करैं हैं, स्तवन करैं हैं, जाप करैं हैं, ध्यान करैं है इन षटप्रकार करि जिनेंद्र देवकौं भक्ति करि पूजैं हैं १ । बहुरि तीर्थंकर के जिन क्षेत्रन विषैं गर्भादिक पंच कल्याणक भये हैं तिन क्षेत्रन विषैं चतुर्विध संघ सहित जाय पूजन करैं हैं, तहां पूजनादि दानादि विषैं बहुत धन खरचैं हैं २ । बहुरि जिन मंदिर बनावैं, बहुरि जिनबिंब निरमापन करावैं बहुरि यथोक्त प्रतिष्ठा करैं, चतुर्विध संघनै बुलाय तिनकी साक्षी सहित जिस भगवानकों प्रतिमा विषैं स्थापित करना होय

तिनकौं नाम सहित स्थापित करै, तादिनसौं प्रतिबिंब विषैं स्वपनो धारैं हैं, इच्छै तब ही तिस प्रतिबिंबकौं भाव तीर्थंकर तुल्य जान सर्वभक्त्यादि क्रिया भावपूजा तुल्य करैं, वहां बहुतधन खरचैं। बहुरि च्यार प्रकार दत्ति विषैं धन खरचैं हैं—पात्रदत्ति १ समदत्ति २ दयादत्ति ३ सर्वदत्ति ४ इन चार दत्ति करि धन खरचना, ऐसें पूजा १ प्रतिष्ठा २ तीर्थयात्रा ३ अर चार प्रकार दत्ति विषैं धन खरचनेके अर्थि ये सप्त स्थान कहैं। अब चार प्रकार दत्तिकों दरसावै हैं।

प्रथम ही पात्रदत्ति कहिये हैं....

जगतविषैं पात्र तीन प्रकार हैं—सुपात्र १, कुपात्र २, अपात्र ३। जो सम्यक्त्व संयमादि सहित होंय ते सुपात्र कहिये १। तिनके तीन भेद—उत्तम १, मध्यम २, जघन्य ३। तहां उत्तम पात्र तौ अट्ठाईस मूलगुणके धारक बनवासी मुनि १ बहुरि मध्यम पात्र देशव्रती प्रथम प्रतिमा धारक सौं लेय एकादश प्रतिमा धारक पर्यन्त २ अरु जघन्य पात्र व्रत करि रहित सम्यग्दृष्टी श्रद्धानी सम्यग्ज्ञानी ३ बहुरि उत्तम पात्रके भेद उत्कृष्ट १ मध्यम २ जघन्य ३। तहां उत्कृष्ट पात्र तौ श्री तीर्थंकर देव १ मध्यम पात्र गणधर व संघ नायक आचार्य २ जघन्य पात्र विषैं सर्व मुनि ३ बहुरि मध्यम पात्रके तीन भेद—उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य। तहां उत्कृष्ट मध्यम पात्र तौ दशमी ग्यारमी प्रतिमाका धारक वा आर्यिका जी १ अर मध्यम २ पात्र अष्टमी नवमी प्रतिमाके धारक २ अर जघन्य मध्यम पात्र प्रथम प्रतिमा तैं लेय सप्तम प्रतिमाके धारक पर्यंत। बहुरि जघन्य पात्र भी तीन प्रकार—उत्कृष्ट १ मध्यम २ जघन्य, तहां उत्कृष्ट जघन्य पात्र तो उदासीन श्रावक १ अर मध्यम जघन्य पात्र अल्प आरंभी अरु अल्प परिग्रही श्रावक २ अर जघन्य जघन्य पात्र बहु आरंभी बहु परिग्रही श्रावक ३ ऐसे पात्र के नव भेद भये, तिनकौं आहार दान, औषधदान, अभय-दान, शास्त्रदान इन चार प्रकार दानादि सहित यथाविधि यथायोग्य देना, तिन विषैं मुनि अर्जिका अर अष्टम प्रतिमा तें लगाय एकादश प्रतिमाके धारक मध्यम पात्र पर्यंत चार प्रकार ही दान देना, जातैं इहां पर्यंत तौ ये त्यागी हैं और

कोऊको कछू चाहै नाहीं, भक्तिपूर्वक योग्य शुद्ध आहार देना १ योग्य रोगके परिहारके अर्थि यथाविधि सौं औषध देनी २ वहुरि तिन विषैं उपसर्ग परीषह आय प्राप्त भये होंय तौ तिस परीषह कूं जिस प्रकार मिटती जानौ तिस प्रकार करना। वहुरि कमंडलु, पिच्छिका दैनी। वहुरि अर्जिका आदि मध्यम पात्रन कूं योग्य वस्त्र देना ३ तिनके पढ़ने के अर्थ शास्त्र देने ४। वहुरि अल्प आरंभी अल्प परिग्रही तैं लेय सप्तम प्रतिमाके धारक पर्यंत श्रावकन कौं चार प्रकार दान देना, वस्त्रदान १ धनदान २ अजीविकादान ३ गृहमंदिरादि दान ४ निकट राखना, भक्ति करनी, इत्यादि पोषना करना। वहु आरंभी वहु परिग्रही श्रावकनकौं चार प्रकार दान दैना,, वस्त्राभरण देना, लक्ष्मी देना, गृह मंदिरादिक देना, हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी, आदि अनेक सामग्री देना, वेटी देना, निकट राखना, तिनके अर्थ तन, मन, धन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान, कषाय, ये सप्त भाव अपना पद अर पात्रकी योग्य सर्व लगावना भक्ति करनी स्वधर्मीके अर्थि प्राण दवेका अवसर होय तहां प्राण पर्यंत देना, इन नौ प्रकार पात्रन कूं यथायोग्य भक्ति पूर्वक दान—सत्कारादि करना। तहां भक्ति प्रवृत्ति दोय प्रकार है, वहुमान अरु विनय! जहां पात्रका यथायोग्य आदर सत्कारादि करना उनकौं ऊँचा दिखवना सौं बहुमान कहिये। अर आप तिनके निकट अष्ट प्रकारमद छोड़ि नीची वृत्ति धरनी सो विनय कहिये। इन नौं प्रकार पात्रनकौं दान संसारींक सुखकी वाछां रहित केवल मोक्षके अर्थि है, इन पात्रनकौं भक्ति पूर्वक दिया हुआ दान स्वर्ग मोक्षके सुखकौं प्राप्त करै है। इति पात्रदान भेदः।

वहुरि जे सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत, संयम कर तो रहित हैं, अर मुनि १, आर्जिका २, उत्कृष्ट श्रावक ३, इन लिंग वा अनेक नाना प्रकार भेष वनाय झूंठा तप संयमादि कौं धरैं हैं, आपकौं पूज्य मानैं हैं, अर दान लेनेकी इच्छाकौं शाश्वती इच्छातैं धरैं हैं, ते कुपात्र हैं। तिनकौं सम्यग्दृष्टि दान भक्ति करि नाहीं दे हैं, तिनका सत्कार आदि मन, वचन, काय करि नाहीं करै है, तिनका लालन पालन भी नाहीं करै हैं, अर जो कुपात्रनका कोई प्रकार भी लालन पालन राखैं हैं, ते अपने धर्मकूं जलांजलि दैं हैं। जे कुपात्रनकौं भक्ति तैं दान दैं हैं ते नर्कनिगोद विषैं वूडैं हैं, तिनके धर्मकी आभिलाषा

करि धर्म जानि दै है, सो दिया भया पापके भाव कूं भजैं हैं। बहुरि जे सम्यक्त्व संयमादि रहित जीव हैं, ते अपात्र हैं। तिन विषैं जे जाचकोंको दान दै हैं सो जसके अर्थि दै हैं, तिस विषैं धर्म भावकौं नाहीं धरैं हैं, जातै जैनी सूम होय नाहीं, सूम होय ते जैनी नाहीं। तातैं जैनी सर्व तत्वनैं जानता थका अपने पर योग्य यथायोग्य सर्वही दान करै सो ही पद्मनंदिपंचविशंतिका विषैं कह्या है–

उत्कृष्टपात्रमनगारमणुव्रताढ्यम् ।
मध्यं व्रतेन रहितं सुदृशं जघन्यम् ॥
निर्दर्शनं व्रतनिकाययुतं कुपात्रम् ।
युग्मोज्झितं नरमपात्रमिदञ्च विद्धि ॥१॥

दूसरा अध्याय श्लोक नं. ४८ प पं.

अर्थ––जे पंच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, रूप तेरह प्रकार चारित्रके धारक, अट्ठाईस मूलगुण, यथायोग्य चौरासी लाख उत्तरगुण तिनकर सहित, त्रिकाल योगके साधक, बाह्य अभ्यन्तर चौबीस प्रकार परिग्रह करि रहित गृहवास का त्यागी सुख–दुःख, जीवन–मरण, शत्रु–मित्रादिक विषैं राग–द्वेष करि रहित, समान है प्रवृत्ति जिनकी, ऐसे निर्ग्रंथ वीतराग महाव्रती, मुनिराज, सर्व जीवनके दयालु, माता समान हितकारक ते उत्कृष्ट पात्र हैं, इनके अर्थि दिया हुआ दान उत्तमफल जे स्वर्ग मोक्षादि तिनकौं फलैं हैं। जैसे सुक्षेत्र में बोया एक हु बीज बहुत फल कूं फलै है। बहुरि अणुव्रती सम्यग्दृष्टि श्रावक पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, इन द्वादश व्रतनकरि सहित सो मध्यम पात्र हैं। याके अर्थि दिया हुआ दान मध्यम भोगभूमि आदि शुभतर फलको फलै है। अर जे व्रत करि रहित यथोक्त जिनमार्ग के श्रद्धानी उपशमादि सम्यग्दृष्टि ते जघन्य पात्र जानने, तिनके अर्थि दियाहुआ दान जघन्य भोगभूम्यादि शुभ फलनिको फलै है। बहुरि जे महाव्रतादि करि वा अणुव्रतादि करि सहित हैं अर जिनकैं जिनभाषित तत्वनिका श्रद्धान नाहीं, ते

जीव द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक कुपात्र जानने। बहुरि जिनके तत्वनिका श्रद्धान नाहीं अर व्रत भी नाहीं ते जीव अपात्र जानने, इनके अर्थि दिया हुआ दान किछु भी फलदायक नाहीं, उल्टा संसार की वृद्धि का कारण है, जैसे खारड़ी भूमि विषैं बोया बीज निष्फल जाय। भावार्थ--सम्यग्दर्शन सहित महाव्रतनिके धारक जिनकल्पी स्थविरकल्पी मुनिराज ते उत्तम पात्र हैं। जिनके बल, वीर्य, ज्ञानसंपदा की सामर्थ्य ज्यादा है ऐसे एकल बिहारी मुनि जिनकल्पी हैं। अर जिनका बल वीर्य, ज्ञानसंपदादि सामर्थ्य घटि है ऐसे संघ में बसने वाले मुनि ते स्थविर कल्पी हैं। जिन--कल्पी एवं स्थविरकल्पी में इतना ही भेद है कि जिनकल्पी तौ एक विहारी व स्थविरकल्पी संघवासी, शेष चारित्र श्रद्धान ज्ञान वैराग्यादिकका भेद नाहीं, सो इनके अर्थि मिथ्यादृष्टि भी श्रावक दान दें हैं तैं उत्तम भोगभूमिका दश प्रकार कल्पवृक्षनि करि उपज्या उत्तम सुख तिनकूं पावै हैं। वहां तैं मरि देवगति जाय हैं, अर जे सम्यग्दृष्टि श्रावक भक्ति पूर्वक दे हैं ते स्वर्गादिक सम्पदाकूं पावैं प्राप्त होय हैं। सम्यग्दृष्टि जीव भोगभूमि विषैं उपजे नाहीं, जिन जीवनके पहिले मिथ्यात्व अवस्था विषैं दान का प्रभाव करि भोगभूमि का बन्ध पड गया अर पीछे सम्यग्दर्शन का लाभ भया, ते जीव तौ भोगभूमि विषैं जाय हैं परन्तु वह जीव भोगभूमि विषैं मरण करि कल्पवासी देव होय हैं। अर मिथ्यात्वी मरण करि भवनत्रिक विषैं उपजें, ऐसे जानना। अर जे अणुव्रती सम्यग्दृष्टि श्रावक ते मध्यम पात्र जानने। बहुरि सांसारिक सुख सौं अंतरंग विषैं उदास, परन्तु चारित्रमोह के उदय तैं परिग्रहको छोडि सकैं नाहीं, ऐसे अव्रती सम्यग्दृष्टिजीव ते जघन्य पात्र जानने, अर जे व्रत तौ ग्रहण किया अर श्रद्धान करि रहित हैं, ते द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक ते कुपात्र जानने। जैसे अभव्यसेन मुनि ग्यारह अंग नव पूर्व पढ्या तौ भी श्रद्धान करि रहित था सो सम्यग्दृष्टि जीवनिके वंदिवे योग्य नाहीं। तैंसे ही और कुपात्र जानने। अर जे श्रद्धान अर व्रत इन दोनों से ही रहित हैं ते अपात्र जानने। जे जिन सूत्रोक्त बिना स्वकल्पित भेषके धारक ऐसे रक्तांबरादि, काथांबरादि, श्वेतांबरादि व अन्य मतके भेषी ते अपात्र जानने। यहां कोई प्रश्न करै कि जे जिन--सूत्रका अभ्यास करैं हैं, उपदेश दे हैं, पूजनादिक करै हैं ते रक्तांबरादि

अपात्र कैसें ताका समाधान जो तुमने कहा कि जिन–पूजा, शास्त्राभ्यासादि करैं है सो तो लौकिक विषैं ख्याति लाभ पूजा मान बढ़ाई के अर्थि करैं हैं, परमार्थ निमित्त नाहीं करैं हैं । लौकिक कार्य पर शून्य करना सो मिथ्या-कार्य है, तातैं ते मिथ्याती हैं । अर जिन सूत्र विषैं लिंग तीन ही कहे हैं—मुनि १ अर्जिका २ श्रावक ३ । इन सिवाय चौथा भेष कह्या नाहीं है । अर जे जिन सूत्रकी आज्ञा कों लोप रक्तवस्त्र धारण किया, आपका भेप नया चलाया ते विषय कषाय भ्रष्ट रक्ताम्बरादि श्रद्धानी कैसे ? महा मिथ्यात्वकी साक्षात मूर्ति हैं । ताका दृष्टांत—जैसै द्वीपायन-मुनि बारा वर्ष ताईं तपश्चरण किया परंतु श्रद्धान बिना क्रोधके वशि होय नरक गयो तातैं मिथ्यात्वीके व्रतभी कार्य-कारी नाहीं ताही तें अपात्र है इनकी जो लौकिक भयतें पूजा, सत्कार, वंदना, नमस्कारादि करैं हैं ते महामिथ्याती हैं । जैसा गुरु होय तैसा शिष्य होय तातैं उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य पात्र बिना अन्यका दान पूजा सत्कारादि न करना यह उपदेश हैं । अब समदत्ति कहिये हैं, जे बराबर के बहु आरम्भी, बहु परिग्रही वा अल्पारंभी अल्प परिग्रही साधर्मी हैं तिनकौं चार प्रकार दान देना । अनेक प्रकार तिनसौं हित राखना, खान, पान, शैया आसनादि विषै संबंध राखना, तिनसौं अनेक प्रकार लौकिक व्यवहार राखना, अपने नाता पति कुटुम्बसौं अधिक मानना सो समदत्ति कहिये ।

बहुरि दुखित सुखित जीवानें चार प्रकार का दान करना, भावकरि देना सो दया दत्ति कहिये । तहां दुखित सुखित जीवोंके अर्थि च्यार प्रकार दान अपने पद माफिक निरंतर जैनीके घर बटवौंही करै ।

बहुरि जहां अपने सर्व परिग्रह हैं ते एकै बार त्याग करना, अर पुनि व्रत धरना सो सर्व दत्ति कहिये वा मरण समय सर्व धन कुटुम्बादिकतैं अपना ममत्व छोड़ि समाधिमरण करना सो सर्व दत्ति कहिये । ऐ सर्वोत्कृष्ट दत्ति है । ऐसैं धनको विनाशीक जानि सो धन धर्मके अर्थि है तिनकों इन सात क्षेत्रों विषैं तौ धन खरचना, इन विषैं खरचा हुआ धन बहुत फलकौं फलै है । स्वर्ग मोक्ष सुखकों प्राप्त करै हैं, जैसे भली धरती विषैं बोया बीज बहुत

फलकौं दे है । अर कुपात्र दान करि त्यागा भया धन निरफल जाय है । जैसे वंजरभूमि विषैं वोया वीज निरफल होय है । इति ।

बहुरि मुनिजन, गुरुजनकी मन, वचन, काय करि भक्ति करै है, तिनके चरणारविंदका शाश्वती अनुरागी रहै । बहुरि पंच अंगनि सहित नाना शास्त्र तिनिका अभ्यास करै है । पंच अंग-श्रवण कहिये रुचिलगाय शास्त्र सुनैं १ धारण कहिये भलीभांति सुनौं जो अर्थ ताहि धारै, भूलै नाहिं २ बहुरि विचारै ३, शुद्ध घोषणा करै, आम्नाय मिलावै ४, वारंवार चिंतवन किया करै ५, इन पंच अंगन सहित शास्त्राभ्यास करै । अर प्रकट हैं अष्ट गुण जाकैं–करुणा १, वात्सल्य २, सज्जनता ३, आत्मनिंदा ४, समता ५, भक्ति ६, विरागता ७, धर्मानुराग ८ । बहुरि त्यजन ग्रहण विषैं उत्साहवान होय बहुरि गर्व वा आलस्य भाव करि रहित होय, बहुरि धीरजवान होय, बहुरि हर्षकरि सदा मंडित होय, बहुरि चतुर होय, बहुरि सर्व प्रतिष्ठित वचन बोलै, बहुरि धर्म कार्य वा उपकार कार्य करि अपने मुंह तैं अपनी बड़ाईके वा कर्तव्यके वचन नाहीं कहै है, बहुरि गौण है क्रोधभाव अर अदेखसका भाव जाकै, बहुरि लोकनकी लाज तैं वा अनेक प्रकार भय आवता थकां वा भोगनकी वांछा थकी धर्म सौं शिथिल नाहीं होय है, बहुरि पंच इन्द्रियनके विषय न्याय पूर्वक सेवै है, सर्व लौकिक कार्य न्यायके करै है । राजविरुद्ध १ धर्मविरुद्ध २ लोक विरुद्ध ३ कार्य विषय कषायनकै नाहीं करै है, सप्त व्यसन नाहीं सेवै है । बहुरि नहीं है अभक्ष्यका भक्षण जाकैं, बहुरि सप्तधातु व मल मूत्रादिकके संबंध रहित है खान पानादिक जाकैं, बहुरि द्रव्य शुद्धि १ क्षेत्र शुद्धि २ कालशुद्धि ३ भाव शुद्धि ४ संबंध शुद्धि ५ इन पंच शुद्धता करि सहित है भोजनादि क्रिया (सामग्री) जाकैं, इत्यादि गुण सम्यक्त्वभावके साथ ही प्रगट होय हैं। तिन सर्वको क्षयोपशम भाव कहिये । यहां पर्यंत तौ पाक्षिकका पद है । जहां पर्यन्त त्यागकी प्रतिज्ञा वाक्य करि रहित श्रद्धान ज्ञानकी शक्ति करि ही गुणका प्रगट होना सो पाक्षिक पद है । बहुरि सम्यक्त्व ही के माहात्म्य करि प्रथम प्रतिमाका ग्रहण करै है। तहां सप्त व्यसनका मन वचन काय करि वा कृत कारित अनुमोदना करि ऐसा तेतीसके भंग

विषैं भी सुखके कारण हैं, अर आगामी स्वर्ग मोक्षके कारण हैं।

इति श्री भावदीपिकाका क्षयोपशम भावाधिकार विषैं क्षयोपशम सम्यक्त्व भावाधिकार पांचवां पूर्ण भया। ५

अब देशविरत संयमासंयम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

देशसंयमकों ग्रहण करि तेरि मोहको जोर।
संयम सकल मिलाय तिन नमूं मोह हर घोर॥

तहां अप्रत्याख्यान चौकड़ीका अभाव होत संतै प्रत्याख्यान चारित्र मोह कर्मके सर्वघाती स्वर्धकनके उदयका अभाव होय उदयकूं प्राप्त भया सर्वघाती स्पर्धकनका निषेक सो तौ प्रदेश उदय होय खिरैं सो ही तौ क्षय कहिये, अर उदयकों न प्राप्त भया ऐसा सत्ता रूप द्रव्य ताका उपशांतकरण होय, कहिये उदीरणा होय—उदयमें आवे नाहीं, अर देश-घाती स्पर्धकनका उदय होय तहां देशविरत संयमासंयम होय हैं। बहुरि जहां बहुत आरंभ बहुत परिग्रहका त्याग करि अल्प आरंभ अल्प परिग्रहका ग्रहण होय, तहां देशविरतसंयमासंयम होय, तातैं पंच स्थावर अर छटवां त्रस इन षट् प्रकार जीवनकी हिंसा त्याग, बहुरि पंचइन्द्रिय अरु षष्ठम मन इनके विषय विषैं राग—द्वेष का त्याग, तहां संयम होय। सो जहां त्रस हिंसाका तौ सर्वथा मन वचन काय कृत कारित अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै अवशेष एकदेश असंयमका त्याग एक देश होय, तहां देश संयम होय। तातैं बहु आरंभ बहु परिग्रह होत संते त्रस जीवनकी रक्षा न होय सकै, अर स्थावर जीवनकी हिंसाकी बाहुल्यता होय, बहुरि पंच इंद्रियनकी विषय वासना मंद नाहीं पड़े, अर मनका विकल्प न छूटे तब देशसंयम कहांते होय? तातै अल्प आरंभ अल्प परिग्रह भया ही

करि अतीचार साहित त्याग करै। बहुरि आठ मूलगुणनका अतीचार रहित ग्रहण करै, तहां सप्तव्यसन जुआ १ चौरी २ परदारा सेवन ३ वेश्यारमण ४ मांसभक्षण ५ मदिरापान ६ शिकार७ इनका तौ आमक्तता सहित त्याग, अर अष्ट मूलगुण-मांम १ मदिरा २ मधु कहिये शहद ३ बड़का बडबाला फल ४ पिप्पलकी गोल फल ५ पाकर फल ६ ऊमर फल ७ कठूमर फल ८ इनके भक्षणका त्याग करि अर अतीचारमें इनके सजातीय त्रस, आश्रित द्रव्य तिनका त्याग, बहुरि प्रथम दर्शन प्रतिमा विषैं भी परिग्रह प्रमाण संभवै है । सो नाना रूप है । प्रथम तौ अपने पुण्य उदय प्रमाण मिली जो राज्यादि सामग्री ता विषैं संतोषधारि ता सिवाय अधिक सामग्रीका त्याग करै सौ तौ परिग्रह प्रमाणका जघन्य भेद है । बहुरि मध्यभेदन विषैं पाई सामग्री विषैं, वा आरंभ प्रारंभ विषैं पौन राखना, चौथाई घटाय देना, अर्धराखना, चतुर्थभाग, अष्टमभाग इत्यादि प्रमाण विशेष त्याग करना सो मध्यके नाना भेद हैं । बहुरि इसके आगै उदासीन श्रावकके अनेक प्रकार प्रमाण हैं, जेता जेता कषाय घटता जाय, तेता तेता इन्द्रियनके विषय वा कषाय वा परिग्रह घटता जाय, या प्रकार प्रथम प्रतिमाका उत्कृष्ट पद सर्व आरंभ परिग्रह कुटुम्ब आदिक छोड़ि एकाकी होय तिष्ठै तहां पर्यंत है ऐसा प्रमाण शास्त्रोक्त नाहीं है, जो मिली सामग्री तैं अधिक राखना ऐसा प्रमाण तो उल्टा तृष्णा कौं कारणभुत है, धर्मका लक्षण तौ संतोष है, तातैं पाई सामग्री विषैं घटाय संतोष धरना, ताका नाम धर्म है, ऐसा देश विषैं रत दर्शनीक श्रावकका स्वरूप जानना । नामके एकदेशमे सर्व नामका ग्रहण करना इस न्याय तैं उपचार करि दर्शनप्रतिमाको भी देश-विरत कहिये इत्यादि क्षयोपशमसम्यक्त्व भावना जाननी । ये क्षयोपशम सम्यक्त्व–गुणस्थान तौ असंयत १ देशसंयत २ प्रमत्तविरत ३ अप्रमत्तविरत ४ इन चार विषैं पाईये । अर मार्गणा–गति ४ जाति पञ्चेन्द्रिय १ काय त्रस १ योग १५ वेद २ कषाय २१ अनंतानुबंधी चार बिना, ज्ञान—मति १ श्रुत २ अवधि ३ मनःपर्यय ४, संयम ५ सामायक १ छेदोपस्थापना २ परिहारविशुद्धि ३ संयमासंयम ४ असंयम ५, दर्शन—केवल बिना ३, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व स्वकीय १, संज्ञी १, आहारक १ अनाधरक २, इनविषैं पाइये है । बहुरि एक क्षयोपशमभाव जे हैं ते भाव वर्तमान

देशसंयमका कारण है । तहां पांच तो अणुव्रतका ग्रहण होय, हिंसा १ अनृत २ स्तेय ३ अब्रह्म ४ परिग्रह ५ इन पंच पापनका एकदेश त्याग सो अणुव्रत कहिये । अब इनके एकदेश त्यागका स्वरूप कहिये।

प्रथमही हिंसाका त्याग कहिये....

"प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा" जहां प्रमादयोग थकी प्राणका व्यपरोपण कहिये घात करना--पीड़ा उपजावना ताका नाम हिंसा कहिये । प्रमादयोग कहिये कषाय विशेषात् जो कषाय विशेष थकी प्राणोंका पीड़ना ताका नाम हिंसा कहिये शास्त्रका वचन है। सो हिंसा दोय प्रकार---एक द्रव्यहिंसा १ दूजी भावहिंसा । तहां पंचेन्द्रियस्पर्शन १ रसन २ घ्राण ३ चक्षु ४ श्रोत्र ५ तीन बल--मन १ वचन २ काय ३ श्वासोच्छास १ आयु १ इन दश प्राणनका घात करना सो द्रव्य हिंसा है। बहुरि भाव प्राण जो चेतनाप्राण ज्ञान प्राण विषैं कषाय उत्पन्न करना सो भावहिंसा है । बहुरि द्रव्यहिंसा दोय प्रकार है---निज द्रव्य प्राणनका घात करनां, क्रोध करि शरीरादिक दश प्राणनका कृश करना--अपघात करना, मान कषाय करि कृश करना, अपघात करना, मायाकषाय करि कृश करना-अपघात करना, लोभ कषाय करि कृश करना अपघात करना सो स्वेन्द्रिय हिंसा है १ बहुरि कषायकी तीव्र संक्लेशता करनी सो स्वभाव हिंसा है २ । बहुरि अन्य जीवनके द्रव्य प्राणोंका घात करना, मारना, बांधना, छेदना इत्यादि पर द्रव्य हिंसा है ३। अर पहिले कौं कषाय सहित करना सो परभाव हिंसा है ४ । ऐसैं हिंसाके चार भेद हैं--उद्यमी १, संकल्पी २, आरम्भी ३, विरुद्धी ४ । ऐसे हिंसाके सोलह भेद हैं । जहां उद्यम करि स्वपर द्रव्यभाव हिंसा करना सो उद्यमी हिंसा कहिये । सो चार प्रकार है । जहां चतुर (चार) प्रकार हिंसा करनेका मन विषैं विचारका करना सो संकल्पी हिंसा चार प्रकार है । बहुरि जहां नाना प्रकार स्वपरको दुःख देना सो विरुद्ध हिंसा चार प्रकार है । बहुरि चतुर प्रकार हिंसा आरंभके आश्रय होय सो आरंभी हिंसा चार प्रकार जाननी । सो इन हिंसा विषै अल्प आरंभ अल्प परिग्रहकै आश्रय जो शास्त्रोक्त

आजीविका व्यवहार विवाहादिक खान-पानादिक व्यवंहारादिक इत्यादिक आरंभ विषैं जो आरंभी हिंसा है सो तौ होय है सौ मोकली है। अब शेष रावें हिंसाका त्याग करै सो अहिंसा अणुव्रत कहिये। बहुरि असत्य वचन चार प्रकार है— सद्भाव विषैं असद्भावको वचन १, अर अभाव विषैं सद्भावको वचन २, स्वरूपतैं विपर्यय वचन ३, पाप सहित वचन ४। पाप सहित वचनके तीन भेद—गर्हित वचन १, सावद्य वचन २, अप्रिय वचन ३ तहां पराया दोष प्रगट करना, वा दोषीके आश्रय हांसी करना, चुगली खानी, कर्कश वचन कहना, मर्मच्छेदक वचन कहना इत्यादि सो गर्हित असत्य वचन कहिये १। बहुरि जिस वचन करि हिंसादि पंच पापन रूप प्रवृत्ति होय सो सावद्य असत्य वचन कहिये २। बहुरि शोक, भय, आतापादि उपजावनेका कारण वचन सो अप्रिय असत्य वचन कहिये ३। इनमें अपना धन प्राण राखनैके निमित्त वा अपना धर्म राखनेकै निमित्त वा पर उपकारकै निमित्त असत्य बोलना तौ मोकला है, और प्रकार झूंठ बोलना तेतीस के भंग त्याग हैं सो सत्य अणुव्रत कहिये २। बहुरि परका धनादिक सर्व वस्तु बिना दिया कोई भी प्रकार ग्रहण करना सो चोरी कहिये। "अदत्तादानं स्तेयं" ऐसा शास्त्रका वचन है। सो जहां मगराकी माटी अर निवान कौ जल ए जाकी वस्तु हैं तिनका तौ बिना दिया ग्रहण है और प्रकार सर्व अदत्त ग्रहणका तेतीसके भंग त्याग, सो अचौर्याणुव्रत कहिये ३। बहुरि स्व स्त्रीका तौ रोग मात्र विषय रहित सेवन अर अवशेष सर्व प्रकार अब्रह्मका तेतीसके भंग त्याग, सो ब्रह्मचर्याणुव्रत कहिये ४। बहुरि परिग्रह भेद दस प्रकार—क्षेत्र १, वास्तु २, हिरण्य ३, स्वर्ण ४, धन ५, धान्य ६, दासी ७, दास ८, कुप्य ९, भांड १०। इन दश प्रकार परिग्रह विषैं अपनो बाहिर भूम्यादिक विचरवा मात्र तौ क्षेत्र, अर रहवा मात्र मंदिर-घर अर आजीविका मात्र हिरण्य, सुवर्ण बहुरि जो आजीविका करनी पड़ै तो त्रस हिंसा रहित आजीविका करैं, अर जो राजादिक बड़े पदके धारक होंय तौ पालकी चौपाल मात्र बाहन, जातैं तिर्यंचाश्रित बाहन राखै नाहीं, याकैं त्रस हिंसाका त्याग तें तिसके भंग है तिर्यंचके राखने तैं मारना, बांधना, छेदना, भेदना, डाहना तथा नासिका क्रिया करनी पड़ै, वा तिसके खान-पानादि मल-मूत्रादि विषैं त्रस हिंसा होय तब त्रस हिंसाका सद्भाव होय, अर पांच सात दिनके खावामात्र

धान्यादि सामग्री अर चाकरी मात्र एक दोय दासी, दास बहुरि पहरवा मात्र पद योग्य स्वल्प मूल्यका कपड़ा, अर खान-पान तथा शौचादि मात्र उपकरण, इस प्रकार तौ परिग्रहका प्रमाण करि मोकलो राखै, अर अवशेष समस्त परिग्रह छोड़ि पुत्रादिकनैं सौंपि आप गतस्पृह होई तिष्ठै, सो परिग्रह प्रमाण अणुव्रत कहिये। इति पंच अणुव्रत।

बहुरि इन अणुव्रतकी साधनभूत बाड़ बांधै, तब अणुव्रत सूं खेती निपजे। तहां तीनों तौ गुणव्रत धारै दिग्व्रत १ देशव्रत २ अनर्थदण्ड त्याग ३। तहां कर्म-कार्य निमित्त पूर्व १ दक्षिण २ पश्चिम ३ उत्तर ४ ये चार तौ दिशा अरु ऐशान १ वायव्य २ नैऋत्य ३ आग्नेय ४ ये चार विदिशा एक ऊर्ध्व एक अधो इन दशोंदिशा विषैं गमनका प्रमाण, जितनी दूर दिशा प्रति ... लौकिक कार्य दीसै, अटके नाहीं, तितना प्रमाण राखै, निरर्थक अधिक प्रमाण न राखै, जितना प्रमाण राखै तहां पर्यन्त ही काम पड़े तौ जाना, वस्तु मंगाना, भेजना, लेख लिखना, वा बांचना, समाचार भेजना, वा मंगावना इत्यादि क्रिया रूप प्रवर्तना। प्रमाण अधिक दिशा प्रति सर्व क्रिया प्रवृत्तिका त्याग करै सो दिग्व्रत कहिये १। बहुरि जितनी दिशा प्रति नियमरूप प्रमाण किया ता विषैं घटाय २ नियम रूप प्रमाण किया करना, सो देशव्रत कहिये २। बहुरि जहां विना प्रयोजन मन वचन कायकी प्रवृत्तिका त्याग करना, वा विना प्रयोजनकीं विषय सामग्रीं, कषाय कार्यनकी सामग्री, पंच पापन की कारणभूत, तिनका लेना, देना, संचय राखना मोल लेना इत्यादिका त्याग करना सो अनर्थदंडका त्याग कहिये। ता अनर्थदंड त्यागके पांच भेद—अपध्यान १ हिंसाप्रदान २ प्रमाद चर्या ३ पापोपदेश ४ दुःश्रुति श्रवण ५। तहां धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार प्रकार मुख्य पुरुषार्थ रहित मनका विकल्प निरर्थक करना सो अपध्यन कहिये १। बहुरि पंच प्रकार स्थावर वा त्रसकी हिंसाका कारण उपकरण मांग्या देना, सो हिंसा प्रदान कहिये २। बहुरि अन्य जीवनकों पंच पाप रूप प्रवृत्तिका उपदेश देना सो पापोपदेश कहिये ३। बहुरि विषय, कषाय, मिथ्यात्व पोषक खोटे शास्त्र कहना, कथा सुनना सो दुःश्रुत श्रवण कहिये ४ बहुरि विना देख्या विना विचारया विना प्रयोजन कार्य करना वा बिना प्रयोजन गमनागमन करना वा

कार्यसूं अधिक अग्नि आदि प्रजाल्ना, जल नाखना, वनस्पति तोड़ना, घात करना, धरती पर्वतादिक खोदना, कार्यसूं अधिक वस्तु उत्पन्न करनी इत्यादि प्रमादचर्या कहिये । इन पंच प्रकार निरर्थक क्रियाका त्याग सो अनर्थदंडका त्याग कहिये ५।

बहुरि चार शिक्षाव्रत धरै—सामायिक १ प्रोषधोपवास २ भोगोपभोग प्रमाण ३ अतिथि संविभाग ४ । जहां तीन काल सामायिक करिये पौर्वाह्लिक १ माध्याह्लिक २ आपराह्लिक ३ । जघन्य एक मुहुर्त्त, उत्कृष्ट तीन मुहूर्त्त प्रमाण नाम १, स्थापना २, द्रव्य ३, क्षेत्र ४, काल ५, भाव ६ ऐसें षट् प्रकार पदार्थनि विषै समभाव करना सो सामायिक शिक्षाव्रत कहिये १ । बहुरि दोय अष्टमी दोय चतुर्दशी इन चार तिथियन विषैं मास मास प्रति पोसा सहित उपवास करना, सर्व विषय कषाय वा विषय कषायनके कार्यनका त्याग करि उत्कृष्ट षोड़स प्रहरकी मर्यादा वा मध्यम बारह प्रहरकी जघन्य आठ प्रहर की मर्यादा करि धर्मध्यान रूप रहना सो प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत कहिये २ । भोग उपभोगका प्रमाण करना सो भोगोपभोग प्रमाण शिक्षाव्रत कहिये ३ । बहुरि अतिथि जे मुनि तिनकै अर्थि भोजन विषैं भाग करना, द्वारापेक्षण करना, मुनिके आवने योग्य काल विषैं अपने द्वार पर खड़े रहना, प्रासुक जल है हस्त विषैं जाकै, मुनिकी बाट देखा करना, जो भाग्यका जोर करि महापुरुष आय जांय तौ तिनकौं नवधा भक्ति करि भोजन देना । प्रथम तौ मुनि द्वार आवै तिन प्रति ऐसा शब्द कहि पड़गावै " हे प्रभो ! तिष्ठिये, अन्न–जल मेरे शुद्ध है १, बहुरि आप आगे होय साधु पाछै चालै २, बहुरि रसोईके बाह्य आंगनमें शुद्ध क्षेत्र विषैं ऊंचा आसन दे तिस पर साधु खड़ा रहै, तिनके चरण धोवै ३, पूजा करै ४, नमस्कार करै ५, मन शुद्ध ६, वचन शुद्ध ७, काय शुद्ध ८, आहार शुद्ध ९ ।

इति नवधा भक्ति ।

बहुरि सप्त गुण दातारके ताकरि युक्त होय—श्रद्धा १, भक्ति २, निर्लोभता ३, दया ४, क्षमा ५, अनसूया ६, अविसाद ७, । इनके अर्थ–भक्ति करि दिया दान कल्याण हीके अर्थि है, सो श्रद्धा कहिये १, भक्तिपूर्वक शक्ति

सों अधिक हीन भोजन न दे २ इहभव परभव संबंधी लौकिक फल न वांछै ३ सर्व जीवन विषैं करुणाभाव सहित होय ४ क्रोध करि बर्जित होय ५ अदेखसा भाव रहित होय ६ हर्ष सहित बेड़े आदर सों उदाराचित्त सहित होय ७ अर जो साधू न आवें वा लाभांतराय कर्मके उदय तैं आपके हाथ भोजन न बनैं तौ ता दिन उपवास करै, वा कोई रस त्याग करै, ताका नाम अतिथिसंविभागशिक्षाव्रत कहिये ४ । इन बारह व्रतोंको ग्रहण करै । बहुरि अंतमें संल्लेखना मरण करै । तहां अपना मरण दृष्ट पड़ै तब सर्व विषय कषाय कार्यनका त्याग करै, चेतन पदार्थ जे स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब आदिक, अर अचेतन पदार्थ धन, संपदा, मंदिरादिक तिनसौं ममत्व छोड़ि सर्व परद्रव्य तैं आपा छुडाय, आपको चैतन्य अमूर्त्तीक पदार्थ ध्यावै, तहां पंच परमेष्ठीकों सुमरता तथा अनुप्रेक्षाका चिंतवन करता, पर्याय छोड़ै । बहुरि जेता काल सन्यास लिया था, ता पीछे जीवन होय तौ तेताकाल जीवो, मरयो, वैरी, मित्र, सुख, दुःख समान जानै, तिन विषैं राग द्वेष न करे, सो अंतसल्लेखना कहिये १३। अस्पर्श्य शूद्रको दूसरी प्रतिमातें अधिक ग्रहण करनेकी आज्ञा नहीं है ।

इति श्री व्रतप्रतिमा द्वितीयविधान देशविरतका द्वितीय भेद भया, देशविरत संयमासंयमका प्रथम भेद भया ।

बहुरि तृतीय प्रतिमा सामायिक कहिये हैं—तहां उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य कालका नियम धारि तीनों काल के विषैं जो सामायिकका विधान शास्त्र विषैं कह्या है, तिस विधान सहित षट् प्रकार पदार्थन विषैं समभाव है लक्षण जाका ऐसा सामायिक करैं, नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ काल ५ भाव ६ तहां अनेक प्रकार वैरी मित्र के इष्ट अनिष्ट नाम विषैं राग—द्वेष न करना सो नाम सामायिक कहिये १ ।

बहुरि इष्ट स्थापना वा अनिष्ट स्थापना वा वैरीकी स्थापना वा मित्रकी स्थापना तिन विषैं राग—द्वेष न करना सो स्थापना सामायिक कहिये २।

बहुरि जहां इष्ट, अनिष्ट, चेतन, अचेतन द्रव्य वा मित्र, वैरी तिन विषैं राग-द्वेष न करना, सो द्रव्य सामायिक

कहिये ३ ।

बहुरि जहां इष्ट अनिष्ट क्षेत्र विषैं राग—द्वेष न करना सो क्षेत्र सामायिक कहिये ४ ।

बहुरि इष्ट अनिष्ट काल विषैं राग–द्वेष न करना सो काल सामायिक कहिये ५ ।

बहुरि जीव पुद्गलकी मिश्रदशारूप देव, मनुष्य, तिर्यंच, नरक आदि पर्याय इष्ट अनिष्ट रूप तिन विषैं वा न्यायके क्रोध, मान, माया, लोभ, रूप जे कषायभाव वा मन, वचन, कायकी प्रवृत्ति इष्ट अनिष्ट, इत्यादि तौ चेतन के भाव, वा शीत–उष्णादिक वा मिष्ट–कटुकादिक वा सुगंध–दुर्गंध वा शुक्ल–कृष्णादिक वा शब्द, बंध, शूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, उद्योत, आतप इत्यादिक अचेतन पुद्गलके इष्ट अनिष्ट भाव, तिन विषैं राग–द्वेष न करना सो भाव सामायिक कहिये ६ ।

इन षट् पदार्थन विषैं समभाव करना । बहुरि नियमके काल पर्यंत एकान्त स्थानक निश्चल आसन मुनिवत रहना, जो परीषह आय प्राप्त होय हैं, तौ मरण पर्यंत तिनकों दृढ़ मन करि राग–द्वेष रहित होय सहना । तहां कै तौ अपने स्वरूपको विचारना या पंच परमेष्ठीके गुणानिका स्मरण करना, कै द्वादश अनुप्रेक्षा का चिंतवन करना, और सर्व विधान सामायिकका जो शास्त्र विषैं कह्या है, सो सर्व करना सो तीजी सामायिक प्रतिमा कहिये, देशविरतका सामायिक तीसरा भेद कहिये अर देशसंयमभावका द्वितीय भेद है ।

अब प्रोषध प्रतिमा निरूपिये है....

प्रोषध प्रतिमाका धारक मास विषैं दोय अष्टमी, दोय चतुर्दशी इन चार तिथि विषैं चार प्रोषध करै, काल मर्यादा उत्कृष्ट सोलह पहर, मध्यम बारह प्रहर, जघन्य आठ प्रहरका नियम धरि, चार प्रकार आहारका मन, वचन, काय करि कृत कारित अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करि सर्व लौकिक कार्य वा विषय कार्य वा कषाय कार्य वा आजी-

विकादिक के कार्य वा विषय वासना वा कषाय वासना का त्याग करि सर्व कुटुम्बादिकतैं वा ग्रह मंदिरादिक तैं मोह वासना छोड़ि एकांत स्थानक विषैं शय्या, आसन करै। तहां अपने स्वरूपका चिंतवन करै। एक तीर्थंकर वा प्रतिमाजी तिनकी वंदना करै, चौबीस तीर्थंकरोंका स्तवन करै, पंच परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतवन करै, जाप करै, तीन लोकका स्वरूप चिंतवन करै, शास्त्रका बांचना, पृच्छना, आम्नाय, अनुप्रेक्षा, धर्मोपदेश ये पंच प्रकार स्वाध्याय करै, द्वादशानुप्रेक्षाका चिंतवन करै, अनेक प्रकार परीषह, कष्ट आय प्राप्त होई तिनकों साम्य भावन करि सहैं इत्यादि धर्म प्रवृत्ति युक्त होत संतो मुनि समान होय नियम काल पूर्ण करै, अर प्रोषध प्रतिमाकौ सर्व विधान शास्त्रोक्त होय सौ करै, सो चौथी प्रोषध प्रतिमा कहिये ४। ये देशविरतका प्रोषधोपवास चौथा भेद है। अर देशसंयमका तृतीय भेद।

अब पांचवीं सचित्त त्याग प्रतिमा प्ररूपिये है....

कच्चा जल अरु हरित कायका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग मुख्य करि विराधना करनेका त्याग करै। स्थूल पनेका एक भी, अष्ट प्रहरकी मर्याद सहित उष्ण जल अर हरित काय रहित प्रासुक वस्तु का है भक्षण जाकै, सचित्त संबंधादि अतीचार रहित सचित्त का त्याग करै, सो सचित्त त्याग पांचवीं प्रतिमा कहिये। सो सचित्तविरत देश विरतका पांचवां भेद है। अर देश संयमका चतुर्थ भेद है।

अब रात्रिभुक्ति त्याग नाम षष्टम प्रतिमा कहिये है—

तहां मन, वचन, काय, कृत, करित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग रात्रि भोजनका त्याग करै। रात्रि भोजन आप करैं नाहीं, मन करि भोजनपर चित्त चलावे नहीं, भोजन कर्‍या वा वचन करि भोजन कर्‍या ऐसा वचन कहे नहीं, काय करि भोजन करै नहीं, वहुरि अन्य पुत्रादिकन को भोजन करावनेका चिंतवन करै नाहीं, वचन करि कहै नहीं कि

थें भोजन करो, काय करि अपने हस्त थकी भोजन करावै नहीं, बहुरि रात्रि भोजन करनेवालेकौं मन विषैं सराहवे नहीं, वचन करि सराहवे नाहीं, काय करि सराहवे नाहीं सो रात्रिभुक्ति त्याग षष्टम प्रतिमा कहिये।

या रात्रिभुक्ति देशविरतका षष्टम भेद है अर देशसंयमका पचम भेद।

अब ब्रह्मचर्य प्रतिमा कहिये है--

जहां सर्व प्रकार चेतन—अचेतन स्त्रीन सौं मैथुन करिवा का त्याग करै, मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेंतीसके भंग अतीचार रहित त्याग करै, अर नववाढ सहित रहैं, स्त्रीनके संग विषैं रहै नाहीं १ स्त्रीनका सुन्दर अंग देख प्रेम रुचि करि निरखै नाहीं २ स्त्रीनसौं प्रेम रुचि करि बतलावै नाहीं ३ बहुरि प्रथम अवस्था विषैं आपनै कीये जो काम रसभोग तिनकौं चिंतवे नाहीं ४ तथा कामोत्पादक गरिष्ट आहार खाय नाहीं ५ शरीरकौं संवारे साजै नाहीं ६ स्त्रीनकी शय्यापर सौवे नाहीं ७ काम कथा करै नाहीं ८ उदरभर भोजन खाय नाहीं, लघु-भोजन करै ९। मन विषै कामविकार करै नाहीं स्त्रीनके मुख के गानादिक राग करि सुनै नाहीं, तथा वचन करि काम—विकार चेष्टा करै नाहीं, गाली काढ़ै नाहीं, मसखरी आदि करै नाहीं, काय करि काम—चेष्टा करै नाहीं, इत्यादि त्याग युक्त होय सो ब्रह्मचर्य प्रतिमा सप्तम कहिये। ब्रह्मचर्य देशविरतका सप्तमभेद अर देशसंयमका षष्ठम भेद है।

अब आरंभत्याग प्रतिमा कहिये है-

जहां सर्व खान—पान संबंधी चूल्हा परंडी आदिके आरंभका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेंतीसके भंग त्याग करि निरारंभ होय तिष्ठै अपने घर वा पराये घर न्यौता जाय, विषय रहित योग्य लघु-भोजन करै, पुत्रादिक करि दिये विपय रहित, तुच्छ मोलके वस्त्रादिक पहिरै, बैठै आप सर्व वित्त सामग्रीका त्याग

करै इत्यादि क्रिया सहित आरंभ त्याग अष्टम प्रतिमा कहिये । आरंभ त्याग देशविरतका अष्टम भेद है अर देश–संयमका सप्तम भेद है।

अब परिग्रहत्याग प्रतिमा कहिये है—

जहां एक छोटे पन्हे की धोती, शिर ढांकनमात्र एक छोटीसी पागड़ी एकपछेवड़ी इत्यादि इन तीन वस्त्र–मात्रका तौ ग्रहण, अर अवशेष सर्व परिग्रहका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै, स्वपरके घर बुलाया जाय, योग्य लघु भोजन करै, योग्य वस्त्र अन्यके दिये पहरै, निरबांछिक रहै, सौ परिग्रह–त्याग नवमी प्रतिमा कहिये।

यह परिग्रहविरत देशविरतका नवमां भेद व देशसंयमका आठवां भेद है।

अब अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये....

जहां लौकिक पापकार्यनके उपदेश देनेका मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीसके भंग त्याग करै, सो अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये । यह अनुमति त्याग देशविरतका दशमभेद अरु देशसंयमका नवमां भेद है ।

अब उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा कहिये है—

जहां उपदेश्या भोजनका त्याग करै, अनुदिष्ट आहार करै, मुनिकी तरह ग्रहस्थके घर जाय खड़ा रहै । वह बड़ा आदर सत्कार करि भक्ति पूर्वक स्थापै, हे महाभाग्य हमारौ अन्न—जल शुद्ध है, आप लीजिये, तहां वाका

उत्साहभाव, भक्तिभाव देखि योग्य काल विषैं योग्य लघु भोजन करै । वे श्रावक बहुत आदर सहित ऊँचा आसन बिछाय बहुत विनय सहित भक्ति करै, हर्ष करि भोजन दे, तहां विषय रहित बैठ करि भोजन करै, सो उद्दिष्ट त्याग कहिये । इस प्रतिमाके दोय भेद हैं—क्षुल्लक, ऐलक । तहां क्षुल्लक तो लगोट अर एक पाटको एक खंड साड़ौ राखै, आहार करनेको स्वल्प मोलका एक पात्र, शौचादि क्रिया निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखै, अर पांच घरनिमें आहारके निमित्त भ्रमण करैं, जहां अपने पूर्णता योग्य आहार दीखै तहां ही पात्रमें लेय बैठिकें भोजन करि पीछैं पात्रकौं शुद्ध जलतैं पखालि वन विषैं विहार करैं, अर जो यह सुनै कि यहां व्रती श्रावक वा मुनि आवेंगैं, उनकौं यह आहार पकाया है, वहां भोजन का त्याग करै । अर ऐलक एक कोपीन ही राखैं, बहुरि स्पर्श्य शूद्र कौ तौ क्षुल्लक पर्यंत ही देशविरत का ग्रहण है, अर ऐलक व्रत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन उच्च गोत्रके धारकन ही के होय, अर ये शौच निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखैं, पंच धरन विषैं आहार निमित्त भ्रमण करैं जहां आहारकी योग्यता होय तहां वैठि पाणिपात्र विषैं भोजन करैं, इनकें पात्रका ग्रहण नाहीं । ये श्रावक मुनि तुल्य हैं, जिनके कौपीन मात्र परिग्रह है । जितने देशव्रती हैं महाव्रती हैं ते द्विजन्या हैं । लोक विषैं द्विजन्या ब्राह्मण कूं कहैं हैं सो द्विजन्या शब्द का यहां यह अर्थ न जानना । यहां ऐसा अर्थ है कि जो पहिले तौ माताका रुधिर, पिताका वीर्य तैं पुद्गल पिंडको ग्रहण करि नग्न दिगम्बर रूप तैं जन्म पाया, सो एक जन्म तो यह भया सो, यह जन्म तौ सर्व ही संसारी जीवनकै अनादिकालका अज्ञान अवस्था तैं होय है । अर पीछे संसार देह भोग तैं उदास होय वाह्य अभ्यंतर चौबीस प्रकार परिग्रह त्याग करि जैसा स्वरूप माताके उदरमें तैं निकसै नगन था, तैसा ही ग्रहण किया सो ज्ञान पूर्वक व्रतसंस्कार करि दूसरा जन्म भया, सो यहां द्विजन्मा शब्दका यह अर्थ है । सो क्षुल्लक व्रतको धारक शूद्रही होय सो तौ एक लोह पात्र राखै, जातैं अपना शूद्र—कुल प्रगट ही दीसै, जातैं सूत्रकी ऐसी आज्ञा है कि ताही पात्र विषैं भोजन करै । अर अस्पर्श्य शूद्र कों दूसरी प्रतिमा तें अधिक ग्रहण करने की आज्ञा नाहीं । बहुरि

बस्ती वा अनवस्तिका आदिकनमें है वास जिनका, इस प्रकार देशसंयमभावके दश भेद कहिये । तहां सर्व ही भेदम विषैं सदाकाल सर्वके खान—पानादि करना, आजीविका व्यवहार करना, विषय सेवना इत्यादि सर्व अवस्था विषैं गुणश्रेणीनिर्जरा अपने भावनकी विशुद्धताके अनुसार निरन्तर होय है । ऐसा एकादशमी प्रतिमा उदिष्ट त्याग स्वरूप जानना । यह उदिष्ट त्याग देशविरतका एकादशवां भेद है, यह देशसंयमका दशमां भेद हैं । इस प्रकार एकादशप्रतिमा सहित देशसंयमका संक्षेप कथन किया । विशेष व्याख्यान श्रावकाचारके योग्य बड़े-ग्रंथन तैं जानना ।

अब देश संयम क्षायोपशमिक भावका योग्य गुणस्थानक तौ एक पंचम संयमासंयम ही है । बहुरि मार्गणा गति मनुष्य तिर्यंच २, जाति–पंचेन्द्रिय १, काय–त्रस १, योग ९–मनके चार वचन के चार औदारिक काययोग १, वेद-तीन कषाय–अनंतानुबन्धी अप्रत्याख्यान आठ बिना १७, ज्ञान–मति १ श्रुत २, अवधि ३, संयम–देश संयम १, दर्शन केवल बिना ३, लेश्या-पीत १ पद्म २ शुल्क ३, भव्य १ सम्यक्त्व-उपशम १ क्षयोपशम २ क्षायिक ३, संज्ञी १, आहारक १, बहुरि देश संयम भाव वर्तमान भी सुख रूप है अर आगामी स्वर्ग मोक्षका कारण है ।

इति श्री भावदीपिका का क्षयोपशम भावाधिकार विषै देश संयम भावाधिकार सप्तम पूर्ण भया ।

अब क्षयोपशम चारित्र भावाधिकार लिखिये है....

दोहा

चारित चाप चढायकें रत्नत्रय सरबंध ।
मोह शत्रु क्षय जिन कियो नमों जगत करि वंध ॥

तहां संज्वलन चारित्र मोहकर्मके सर्व घाती स्पर्धकनके उदयका अभाव होय, उदयको प्राप्त भये जे सर्वघाती स्पर्धक तिनका तौ प्रदेश उदय होय नहीं सो तौ क्षय कहिये, अर उदयकौं न प्राप्त भये ऐसे सत्ता रूप स्पर्धक तिनका उपशांत करण होय, उदीरणा होय, उदय आवै नहीं। अर देश स्पर्धकनका उदय होय तहां क्षयोपशम चारित्र भाव प्रगट होय है। तहां स्वयं बुद्ध वा प्रति बुद्ध हुआ संता, संसार, शरीर, ग्रह, कुटुम्ब, परिग्रह, विषयभोगादिक तैं विरक्त होय बन में जाय अट्ठाईस मूल गुण के धारक महातपस्वी सर्व श्रुतके पारगामी दोय, तीन, चार प्रमाण ज्ञानके धारक, महाऋद्ध्यादि गुणकरि युक्त, सर्व संसार मायातैं निस्पृह, बाह्य, अभ्यन्तर चौबीस परिग्रहके त्यागी, परम दिगम्बर नग्नमुद्रा के धारक, दीक्षा शिक्षा देने विषैं प्रवीण, सर्व जीवन के हितकारी, ऐसे जै श्री गुरुदेव तिनकै पास जाय दीक्षा जांचै, तव श्री गुरु वाकौं दीक्षा योग्य देखि आज्ञा करैं। "हे महाभाग्य! तैं (तूने) भली विचारी, यह महा अलभ्य परम कल्याण की करनहारी, संसारीक पर जीवन कूं भयकारी, महापुरुषनि करि सेव्यमान, त्रिलोक पूज्य, ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा ताहि तूं ग्रहण कर। तब यह अष्टांग नमस्कार करि हाथ जोड़ विनय करि युक्त सन्मुख श्रीगुरुके निकट खड़ो रहै। तब श्री गुरु आज्ञा करैं, वस्त्राभूषणका परिहार कर, तब आज्ञा होता ही यह तत्काल हर्ष करि सर्व वस्त्राभरण ऐसें उतारे जैसैं शरीर तैं मैल उतारि डारै। बहुरि चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं अरु दशप्रकार बाह्य परिग्रहका श्रीगुरुकी आज्ञा पूर्वक त्याग करै। तहां मिथ्यात्व १ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ हास्य ६ रति ७ अरति ८ शोक ९ भय १० जुगुप्सा ११ पुरुष वेद १२ स्त्री वेद १३ नपुंसक वेद १४ ऐसे चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं।

बहुरि क्षेत्र १ वास्तु २ हिरण्य ३ सुवर्ण ४ दासी ५ दास ६ धन ७ धान्य ८ कुप्य ९ भांड १० या प्रकार दश वाह्य परिग्रह ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग करै।

अब इनका स्वरूप कहिये—"मूर्च्छा परिग्रह" कहिये पर द्रव्य सेती ममत्वभाव, ममत्व कहिये आत्माका परिणाम अर पर द्रव्य सौं एकत्व होय बंधजाना। जैसे—तांतून निगोद ? जलचर जीव अपने तंतून कूं चलाय गांठि देय

परद्रव्यकौं आपकी वोर खेंचकरि ९कत्व होय है, तैसें आत्मा अपने ममकार भावरूप परिणाम करि परद्रव्यन सौं गांठरूप होय एकत्व-भायकी प्राप्ति होय है । तातैं याहीकूं ग्रंथि कहिये, परद्रव्यन कूं बांधनहारा आत्माका ममत्व परिणाम सो अभ्यंतर ग्रंथ कहिये, अर जो आत्म परिणामके बांधनेमें आये परद्रव्य ते बाह्य ग्रंथ कहिये । बाह्य अभ्यंतर परिणाम ग्रंथि पूर्वोक्त चौबीस प्रकार ताका त्याग करै तब निर्ग्रंथ पद होय है ।

जहां परद्रव्य सेती अहंकार ममकार बुद्धि रूप परिणामनका त्याग सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग अर वाह्य शरीर कुटुंबादिकका त्याग वा क्षेत्रादि दश प्रकार वस्तुओंका त्याग सो वाह्य मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये । वा विपरीत मिथ्यात्व भावको धरैं मिथ्यादेव, गुरु, धर्म, आप्त आगम, पदार्थ वा तिनके धारक चेतन, अचेतन पदार्थन विषैं रागका त्याग कहिये, सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये । अर तिन चेतन अचे-तन नव पदार्थन का त्याग सो बाह्य मिथ्यात्व परिग्रहका त्याग कहिये १।

बहुरि जहां पर द्रव्य विषैं क्रोधका त्याग सो अभ्यन्तर क्रोध परिग्रहका त्याग कहिये अर बाह्य क्रोधके कारण पर द्रव्यका त्याग सो वाह्य क्रोध परिग्रहका त्याग कहिये २।

बहुरि जहां अष्ट प्रकार मदादि रूप मानभावका त्याग सो अभ्यन्तर मान परिग्रहका त्याग कहिये । अर मानके कारण बाह्य द्रव्यका त्याग सो बाह्य मान परिग्रहका त्याग कहिये ३।

बहुरि मन वचन कायकी कुटिलता रूप जो मायाभाव जहां मन विषैं तो किछु और ही विचार करना, अर वचन करि कछु और ही कहना, वा काय करि किछु और ही करना, सो मन, वचन, कायकी कुटिलता कहिये । वा आप तौ मन वचन कायादिककी प्रवृत्ति वा ज्ञान चारित्रादिककी प्रवृत्ति, वा कुल जात्यादिक नीची अवस्थाको धारै हैं, अर कोई अन्य जीव अपनी अवस्था सैं ऊंची बधाय वर्णन करै, तहां अपने मन विषैं प्रिय लागै, अपनी जैसीकी तैसी अव-स्था प्रगट न कर देना, सो मनकी कुटिलता कहिये ।

बहुरि वचन तो तुच्छ कार्यादिक का साधक वा अपनी न्यूनताको कारण कह्यो थो, अर कोई अन्य मनुष्य इनके वचनकौं कोई अपेक्षा करि बडे कार्यको साधक वा उच्चताको कारण थापै ताप्रति अपने कहे वचनको गोप्य करि कहै " हमकौ तुम समझे हौ ऐसा ही वचन कह्या है, ऐसा कहना सो वचन की कुटिलता कहिये।

बहुरि आप कायकी नीची प्रवृत्तिकौं धारैं हैं अर अन्य जीवन कौं देखतां कायकी प्रवृत्ति ऊंची बनाय ले सो कायकी कुटिलता कहिये । इनका तहां त्याग करना सो अभ्यंतरमाया परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि इनके कारण बाह्य परद्रव्य का त्याग सो बाह्य माया परिग्रहका त्याग कहिये ।

बहुरि मोहइच्छा १ कषायइच्छा, भोगइच्छा, रोगइच्छा, इन चार प्रकार की इच्छाकी कारणभूत जो इष्ट सामग्री तिनकी प्राप्तिकी इच्छा रूप जो अप्रशस्त लोभ ताका त्याग सो अभ्यंतर लोभ परिग्रहका त्याग कहिये। अर बाह्य कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामिग्री का त्यागसो बाह्य लोभ परिग्रहका त्याग कहिये । जहां चार प्रकार इच्छाकी साधक सामग्रीका संगम होता प्रसन्न होना वा परद्रव्य हास्यके कारण देखी आप हास्य रूप होना ऐसा जो हास्य रूप भाव ताका जो त्याग सो अभ्यंतर हास्य परिग्रहका त्याग कहिये। अर हास्यकी कारणभूत परद्रव्य सामग्री ताका त्याग सो बाह्य हास्य परिग्रहका त्याग कहिये ६।

बहुरि चार प्रकार इच्छाको कारण परद्रव्य रूप जो इष्ट सामग्री तिन विषैं आसक्तभावका त्याग सो अभ्यंतर रति परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि रति-भावको कारण परद्रव्य रूप सामग्री ताका त्याग सो बाह्य रति परिग्रह का त्याग कहिये ७।

बहुरि जो आपकों न सुहावै वा दुःखदायक होय ऐसी जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्री ताका संबंध होतैं जो अरुचिभाव होय, यातैं शीघ्र छूट जानेकी भावना ऐसा अरतिभाव ताका त्याग करना, सो अभ्यंतर अरति परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि बाह्य अरतिको कारणभूत सामग्रीके अभावको कारण बाह्य सामग्री ताका त्याग सो बाह्य अरति

परिग्रहका त्याग कहिये ८।

बहुरि चार प्रकार इच्छाका कारणभूत जो बाह्य परद्रव्य रूप सामग्रीका वियोग होतैं जो निरुद्यमी हुआ थका चिंताका करना, सो शोक कहिये, ताका त्याग सो अभ्यंतर शोक परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि शोकका कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्रीका त्याग सो बाह्य शोक परिग्रहका त्याग कहिये ९।

बहुरि जहां शरीरादिक इष्ट सामग्रीका बाह्यकौं जानि भयरूप भावकौं धरना, छुप जाना वा भागजानेकी बुद्धि धरना, ताका त्याग सौ भय परिग्रहका अभ्यंतर त्याग कहिये, बहुरि भयके कारण जे परद्रव्य चेतन अचेतन पदार्थ तिनके निवारनेका कारण जो परद्रव्य रूप सामग्री, ताका त्याग सो बाह्य भय परिग्रहका त्याग कहिये १०।

बहुरि जे अपने मनकूं अभावती पर द्रव्य रूप सामग्री ता थकी अहोठाभाव करना, ग्लानि करना ताका नाम जुगुप्सा कहि ताका त्याग सो अभ्यंरत जुगुप्सा परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि जुगुप्सा का कारणभूत तो बाह्य परद्रव्य ताका त्याग सो बाह्य जुगुप्सा परिग्रहका त्याग कहिये ११।

बहुरि स्त्री सौं काम सेवनकी इच्छा ताका नाम पुरुष वेद कहिये, ताका त्याग सो अभ्यंतर पुरुष वेद परिग्रह का त्याग कहिये, अर बाह्य स्त्री संगमका त्याग सो बाह्य पुरुष वेद परिग्रहका त्याग कहिये १२।

बहुरि पुरुष सौं काम सेवनेकी जो इच्छा ताका नाम स्त्री वेद कहिये, ताका जो त्याग सो अभ्यंतर स्त्री वेद परिग्रहका त्याग कहिये । बहुरि बाह्य पुरुषके संबंधका त्याग सो बाह्य स्त्री वेद परिग्रहका त्याग कहिये १३।

बहुरि स्त्री पुरुष दोयन सौं काम सेवनेकी जो इच्छा सो नपुंसक वेद कहिये ताका जो त्याग सो अभ्यंतर नपुंसक वेद परिग्रहका त्याग कहिये । अर जहां बाह्य स्त्री—पुरुष–नपुंसकके संबंधका त्याग सो बाह्य नपुंसकके परिग्रहका त्याग कहिये १४।

बहुरि कह आये जे बाह्य परिग्रह ते सर्व दश प्रकार भेद कूं धरैं हैं—क्षेत्र कहिये भूमि देशादिक वा वास्तु

कहिये मंदिर घर मंडयादिक २ हिरण्य कहिये हेम रत्नादिक ३ स्वर्ण कहिये हेम रूपादिक ४ धन कहिये स्त्री पुत्र परिवारादिक वा हस्ती घोटक महिष ऊँट वृषभ गाय आदिक ५ धान्य कहिये अन्न घृतादिक सर्व जिन्स (वस्तुएं) ६ दासी कहिये टहल करनहारी ७ दास कहिये टहल वा, चाकर पुरुष ८ कुप्य कहिये कपड़ा वा सौदा अर गजादि सुगंध द्रव्य ९ भांड कहिये खान—पान स्नानादिकके उपकरण थाली, कटोरा, लोटा, चरी, परात इत्यादि कांसा, पीतल, लोहा, सुवर्ण रूपादिक के १० इन दश प्रकार बाह्य परिग्रहका त्याग करै । ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग करै, तब निर्ग्रंथ पदको प्राप्त होय । अर जो इन चौबीस प्रकार बाह्य अभ्यंतर परिग्रह विषैं कोई भी प्रकार किसीको ग्रहण होय, तहां निर्ग्रंथ पदको अभाव है, इन चौबीस प्रकार बाह्य अभ्यंतर पारिग्रहका त्याग द्रव्यलिंगी भावलिंगी दोनों ही जातिके मुन्याकैं पाइये है । इनमें से एकका भी सद्भाव पाइये तहां वह मुनिपद नाहीं कुलिंग है । वा बाह्य दस प्रकार परिग्रहका तौ अभाव है । अर नग्न मुद्राके धारक हैं। अर अभ्यंतर चौदह प्रकार परिग्रह विषैं किसी भी भावका सद्भाव पाइये तौ भी कुलिंगी हैं । अर जहां बाह्य दस प्रकार परिग्रहका सद्भाव पाइये है । तहां तौ कुलिंग अवश्य ही हैं, तातैं बाह्य अभ्यन्तरको सद्भाव होतैं, इन विषैं एकादि कोई ही को सद्भाव होतैं मुनि लिंग मानना, भगवानकी आज्ञा नाहीं है। सर्व प्रकार परिग्रहके त्याग विषैं ही मुनिलिंग मानना इन चौबीस प्रकार परिग्रहतैं निरपृह होय, बहुरि सर्व-विधको कारण भूत सामायिक चारित्र ताकौं प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै, कैसा है सामायिक चारित्र ता विषैं शत्रु, मित्र, मंदिर अर वन, सुख—दुख, जीवन—मरण, राजा—रंक, स्वजन-परजन, चिंतामणिरत्न, ठीकरी, लाभ—अलाभ, कटु-वचन मिष्ट वचन, सत्कार पराभव, गाली, असत्य वचन इत्यादिक है समान जाकैं, ऐसा राग—द्वेष रहित समताभावका धारक गुरुकी आज्ञा तैं ग्रहण करै है । बहुरि मनकरि वचन करि काय करि कृत कारित अनुमोदना करि सर्व सावद्यका मेरे यावज्जीवन त्याग है " ऐसा प्रतिज्ञा वाक्य मुख तैं काढे अर दीक्षा काल (समय) जो क्रिया योग्य हैं सो सर्व शास्त्रका वेत्ता श्री गुरु शास्त्रोक्त सर्व क्रिया युक्त दीक्षा ग्रहण करावै ! तहां अष्ठाईस मूल गुण सहित सामायक

चारित्रकी प्रतिज्ञा वह जीव करै । तहां पंच महाव्रत प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै, तहां त्रस स्थावर जीवनकी रक्षा है जा-विषैं, तिनकों मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि नाहीं विराधैं, उद्यम करि शरीरतैं स्वपरका द्रव्यभाव प्राणनका नाश नाहीं करै है । स्वपर कोई द्रव्यभाव प्राणानिकौं कोई प्रकार वचन काय करि दुःखावै नाहीं, बहुरि मन विषैं स्वपरके द्रव्यभाव प्राणनके नाश करनेका दुःखावनेका संकल्प करै नाहीं । बहुरि जीवनकी दयाधारि छोड़ा है सर्व प्रकार आरंभ जानै, ताकरि आरंभी हिंसा भी नाहीं होय ऐसे अहिंसा महाव्रतका ग्रहण है १ ।

बहुरि सत्य महाव्रतका ग्रहण करै है, बहुरि छोड़ा है सर्व प्रकार असत्य वचन जानै, हित कहिये सर्व जीवन के सुखका कारण अर मर्यादा रूप ऐसा हित, मित, वचन बोलै है, वा मौनसे रहै है, कोई प्रकार भी अलीक वचन नाहीं बोलै हैं २ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अदत्त ग्रहणका त्याग है ऐसी अचौर्य महाव्रतकी प्रतिज्ञा करी है ३ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा द्रव्य भाव करि मैथुनादिक काम-विकारका त्याग है सो ब्रह्मचर्य महाव्रत कहिये ४ ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अभ्यंतर व बाह्य चौबीस प्रकार परिग्रहका त्याग है सो परिग्रह त्याग महाव्रत कहिये ५ ।

ऐसैं तो नियम रूप पंच महाव्रत मूलगुणनकी प्रतिज्ञा करै। बहुरि इन पंचमहाव्रतकी रक्षाके निमित्त २३ गुण की प्रतिज्ञा सहित ग्रहण है । तहां पांच तौ समितिका ग्रहण करै । तहां विहार समय श्रीमुनि अपनी अचलदृष्टि तैं जूड़ा प्रमाण धरती शोधते हुए गमन करैं, और तरफ नहीं फेरी है दृष्टि जिनने, सर्व जीव आप सर्वत्रपने नमस्कारादि करै हैं। तिन प्रति आपके मुख थकी वचनालाप न करै है, तहां मार्ग मैं पिपीलिनिकादि जीव दृष्ट पड़ें तिनकों बचाय पग धरै है, अर बहुत होय तौ वह मार्ग छोड़ि अन्य मार्ग गमन करै, और मार्ग नहीं होई तो वहां ही खड़ा रह जाई वा तिस मारग सों उल्टा हो जाई जैसा योग्य विवहार होई तैसा करे, सो ईर्या समिति है ।

बहुरि जहां उपदेशादिक वचन योग्य कार्य होय, तहां वचनकी प्रवृत्ति करै, सो वचन हित कहिये, सब जीवनका कल्याण रूप अर मित कहिये मर्यादरूप ऐसा हित मित वचन बौले सो भाषा समिति कहिये।

बहुरि छियालीस दोष रहित अन्तराय करि वर्जित शुद्ध आहारका ग्रहण सौ एषणा समिति कहिये। अब छियालीस दोषोंका वर्णन करिये हैं— तहां सोलह दोष तौ दातार आश्रित सो तो उद्गम दोष कहिये। जहां षट् काय जीवनकी विराधना करि आहार निपज्या होय वा आहार समय षट् काय जीवनकी मन वचन काय, कृत कारित अनुमोदनाकरि विराधना करै सो अधःकर्म दोष कहिये १ बहुरि यतिके अर्थि वा आपके अर्थि रसोईविषैं तंदुलादिक और मिलावै सो अडोडं (१) दोष कहिये २ अप्रासुक भोजनदे ताकूं प्रतिकर्म दोष कहिये ३ कुदिष्टनि (दृष्टि) की सामलातकी रसोईका अन्न आहार कूं दैना वा असंयमीको पांति आहार देना सो मिश्र दोष कहिये ४ जिस भाजनमें तंदुलादिक पचाये हों तिसमें सों अन्न काढ़ि पचावना वा अन्य भाजन में काढ़ि लाय आहार दैना सो स्थापित दोष कहिये ५ बहुरि पित्रादिकके अर्थि रसोई करी होय वा ओरां कां निमित्त करी होय तिस रसोईका भोजन दैना सो बलि दोष कहिये ६ कालके हीनाधिक सहित भोजन आहार दैना सो परात्ति (?) दोष कहिये ७ मुनि आहार लीये पीछे भाजनादिक बाहर काढ़ि बुहारना जांगा धोवना सो प्राचीनक्रिया दोष कहिये ८ तत्काल अपने पराये द्रव्य करि वा विंध्या आहार दैना सो कृत दोष (?) कहिये ९ उधारा लेय आहार देना सो ऋणदोष कहिये १० अपने अन्नादिक औरसूं बदलि आहार दैना सो प्रवर्तिक दोष (?) कहिये ११ अन्य ग्रामादिक तैं मंगाय आहार दैना सो अभिघट दोष कहिये १२ बहुरि बंधा हुवा वा मौहर किया हुवा तत्काल खोलि आहार दैना सो उद्भिन्न दोष कहिये १२ नालि चढ़ि लाय आहार दैना सो मालारोहण दोष कहिये १४ स्वामी बिना अन्यकी रसोईका आहार दैना सो अनीशार्थ दोष कहिये १५ राजादिकके भय करि व्यास हो अर आहार दैना सो आछेद्य दोष कहिये १६ इति उद्गमदोषः

इन षोडश दोष सहित ग्रहस्थ, यतीकूं आहार दे नहीं, अर मुनि जानै तौ ले नहीं।

बहुरि सोलह उत्पादनदोष यत्याश्रित हैं । जहां धायकी नाईं दातारके बालकनकूं खिलावना पुछ (च) कारसो धात्री दोष कहिये १ दूतकी नाईं देशांतरका समाचार दातार सूं कहनां सो दूत दोष कहिये २ निमित्तज्ञान की बात दातार सूं कहना सो निमित्त दोष कहिये ३ दातारकूं सुहावतां कुपात्रदानादि पोषतां वचन दातारको कहना सो बणीपक (वनीपक) दोष कहिये ४ दाताराश्रित नाड़ी देखनादि वैदक (वैद्यक) क्रिया करनी सो चिकित्सा दोष कहिये ५ बहुरि क्रोधसहित आहार लैना सो क्रोध दोष कहिये ६ मानयुक्त आहार लैना सो मानदोप कहिये ७ मायायुक्त आहार लैना सो मायादोप कहिये ८ लोभका अभिनिवेश सहित आहार लैना सो लोभदोष कहिये ९ आहारलिये पहिले स्तुति करना सो पूर्वस्तुतिदोष कहिये १० अर आहारलिये पाछैं दातारकी स्तुतिकरना सो पश्चात्स्तुतिदोष कहिये ११ कोई विद्या दे आहार लैना सो विद्या नाम दोष कहिये १२ मंत्रकरि आहार लैना सो मंत्र नामा दोष कहिये १३ चूर्ण अंजनादि देइ आहार लैना सो चूर्णादिदोष कहिये १४ बशीकरणादि कर आहार लैना सो मूल-कर्म दोष कहिये १५। –

इति उत्पादन दोषः

इन दोषन सहित भया यति आहार ले नाहीं।

अब एषणा दोष कहिये है : आहार सदोष है कि निर्दोप है ऐसी शंका सहित आहार लैना सो संभिन्न (शंकित) दोष कहिये १ चिमटा करि वा भाजनि करि आहार लैना सो मिश्रित (मखस) दोष कहिये २ सच्चित्तवस्तु पर धरया

नोटः— आछेप दोपकू सारचौवीसी मे एसा कहा है कि सयमीन के भिक्षा का आगमन देखि कर गृहस्थ, राजादिकनि का भय तें दान देवै वा पंच लोकनि नें अपनी निन्दा होनेके भय तें साधू कू दान देवै सो आछेद्य दोप जानना ।

– यहा १६ वा दोप छूट गया मालूम होता है ।

आहार लैना सो निहित दोष कहिये ३ सचित्तवस्तु सूं ढका हुआ आहार लेना सो पिहित दोष कहिये ४ सचित्त बस्तु करि मिला हुवा आहार लैना सो मिश्रदोष कहिये ५ जो व्यवहार ज़नाय आहार दे तिस आहारका लेना सो व्यवहार दोष कहिये ६ बहुरि सूतकवाला वा रोगी वा नपुंसक वा बालक वा वृद्ध वा गर्भवतीस्त्री वा अकेली स्त्री वा अग्न्यादिक का जलावनहारा वा घर मंडपादिक का चुननेवाला वा धोवने वाला वा विलेपश्नानादि करने वाला वा रोवते बालक कों छोड़िआवै वा ऊंचे नीचे क्षेत्र विषैं तिष्ठते स्त्री पुरुष तिनके हाथ करि दिया हुवा आहार लेना सो दायकदोष कहिये ७ जिनके वर्णादिक फिरैं नाहीं ऐसे अन्नजलादिक तिनका ग्रहण सो अपरिणति दोप कहिये ८। खटाई आदि करि लिप्त दातारका हाथ होय वा भाजन होय तौं तिसकरि आहार लैना सो लिप्तदोष कहिये ९ जिनके रसादिक गल गये, ऐसे तंदुलादिक तिस आहारका ग्रहण करना सो त्यजन दोष कहिये १० इति एषणा दोषः

बहुरि स्वादके अर्थि शीत उष्णादिक वा क्षार, आम्ल, तिक्त, मिष्ट आदि वस्तुनिका मिलावना सो संजोजन दोष है १ आहार आसक्त होय ग्रहण करि दातारका जस करै, सो अंगार दोष कहिये २ स्वाद रहित आहार न ग्रहै, दातारकी निंदा करै सो धूम्र दोष कहिये ३ मर्यादा उल्लंघि आहार लैना, सो अप्रमाण दोष है ४। इस प्रकार सोलह उद्गम दोप १६, सोलह उत्पादन दोप १६, दश एषणा दोष १०, चार संयोजनादि दोष ४ ऐसे छियालीस दोष आहार के टालै, वा अंतरायटालै। शरीर का विष्टापतन १ परंदादि (?) अशुचिवस्तु करि लिप्त देखै सो औच (?) कहिये (२) छर्दि कहिये बमन करै तौ (३) रोधन कहिये कोई रोके तौ [४] रुधिरादि सप्तधात दर्शन [५] मलमूत्रादि स्पर्शन वा दर्शन (६) अश्रुपात कहिये आपकै कोई मोहादिकको कारण पाइ अश्रुपात होय वा कोई निकटवर्ती रोवै तौ [७] ज़ालधैं ? प्रामृष कहिये कोईप्रकार जंघा नीचौ हाथ लगि जाय तौ [८] जानूपरवित कर्म कहिये गोंडा करि कोई कर्म होयजाय तौ [९] नाभिअधो निगमन कहिये नाभिके नीचै नीचै होय निकलना होय तो १० प्रत्याख्यान कहिये त्यजन करि वस्तु कौ ग्रहण होय जाय तो ११, आपकरि या अन्यकरि कोई जीवका मरण होय

जाय तौ १२ काकादिक ग्रास लेय जाय तो १३ पाणिपात्रादि पिंडपतन कहिये पाणिपात्र थकी ग्रासगिरपड़ै तो १४ पाणिपात्रादि जंतुवध कहिये पाणिपात्र विषैं कोई जंतु आय मरै तो १५ उपसर्ग होय तो १६ तहां तरे जीवगमन कहिये दोनों पगां बीच होय कोई पंचेन्द्रिय जीव निकसि जाय तौ १७ भाजन संपात—आहार देनेवाले के हाथसूं भाजन गिरपड़े तो १८ उछाट कहिये स्व उदर थकी मल निकल पड़े तो १९ पिश्रिवन (?) कहिये स्व उदर थकी मूत्रस्रवै तो २० अभोजन ग्रह प्रवेश कहिये चांडालादि के ग्रह विषैं प्रवेश होजाय तो २१ पतन कहिये मूर्च्छा आदि से गिरपड़ना होय जाय तो २२ उपवेशन कहिये कोई प्रकार वैठना होय जाय तो २३ श्वसंदष्टि (दृष्टि) कहिये स्वानादि काट खाय तो २४ भूमिस्पर्श कहिये भूमिका स्पर्श होय जाय तो २५ न (नि) ष्ठीवन कहिये श्लेष्मादि खेपै तो २६ स्व उदरथकी कृम्यादि निर्गमन कहिये स्व उदर थकी गिंडोला निकसि पड़ैं तो २७ अदत्तग्रहण होय जाय तो २८ ग्रामदाह कहिये लाय लागै तो २९ (अ) परिहार कहिये आपको वा पर कों शस्त्रादिक का घाव लागै तो ३० पादग्रहण कहिये पाद थकी वस्तु उठाय ले तो ३१ कर ग्रहण कहिये हाथ थकी भूमि सों वस्तु उठाय लेय तो ३२ दाताराश्रित रोग मृत्यु आदि दुःख ३३ पड़िगा-हन हारे के वस्त्र अयोग्य अशुद्ध होंय ३४ चतुर्विध संघ कों उपसर्ग होय ३५ साधर्म्मीको संन्यास मरण सुनै ३६ चैत्य चैत्यालय शास्त्रजीकों विघ्न होय ३७ राजादि महंत पुरुषन का मरण होय ३८ हस्ती घोटकादि वड़े तिर्यंच का मरण दृष्ट पड़ै ३९ कलह होय संग्राम होय ४० प्रजाभय कंप होय ४१ डाखादिक उपजैं ४२ पाणिपात्र विषैं नखरोमादि निसरैं ४३ अशुचि वस्तु का स्मरण ४४ गंडूरा करन-४५ चांडालादिक मनुष्य मार्जार कूकर शूकर खर मूषकादि का स्पर्श होय-जाय ४६ अंजुलिमोचन ४७ मौन मोचन ४८ अशुद्ध हिंसक कर्कश बचन सुनै ४९ बहुरि चाकी चलती ५० चूल्हो बलतो ५१ खोदतो ५२ सिल बांटतो ५३ कुपास पेलतो ५४ मांटीपनतो ५५ रोष कर्म करतो ५६ गोवर थापती ५७ मांटी मलती ५८ शिर न्हावती ५९ शिरबांधिती ६० जूवांदिक काढती ६१ अप्रासुकपानी ६२ नाज सूकतो ६३ मांतनो फाटो, करवो फोड़ो ६४ इत्यादि दृष्टि पड़ै इन ६४ अंतरायनकूं टालै औरभी अयोग्य अंतराय होंय तो तिनकौं टालि आहार

प्रासुक ले सो चारित्र का साधक जो शरीर ताकी स्थितिके अर्थ विपय रहित नीरस आहार ले, नीरस कहिये इष्ट भोजनादि मिलै तो तासों राग न करै, अनिष्ट मिलै तो तासों द्वेषभाव न करै, एसा अजाचीक व्रत धारतां संता लाभ अर अलाभ है वरावर जाकै श्रावकके घर जाय यथाविधि आहार ले सो एषणा समिति कहिये। बहुरि तीन धर्मोपकरण राखै, शौच क्रिया के अर्थ काठ वा एक किस्म के फल को कमंडल राखै, सो शौचोपकरण कहिये। अर दया के अर्थ कोमल मोर पिछिकादि राखै सो दया उपकरण कहिये। अर जो पहले गृहस्थ अवस्था विषैं कोई शास्त्र भरायो नाहीं अर ज्ञानवैराग्य का जोर सों मुनिपद अंगीकार कियो सो मुनि मुन्याचार के बोध के अर्थ मुन्याचारको शास्त्र यथाविधि सों राखै, बहुरि मुन्याचारको बोध होय गया पाछे न राखै, बहुत शास्त्र राखै नहीं, एसैं ए तीन उपकरण राखै तिनकों देखि पुंन (पोंछ) धरना देखि पूजि (पोंछ) उठावना सो आदान निक्षेपण समिति कहिये । बहुरि शरीर के मलमूत्रादिक देखि शोधि पूजि [?] क्षेपना सो प्रतिष्ठापना सिमीत कहिये । इति पंच समिति ।

अब पंच इंद्रियन का निरोध कहिये हैं:—जहां अष्ट विषय स्पर्शनइंद्रियन के शीत १ उष्ण २ स्निग्ध ३ रूक्ष ४ कोमल ५ कठोर ६ हलको ७ भारयो ८ । पंच विषय रसना इंद्रियन के मिष्ट १ कटुक २ अम्ल ३ तिक्त ४ कषाय ५ । बहुरि दोय विषय नासिका इंद्रिय के-सुगन्ध १ दुर्गंध २ । बहुरि पंच विषय नेत्रेन्द्रियन के-शुक्ल १ कृष्ण २ आरक्त ३ हरित ४ पीत ५ । बहुरि सप्त विषय श्रोत्रेन्द्रिय के षडज १ मध्यम २ रिषभ ३ गंधार ४ पंचम ५ धैवत ६ निषाद ७ इन पंच इंद्रियन के सत्ताईस विषय तिन विषैं राग—द्वेष न करना सो पंच इंद्रिय का निरोध कहिये। बहुरि षट् आवश्यक करना—

षटावश्यक दिनप्रति अवश्य करना। समता कहिये बुद्धिपूर्वक समभाव करना, सर्व पदार्थनकों राग—द्वेष रहित जानना १ बहुरि वंदना कहिये एक तीर्थंकर कों नमस्कारादि वा स्तवन करना २ बहुरि स्तुति कहिये चौबीस तीर्थंकरों का स्तवन करना ३ प्रतिक्रमण कहिये आहार—विहारादि विषैं प्रमाद करि कोई दोष लागा होय सो मेरा मिथ्या

हूजो सो पडिकोणो कहिये ४ आहार—विहारादि विषैं दिन प्रति कोई बस्तु कोई प्रवृत्तिका नियम रूप वा यम रूप त्याग करै सो प्रत्याख्यान कहिये ५। दिन प्रति एक बार शरीर का ममत्व का छोड़ि निरपृह होय तिष्ठना सो कायोत्सर्ग कहिये ६। बहुरि भूमिशयन कहिये रात्रिके पिछले प्रहर प्रासुक पृथ्वी विषैं अल्पनिद्रा सहित सोवैं जंतुरहित पृथ्वी को देखि पिच्छिका सों पूंछि शयन करै पिच्छिकासों जवि ही कों तो टालै अर जो कदाचित् कंकर कंटकादि कौं टारे सो पिच्छिका परिग्रहके भाव कों प्राप्त होय, तब मूलगुण का छेद होय मुनिपद का अभाव होय १ बहुरि कदाकाल भी अंतर बाह्य करि शुद्ध अैसे महामुनि ते स्नान न करैं जो कदापि विष्टादिक शरीर विषैं आय पड़ैं तो आप तो हस्त थकी दूर नाहीं करै जावत शरीर विष्टालिप्त रहै तावत् सर्व क्रिया रहित होय ध्यानाध्ययन कर रहित तिष्ठै, अर जो अन्य कोई मुनि गृहस्थादिक शरीर तें विष्टादिक दूर करै तब कमंडल के प्रासुक जलतें दंडस्नान करै। दंडस्नान कहिये खडा होय मस्तक ऊपर जल क्षेपै सो जल शरीर चरन परसि पृथिवी तल विषैं प्राप्त होय वा चांडालादिक का स्पर्श होय तहां दंडस्नान करै, और प्रकार स्नान करने का यम रूप त्याग करै। कदाचित् स्नान करतें वा पाद प्रक्षालन करतें जल की शीतलता थकी रागादिक जोडै तो कमंडल परिग्रह के भावकूं प्राप्त होय, तब मूलगुणनका अभाव भयें मुनिपद जाता रहै, बहुरि जावत् विष्टादि करि शरीर लिप्त रहै, तावत ग्लानि कषायभाव कों न प्राप्त होय, वस्तु का का स्वरूप विचारे अैसे मज्जन त्याग मूलगुण का ग्रहण करै २। बहुरि सदाकाल नग्न रहै, दशो दिशा सो ही हैं अम्बर जिनकैं अैसे दिगम्वर महामुनी तजी है सर्वप्रकार लौकिक लज्जा जिनने, बालकवत् नग्न मुद्राकों धरैं अैसा नग्न स्वरूप मूलगुण का ग्रहण करै ३। बहुरि केश लुंचे—हस्तअंगुली करि ग्रहण में आवने योग्य केश होंय तब ही निःशंक होय अपने हस्त करि केशनकों उखाडि डारैं, रंचमात्र केशके उपाड़ने विषैं वेदना करि व्याप्त न होय है, उत्कृष्ट दोय मास विषैं, मध्यम तीन मास विषैं, जघन्य चार मास विषैं केशलौचन करै सो केशलौचन मूल गुण कहिये ४। बहुरि दिन प्रति एक बार लघु भोजन उदंड व्रत सहित श्रावक के घर जाय अजांची सर्वदोष अंतराय सहित नीरस करैं सो एकभुक्त मूलगुण कहिये ५। बहुरि पाणिपात्र

करि खड़ा आहार लेय सो पाणिपात्र कहिये अपने दोनों हाथ की अंजुली जोड़करि पात्र करै ता विषैं गृहस्थ भक्तिकरि ग्रास धरै सो ग्रास मुखथकी ग्रहण करै अैसैं ही जल ग्रहण करि जल्थकी अंतर बाह्य मुख और हस्त शुद्ध करि आहार की पूर्णता करै सो खड़ा आहार ग्रहण मूलगुण कहिये ६। बहुरि करा है जावज्जीव दंत धोवन का त्याग जानै अंगुली थकी वा दातुन थकी कोई भी प्रकार दांतनकी पंक्तिको धोवै नहीं अर रंचमात्र भी ग्लानि ताकों नाहीं धारैं हैं अैसा दंत धोवन परिहार मूलगुण का ग्रहण करै है ७। इस प्रकार कहे जे महाव्रत ५ पंच समिति ५ पंच इंद्रियन का निरोध ५ षट् आवश्यक ६ अर सप्त भूमि शयनादिक ७ अैसैं अठ्ठाईस मूलगुण का जावज्जीव प्रतिज्ञा सहित ग्रहण करै है ताही समय गुरु की आज्ञापूर्वक केशनका लौंच करै है इत्यादि मुनियोग क्रियाका ग्रहण करि दीक्षाके लाभ योग्य समस्त क्रिया की पूर्णता करि पद्मासन वा कायोत्सर्ग आसन धारि तिष्ठै ताहि समय अप्रमत्त है नाम जाका अैसा सप्तम गुणस्थान को प्राप्त होय है, अर ताहि समय सूं लगाय अंतर्मुहूर्त पर्यंत समय समय अनन्तगुणी विशुद्धता है, अर असंख्यात गुणी कर्मन की निर्जरा होय है, तापीछे षट् स्थान पतित हानि वृद्धि लिये समय समय परिणामों की विशुद्धता है अर तिन्हीं के अनुसार समय समय चतुःस्थान पतित हानि वृद्धि नैं लियां गुणश्रेणी कर्मन की निर्जरा होय है जातैं अन्तर्मुहूर्त पीछे अैसे ही वृद्धिरूप परिणाम रहते नाहीं। बहुरि ता समय देखैं है वृद्धिरूप परिणाम जहां जे स्वजन परजन मनुष्य हैं ते नाना अवस्था कों प्राप्त होय हैं जे स्वजन सम्यक्त ज्ञानी धर्मात्मा हैं ते तो अैसा विचारैं हैं जो इनका बडा भाग्य जो सर्व कल्याणकारिणी यो जिनेश्वरी दीक्षा हम सारिखे कायरजन कूं अलभ्य अर तिनकी नाना भांति स्तुति करैं हैं, अर आपकूं धिक्कार मानैं है, हमारा अैसा भाग्य कब होयगा जो हमभी इस दशा को प्राप्त होंयगे अर हमारा भी बडा भाग्य है जो हमारे कुल विषैं मुनिपद के धारक पुरुष भये, अर जे स्वजन मोही जीव हैं ते मोहकरि व्याप्त भये अश्रुपातकरि भीज गया है सर्व अंग जिनका, अर व्याकुलभया है चित्त जिनका, अर कंपायमान है शरीर जिनका, अर वारंबार मुनि प्रति दृष्टि धरता संता अत्यन्त मोह को प्राप्त होय है। बहुरि केई पर जन आश्चर्यकों प्राप्त भये हैं, केई करुणा

को प्राप्त भये केई-ज्ञानभावको प्राप्त भये हैं, कोई शोकभावको प्राप्त होंय हैं, इत्यादिक नानावस्थाकूं प्राप्त होत संतै अपने घर दिशा गमन करै हैं । अब वे महामुनि मूलगुणनकों पालते संतै उत्तर गुणनकों प्राप्त होय हैं तहां द्वादशप्रकार तपकौं धारै हैं । कभी तो अनशन तपकों धारै हैं, अनशन कहिये कभी तो एक उपवास करैं हैं अर कबी (भी) दोय तीन चार पांच आदि ५कपक्ष एकमास दोयमास चतुर्मास पट्मास एकवर्ष पर्यन्त तो विहार की प्रतिज्ञा करैं हैं । बहुरि दूसरा भेद ऊनोदरी कहिये है—ऊनोदरी कहिये ऊन आहार लैं हैं कबी (भी) एकग्रास कभी दोयग्रास आदि अष्टमअंश चतुर्थ अंश अर्धभागपर्यन्त करैं हैं २। बहुरि तीजा तप व्रत प्र (परि) संख्यान करैं हैं, तहां नाना प्रकार प्रवृत्तिकों संख्या धारी आहारकों उतरैं हैं जो आज हमरै ताईं अैसा द्रव्य अैसे क्षेत्र विषैं वा इतने क्षेत्र पर्यन्त वा इतने काल पर्यन्त वा अैसा पुरुष वा अैसी स्त्री अैसे भेषकों धरयां अैसे संबंध सहित जो पड़गाहै तो आहार मोकला है अन्य प्रकार नाहीं ३। बहुरि चौथा रसपरित्यागनामा तप करै है, नानाप्रकार रसविषैं आज हमारे ताईं ए रस लेने अर ए रस न लैना वा सम्पूर्ण रसका त्याग करै सो रसपरित्याग तप कहिये ४। बहुरि पंचम् तप विविक्तशय्यासन—तहां संघकों छोड़ि एकांत स्थानक जाइ शय्यासन करना सो विविक्तशय्यासन कहिये ५ । बहुरि कायक्लेश छठा तप करै, तहां अनेक प्रकार कायक्लेश करै, नानाप्रकार विषमासन धारै, ग्रीष्म ऋतुविषैं धूपकरि तप्तायमान जो पर्वतका शिखर तापर आतापन योग धारि तिष्ठै वा वर्षाकाल विषैं वृक्षनके तलैं जहां अनेक प्रकार डांस मच्छरादिकन का उपद्रव, सासता वृक्षतै जल स्रवै तहां जाय ध्यानाध्ययन करैं हैं, बहुरि कभी शीतकाल समय नदी सरोवर के तीर जाय तिष्ठैं हैं, महाशीतकरि जमगया है जल जहां अर दाह करि भस्म भये हैं बड़े बड़े वृक्ष जहां, एसी शीतका परिसह युक्त ध्यानारूढ़ होय तिष्ठैं हैं । बहुरि अनेक प्रकार विषम तप करैं हैं, अनेक प्रकार चलाया परीसह का ग्रहण करैं हैं इत्यादि कायक्लेश करैं हैं सो कायक्लेश तप कहिये ६ ।

इति भावदीपका विषैं अैसैं छहप्रकार बाह्यतप कहे तिनके उत्तर भेद अनेक प्रकार हैं तिन विषैं अपनी शक्ति

प्रमाण शरीर शोषणके निमित्त द्रव्य क्षेत्र कालभावकी योग्यता देखि ग्रहण करै अर छह-प्रकार अभ्यंतर तप करै। तहां प्रथम प्रायश्चित्त तप कहिये है अपने चारित्रकों जो दोष लागता होय ताकों दोष रहित शुद्ध करै, सो पराश्चित्त (प्रायश्चित्त) कहिये, सो प्रायश्चित्त नव प्रकार है—गुरां निकट जाय अपनी निंदा करता संता अपने चारित्रकों अपने प्रमाद करि लागा जो दोष ताका प्रकाश करना, सो अलोचना कहिये १ बहुरि अपनी आपही निंदा करनी दोषथकी भयभीत होना, अपनी प्रमाददशा कौं निंदना प्रमाद करि यह दोष मोकूं लागा है सो मिथ्याहूजो इत्यादि सो प्रतिक्रमण कहिये २। बहुरि आलोचना प्रतिक्रमण दोऊ करना सो उभय कहिये ३। बहुरि प्रमाद दशाकों उत्पन्न होतां अपने चारित्रको दोषयुक्त होता देखि प्रमाददशाकों मेटि ज्ञानसहित होय इसका विचार करै तहां दोषका अभाव करना सो विवेक कहिये ४। बहुरि शरीरादि पर द्रव्य रूप बाह्य अभ्यंतर परिग्रहसों निस्प्रे (स्पृ) ह होइ दोय प्रकार निराकरण करना कायोत्सर्ग धरि तिष्ठना सो व्युत्सर्ग कहिये ५। बहुरि नानाप्रकार तप करि दोषका निराकरण करना सो तप कहिये ६। बहुरि दीक्षाका श्रीगुरुकी आज्ञा पूर्वक छेदकरि अवशेष दोषका निराकरण करना, श्रीगुरु आज्ञा करैं जो तुह्मारे ताईं इस दोषके लागया करि तिहारी दीक्षा इतने कालकी तौ अभावकों प्राप्त भई अर इतने कालकी अवशेष रही, ताही दिन सों आपकों अवशेष रह्या काल तितने ही कालकी दीक्षा मानै, इस कालसे पहलेका दीक्षित मुनि होय ते मुनिकी दीक्षा छेदनभई थी ता पहली तौं इनको पहले नमस्कार करते थे, अब उनकौं पहले ए नमोस्तु करैं, सो छेद कहिये। बहुरि कोई दोष अैसा लागा होय ताका श्रीगुरु अैसा दंड दें जो थें इतना काल ताईं संघ तैं बाहिर तिष्ठौ, औंधी पिच्छिका हस्त विषैं धारौ, तुह्मारें ताईं नमोऽस्तु कोई न करैगा, तुम सबकौं नमोऽस्तु करो, अट्ठाईस मूलगुण भलीभांती पालौ, नानाप्रकार तपश्चरणादि उत्तर गुण विषैं आरूढ़ होय सावधानी तें प्रवर्तो, तब तुह्मारा दोष निर्वृत्त होयगा, सो श्रीगुरु की आज्ञा प्रमाण करि दोष का निराकरण करना सो परिहार कहिये ८। बहुरि कोई दोष अैसा लागा होय ताका गुरु अैसा दंड दें कि जो इस काल पर्यन्त तौ तिहारी दीक्षा का अभाव भया अब

नवीन दीक्षा कों ग्रहण करो, ऐसा श्रीगुरुकी आज्ञा प्रमाण अतीत दीक्षाका अभाव मानि फेर नवीन दीक्षाकों ग्रहण करि दोषका निराकरण करना सो उपस्थापन कहिये । इति प्रायश्चित्त तपः ।

अब दूजा विनय तप कहिये हैः—विनय तप पांच प्रकार है भलीभांति श्रद्धान विषैं दृढ़ रहना चल मल अगाढ़ादि दोष न लगावना, सो दर्शन विनय कहिये १। बहुरि संशम विपर्यय अनध्यवसाय रहित पदार्थनकों यथार्थ जाननां सो ज्ञानविनय कहिये २। बहुरि निर्मल दोष रहित चारित्रका पालना सो चारित्रविनय कहिये ३। बहुरि मोक्ष के अर्थ शास्त्रोक्त तप का यथाविधि मन वचन काय विषैं निश्चल होय पालना सो तप विनय कहिये ४। बहुरि दर्शन ज्ञान चारित्र तपके धारक ऐसे जे पंच परमेष्ठी वा शास्त्र वा श्रावक श्राविका अर्जिका तिनकी भक्ति करनी बंदना करनी स्तवन नमस्कारादि करना सो उपचार विनय कहिये ५। इति विनय तपः

अब तीजा वैय्यावृत्य नामा तप कहिये हैः—तहां वैय्यावृत्य दशप्रकार है–दीक्षा शिक्षाके दायक ते तौ आचार्य कहिये १ शास्त्रके पढ़ावनहारे ते उपाध्याय कहिये २। बहुरि उग्रोग्र तपके करनहारे ते तपस्वी कहिये ३। अपने दीक्षक [क्षित] शिक्ष्य मुनि ते कहिये ४ । बहुरि रोगकरि ग्रसित ते ग्लान कहिये ५। अर अन्य अनेक मुनिन का समूह ते गण कहिये ६। बहुरि अपने गुरु के वा अपने गुरुनि के शिष्य ते कुल कहिये ७। बहुरि अपने संघ विषैं विचरते संधाहड़ा के मुनि ते संघ कहिये, संघाहड़ा कहिये ८। बहुरि वने काल के दीक्षक (क्षित) ते साधु कहिये ९। बहुरि ऋद्धि ज्ञानादियुक्त ते मनोज्ञ कहिये १०। ऐसैं दश प्रकार मुनि तिनका उपकार करना तिन विषैं आय प्राप्त भये जे नानाप्रकार उपसर्गपरीसह तिनका मन वचन काय कृत, कारित अनुमोदना करि दूर करना अनेक प्रकार चाकरी करनी सो वैय्यावृत्य तप कहिये ३। बहुरि जहां श्रवण १ धारण २ विचारण ३ आम्नाय ४ अनुप्रेक्षा ५ इन पंच अंगन सहित शास्त्राभ्यास करना सो स्वाध्याय तप कहिये ४ । अर नानाप्रकार आसनादि धार काय सों निर्ममत्व होना सो व्युत्सर्ग तप कहिये ५।

अब छठ्ठा ध्यान नामा तप कहिये है—तहां ध्यान चार प्रकार है—आर्तध्यान १ रौद्रध्यान २ धर्म्यध्यान ३ शुक्लध्यान ४। एकाग्रचिंता निरोध सो ध्यान। एक पदार्थ या उसकी पर्याय—तहां तिसकूं अग्रेसर करि तिसविषैं चित्त का रोकना सो ध्यान कहिये। अब प्रथम ही आर्तध्यान कहिये ताका चार भेद हैं—तहां इष्टका वियोग होतें जो चिंताका होना सो इष्टवियोग आर्तध्यान कहिये १। बहुरि अनिष्ट के संयोग विषैं जो चिंता का होना सो अनिष्ट संयोग आर्तध्यान कहिये २। बहुरि जो शरीर विषैं रोग होतें चिंता होय सो पीड़ा चिंतवन आर्तध्यान कहिये ३। बहुरि इसभव तथा परभव संबंधी जो भोगोंकी चाह प्रवर्तै सो निदानवंध आर्तध्यान कहिये ४। इति

अब दूसरा रौद्रध्यान चार प्रकार कहिये हैः—जहां जीवन की हिंसा करि आनंद मानना सो हिंसानंद रौद्रध्यान कहिये १। जहां झूठ बोलतां बचन की सिद्धि हुवां आनंद मानना सो मृषानंद रौद्रध्यान कहिये २। बहुरि पराया धन चोरि आनंद मानना सो स्तेयानंद रौद्रध्यान कहिये ३। परिग्रह का संग्रह होतां आनंद मानना सो परिग्रहानंद रौद्रध्यान कहिये ४।

बहुरि धर्म्यध्यान चार प्रकार है—जहां केवली की आज्ञा अनुसार श्रद्धान ज्ञान रूप प्रवृत्ति करनी वा पुनः २ जिनेन्द्रदेव की आज्ञा कूं विचारना तिनकी आज्ञा उलंघि कोईभी कार्य न करना सो आज्ञाविचयधर्म्यध्यान कहिये १। बहुरि जहां पुनः पुनः कर्मन के नाशका उपाय विचारना सो अपाय विचयधर्म्यध्यान कहिये २। बहुरि जहां जघन्य मध्यम उत्कृष्ट अनुभागकों धरैं उदय कों प्राप्तभये शुभाशुभकर्म तिनके अनुसार उत्पन्न भया सुख और दुःख ता विषैं शिथिल न होना कर्मों का विपाक विचारना वाह्य पदार्थन सो रागद्वेष न करना सो विपाक विचयधर्म्यध्यान कहिये ३। बहुरि जहां जिन आज्ञानुसार तीनलोक का स्वरूप विचारना सो संस्थान विचयधर्म्यध्यान कहिये ४। अब प्रकार शुक्लध्यान कहिये है—जहां पृथक् कहिये भिन्न ध्याता ध्यान ध्येय धियति (ध्याति) भाव कों धरैं वितर्क कहिये भाव श्रुतज्ञानका बल करि द्रव्य गुण पर्यायकों बीचार कहिये पलटन क्रिया सहित राग द्वेष रहित ध्यावे मनयोग, वचनयोग, काय-

योग तीन योगन सों ध्यावै मनयोगसों ध्यावैं फिर वचनयोग सों ध्यावै ताकूं छोड़ि काययोग सों ध्यावै ऐसें योग सों योगान्तर शब्दसों शब्दान्तर अर्थ सों अर्थान्तर गुणसें गुणान्तर पर्यायसों पर्यायान्तर ऐसें पलटनक्रिया सहित ध्यावै सो पृथक्त्ववितर्कविचार नामा शुक्लध्यान कहिये १। बहुरि जहां एकत्व कहिये ध्याता ध्यान ध्येय धियति (ध्याति) के द्वीय ? भाव कों दूर करि तिन विषैं भेदभावकों छोड़ि अभेदरूप वितर्क कहिये भावश्रुतज्ञानके बल करि अवि-चार कहिये पलटन क्रिया रहित कहिये द्रव्य गुण पर्यायन विषैं जाकों ध्यावै है ताहींको ध्यावै है ताकों छोड़ि और कों नाहीं ध्यावै और जा जोग सों ध्यावैं ताही एकयोग सों ध्यावै ऐसें राग-द्वेष रहित पदार्थनकों ध्यावै सो एकत्व वितर्क अवीचार नामा शुक्लध्यान कहिये २। बहुरि जहां केवली भगवान आय के अंतर्मुहूर्त पहली मन वचन काम के योगन कूं सूक्ष्म करै हैं, तहां योगनकी प्रवृत्ति महासूक्ष्म होय सो केवलीके एक काययोग तें ही होय सो सूक्ष्म क्रिया प्रतिगाति नामा शुक्लध्यान है ३। बहुरि जहां योगन की सर्वक्रिया का अभाव होय ऐसा अयोग केवली गुणस्थान तहां योग रहित ध्यान होय है सो व्युपरति (त) क्रिया निरवृति [—) नामा शुक्लध्यान कहिये ४। ऐसें ए चार ध्यान के सोलह भेद हैं सो ए ध्यान मिथ्यात्व अर सासादन दोय गुणस्थान विषैं तो चार आर्तध्यान चार रौद्रध्यान ऐसें आठ ध्यान पाइजे (ये) बहुरि तीजे मिश्रगुणस्थान विषैं आठ तो आर्तरौद्र अर आज्ञाविचयधर्म्यध्यान एसैं नौ ध्यान पाइये। बहुरि असंयतचतुर्थ गुणस्थान विषैं आठ तो आर्तरौद्र अर आज्ञाविचय अपायविचय दोय धर्म्यध्यान ऐसें दशध्यान पाइये। बहुरि देशसंयम (त) पंचमगुणस्थान विषैं आठ तौ आर्तरौद्र अर आज्ञाविचय अपायविचय संस्थानविचय तीन धर्म्य-ध्यान ऐसें एकादश्‌ ्यान पाइये। बहुरि प्रमत्त नामा षष्ठम गुणस्थान विषैं इष्टवियोग अनिष्टसंयोग पीड़ा चिंतवन तीन तो आर्तध्यान अर चार धर्म्यध्यान ऐसें सप्तध्यान पाइजै [इये] बहुरि अप्रमत्तगुणस्थान विषैं चार धर्म्यध्यान ही पाईजै (इये)। बहुरि अष्टम अपूर्वकरणगुणस्थान सों लेइ क्षीणकषाय बारहैं गुणस्थान के असंख्यातभाग विषैं एकभाग छोड़ि बहुभाग पर्यन्त उपसमश्रेणी वा क्षपकश्रेणी पर्यन्त विषैं पृथक्त्ववितर्क वीचार नामा शुक्लध्यान के प्रथम पायो

पाइये । वहुरि अनशेष क्षीणकषाय गुणस्थान का असंख्यातवां एकभाग विषैं एकत्ववितर्क अवीचार नामा शुक्लध्यान को दूसरो पायो पाईजै । वहुरि सयोगकेवली गुणस्थान विषैं तीसरा पाया अयोगी विषैं चौथा पाया पाइजै । एसें ए वारह प्रकार वाह्य अभ्यंतर तप कहे तिन विषैं इस क्षयोपशम चारित्री के और एकादश तप कौं सर्व ही संभवै अर ध्यान नामां तप विषैं चार रौद्रध्यान अर एक निदानवंध ए पांच ध्यान तो संभवैं नहीं अर तीन आर्तध्यान अर चार धर्म्यध्यान अैसें सप्तध्यान संभवैं है । अर गुणस्थान प्रमत्त अप्रमत्त याके होय ही हैं, सो इन दोय गुणस्थानन का काल एक एक का जघन्य एकसमय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है, सो एक अप्रमत्त का प्रमत्त विषैं, अर प्रमत्त का अप्रमत्त विषैं गमनागमन होय है, तहां अप्रमत्त गुणस्थान विषैं आरूढ होय है तहां तो चार धर्म्यध्यान हैं अर प्रमत्त विषैं उतरै है तहां चार धर्म्यध्यान अर निदानवंध विना तीन आर्तध्यान एसें सप्तध्यान पाईजे हैं । वहुरि तेरा प्रकार चारित्र रूप प्रवृत्ति करैं है । पंचमहाव्रत ५ पंच समिति ५ तीनगुप्ति ३ मनोगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति । वहुरि वाईस प्रकार परीषहों को सहे है सो ही कहिये है—जहां एक उपवास दोय उपवास वा तीन उपवास वा चार उपवास पांच उपवास आदि पक्ष का महीना का दोयमास का चार मास का छहमास का करि अर पारणा के निमित्त नगर ग्रामादिक विषैं गये तहां भोजन का लाभ भया नाहीं अंतराय भया तव वधी (वढ़ी) जो क्षुधा की वेदना ताकों समभावां सों सहना, लाभ—अलाभ विषैं हरष—विषाद नाहीं करैं, भूंख की वेदना सहिवो सो क्षुधापरीसह कहिये १ । प्यासकी वाधा सहिवो सो तिरसा परीसह कहिये २ ।

शीत की वेदना सहिवो सो शीतपरीषह कहिये ३ । अर अग्नि धूप की वेदना साहिवो सो उष्ण परीसह कहिये ४ । वहुरि वर्षा काल विषैं श्रावण के महीने की अत्यन्त डरावनी रात्रि जामें चारूं तरफ तो विजली के चमके होय रहे हैं अर मूसलधार जल वरसै वाजती जो झंझावायु सो आरि के पारि निकसिजाय तो वह ध्यानी वीतरागी, वृक्षमूल विषैं ध्यानारूढ़ तिष्ठै है तहां डांस मांछर सर्प शृगाल गिंडोला आदि जीवनि करि किया जो उपसर्ग ताहि समभावां

सू सटना चलाचल शरीर मन मैं न होना सो दंशमशक परीसह विजयी कहिये ५। बहुरि नग्नमुद्रा विषैं कोई प्रकार
भी लज्जा कौं न प्राप्त होना सो नग्नपरीषह कहिये ६।

बहुरि अनेकप्रकार अनिष्ट का संयोग जो कांटादिक वा किरकिरादि आदि रेणु, लोचन विषैं आय प्राप्त होय इत्यादिक विषैं जो अरतिभाव कौं न प्राप्त होय सो अरति परीषह कहिये ७। बहुरि अनेक प्रकार तरुणी रूप की खानि स्त्री कामचेष्टा करै तहां विकारभाव कौं न प्राप्त सो स्त्रीपरीषह कहिये ८। बहुरि गमन करतां ने कंटक कंकर आदि चुभै वा महाधूप शीतादि विषे धरती अत्यन्त शीत उष्णता कौं प्राप्त भइ ता विषैं पांव धरतां खेद नाहीं मानै सो चर्या परीसह कहिये ९ बहुरि आसन मांड़ि वैठै हैं तहां वैठक के तलैं अनेक उपद्रव का कारण कंटक-कंकरादि आय जाय हैं तिनकी अत्यन्त वेदना होतें भी आसन कौं चलाचलैं नाहीं करैं हैं सो निषद्यापरीसह कहिये-१०। बहुरि जब रात्रि के पिछले पहर अपने शरीर कौं संकोचि एक करवट अल्प निद्रा सहित सोवैं हैं तहां शरीर के तलैं आय गये जे कंकर कंटकादिक ताकी घोर बेदना होतां भी शरीर कौं चलाचल नाहीं करैं हैं सो शय्यापरीषह कहिये ११। बहुरि केई दुष्ट जीव अनेक प्रकार गाली आदि करकस (कर्कश) वचन मर्मच्छेद वंचन कहैं हैं तहां क्रोधभाव को प्राप्त न होना, छमा न छोड़ना सो आक्रोश परीसह कहिये १२। बहुरि केई दुष्ट जीव आय मारैं हैं बांधैं हैं, प्राणनाशकरैं हैं, तहां बहुत वेदना होत संतां क्रोध कौं रंचमात्र भी नाहीं विस्तारैं हैं, सो बधपरीसह कहिये १३ बहुरि अनेकप्रकार शीतउष्णादिक की व क्षुधातृषादिक की वा रोगादिक की वेदना होतसंतैं अजाची रहैं हैं कोई प्रकार कोई ही सौं ज्याचना नाहीं करैं हैं सो याचना परीषह कहिये १४। बहुरि जहां अनेक उपवासों के पारणे आहार को गये हैं अर जहां आहारका अलाभ भया तहां रंचमात्र भी खेदकौं नाहीं प्राप्त होय हैं सो अलाभ परीषह कहिये १५। बहुरि शरीर विषैं नानाप्रकार दुष्ट रोग होत संतै कंपायमान न होय हैं, वेदना कौं जीतैं हैं, सो रोगपरीसह कहिये १६।

बहुरि चर्या शय्या आसन विषैं अनेकप्रकार तीक्ष्णकांटे शरीर पर चुभैं हैं तिनकी बेदना कों जीतैं हैं, सो तृणस्पर्श परसिह कहिये १७। बहुरि जावज्जीव है स्नान का त्याग जिनकैं अर शरीर विषैं पसेव रजके संबंध करि बहुत मैल जम जाय है, ताकी अत्यंत बेदना होय है सो नाहीं गिनैं हैं सो मलपरसिह कहिये १८। बहुरि मुनि महाराज कों कोई धर्मात्मा जीव तो सत्कारादि नमस्कारादि करैं हैं, अर कोई जीव अपमान करैं हैं, सो तिन दोनों विषैं राग—द्वेषादि नाहीं करैं हैं समभाव व्रत कौं नाहीं छोड़ैं हैं सो सत्कार पुरस्कारादि परीसह कहिये १९। बहुरि अनेक प्रकार शास्त्राभ्यास करैं हैं, अर श्रुतज्ञानावरणी कर्म के उदय तैं शास्त्र स्फुरायमान होय नाहीं, तहां कर्म का विपाक विचारैं, वेदना कौं नाहीं भजें हैं, सो प्रज्ञा परीसह कहिये २०। बहुरि घनाकाल तप करतैं होय गये अर अवधि--ज्ञानादि उत्पन्न नाहीं भये तहां मुनि खेद कों प्राप्त न होंय सो अज्ञानपरीसह कहिये २१। बहुरि बहुत काल मुनि--पद विषैं प्रवर्तैं भये अर बहुत प्रकार तपश्चरणादि करे अर कोई रिद्धि चमत्कारादि प्रगट न भया तौ भी तिनके परिणामन विषैं कोई भी प्रकार भ्रांति नाहीं होय सो अदर्शनपरीसह कहिये २२। ऐसैं बाईस परीसह कहीं। तिन विषैं ज्ञानावरणी कर्म के उदय तैं प्रज्ञापरीसह अर अज्ञान ये दोय परीसह उत्पन्न होंय हैं। तहां दर्शनमोह कर्म के उदय तैं अदर्शनपरीसह होय है। अर अन्तराय कर्म के उदय तैं एक अलाभ परीसह होय है। बहुरि चारित्रमोह के उदय तैं नग्न--अरति--स्त्री--निषद्या--आक्रोश--याचना--सत्कारपुरस्कार ये सप्त परीसह होंय हैं। बहुरि अवशेष एकादशपरिसह वेदनी कर्म के उदय तैं जाननी--क्षुधा १ तृषा २ शीत ३ उष्ण ४ दंशमशक ५ चर्या ६ शय्या ७ बध ८ रोग ९ तृणस्पर्श १० मल ११।

इन बाईसपरीसह विषैं अनिवृत्तिकरण नवेंगुणस्थान पर्यन्त तो सर्व परीसह पाईये, अर सूक्ष्मसाम्पराय दशम गुणस्थान विषैं तथा उपशांतकषाय अर क्षीणकषाय इन तीन गुणस्थानन विषैं मोहकर्म के उदयके अभाव होतैं मोहकर्म सम्बंधी आठ परीसह न पाईये, चौदह ही पाईजैं (पाइये)। बहुरि ज्ञानावरणी अर अंतराय का नाश

होतैं तीन परीसहका अभाव होय है, तब वेदनीसंबंधी एकादश परीषह सयोग केवली अयोगकेवली गुणस्थान विषैं उपचार करि पाईजैं, तातैं जहां वेदनी के सहकारिकारण मोहकर्म का अभाव है तातैं वा असातावेदनी के द्रव्य विषैं शक्ति के अनुभाग का अभाव है, बहुरि असातावेदनी का द्रव्य प्रदेश उदय होय षिर जाय हैं तातैं परीसह कार्यरूप होय दुःख को नाहीं प्राप्त करै है, तातैं वेदनी के उदय अपेक्षा इस संबंधी एकादश परीसह को सद्भाव कह्यौ है, परन्तु कार्यभूत नाहीं, तातैं उपचार करि कही है एसा जानना । बहुरि बाईस परीषह विषैं एकैं काल एक जीव कें होंय तौ एकनें आदि दे दोय तीन आदि उगणीसपर्यन्त होंय, यातें शीत—उष्ण विषैं एकैं काल एक ही होय बहुरि निषद्या चर्या शय्या इन तीन परीसहन विषैं एकै काल एक ही होय, दोय न होंय, जो एकै काल बहुत होंय तो उगणीस परीसह को सद्भाव होय । इति परीसह वर्णनम् ।

बहुरि चार प्रकार उपसर्ग कों सहै—देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत, अकस्मात् कहिये वज्रपात पाषाण काष्ठादिक तैं उत्पन्नभया तौ या प्रकार परीसह उपसर्ग को सहै, मुनि अपने चारित्र तैं तो च्युत न होय है, निरवांछिक मोहवासना रहित अडिग मेरुवत होत संतै सहै है, ता करि कर्मन की निर्जरा करैं है । अब तें मुनि द्वादश प्रकार तपवृत्ति विषैं वा तेरा प्रकार चारित्र विषैं प्रवर्तता संता वा परीषह उपसर्गसहने विषैं कर्म के उदय तैं प्रमाद करि अपने सामायिक चारित्र सों परिणाम चलै तो ताके अर्थ छेदोपास्थापना संयम कों निरंतर धारैं हैं, सो छेदोपस्थापनसंयम को स्वरूप कहैं हैं—सामायिक चारित्र को धारि बहुरि प्रमाद तै संखलित (स्खलित) होय साधनक्रिया कों प्राप्त हुवा तिस सापद्य पर्याय कों छोड़ि अपने सामायिक चारित्र विषैं तिष्ठना सो छेदोपस्थापना कहिये, वा सावद्य जो पाप ताकों छेदि अपने सामायिकधर्म विषैं स्थापित होना सो छेदोपस्थापना कहिये । वा अपना सामायिक चारित्र छेदभया ताकों बहुरि स्थापन[1] सो छेदोपस्थापना कहिये । एसें सामायिक छेदोपस्थापना जो दोय संजम कों धारता संता अपने दश विशेषण सहित जो आत्मीक दशलक्षणधर्म ताकों पुष्ट करै हैं ताकी सिद्धि करैं हैं । धर्म के दश विशेषण कहिये लक्षण सो

कहिये है—उत्तम क्षमा १ मार्दव २ आर्जव ३ सत्य ४ सौच ५ संयम ६ तप ७ त्याग ८ आकिंचन्य ९ ब्रह्मचर्य १० केई दुष्ट जीव वा अज्ञानी जीव अनेकप्रकार मुख थकी कुवचन कहैं हैं उपसर्ग करैं हैं, परसिह दैं हैं, इत्यादि अनेक क्रोध के कारण होतां संतां भी रंचमात्र भी क्रोधभाव कों नाहीं प्राप्त होय हैं अपने क्षमाभाव कों नाहीं छोड़ैं हैं सो उत्तमक्षमाधर्म कों प्रथम लिखिये है १।

बहुरि अनेकप्रकार श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मनः पर्ययज्ञान तिन करि मंडित है अर उत्पन्न भई हैं अनेक प्रकार ऋद्धि जिनकों अर पूजैं हैं तीनलोक के जीव चरणारविंद जिनकै, तौ पण मानकषाय के बशीभूत होय मदभाव कों नाहीं प्राप्त होंय सो मार्दव कहिये २। बहुरि महासरल स्वभाव कों धरैं हैं, छोड़ा है सर्वप्रकार कपट रूप वक्रभाव जिनने, जैसा मन विषैं विचारना तैसा ही मुखथकी कहना, तैसा ही काय थकी करना, ऐसैं मन वचन काय को एकी भाव रूप कों प्राप्त करैं सो आर्जवधर्म कहिये ३। बहुरि सर्वप्रकार छोड़ा है असत्यवचन का वोलना जिननैं, वचन वोलैं तो सर्व जीवन के हितरूप मर्यादीक वोलै वा मौनधरि रहैं सो सत्य धर्म का अंग है ४। बहुरि छोड़ा है इसभव परभवसंबंधी संसारीक सुख का लोभ जिननैं, सो शौचधर्म का लक्षण है ५। बहुरि वशीभुत किये हैं पांचों इंद्रिय अर मन तिनको विषयवासना विषैं नाहीं विचरण दे हैं अर पालें हैं मन वचन काय कृत कारित अनुमोदना करि षटकाय के जीवन की दया, सर्व जीवन कों आप समान जानै हैं सो संयम कहिये ६। बहुरि करै हैं अपनी शक्ति-प्रमाण द्वादशप्रकार तप उग्रोग्र जिननैं, अरु कियेहै सर्व प्रकार इच्छा कों निरोधैं सो तपधर्म कहिये ७। बहुरि बुद्धिपूर्वक त्यागदिये हैं सम्यक् श्रद्धान ज्ञान करि परद्रव्य अर परभाव जानैं, अर अबुद्धिपूर्वक होय हैं कषायभाव वा जिनि रहया है शरीर का संबंध तिनको छोड़ने का निरंतर उपाय धरैं हैं सो त्यागधर्म का लक्षण है ८। बहुरि तिलतुषमात्र भी परद्रव्य विषैं ममकारभाव नाहीं धारैं हैं एक अखंड चिन्मूर्ति आत्मा वा अपने ज्ञानादिक स्वभाव का भाव तिनही विषैं अहंकार ममकार भाव धारैं हैं सो आकिंचनधर्म कहिये ९।

बहुरि तजदिये हैं सर्व स्त्री अर तज दिये हैं सर्व काम–विकारभाव अर दूरभई है सर्व परद्रव्यन सौं रमनचेष्टा जाकी, अर थिरीभूत भये हैं अपने दृष्टा ज्ञाता स्वभावभाव विषैं ही है चर्या जिनकी, सो ब्रह्मचर्यधर्म है १० । ऐसें दश लक्षण को धरैं धर्म ताकों सदाकाल धारै हैं। बहुरि पंचाचारकों आचरैं हैं–दर्शनाचार १ ज्ञानाचार २ चारित्राचार ३ तपाचार ४ वीर्याचार ५ इन पंचाचाररूप है आचार जिनकै, ऐसे क्षयोपशम चारित्र के धारक मुनि ते अनेक उत्तर–गुणन कों विस्तारैं हैं, धारैं हैं अतुलपराक्रम, ता करि प्रसाद रहित जे सप्तम गुणस्थान ता विषैं आरूढ़ होय हैं तथा पदस्थ १ पिंडस्थ २ रूपस्थ ३ रूपातीत ४ इन चार प्रकार धर्मस्थान तिनकों ध्यावैं हैं । तहां कर्मन का जोर अत्यन्त आय पड़ै है तहां तें भाव उतरैं हैं, तब षष्ठम गुणस्थान जो प्रमत्त किंचित् प्रमाद सहित ता विषैं तिष्ठैं हैं। तहां पंच–प्रकार शास्त्राध्ययन करैं हैं—वांचना कहिये द्रव्य श्रुत कों कच्ची दशा में आचारग्रंथ कों वांचैं १ बहुरि शास्त्र का अर्थ विचारैं ता विषैं कोई संदेह उपजै तो ताको निवारण के अर्थ बहुज्ञानी आचार्यादि पास जाय प्रश्न करै सो पृच्छना कहिये २। बहुरि धारै हुए शब्द अर्थ का बारंबार चिंतवनकरै सो अनुप्रेक्षा कहिये ३ । बहुरि सव द्रव्य अर्थ का शुद्ध घोकना करे सो आम्नाय काहये ४। बहुरि चार अनुयोग रूप शास्त्र की भलीप्रकार सिद्धि होय तहां धर्मोपदेश देय ५ ऐसें शास्त्र के पंच अंगन का अध्ययन करै । बहुरि जहां उपसर्ग परीसह सहित कर्मन का तीव्र उदय होय तहां द्वाद-शानुप्रेक्षा का चिंतवन करैं—अनित्यानुप्रेक्षा १ अशरणानुप्रेक्षा २ संसारानुप्रेक्षा ३ एकत्वानुप्रेक्षा ४ अन्यत्वानुप्रेक्षा ५ अशुचित्वानुप्रेक्षा ६ आस्रवानुप्रेक्षा ७ संवरानुप्रेक्षा ८ निर्जरानुप्रेक्षा ९ लोकानुप्रेक्षा १० वोधदुर्लभानुप्रेक्षा ११ धर्मा–नुप्रेक्षा १२ ।

तहां ऐसा चिंतवन करैं–यह असमानजाती जो अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री पुत्रादिक वा हस्ती घोटकादिक अर समानजानीय पर्याय जे धनसंपदादिक मंदिरादिक तिनका जीवके साथ संयोग होय है, तिनका निश्चय करि वियोग होय हैं, सर्व ही असमानजातीय समानजातीपर्याय बिनाशीक हैं, अनित्य हैं, ऐसें पुनः पुनः सर्व इष्टसामग्री

कों अनित्य चिंतवना सो अनित्यानुप्रेक्षा कहिये १ । बहुरि अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री पुत्रादिक कुटंब वा दासी दास आदि अनुचर वा हस्ती घोटकादिक वा राज्यादि विभूती, धनसंपदादिसंयोग, जहां कर्म उदय तैं अन्यथा परणमैं वा वियोग होय, तहां कोई भी राखनेकों समर्थ नाहीं, सर्वकों असरण विचारना सो असरणानुप्रेक्षा कहिये २। बहुरि जो द्रव्य क्षे काल भव भाव इन पंच प्रकार का जो परिवर्तन रूप संसार सोई भया चक्र ता विषैं धरदिया—कर्म रूप कुलाल करि राग—द्वेष मोहभावरूप उपादान शक्ति को धरया—संसारी जीव रूपपिंड सो नाना अवस्था कों प्राप्त होय दुःखी होय ऐसा संसार का स्वरूप बिचारना चिंतवना सो संसारानुप्रेक्षा कहिये ३। बहुरि जहां एसा विचारैं कि जो यह जीव सदाकाल अकेला है कोई काल विषैं कोई भी प्रकार परद्रव्य सों किसी ही क्षेत्र विषैं कोई ही भाव करि याका संबंध नाहीं है, जदपि परद्रव्य याके एकक्षेत्रावगाही होय, तथापि सव न्यारे हैं, पाप पुण्य आप अकेलो ही वांधे है, बहुरि तिनके उदयकाल विषैं दुःख—सुख आप अकेलो ही भोगे है, नरक स्वर्गादिक विषैं आप अकेलो ही जाय है, बहुरि अपना परमहित जो मोक्ष ताकों आप अकेला ही साधे है, अर अपने एकाकी भाव करि बांधे जे कर्म तिनका विध्वंस आप एकाकी होय ही करै है, तातैं मैं सदा अकेला ही हूं, एसा आपके एकाकी चिंतवना सो एकत्वानुप्रेक्षा कहिये ४। बहुरि एकक्षेत्रावगाही शरीर अर ए सर्व कुटंबाद परिवार अन्य हैं, मन्दिर, ग्रह, धन, संपदादिक अन्य हैं, मैं अन्य हूं, मेरा कोई भी नाहीं, मैं कोई का नाहीं, एसा जहां सर्व परद्रव्यन कूं अन्य चिंतवना सो अन्यत्वानुप्रेक्षा कहिये ५ ।

बहुरि जहां एसा चिंतवना जो यह ततधातु करि निर्मापित शरीर महाघिनावना क्रमिकीटकादिक को भाजन महाअशुचि ताविषैं मुद्रित कियो आयुनाम कर्म बंदिग्रह को रक्षक अमूर्तीक ज्ञानस्वरूप सुखपिंड जीव द्रव्य रूप आत्मा सो तहां नानाप्रकार दुःख भोगावै है, ऐसे शरीरसूं केसैं राचैं ? न राचै, एसैं शरीर कूं बारंबार अशुचि चिन्तवना सो अशुचित्वानुप्रेक्षा कहिये ६। बहुरि मिथ्यात्व, कषाय, अव्रत, योग इन चार प्रकार आस्रव भावनकरि

परणयो संसारी जीव चार प्रकार प्रकृतिबंध १ स्थितिबंध २ अनुभागबंध ३ प्रदेशबंध ४ कों करै है, ताके उदयकाल विषैं नानाप्रकार दुःख—संकट कों भोगवै है, ये आस्रव जीवको महा अहित के कारण हैं, तातैं हेय हैं एसा नइकों बारंबार हेय चिंतवना सो आस्रवानुप्रेक्षा कहिये ७। बहुरि इन आस्रवभावन कूं रोकनहारा एसा जो सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की एकता रूप संवरभाव सो जीवको उपादेय हैं ताकों ग्रहण करना इस संवरभाव विना आस्रवभाव नाहीं रुकै, अर आस्रवभाव रुकै विना कर्मास्रव रुकै नाहीं, एसा संवरभाव तहां बारबार चिंतवन करना सो संवरानुप्रेक्षा कहिये ८। बहुरि जहां थिति पूरी करि अपना विपाक दे कर्म का खिरना सो सविपाक निर्जरा कहिये, सो तो सर्व संसारी जीवन कैं हुवा ही करै है, ताकर तो किछु सिद्धि होती नाहीं, तातैं सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र पूर्वक जो तपरूप भावना है, ताकरि समय समय असंख्यात गुणी निर्जरा होय सो अविपाकनिर्जरा मोक्ष को हेतु है; एसा निर्जरास्वरूप वारवार विचारना सो निर्जरानुप्रेक्षा कहिये ९।

बहुरि जहां पुरुषाकार स्वरूप कों धरयां चौदह राजू ऊंचा, दक्षिण उत्तर सर्वत्र सातराजू चौड़ा, पूर्व पश्चिम अधोभाग विषैं सातराजू चौड़ा, अर मध्यभाग विषैं एक राजू चौड़ा, ब्रह्मस्वर्ग निकट पांचराजू चौड़ा, लोक के अंत विषैं एकराजू चौड़ा, तीनसौं तेतालीस राजू घनाकार, तीन वातवलयन करि वेष्टित, जीवादिक षट् द्रव्यन करि पूर्ण भया, एसा लोक ताका जिनसूत्रानुसार स्वरूप चिंतवन राग—द्वेष रहित चिंतवन करना सो लोकानुप्रेक्षा कहिये १०। बहुरि जीवको अनादिकाल का संसार चतुर्गति विषैं भ्रमण करतां संता सर्व दुःख—सुख सामग्री अनेकवार मिली कोई भी सामग्री अलभ्य न रही परन्तु एक सम्यग्ज्ञान करि ही हीन रह्या तातैं संसार का भ्रमण न मिटा, तातैं इस घोरसंसार विषैं एक सम्यग्ज्ञान ही दुर्लभ हैं, अर जीवन के सर्व कल्याण का कारण है, तातैं सम्यक् ज्ञान होने का यत्न करना, एसैं सम्यक्ज्ञान कों दुर्लभ भावना सो बोधदुर्लभानुप्रेक्षा कहिये ११। बहुरि जहां अपना स्वरूप विचारना, जिनधर्म का स्वरूप विचारना, बहुरि धर्म के दश लक्षण तिनकों विचारना, इत्यादि धर्म का चिंतवन करना

हारे आचार्यगुरु सो आचार्यभाक्ति कहिये ११ बहुरि तैसैं ही भक्तियुक्त भावयुक्त करि विराजैं हैं अपने हृदयविषैं अपने पढ़ावनहारे वहुश्रुत के धारक उपाध्याय सो वहुश्रुतभाक्ति कहिये १२ बहुरि द्वादशांग वाणी विषैं लग रहा है भाक्ति सहित अनुराग जिनका सो प्रवचन भाक्ति कहिये १३ अर अपने पदयोग्य धारे हैं षट् आवश्यकन विषैं कोई आवश्यकभाव, सो आवश्यकापरिहाणि कहिये १४ बहुरि आपका आत्मा कौं किया है सर्व दोषन करि रहित अर जिनमार्ग की उच्चता दिखावनें कों तत्पर हैं, सो सन्मार्गप्रभावना कहिये १५ बहुरि प्रवचन कहिये आप्त आगम पदार्थ जिनधर्म वा चतुर्विध संघ तिनविषैं है प्रीति जिनकी, सो प्रवचन वात्सल्य कहिये १६ इति पोडशभावना ।

बहुरि किसी क्षयोपशमसंयम वाले के तीसरा परिहारविशुद्धिसंयम होय है सो कौनसे जीव के होय है ? -जो तीसवर्ष की अवस्था विषैं ही दीक्षा धारैं अर गृहस्थ अवस्था विषैं खान पान जाकै सुख सों भया होय, अर आठवर्षताईं केवली के निकट पढै, अर प्रत्याख्यान नवें पूर्वपर्यन्त पढ़ा होय, तिसकै परिहारविशुद्धिसंयम होय है । सो संयम के माहात्म्य करि सर्व पापसों कमलवत् निर्लेप रहै, चौरासी लाख उत्तरगुणका पालक होय, रात्रिविषैं गमन नाहीं करै, अर वर्षाकाल विषैं गमन करै भी अर न भी करै किछु नेम नाहीं, इस परिहारविशुद्धिसंयम की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त है, जातैं और गुणस्थान होय जाय तो यह संयम रहै नाहीं, जातैं याके गुणस्थान प्रमत्त अप्रमत्त दोऊ ही हैं, अर उत्कृष्ट स्थिति अड़तीसवर्षघाटि कोडिपूर्व है, एसा परिहारविशुद्धिसंयम का स्वरूप गोमटसार विषैं कह्या है । इत्यादि क्षयोपशम चारित्रभावन के भेद संक्षेपमात्र कहै, और भी अनेकभेद हैं, सो वड़े शास्त्रन सों जानना । इस चारित्र के सर्वभेद केवलीगम्य है, यह क्षयोपशमचारित्रभाव वर्तमान भी सुखरूप है अर आगामी स्वर्ग मोक्ष का कारण है । यह क्षमोपशमचारित्र गुणस्थान तो प्रमत्त अप्रमत्त दोयही विषैं पाइये, अर मार्गणा गति--मनुष्य १ जाति--पंचेन्द्रिय १ काय--त्रस १ योग--मनके चार वचन के चार औदारिककाय योग आहारककाय योग आहारकमिश्र काययोग एसैं ग्यारह ११, वेद--३ कषायसंज्वलनचतुष्क छह हास्यादिक एवं १० ज्ञान--केवली विना ४ संयम--सामायिकछेदोपस्था--

पना परिहारविशुद्धि ३ दर्शन—केवल विना ३, लेश्या—पीत पद्म शुक्ल ३, भव्य सम्यक्त्व—उपशम क्षयोपशम क्षायिक एवं ३ संज्ञी १ आहारक १ इनविषैं पाइये है।

इति श्री भावदीपका का क्षयोपशमभावाधिकार विषैं क्षयोपशमचारित्राधिकार पांचवां समासभया ५

आगै उपशम भावाधिकार लिखिये है....

दोहा:—अनादिदुष्ट मिथ्यात्व कौं करि उपशम जिन जीव।
शक्ति धारि मोह मारियो करूं प्रणाम सदीव ॥ १ ॥

मोह कर्म का उपशम होतें जो भाव निपजै सो उपशमभाव कहियै। सो उपशमभाव के दोय भेद हैं—उपशम सम्यक्त्व १ उपशम चारित्र २। तहां प्रथम ही उपशमसम्यक्त्वभाव कौं लिखिये—है तहां प्रथम ही उपशम सम्यक्त्व की उपत्ति को विधान कहिये है उपशमसम्यक्त्व—संज्ञी, पर्याप्त, गर्भज, पंचेन्द्रिय, चारों गति के जीवन के होय है, भव्य होय, मंदकषायरूप विशुद्धाता का धारक होय, गुण दोष का विचार रूप जो साकार ज्ञानोपयोग ताकरि युक्त होय, निद्रा रहित जागता जीव होय, तिनके उपशम सम्यक्त्व होय है। सो सम्यक्त्व के उपजने के दोय कारण हैं—अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी गुणस्थान तें छूटि उपशम सम्यक्त्व होय सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये। बहुरि उपशमश्रेणी चढ़तें क्षयोपशमसम्यक्त्व तें होय सो द्वितियोपशम सम्यक्त्व कहिये प्रथम ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये हैं—प्रथमोपशमसम्यक्त्व होनें तैं पहले मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं पंच लब्धि होय है ५ क्षयोपशम १ विशुद्धि २ देशना ३ प्रायोग्यता ४ करण ५ ये पंच लब्धि हैं क्षयोपशम १ विशुद्धि २ प्रायोग्यता ३ देशना ४ ए चार लब्धि तो भव्यजीवन कें होय हैं वा अभव्य के भी होंय अर करणलब्धि भव्य के ही होय। ज्ञानावरणादिक जे अप्रशस्तकर्म—

प्रकृति तिनकी शक्ति जो अनुभाग सो जिसकाल विषैं समय २ प्रति अनंतगुणा घटता अनुक्रमरूप होय उदय आवै तिसकाल विषैं क्षयोपशमलब्धि कहिये १ बहुरि क्षयोपशम लब्धि होतैं जीव के उपजा जो सातावेदनी आदि प्रशस्तप्रकृतिबंध का कारण धर्मानुराग रूप शुभपरिणाम ताकी जो प्राप्ति सो विशुद्धि लब्धि कहिये २। बहुरि षट् द्रव्य नव पदार्थ के उपदेश करणहारे आचार्यादिक की वा तिनके उपदेश की प्राप्ति वा उपदेशित पदार्थ के धारणे की प्राप्ति सो देशनालब्धि कहिये ३। अर जहां नारकादि विषैं उपदेश देनेवाला न होय तहां पूर्वभव विषैं धारे हुए तत्वार्थ के संस्कारके बलतैं सम्यग्दर्शन होय है। बहुरि पूर्वोक्त तीन लब्धि संयुक्त जीव समय-समय विशुद्धता करि वर्धमान होत संतैं आयुकर्म बिना सात कर्मन की स्थिति अंतः कोटाकोटी मात्र अवशेष राखै तिसकाल विषैं जो पूर्वस्थिति थी ताकौं एक कांडक घात-करि छेदि तिस कांडक के द्रव्यकों अवशेष रही स्थिति विषैं निक्षेपण करै है बहुरि घातियाकर्मन का दारुलतारूप अघातिया कर्मन की नींव कांजी रसरूप द्विस्थानगत अनुभाग इहां अवशेष रहै है पूर्व अनुभाग या तामें अनंत का भाग दियें बहुभागमात्र अवशेष रहा अनुभाग विषैं प्राप्त करै है तिसकार्य करने की योग्यता की प्राप्ति सो प्रायोग्यलब्धि कहिये ४। सो ए चार लब्धि तो भव्य अभव्य कें समान होंय हैं। बहुरि विशुद्धता की वृद्धि कर वर्धमान होतसंता प्रायोग्यलब्धि के प्रथम समय तें लगाय पूर्वस्थितिबन्ध के असंख्यातवें भागमात्र अंतः कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण आयुविना सात कर्मन का स्थितिबंध पीछै करै है अंतर्मुहूर्तप्रमाण समानता लिये इसतैं पल्य का संख्यातवां भाग मात्र घटता स्थितिबंध तीसरा अंतर्मुहूर्त पर्यन्त करै एसैं ही क्रम तें एक २ अन्तर्मुहूर्त में पल्यका संख्यातवां भाग मात्र स्थितिबंध घटाय २ करै याका नाम स्थितिबंधापसरण कहिये। तहां संख्यात स्थितिबंधापसरण होय तहां प्रथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध घटै तहां पहला प्रकृति बंधापसरणस्थानक होय बहुरि तिसको अनुक्रम तैं प्रथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध और घटे तहां दूसरा प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होय, ऐसैं इसही अनुक्रम तैं चौंतीस प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होंय। इस जगह पृथक्त्व नाम सातवें आठवे का है तातैं पृथक्त्व सौ सागर कहने तैं सातसै वा आठसै सागर जानना। अब चौंतीसस्थानक तिन

विषैं क्रम तैं चौंतीसप्रकृति के बंध तैं विच्छेद होय है सो कहिये है—पहले विषै नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ नरकगति नरकगत्यानुपूर्वी ५ संयोगरूप सूक्ष्म साधारण अपर्याप्त ६ सूक्ष्म अपर्याप्तप्रत्येक ७ बादर अपर्याप्त साधारण ८ बादर अपर्याप्तप्रत्येक ९ बेंद्रिय अपर्याप्त १० तेंद्रिय अपर्याप्त ११ चौंद्रियअपर्याप्त १२ असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त १३ संज्ञीपंचेन्द्रि अपर्याप्त १४ सूक्ष्मपर्याप्तसाधारण १५ सूक्ष्मपर्याप्तप्रत्येक १६ बादर पर्याप्त साधारण १७ बादर पर्याप्तप्रत्येक एकेन्द्रिय स्थावर आताप १८ बेइन्द्रियपर्याप्त १९ तेंइन्द्रियपर्याप्त २० चौंइद्रियपर्याप्त २१ असंज्ञी-पंचेंद्रिय पर्याप्त २२ तिर्यंचगति तिर्यंचगत्यानुपूर्वी उद्योत २३ नीचगोत्र २४ अप्रशस्तविहायोगति दुर्भग दुःस्वर अनादेय २५ हुंडकसंस्थान सृपाटिकसंहनन २६ नपुंसक बेद २७ वामनसंस्थान कीलितसंहनन २८ कुब्जकसंस्थान अर्धनाराचसं-हनन २९ स्त्रीवेद ३० स्वातिसंस्थान नाराचसंहनन ३१ न्यग्रोधसंस्थान वज्रनाराचसंहनन ३२ मनुष्यगति मनुष्यगत्या-नुपूर्वी औदारिक शरीर औदारिक अंगोपांग वज्रवृषभनाराचसंहनन ३३ अस्थिर अशुभ अयश अरति शोक असाता-वेदनी ३४ एसैं ए चौंतीसस्थानक तो भव्य वा अभव्य के समान होय हैं इन चौंतीस स्थानन करि छियालीस प्रकृति बंध तैं व्युच्छित्ति होय है। तहां मनुष्यातिर्यंच के बंध योग्य प्रकृति एकसौ सतरा में छियालीस प्रकृति की व्युच्छित्ति भई अवशेष इकहत्तर प्रकृति का बंध प्रायोग्यता लब्धि का अनंतरवर्ती समय तैं करै हैं अर देव नारकी वज्रवृषभ नाराच-संहनन का बंध सिवाय करै तातैं बहत्तरि का करै है अर इनका अन्तरविशेष लब्धिसार जीतैं जानना बहुरि अनुभाग अप्रशस्तप्रकृतिन का तौ घातिया दारुलता दुः (द्वि) स्थानगत अर अघातिया का नींब कांजीर दोय स्थान को प्राप्त समय २ अनंत गुणां घटता बांधे है प्रशस्त प्रकृतिन का चार स्थान कौं प्राप्त समय २ अनंतगुणां वधता वांधे है

इति प्रायोग्यतालब्धि समाप्त।

करण, तीन प्रकार हैं अधः प्रवृतिकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ये तीन करण करैं तिनका काल प्रत्येक अन्तर्मुहूर्त है परन्तु अनिवृत्तिकरण का कालस्तोक है अर तासौं संख्यातगुणा काल अधः प्रवृत्तकरण का है।

अब अधः प्रवृत्तकरण विषैं समय समय प्रति अनंतगुणी परिणामन की विशुद्धता होय है सातावेदनी आदि प्रशस्तप्रकृतिन का समय २ प्रति अनंतगुणां चतुस्थानरूप अनुभागवंध करै है असातावेदनी आदि अप्रशस्तप्रकृतिन का समय समय प्रति अनंतवैभागमात्र अनुभागवंध करै है बहुरि स्थितिवंध अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त पूर्वंग्थितिवंध तै पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र घटतावांधे है अर इसतें दूसरा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पल्य का असंख्यातवां भागमात्र घटता वंध है अर इसतें दूसरा अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त पल्यका असंख्यातवां भागमात्र वंधता वंध है एसें एक एक अन्तर्मुहूर्त करि पल्य का असंख्यातवां भागमात्र स्थितिबंधापसरण होय है एसें या विषैं अपसरण असंख्यातहजार् होंय है एसै होते इस करण की आदि के समय स्थितिवंध अन्तः कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण था ताके अंत समय विषैं संख्यातगुणां घाटि होय है १ बहुरि दूसरा अपूर्वकरण करे है तहां गुणसंक्रमण तो नाहीं करै है तीन आवश्यक और होंय हैं। समय समय असंख्यात असंख्यातगुणी कर्मन की निर्जरा होय तहां गुणश्रेणि आयाम अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण के काल तें साधिक गलतावशेष हैं सो अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है १ स्थितिकांडक घात करै अन्तर्मुहूर्तकाल में अपूर्वकरण के प्रथमसमय में जेती-जेती कर्मन की स्थिति सत्वविषैं पाइये है तिनविषैं जेती स्थिति घटावै तिन निषेकन के द्रव्य की अवशेष रही स्थिति तिनके निषेकन विषैं समय समय असंख्यातगुण कर्मन कूं लीयां अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त दे है तहां सम्पूर्ण देचुकैं द्रव्य तब एक कांडक घात भयौ एमें ही उपशमसम्यक्त्व का अंतपर्यन्त अनेकस्थिति-कांडक घात करै सो स्थिति कांडकघात कहिये। इहां पल्य का असंख्यातवां भागमात्र एक एक कांडक तैं स्थिति घटावै हैं। बहुरि सत्ता विषैं तिष्ठते कर्मन का अनुभाग ताके अनंतरपर्धक हैं तिनविषैं अनंते उपर के बहुत अनुभाग कों करैं स्पर्धक तिनका अनुभाग घटाय अवशेष रहा स्पर्धक तिनकै अनुसार एक अंतर्मुहूर्त में करै सो अनुभागकांडकघात कहिये। एसैं अनंत स्पर्धकन के कांडक एक एक अंतर्मुहूर्त में करै सो अनुभागकांडकघात कहिये एसै गुणश्रेणिनिर्जरा स्थिति कांडकघात अनुभागकांडकघात ए तीन आवश्यक अपूर्वकरण विषैं होंय हैं। बहुरि अनिवृत्तिकरण करै है तहां

पल्यका संख्यातवां भाग मात्र स्थितिकांडकघात करै हैं तहां संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण भये तहां उपशमनकरण करे है तहां सत्तामें तिष्ठते मिथ्यात्वके द्रव्य ताको समय असंख्यातगुणों द्रव्य ताकों उपसमावै हैं। उपशमकरण कहिये उदीरणा होय उदयमें न आयसकै ऐसा कर्म करै है सो अनिवृत्तिकरणके अंतसमय पर्यंत सर्व मिथ्यात्वको द्रव्य उपशम--भावकों प्राप्त करै है। बहुरि अंतरकरण करै है, तहां अनिवृत्तिकरणके अंतसमय पर्यंत स्थापै है, अनिवृत्तिकरणके अनंतर समयतें लगाय अंतर्मुहूर्तके समयप्रमाण निषेकनि विषैं तिष्ठतौ जो मिथ्यात्वको द्रव्य ताकों कितनौंक तो उपरितन स्थिति विषैं उत्कर्षण करि चढ़ायदे है, अर कितनौंक द्रव्य अपकर्षणा करि निषेक दे काढ़े है। अंतर्मुहूर्तकालप्रमाण जो प्रथम स्थिति ता विषैं अंतर्मुहूर्तप्रमाण मिथ्यात्वके द्रव्य रहित करै, एसी क्रिया अनिवृत्तिकरके अंत पर्यन्त करै हैं। बहुरि अनिवृत्तिकरणके अनंतर समय अर अंतरायामके प्रथम समयको प्राप्त होतें दर्शनमोहनीय अर अनंतानुबंधी चतुष्क इनके प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभागनके समस्तप तें उपशम होने तें औपशमिक तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकों पाइ (य) जीव उपशम सम्यग्दृष्टी होय है। उपशम सम्यग्दृष्टी भावकों प्राप्त होय है। तहां प्रथम समय विषै उपरितन स्थिति विषै तिष्ठता मिथ्यात्वका द्रव्य ताकों गुण संक्रमण भागहारका भाग देइ, एकभाग काढ़ि, ताकों असंख्यातका भाग देइ बहुभाग तो द्रव्य मिथ्यात्वरूप ही परणमावै है। बहुरि एकभावको असंख्यातका भाग देइ बहुभाग मिश्र-मोहिनीय रूप परणमावै है, अर एकभाग सम्यक्त्वमोहिनी रूप परणमावै है। एसैं संख्यात आवलीप्रमाण संक्रमणका काल हैं। तहां पर्यंत मिथ्यात्वके द्रव्यकों समय--समय असंख्यात २ गुणों द्रव्य गुणसंक्रमण भागहारका भाग देइ देइ काढि काढि मिथ्यात्वरूप सम्यङ्मिथ्यात्व रूप परणमावै। बहुरि गुणसंक्रमणकालके अंतसमयपर्यंत मिथ्यात्व बिना अन्य सर्व कर्मनकी गुणश्रेणी वा स्थितिकांडकघात वा अनुभागकांडकघात पाइये है। बहुरि गुणसंक्रमणके अनन्तर अवशेषरह्या मिथ्यात्वका द्रव्य ताकों विध्यातसंक्रमण भागहारका भाग दिये जो प्रमाण आवै तितनें द्रव्यकों मिश्रमोहिनी, सम्यक्त्व--मोहिनी रूप परणमावै इहां विशुद्धता मंद भई तातैं बड़े भागहारको भाग दिया, द्रव्य थोड़ा आवै, तहां द्रव्यकों तिन--

रूप परणमावै, दर्शनमोहका उपशम करनेवाला जो जीव ताका मरण न होय है। बहुरि उपशम सम्यक्त्वके काल विषैं उत्कृष्ट छह आवली अर जघन्य एकसमय अवशेष रहैं, अनंतानुबंधी क्रोधादिकषाय विषैं एक कोईका उदय होतैं सम्यक्त्व कों विराध मिथ्यात्वकों न प्राप्त होय है बीचमैं सासादन होय, यहां मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधीका उदय है सो या सासादनका जघन्य काल एकसमय, उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण है सो अपने योग्यकाल सासादन विषैं तिष्ठि फेरि नेम करि मिथ्यात्वकों प्राप्त होय हैं, जैसें वृक्ष तें टूटा फल नेम करि अपने अंतरालके कालकों बीचमें भोगि पृथ्वी विषैं आय पड़ै है, तैसैं सम्यक्त्वरूप वृक्ष तें टूट्यो कहिये परिणमन भयो अनंतानुबंधीकषायभावरूप जो आकाश ताकों प्राप्त भयो तहां अपने योग्य कालकूं भोगि मिथ्यात्वरूप भूमिका कों प्राप्त होय है। अर जो जीवकैं उपशमसम्यक्त्वके काल विषैं जो अनंतानुबंधीको उदय न आवै तो सासादन न होय है। बहुरि उपशमसम्यक्त्वको अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण हुया पाछे नेमकरि जीव संक्लेशताने प्राप्त होय, ताकरि अंतरायामको अंतके निषेकनतैं ऊपर निषेकन विषैं तिष्ठतो तीन प्रकार मिथ्यात्व, सम्यङ्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृतिरूप जो मिथ्यात्वको द्रव्य ताकों अपकर्षणभागहारका भाग देय, एकभाग प्रमाण द्रव्य काढ़ि ताविषैं बहुतसंक्लेशभाव होय तो मिथ्यात्वके द्रव्यकों तो उदयावलीका प्रथम समयका निषेक सों लगाय अंतरायामकों पूरि ऊपरले सर्वनिषेकन विषैं दे है। अर मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनीके द्रव्यनैं उदयावलीके बाह्य निषेकन विषैं दे है, अर अंतरायामकों मिथ्यात्वके द्रव्यसों पूरे है, जातैं उपशमसम्यक्त्वके कालसों अंतरायामको काल संख्यातगुणो है, तातैं अवशेष रह्यौ अंतरायामको काल ताको ज्योंका त्यों मिथ्यात्वके द्रव्यसहित करै है, सो तो जीव सम्यक्त्वसूं छुटि मिथ्यात्वगुणस्थानकों प्राप्त होय है। तहां विपरीत श्रद्धानी होय है, ताही काल तें धर्मरुचिका अभाव होय। जैसें ज्वरवालेकों मिष्टरस न रुचै, तैसें धर्मविषैं अरुचिताकों प्राप्त होय है। धर्म जो अनेकांतवस्तुका स्वभाव वा रत्नत्रय रूप सो रुचै नाहीं, अर जिसतें कोई जीवकों घाटि संक्लेशता होय सो जीव मिश्रमोहनीके द्रव्यने तो उदयावलीके प्रथमसमय तें लगाय सर्व अंतरायाम ने पूरि ऊपरि स्थिति विषैं दे है, अर मिथ्यात्व--

मोहनी सम्यक्त्वमोहनी के द्रव्य तैं उदयावलीका बाह्य निषेकनसौं लगाय अंतरायामने पूरि ऊपरास्थिति विषैं दे है, ताकूं सम्यक्त्वसूं छुटि तीसरो मिश्रगुणस्थान होय है । तहां मिश्रमोहनीका उदय होतें जीव एक ही समयमें तत्व अर अतत्वको मिश्ररूप श्रद्धै है । जैसें दही गुड़ मिला हुवा और ही रसान्तरको प्राप्त होय है, तैसैं यहां सत्य-असत्य श्रद्धान मिला हुवा जानना, अर यातें भी कोई जीवकें संक्लेशता घाटि होय सो जीव सम्यक्त्वमोहनीके द्रव्यकों तो उदयावलीके प्रथमनिषेकसों लगाय सर्व अंतरायाम नैं पूरि उपरस्थिति विषैं दे है, अर मिथ्यातमोहनी मिश्रमोहनीके द्रव्यकों उदयावली बाह्यका प्रथम निषेक सों लगाय सर्व अंतरायामने पूरि उपरि स्थिति विषैं दे है, ताकें सम्यक्त्वमोहनी को उदय होतैं क्षयोपशमसम्यक्त्वको अंगीकार करै है । तहां चल मल अगाढ़ रूप तत्वार्थकों श्रद्धै है अर सम्यक्त्व-मोहनीके उदयतें श्रद्धान विषैं चपलपनो होय है, वा मल लागै है, वा शिथिलभाव होय है, परन्तु मूलश्रद्धानका घात न होय है, या करि ही जीव आप विशेष न जानता अज्ञातगुरुके निमित्ततैं आप असत्य श्रद्धानभी करै परन्तु यहां सर्वज्ञ की आज्ञा ऐसैं होय है ऐसैं जानि श्रद्धान करै तातैं सम्यग्दृष्टि होय है । अर जो कदाचित् कोई २ ज्ञातगुरु सूत्र तैं सम्यक्स्वरूप दिखावै अर हठादिक तैं श्रद्धान न करै तो तिसही काल तैं लगाय सो मिथ्यादृष्टि होय है ऐसें उप-शमसम्यक्त्वभावका स्वरूप कहा है । कैसा है उपशमसम्यक्त्वभाव ? अनादि को लागो जो महा उद्धत मिथ्यात्वनामा कर्म ताके उदयका अभाव करि प्रगट भया है । बहुरि कैसा है ? चल, मल, अगाढ़ दोषतें रहित निर्मल है । बहुरि कैसा है ? तोड़ी है संसारकी आगल जिननैं, अर सर्वसिद्धीको कारण है । बहुरि कोई जीव वेदक सम्यग्दृष्टि होय क्षयोपशमसकल चारित्रका ग्रहण करि उपशमश्रेणी चढ़नेकों सन्मुख होय, सो फेरि द्वितीय उपशमसम्यक्त्वकों करै है । तहां अप्रशस्त ऐसे ही तीन करण करे है । तहां अधः प्रवृत्तकरण विषैं समय २ अनंतगुणी विशुद्धता १ स्थितिबंधापसरण २ प्रशस्त प्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनंतगुणां बधता बंध करै ३ अप्र-शस्त प्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनंतवेंभाग करै ४ ऐसे चार आवश्यक करे । बहुरि अपूर्वकरण विषैं गुणश्रेणी

निर्जरा १ स्थितिकांडकघात २ अनुभाग कांडकघात ३ ए तीन आवश्यक करै अर अनिवृत्तिकरण विषैं उपशमकरण १ अर अंतरकरणादि विधान सर्व प्रथमोपशम सम्यक्त्ववत् करे । इहां विशेष इतना कि प्रथमोपशमसम्यक्त्व विषैं तो एक मिथ्यात्वको ही अन्तर करै हैं । अर द्वितीय उपशम सम्यक्त्व विषैं मिथ्यात्व १ सम्यङ्मिथ्यात्व २ सम्यक्-प्रकृतिमिथ्यात्व ३ इन तीन प्रकृतिका अंतर करै, और सर्व विधान समान जानना । बहुरि अनिवृत्तिकरणके अंत-समय विषैं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकों प्राप्त होय है । तहां और विधान तो समान है, प्रथम उपशमसम्यक्त्व विषैं गुणसंक्रमण (भागका) भागसहित मिथ्यात्वके द्रव्यकों अपकर्षण कर तीन प्रकृतिरूप करै था, इस विषैं विध्यातादि भाग जानना, ऐसा यह उपशमसम्यक्त्वभाव वेदक सम्यग्दृष्टी जीवकें उपशमसम्यक्त्वीके सन्मुख अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीवकें होय, सो द्वितीयोपशमसम्यक्त्व कहिये । उपशम सम्यक्त्वभाव वर्तमानभी सुखका कारण है अर आगामी स्वर्ग–मोक्ष का कारण है । यह उपशमसम्यक्त्वभावके गुणस्थान तो असंयतसों लगाय उपशांत कषाय एकादशमगुण-स्थान पर्यन्त आठ गुणस्थान विषैं पाइये, अर मार्गणा गति ४ जाति पंचेन्द्रिय १ काय–त्रस १ योग ४ मन का, ४ वचन का, औदारिक काययोग, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र, कार्माण १२, वेद ३ कषाय अनंतानुबंधी चतुष्कविना २१, ज्ञान—मति, श्रुत, अवधि ३, संयम—परिहारविशुद्धि विना ६, दर्शन केवलविना ३, लेश्या ६, भव्य १, सम्यक्त्व-स्वकीय १, संज्ञी १, आहारक २, इनविषैं पाइये । इति श्रीभावदीपकाका उपशमभावाधिकारविषैं उपशमसम्यक्त्व-भावाधिकार प्रथम समाप्त भया । आगैं उपशमचारित्रभावाधिकार निरूपिये हैं—

दोहा—उपशम श्रेणीमांड के कियो मोह वेहाल । तोर जोर एकनि चढ़े तिन पद ढोक त्रिकाल ॥१॥

उपशमचारित्रभाव, द्वितीयोपशमसम्यक्त्वसहितभी होय है, अर क्षायिक सम्यक्त्व सहित भी होय, जातैं उप-शमश्रेणी द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टीभी मांडै अर क्षायिक सम्यग्दृष्टीभी मांडै । तहां अप्रमत्तगुणस्थानविषैं अत्यन्त परिणामन की विशुद्धतासहित होय, अनंतानुबंधीके चतुष्कविना अवशेष इक्कीस चारित्रमोहकी प्रकृति तिनकै उपशमा-

वने कौ उद्यम करे है, अन्य प्रकृतिनका उपशम होता नाहीं, तातैं तिनकैं उपशमकरण नाहीं है । तहां सप्तम गुणस्थानविषैं अधः प्रवृत्तिकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ये तीन करण करे है, अर स्थितिबंधापसरण १ क्रमकरण २ देशघातिकरण ३ अंतःकरण ४ उपशमकरण ५ एसैं आठकरण करै हैं याहीतैं आठ अधिकार चारित्र--मोहका उपशमविधानविषैं पाइये है । तहां अधः प्रवृत्तकरणका लक्षण अर ताकरि किये जे कार्य जैसें उपशमसम्यक्त्वकों सन्मुख होतें कहे है तैसें ही जानने । बहुरि अपूर्वकरणके प्रथम समय विषैं स्थितिबंध अर स्थितिसत्व अंतः कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण हैं, तहां विशेष इतना कि स्थितिबंध तैं स्थितिसत्व संख्यातगुणां हैं, यहां उदयावलीतें बांझि (बाह्य) गलितावशेष गुणश्रेणीका आरंभ भया, अर गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघात ए आवश्यक होय हैं, सो अपूर्वकरणके आदिसमयतें लगाय अंतसमय पर्यन्त संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण हैं । बहुरि अनिवृत्तिकरणकों प्राप्त होय है तहां सर्वही कर्मनका उपशम १ निधत्ति २ निकाचन ३ इन तीनकरणका अभावभया सर्व ही कर्म उदीरणा, संक्रमण, अपकर्षण, उत्कर्षण करने योग्यभये, यहां पल्यका संख्यातवांभाग प्रमाणस्थितिबंधापसरण करतां संतां संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण करि अनिवृत्तिकरणके कालके असंख्यातवें भाग अवशेष रह्या तहां क्रमकरण होय है । क्रमकरण कहिये कर्मनका स्थितिबंध पूर्व जिस अनुक्रमतें होता था तिसही अनुक्रम करिभया, या भांति अनेक नाना अनुक्रम स्थापि बंध करै है, जैसें पूर्व मोहनीका स्थितिबंध अधिक होताभया अन्यप्रकृतिनका घाटि होता था अर कभी तिनके समान होय है एसा अनुक्रम स्थापैं हैं, अर कभी तिनतैंभी घाटि अनुक्रम स्थापै हैं, तिनतें घाट स्थितिबंध करै है, उनका बाधि (ज्यादा) होय है ऐसैं अनेक अनुक्रमस्थापि जघन्यस्थिति चारघातियाकी अंतर्मुहूर्त वेदनीकी बारामुहूर्त नामगोत्र की आठमुहूर्त तैं दूनी बंध होन हैं, सो क्रमकरण कहिये ४ बहुरि देशघातिकरण करे है—घातियाकर्मनका शैल अस्थि दारु लता चतुःस्थान अनुभागबंध होता था ताकों मेटि दारु, लता द्विस्थानबंध वा एक लताभागस्थान अनुभागबंध करै है, सो देशघातिकरण कहिये ५ बहुरि अन्तरकरण कहिये है—चारित्रमोहकी अनं-

तानुबंधचितुष्क विना इकवीस प्रकृतिका अंतरकरण करै है सूक्ष्यसांपराय गुणस्थानका अनंतवर्ती समय तें लगाय उपशांतकषाय गुणस्थानका कालप्रमाण समयनि विषैं तिष्ठता चारित्रमोहनीकी इकईस प्रकृति तिनका द्रव्य ताका अंतर-करण करे है—कितनाक द्रव्य तो सूक्ष्मसांपरायका अंत पर्यन्त स्थापि जो प्रथम स्थिति जि (ति) न विषैं पूरकरि क्षिण कर दै हैं अर कितनाक द्रव्य उपशान्तकषायका अंतका अनन्तरवर्ती निषेकतें लगाय उपरितन स्थितिविषैं दे है। अर उपशान्तकषायका कालप्रमाण निषेक मोहका द्रव्य रहित करै हैं सो अंतरकण कहिये ७। बहुरि उपशमनकरण करै है। उदीरणा होय उदय न आवै एसा करे हैं; प्रथम ही अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान आठ कषायनकों उपशमावै है, पीछे नपुं-सकवेद १, स्त्रीवेद १, हास्यादिक ६, पुरुषवेद १, संज्वलनक्रोध १, मान १, माया १, लोभ १ एसैं अनुक्रमसों उपश-मावै है सो उपशमन करण कहिये। बहुरि यहां ही पूर्वस्पर्धकनके अपूर्वस्पर्धक करै है, पूर्वस्पर्धकनकै अनन्तवैंभाग अनु-भागराखै है। बहुरि अनिवृत्तिकरणके अंतपर्यन्त लोभकषायकी सूक्ष्मकृष्टि करै है। अपूर्वस्पधकनके अनन्तवैंभाग अति-सूक्ष्म अनुभाग राखै है इत्यादि अनेक क्रिया अनिवृत्तिकरणविषै करतां संतां समाप्ति करै है। बहुरि सूक्ष्मसाम्पराय गुण-स्थानकों प्राप्त होय हैं—तहां सूक्ष्म है लोभकषायकी अनुभागशक्ति जिनविषैं, एसी सूक्ष्म प्रकृतिनकूं भोगवै हैं। बहुरि सूक्ष्मसाम्परायकों समाप्त करि उपशान्तकषाय गुणस्थानको प्राप्त होय है। तहां यथाख्यातचारित्रकों अंगीकार करै है। मोह-भाव रहित होय है, सिद्ध-समान आत्मीकसुख अवस्थाकों प्राप्त होय है। फिर तातैं पड़ै है, सो पड़ना दोय प्रकार ही है, भवक्षयतें १, कालक्षयतें २, जो आयुका अन्त होतें मारणकों पाय गिरै तो देवगतिकों प्राप्त होय है। तहां असंयत गुण-स्थान होय, सो तो भवक्षयतें पड़ना होय १, अर जहां उपशांतकषाय गुणस्थान काल पूरा भयां पड़ना होय, सो कालक्षय तें पड़ना भया २, इनबिना और कोई संक्लेशादि पड़नेका कारण नाहीं, कालक्षयतें गिरै है सो अनुक्रमतें गिरै है प्रथम उपशान्तकषायतें सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानकों प्राप्त होय, तहां सूक्ष्मलोभकों भोगवै है, तहां ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ४, अन्तराय ५, उच्चगोत्र १, यशस्कीर्ति १। इन सोलह प्रकृतिनका बंध ते अभावभयाथा सो बंध होने लगा, सो तिस

स्थानक जितना बंध करै था, तिस स्थानकतैं दूना स्थितिबंध होने लगा, तैसें ही अनुभागबंध अप्रशस्तप्रकृतियोंका अनन्तवें भाग समय २ करै था, सो समय २ अनन्तगुणां होनेलगा। अर प्रशस्तप्रकृतियोंका अनुभाग समय २ अनन्तगुणांबंध होता था, सो अनन्तवें भाग होने लगा। बहुरि अनिवृत्तिकरणकों प्राप्त होय तहां उपशमनकरणका अभाव होय है, तहां संज्वलनचतुष्क अर पुरुषवेदका उदय होय है, तहां बादर अनुभागसहितनकों भोगवै है। बहुरि देशघातियाकरणको अभाव होय, चतुःस्थानरूप अनुभागबंध करै हैं। बहुरि क्रमकरण उलटा होय हैं, चढ़तां जिस अनुक्रमसों स्थितिबंध करै था, तिसतै उलटै क्रमतें करने लगा, स्थितिबंधापसरण विपरीत होय, स्थितिबंध घाटि करे था सो अधिक अधिक करनेलगा, तैसे ही स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात विपरीत होनेलगा, पहले स्थितिअनुभाग घटाय २ कांडक करै था सो अधिक अधिक स्थितिअनुभागसहित कांडक करने लगा। बहुरि गुणसंक्रमण, गुणश्रेणी निर्जरा असंख्यातगुणां होता था सो समय २ प्रति असंख्यातवें भाग होने लगा। इत्यादि उपशमश्रेणी चढ़तां जो क्रिया होती थी सो उतरतां सर्व क्रिया विपरीत होय है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका अभाव होय, अपूर्वकरणकों प्राप्त होय है, बहुरि अपूर्वकरणका अभावकरि अधःप्रवृत्तकरण विषैं आवै। यहां पर्यन्त तो अनुक्रमतें उतरे, यहांते फेर नेम नाहीं, फेर विशुद्धता बाधै तो फेर श्रेणी मांड दे, ताकरि ऊपरके गुणस्थानकों प्राप्त होय, एक जीव एक पर्यायमें बहुत मांडै, तो दोयबार उपशमश्रेणी मांडे, अर अनेक पर्यायन विषैं चार बार मांडे, प्रत्याख्यानका उदय आय जाय तो देशसंयतगुणस्थान होय है, अर अप्रत्याख्यान-चतुष्कका उदय आय जाय तो असंयतकों प्राप्त होय, अर अनन्तानुबन्धी चतुष्कका उदय आय जाय तो सासादन होय जाय इत्यादि नेम नाहीं। बहुरि क्रोधादि चार कषाय विषैं एक कोई कषाय अर तीन वेदन विषैं एक कोई वेद सहित श्रेणी मांडे है, तातैं श्रेणी मांडनेवाला बारा प्रकार होय है, सो ए तो लोभकषाय पुरुषवेद सहित श्रेणी मांडनेवालेकी अपेक्षा संक्षेपकथन लिखा हैं, अन्य प्रकार श्रेणी मांडनेवाला के कोई २ क्रियाविशेष है, सो सर्व विधानका विशेषकरि कथन लब्धिसार नामा ग्रन्थतें जानना। इस प्रकार उपशम चारित्रभावका कथन किया सो उपशमचारित्र भाव जगतपूज्य वर्तमान

भी सुखरूप है अर आगामी सौधर्मादि स्वर्गतें लेय सर्वार्थसिद्धि पर्यन्तकूं कारण है, अर परम्पराय मोक्षकूं कारण है। उपशमचारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरणतें लेय उपशांतकषाय पर्यन्त चार गुणस्थानविषैं पाइये है, अर मार्गणा-विषैं—गति मनुष्य १ जातिपंचेन्द्रिय १ काय—त्रस १ योग मन के चार ४ वचन के चार ४ अर औदारिककाय-योग १ एसैं ९, कषाय संज्वलनचतुष्क ४ हास्यादिक ६, बेद तीन ३, ज्ञान केवलविना ४, संयम सामायिक छेदो-पस्थापना सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यात ४, दर्शन केवलविना ३, लेश्या शुक्ल १, भव्य १, सम्यक्त्व उपशमक्षायिक २, संज्ञा १, आहारक १ इन विषैं पाइये है। इति श्रीभावदीपकाका उपशमभावाधिकारविषैं उपशमचारित्रभावाधिकार दूजा समाप्त भया। एसैं दोय अधिकारन विषैं उपशमभावाधिकार छट्ठा पूर्णभया ६।

अथ क्षायिकभावाधिकार प्रारम्भते—जे कर्म के क्षय होतें आत्मा विषैं भाव प्रगट होय हैं सो क्षायिकभाव कहिये। इस क्षायिकभाव के नव भेद हैं केवलज्ञान १ केवलदर्शन २ क्षायिकसम्यक्त्व ३ क्षायिकचारित्र ४ बहुरि दान १ लाभ २ भोग ३ उपभोग ४ वीर्य ५ ए पांच क्षायिकलब्धि ५ एसैं नव भाव हैं तिन विषैं प्रथमही क्षायिक सम्यक्त्वभावाधिकार लिखिये है।

दोहाः—अनंतानुबंधीचतुष्क दर्शनमोहमहंत। तिनको क्षयकरि धारि बल चारितमोह दहंत ॥१॥
तिनके पद मन वचथकी सीस धारि परिणाम। करूं त्रिकालमंगल करन सवविधि पूरनकाम ॥२॥

जो मनुष्य कर्मभूमि विषैं उपज्यो होय सो केवली श्रुतकेवली के पादमूल विषैं तिष्ठतो होय सो ही दर्शन-मोहकी क्षपणाको प्रारंभक होय है, यातैं अन्यत्र ऐसी विशुद्धता न होय है। अधः करण के प्रथमसमय तैं लगाय जावत मिथ्यात्वमोहनी अर मिश्रमोहनी को द्रव्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होय संक्रमण करै, तावत् अन्तर्मुहूर्त के दर्श-नमोह की क्षपणा को प्रारंभक कहिये, सो दर्शनमोह की क्षपणा के पहले तीन करण विधान करि अनंतानुबंधीचतु-ष्कको विसंयोजन करै, तिनके द्रव्य कों चारित्रमोह की अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलनरूप बाराकषाय छह हास्या-

दिक तीन वेद इन प्रकृतिनविषैं गुणसंक्रमणभागहार को भाग देइ २ अपकर्षण करि समय २ असंख्यातगुणां क्रमने लियां संक्रमण करै—तद्रूप करैं एसा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त संक्रमण विधान करि परिणमावैं, अनंतानुबंधी चतुष्क कों अनिवृत्तिकरणके अंत में अभाव करैं, ताका नाम विसंयोजन कहिये, सो विसंयोजन असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, वा अप्रमत्त चार गुणस्थानवर्ती बेदकसम्यग्दृष्टी जीव करे है । तहां पहले अधः प्रवृत्तकरण करै, तहां समय २ अनंतगुणी परिणामन की विशुद्धता करतां संतां सर्वविधान स्थितिबंधापसरण अनुभाग बंधापसरणादि सर्व-क्रिया करतां संतां संख्यातहजार स्थितिकांडकघात अनुभाग कांडकघात इत्यादि आवश्यकादि क्रिया करते संतां अपूर्वकरण काल अन्तर्मुहूर्त पूरा करि अनिवृत्तिकरणने प्राप्त होय । यहां गुणसंक्रमण अनंतानुबंधी का ही है, और प्रकृतिन का नाहीं है । तहां अनंतानुबंधीका स्थितिसत्व ताका चार पर्व स्थितिघटने की मर्यादा करि चार विधान होंय हैं अपूर्वकरण के प्रथम समय विषैं अंतः कोड़ाकोड़ी प्रमाण कर्मन का स्थितिस्वरूप ताकों अनेक स्थितिकांडक-घात करि घटाय अनिवृत्तिकरणके पहले समय अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्व पृथक्त्वलक्षसागर प्रमाण राखै, एक पर्व तो यह भया १-पीछे संख्यात हजार स्थितिखन्डभये असंज्ञीपंचेन्द्रियका स्थिति समान हजार सागर राखै, पीछे फेर संख्यातहजार स्थितिखन्ड भये चौइन्द्रियका स्थितिसत्व समान सौ सागर राखै, एसै ही तेंद्रियका पचास सागर, बेंद्रियका पचीस सागर, एकेंद्रियका एक सागर प्रमाण स्थितिसत्व रहे है । बहुरि पल्य प्रमाण स्थितिसत्व रहे है, यह दूसरा पर्व भया २ । बहुरि हजारों स्थितिखन्ड होतां संतां पल्यका असंख्यातवांभाग मात्र स्थितिसत्व रहै, ए तीसरा पर्व भया ३ । बहुरि संख्यात हजार स्थितिखन्ड भये उच्छिष्टावली हैं नाम जाका एसा आवलीमात्र अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्व रहै है सो चौथा पर्व भया ४ । सो यहां पर्यन्त तो समय २ असंख्यात असंख्यातगुणां द्रव्य गुणसंक्रमणकरि अनन्तानुबन्धीकों इकईसप्रकृति रूप संक्रमणकरि परिणमावै । बहुरि उच्छिष्टावली मात्र निषेकनके द्रव्यकों एक एक समय विषैं एक एक निषेककों बारह कषाय, नो कषायरूप परिणमाय अभाव करै है, एसैं अनंतानुबंधीको विसंयोजन करै है, पीछे अंतर्मुहूर्त काल विश्रामकरि

करि अन्य क्रिया करि, तहाँ पीछे बहुरि तीन करण करि अनिवृत्ति करण काल विषैं मिथ्यात्व १ मिश्रमिथ्यात्व २ सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व ३ इन तीनप्रकार मोहनी कों क्रम तें नाश करे हैं सो ही कहिये है दर्शनमोह की क्षपणाके सन्मुख होत संतै जीव समय २ अनंतगुणी विशुद्धतायुक्त होय दर्शनमोह के उपशमन विषैं जैसैं विधान कह्या तैंसैं सर्वजानना। अधःप्रवृत्तकरण करि पीछे अपूर्वकरण कों प्राप्त होय, अनिवृत्तिकरण कों प्राप्त होय है, तहां मिथ्यात्वमोहनी अर मिश्रमोहनी के द्रव्य कों गुणसंक्रमण करि सम्यत्त्व मोहनी रूप परिणमावै है, यहां दर्शन-मोह की स्थितिरूप पृथक्त्व लक्षसागर प्रमाण है। बहुरि यातैं परै दर्शनमोह की स्थिति पल्य प्रमाण रहैं तहां पर्यन्त स्थितिकांडकायाम का प्रमाण पल्यके संख्यातवें भाग मात्र है, तहां संख्यातहजार संख्यातहजार कांडक करतैं २ असंज्ञीपंचेन्द्रिय, चौन्द्रिय, तेइन्द्रिय, वेंन्द्रिय, एकेन्द्रियप्रमाण हजार सागर, सौ सागर, पचाससागर, पचीससागर, एकसागर १००–५०–२५–१ सागर प्रमाण दर्शनमोह की स्थिति सत्व राखै है, एसैं चार पर्व करै हैं। तहां दर्शनमोह के द्रव्यकों उदीरणा कर असंख्यात २ समयप्रवद्ध प्रमाण द्रव्य उदयावली विषैं दीजिये है। बहुरि संख्यातहजार स्थितिकांडक भयें मिथ्यात्वकी स्थिति तहां उच्छिष्टावलमात्र अवशेष रहै है। बहुरि संख्यातहजार स्थितिकांडक भयें मिथ्यात्वकी स्थितिके अंत कांडककी स्थिति अष्ट वर्षप्रमाण रहै है। बहुरि मिथ्यात्व प्रकृति का अंतकाडक की अंतफाली हो है तासमैं मिश्रमो-हनी की स्थिति उच्छिष्टावली मात्र अवशेष रहै है, सम्यत्त्वमोहनी की स्थिति अष्टवर्षप्रमाण रहै है। बहुरि मिथ्यात्व प्रकृति के अंतकांडक की अन्तफाली जिससमय मिश्रमोहनी विषैं संक्रमण होय है तिस समय मिथ्यात्व का तो अभाव होय है, अर मिश्रमोहनी का द्रव्य उत्कृष्ट होय है, अर मिश्रमोहनी के अंतकांडक की अन्तफाली को द्रव्य सम्यत्त्वमोहनी विषैं संक्रमण होय है, तिससमय मिश्रमोहनी को अभाव होय हैं, तिससमय सम्यक्त्वमोहनीका द्रव्य उत्कृष्ट होय है, किंचि-दून द्व्यर्द्धगुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण होय हैं। बहुरि गुणश्रेणी, गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघातादि अनेक क्रिया होत संते सम्यक्त्व मोहनी की स्थिति अन्तर्मुहूर्त रहै हैं, तहां सर्वक्रिया का अभाव होय है, अर अनिवृत्तिकरणकी समाप्ति

होय हैं, गलितावशेष गुणश्रेणीआयाम कृतकृत्यबेदक का कालप्रमाण रहै है। तहां यह जीव कृतकृत्यबेदक सम्यग्दृष्टी होय है, जातै किये हैं करने योग्य कार्य जानैं तातैं कृतकृत्यबेदक नाम पावै है। यहां पर्यन्त दर्शनमोहकी क्षपणा को प्रारम्भ करै हैं, यहांपर्यन्त मरण नाहीं है, अर कृतकृत्यबेदककाल में आयु का अंत होय तो मरण करै, अब जो कृतकृत्यबेदक काल विषैं ही अपने आयु के अन्त के वश थकी मरण कों प्राप्त होय, तो सम्यक्त्वग्रहण तें पहले जो आयु बांधा था ताकैं वश तैं मरण करि चारों गतिन विषैं उपजे हैं, कृतकृत्यबेदककाल के चारभाग एक २ अंतर्मुहूर्तमात्र कहिये। तहां प्रथम भाग विषैं मूवा जीव देवगति विषैं ही उपजैं। बहुरि दूसरे भाग विषैं मूवा जीव देव मनुष्य दोऊ गतिविषैं उपजैं। बहुरि तीसरे भाग में मूवा जीव मनुष्य देव तिर्यंच तीनगतिविषैं उपजै, अर चौथेभागमें मूवा जीव चारोंगतिन विषैं उपजै। जो गति पूर्वैं बांधी होय ताहीके अनुसार परिणाम होंय, तिनके योगकालविषैं मरण होय। बहुरि अधः करणके प्रथम समय विषैं दर्शनमोह की क्षपणा का आरंभक जीव के पीत पद्म शुक्लेश्या जो होय सो समय २ अनंतगुणी विशुद्धता के क्रम करि अनिवृत्तिकरण के अन्तसमय विषैं तिस लेश्या का उत्कृष्ट सम्पूर्ण होय, ताकैं पूर्वैं देवायु बंधी होय, ताकै चारों ही भाग में मरै तो लेश्या पलटै नाही, सर्वभाग का मूवा कल्पवासी देव होय, अर जिनकै तीन अन्य आयु बंधी होय, सो दूसरे तीसरे चौथे भाग में मरै, सो शुभ लेश्या की क्रम तैं हानि होय करि मरण होय, ता समय कापोत लेश्या का जघन्य अंश होय, जातैं यहां जाकै पूर्व मनुष्य तिर्यंच आयु बंधी होय तो भोगभूमियां मनुष्य तिर्यंच होय, अर जाकै पूर्व नरकायु बंधी होय सो चौथे भाग में मरण करि प्रथम नरक विषैं उपजै, आगै न उपजै। सो जा गति विषैं उपजै, ता गति विषैं निष्ठापन करि क्षायिकसम्यक्त्व कों प्राप्त होय है। अर मरन नहीं होय तो तहां ही अंतर्मुहूर्त-कालप्रमाण कृतकृत्यबेदक दशा कों भोगि निष्ठापन करि क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त होय, अर एसैं अनंतानुबंधीचतुष्क दर्शनमोहत्रिक इन सात प्रकृतिन के क्षय तैं क्षायिक सम्यक्त्व होय है। सो कैसा है क्षायिक सम्यक्त्व? निःकम्प है, निश्चल है, बहुरि निर्मल है, शंकादिमल रहित है, अक्षय है, शिथिलता के अभाव तैं गाढ़ा (ढ़) है अनंत कहिये अन्त

रहित है, दर्शनमोह के क्षय होतें क्षायिकसम्यग्दृष्टी जीव तिसही भव विषैं वा तीसरे भव विषैं, वा चौथे भव विषैं, नेम करि सिद्धपद कों पावै। एसा यह क्षायिकलब्धिरूप क्षायिकसम्यक्त्वभाव है सो ए भाव वर्तमान विषैं भी सुख के कारण हैं, अर आगामी मोक्षसुख के कारण हैं। बहुरि गुणस्थान तो असंयत सो लगाय अयोगीपर्यन्त ग्यारहगुणस्थान पर्यन्त पाइये हैं। मार्गणा—गति ४ जातिपंचेन्द्रिय १ काय—त्रस १ योग १५ वेद ३ कषाय २१ ज्ञान सुज्ञान ५ संयम ७ दर्शन ४ लेश्या ६ भव्य १ सम्यक्त्व स्वकीय १ संज्ञी १ आहारक १ इनविषैं पाइये।

इति श्रीभावदीपिका का क्षायिकभावाधिकार विषैं क्षायिकसम्यक्त्वभावाधिकार पूर्णभया १ इति

अब क्षायिक चारित्रभावाधिकार लिखिये है

दोहा:—मोह अरी को क्षय करन ध्याये सिद्ध सुधीर। मार लियो क्षण एक में नमूं महँत बरवीर ॥१॥

चारित्रमोहकी इकईस प्रकृतिनका क्षय होतसंतैं जो भाव निपजै ताका नाम क्षायिकभाव चारित्र कहिये। चारित्रमोह की क्षपणा विषैं षोड़श करण होय हैं १६ अधः करण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ बंधापसरणकरण ४ सत्वापसरणकरण ५ क्रमकरण ६ अष्टकषाय षोड़शप्रकृतिनका क्षपणाकरण ७ देशघातिकरण ८ अन्तरकरण ९ संक्रमणकरण १० अपूर्वस्पर्धककरण ११ बादरकृष्टिकरण १२ सूक्ष्मकृष्टिकरण १३ कृष्टिअनुभवनकरण १४ ज्ञानावरणादिकर्मक्षपणा करण १५ योगनिरोधकरण १६ इति षोड़शकरण।

मोहकी सप्तप्रकृतिनका नाश करि क्षायिकसम्यग्दृष्टी चारित्रमोहकी इकईस प्रकृतिन का सत्व सहित होय अप्रत्याख्यानचतुष्क ४ प्रत्याख्यानचतुष्क ४ संज्वलनचतुष्क ४ हास्यादिक ६ वेद ३ सो जीव संसारमें जघन्य रहै तो अंतर्मुहूर्त अधिक न रहै, अर उत्कृष्ट रहै तो अंतर्मुहूर्त सहित अष्टवर्ष करि हीन दोय कोड़ि पूर्व अधिक तेतीससागरकालप्रमाण रहै, अधिक न रहै, सो जीव कोई कालमें चारित्रमोहकी क्षपणाकों योग्य जे विशुद्धपरिणाम तिनकरि सहित होय। कैसें होंही? मुनिपद को अंगीकार करि अप्रमत्तगुणस्थानको प्राप्त होंही। बहुरि अप्रमत्तसौं प्रमत्त विषैं हजारों

वार गमनागमन करें, महामुनि सो ही भये चक्रवर्ती सो यथाख्यातचारित्ररूप एक छत्रराज करने के अर्थि क्षपकश्रेणीरूप दिग्विजय करने के सन्मुख होत संतां प्रथम सातिशय अप्रमत्तगुणस्थान विर्षे अधः करणरूप प्रस्थान करे हैं। कैसा है क्षपणकरण ? अतिविशुद्ध है परिणामजाका चार मन के योगन विर्षे कोई एक मनयोग, चार वचन योगन विर्षे कोई एक वचनयोग होय, अर औदारिक काययोग होय। बहुरि कैसा है ? संज्वलन चार कषायन के विर्षे कोई एक हीयमान कषाय होय। बहुरि कैसा है ? बहुत मुनिन कों प्रसिद्ध उपदेश करता श्रुतज्ञान उपयोग होय, बहुरि शुक्ल-लेश्या होय, बहुरि तीन वेदन विर्षे कोई एक वेद होय, द्रव्यपुरुषवेद ही होय, बहुरि कैसा होय ? दर्शनमोह की प्रकृति ३ अनंतानुबंधी चतुष्क ४ भुज्यमानमनुष्यायु विना तीन आयु ३ ऐसी दशप्रकृतिनका सत्व रहित होय। बहुरि जहां कर्मन की स्थितिसत्व, अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण होय, बहुरि अनुभागप्रशस्तप्रकृतिन का गुड़, खण्ड, शर्करा, अमृत रूप चतुःस्थानिक अर अप्रशस्तप्रकृतिन विर्षे घातिया का दारु, लता, अर अघातिया का निंब, कांजीर रूप द्विस्थानक सत्व होय हैं। प्रदेशसत्व अजघन्य व अनुत्कृष्ट है इत्यादि भावनरूप सामग्रीयुक्त जीव चारित्रमोह का क्षपणाको आरंभ करे है, सो प्रथम अधः प्रवृत्ति करण करे हैं। तहां प्रशस्तप्रकृतिनका समय २ प्रति अनंत गुणा क्रम लिये विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होय है, समय २ अनंतगुणां क्रमलिये चतुः स्थानिक अनुभागबंध करे हैं, अप्रशस्तप्रकृतिनका अनन्तवांभाग क्रमलिये द्विस्थानक अनुभागवन्ध करे है। बहुरि पूर्वस्थितिवन्धमें पल्यका संख्यातवांभाग मात्र स्थितिवन्ध घटाय एक अन्तर्मुहूर्तकाल पर्यन्त समय २ समान वन्ध होय, सो यह एक स्थितिवन्धापसरण भया। ऐसें संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण अधः प्रवृत्तकरण विर्षे होय हैं। इति अधःप्रवृत्तकरण।

आगे अपूर्वकरणका वर्णन करिये है—यहां पृथक्त्ववितर्क वीचारनामा शुक्लध्यानको प्रथम पाद प्रगट होय है। बहुरि यहां गुणश्रेणी १, गुणसंक्रमण २, स्थितिखंडन ३, अप्रशस्तप्रकृतिनका अनुभागखण्डन ४। ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि अधःप्रवृत्तकरणके अन्तसमय विर्षे जो स्थितिवन्ध होता था तातैं पल्यका संख्यातवांभाग घटता और ही

स्थितिबंधापसरण को प्रारंभ होय है । बहुरि गुणश्रेणी आयाम का प्रमाण अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, क्षीणकषाय इन चार गुणस्थानन का मिलाया हुवा काल के प्रमाण ते साधिक है, सो उदयावली तें बाह्य गलितावशेषरूप जो एहु (?) गुणश्रेणीआयाम ता विषैं गुणश्रेणी का अपकर्षण किया द्रव्य का असंख्यातगुणां क्रम नें लियें समय २ विषैं निक्षेपण करै है । बहुरि गुणसंक्रमण करैं है, जिन प्रकृतिनका यहां बंध न पाइये ऐसी जे अप्रशस्तप्रकृति तिनका द्रव्य समय २ असंख्यातगुना क्रम लिये तिनका यहां बंध पाइये ऐसी जे प्रशस्तप्रकृति तिनके विषैं संक्रमण करे है तद्रूप परिणमै है, जैसें असातावेदनीका द्रव्य सातावेदनी रूप परिणमै, एसें ही अन्य प्रकृतिनका जानना । बहुरि स्थिति-कांडक घात करै है, ताका आयाम पल्य के संख्यातवेंभाग मात्र है, तथापि जघन्य तें उत्कृष्ट संख्यातगुणा है । बहुरि अनुभागकांडक घात करै हैं, एक स्थितिकांडकघात का कालविषैं संख्यातहजार अनुभागकांडक घात होय है, सो एक २ अनुभागकांडक विषैं अनुभागसत्व अनंतवेंभाग २ अप्रशस्त प्रकृतिन का खंड करि राखै है, प्रशस्त प्रकृतिन का अनुभा-गखंड नेम तें न होय है, जातैं विशुद्धपरिणामन तैं शुभप्रकृतिनके अनुभागका घटावना संभवै नाहीं । इति अपूर्वकरण ।

अब अनिवृत्तिकरण कहिये हैः—इहां अपूर्वकरण के अन्तसमय तें घटता और ही स्थितिकांडक अनुभागकांडक घात होय हैं । बहुरि यहां अप्रशस्त प्रकृतिन को उपशम १ निधत्ति २ निकाचना ३ इन तीन करणनि का अभावभया अब सर्व ही कर्म उदीरण, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण करने योग्य भये । अब क्रमकरण कहिये है—(नि) वृत्तिकरण विषैं संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण भयें, जहां अनिवृत्तिकरणके काल का संख्यात बहुभाग तो व्यतीत होय अर एक संख्यातवांभाग अवशेष रहै, तहां कर्मन का स्थितिबंध असंज्ञी पंचेन्द्रिय समान हजार सागर होय । बहुरि संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण होतां होतां चौन्द्रियप्रमाण सौ सागर १००, तेंद्रिय प्रमाण पचाससागर ५०, बेंद्रिय प्रमाण पचीससागर २५, एकेंद्रियप्रमाण एकसागर १ । तहां पर्यन्त तो कर्मनका स्थितिबंध पूर्वोक्त प्रकार भया, दर्शनमोहतें चारित्रमोहका चार सातवां भागमात्र, ज्ञानावरणादि चार प्रकृतिनका तीनसातवां भागमात्र, नामगोत्रका दोयसातवां भागमात्र अनुक्रम था

सो भया, जातैं कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थितिबंध दर्शनमोह की सत्तर कोड़ाकोड़ीसागर की बांधै, तहां नेम करि चारित्रमोह की चालीसकोड़ाकोड़ी, ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनी, अन्तराय चार कर्मनकी, तीसकोड़ाकोड़ी, नामगोत्रकी बीस कोड़ाकोड़ी सागरकी बंधैं । ताही अनुसार जहां दर्शनमोहकी जेती स्थितिबंध होय, ताकों सातका भाग दीजै, जोप्रमाण आवै, ताकौं सात कर गुणै जो प्रमाण आवै, तितनी दर्शनमोहकी, अर चार करि. गुणैं जो प्रमाण आवै तितनी चारित्र मोहकी, अर तीन करि गुण्यां जो प्रमाण होय सो तीसयनिकी, अर दोय करि गुण्यां जो प्रमाण आवै सो बीसयनि की स्थितिबंध होय है, सो यहां पर्यन्त तो एसा ही अनुक्रम रहा। यहां पीछे संख्यातहजार स्थितिबंधापसरण, और न (?) भये तहां बीसयन का पल्य मात्र स्थितिबधभया, तहां तीसयनका ड्योढ़ा चारित्रमोहका दूना ऐसें अनुक्रमसों स्थितिबंध होने लगा, एसैं अनेक प्रकार अनुक्रम पलटि स्थितिबंध होय है, एसा ही स्थितिसत्वका अनुक्रम होय है । बहुरि ज्हां पल्य का संख्यातवांभाग प्रमाण स्थितिबंध होय, तहां असंख्यात समय प्रबद्धनकी उदीरणा होय है ।

आगैं क्षपणाधिकार कहिये है—अनिवृत्तिकरणके क्षपणा भागन विषैं प्रथम भागमें स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला ए तीन तो दर्शनावरणी, नरकगति १, नरकगत्यानुपूर्वी १, तिर्यग्गति १, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी १, एकेंद्रिय १, वेंद्रिय १, तेंद्रिय १, चौंद्रिय १ ए चार जाति अर आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण ये तेरह नामकी, एसै सोलह प्रकृति के सत्वका अभाव भया। बहुरि दूसरे भागमें अप्रत्याख्यान प्रत्यारव्यान आठ प्रकृति चारित्रमोहकी सत्वका अभाव भया। बहुरि देशघातिकरण कहिये हैं—मनःपर्याय ज्ञानावरणीकूं आदि देय बारह प्रकृति पूर्वै द्विस्थानगत सर्वघाति अनुभागबन्ध होता था, अब स्थानगत देशघातीबन्ध होने लगा । आगैं अन्तरकरण कहिये है—देशघाती करणतें संख्यात हजार स्थितिकांडक भयैं चार संज्वलन अर नव नो कषाय इन तेरह प्रकृतिनका अन्तर करै हैं, औरनका अन्तर न होय है, नीचले ऊपरले निपेकनकों छोडि अन्तर्मुहूर्तमात्र बीचके निषेकनका अभाव करना सो अन्तरकरण जानना, सो एक स्थितिकांडकोत्करण मात्र काल विषैं अन्तर कों पूर्ण करै है। संज्वलन चतुष्क विषैं कोई एक कषाय, अर तीन वेदन

विषैं कोई एक वेदसहित श्रेणी मांडै ते तौ उदयप्रकृति हैं, तिनकी तौ अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रथमस्थिति पावै, अवशेष जिनका उदय न पाइये ऐसी ग्यारह प्रकृति तिनकी आवलीमात्र प्रथमस्थिति स्थापै सो वर्तमान समय सम्बन्धी निषेकतैं लगाय प्रथमस्थिति प्रमाण निषेकनकों नीचे छोड़ि तिनके ऊपरके निषेकनका अन्तर करै, तिन अन्तररूप निषेकनके द्रव्यकों अन्तरकरण कालके प्रथम समयतैं लगाय अन्तरसमय पर्यन्त समय २ असंख्यातगुणां क्रमने लियां अंतर करै है, तिन कितनेक प्रकृतिनके द्रव्यकों प्रथम स्थिति विषैं दे है, अर कितनेक प्रकृतिनके द्रव्यकों अन्तरकरणके अन्तसमयके अनन्तरवर्ती समयतैं लगाय उपरितन स्थितिविषैं दे है, अर कितनीक प्रकृतिनका द्रव्य प्रथमस्थिति वा उपरितनस्थिति दोनों विषैं दे है। अन्तर्मुहूर्तकालमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरायाम मोहिनीका द्रव्यरहित करै। इति अन्तरकरण।

अब संक्रमणकरण कहिये है—यहां सात करणका प्रारम्भ युगपत् होय है, मोहिनीका बन्ध और उदय तो केवल लताभागरूप होता भया, दोय करण तो ए भये २, अर मोहिनीका स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवांभाग प्रमाण होता था सो घटि संख्यातवर्ष मात्र होने लगा ३, बहुरि मोहनीकी प्रकृतिनका पूर्वै जहां तहां सजाती प्रकृतिन विषै संक्रमण होता था सो आनुपूर्वी संक्रमण होनेलगा ४। बहुरि पूर्वै लोभका अन्य प्रकृतिन विषैं संक्रमण होता था अब न होय ५। बहुरि नपुंसकवेदको आवतसंक्रमणकर याकों अन्य प्रकृतिरूप परिणमाय नाशकरनेका उद्यमी भया ६। बहुरि पूर्वै कर्म बंधै पीछे आवली व्यतीत भयें ही उदीरणा होती थी, अब छह आवली व्यतीत भये पीछे ही उदीरणा होय ७। स्त्रीवेद नपुंसकवेदका द्रव्य तो पुरुषवेद विषैं संक्रमण होय है, पुरुषवेद छह हास्यादिक ऐसैं सात नो कषायनके द्रव्य संज्वलन क्रोध विषैं संक्रमण करै है। बहुरि क्रोध-मान विषैं, मान-माया विषैं मायाकालोभ विषैं संक्रमण होय है ऐसैं प्रकृतिनका द्रव्य अन्यअन्य प्रकृतिन संक्रमण होय है, आप नाशकों प्राप्त होय, येहु आनुपूर्वी संक्रमण जानना। बहुरि जहां बत्तीसवर्ष मात्र स्थितिबन्ध होने लागै तहां स्थितिबन्धापसरण अन्तर्मुहूर्तमात्र है। बहुरि अपूर्वस्पर्धकविधान कहिये—कर्मरूप परिणये जे पुद्गलपरमाणूं सो एक २ परमाणु विषैं अपने अपने रस देनेकी शक्तिके अविभाग प्रतिच्छेद अनन्तानन्त हैं परंतु अधिकहीन प्रमाणकों लिये हैं सर्व ही

परमाणुन विषैं अविभागप्रतिच्छेद समान नाहीं, तातैं अनेक नानाप्रकार गणनारूप शक्तिका अविभाग प्रतिच्छेदकों धरैं परमाणु सो वर्ग कहिये। तहां समान अविभाग प्रतिच्छेद के धारक वर्गनके समूहका नाम वर्गणा कहिये, जातैं एक एक वर्गणा विषैं अनंतानंतवर्ग हैं, वर्गणानके समूहका नाम स्पर्धक कहिये। एक २ स्पर्धक विषैं अनन्तवर्गणा हैं। जिस वर्ग विषैं घाट सों घाट शक्तिके अविभागप्रतिच्छेद होंय सो जघन्यवर्ग कहिये। जघन्यवर्गके समूह का नाम जघन्यवर्गणा कहिये। जघन्यवर्गतें एक २ अविभागप्रतिच्छेद जिन वर्गन विषैं बधता होय तिनके समूहका नाम द्वितीयवर्गणा कहिये। बहुरि उसतें भी एक २ अविभागप्रतिच्छेद जिन वर्गणि विषैं बधता होय तिनके समूहका नाम तृतीय वर्गणा कहिये। ऐसैं अनंतवर्गणा होंय। बहुरि जहां जघन्य वर्गणा विषैं जितने अविभागप्रतिच्छेदकों धरैं वर्ग हैं तिनतैं दूणां अविभाग-प्रतिच्छेद जिनवर्गन विषैं पाइये तिनके समूहकों धारैं द्वितीय स्पर्धककी जघन्य आदि वर्गणा हैं। इहांतैं आगै दूसरे स्पर्धकका आरम्भ भया यहां पहली २ प्रथमस्पर्धककी वर्गणा कहिये—ऐसैंही द्विगुणां, तिगुणां, चौगुणां, पंचगुणां इत्यादि प्रमाणकों धर्‍यां जघन्य वर्गनतैं जहां जहां वर्गनका समूहरूप वर्गणा होय तहां तहां अन्य २ स्पर्धक जानना। एसैं प्रथम स्पर्धकका नाम जघन्यस्पर्धक कहिये, अर अंतके स्पर्धकका नाम उत्कृष्ट अनुभागकों धरैं उत्कृष्ट स्पर्धक कहिये। मध्यके अनंत भेद हैं। एसैं एक २ स्पर्धक विषैं अनंतीवर्गणा हैं, अर एक २ वर्गणा विषैं अनंतेवर्ग हैं, अर एक २ वर्ग विषैं अनंतानंत शक्तिके अविभागप्रतिच्छेद हैं, जो प्रथम जघन्य जघन्यवर्गणाके वर्ग विषैं अविभागप्रतिच्छेद हैं तासों ताही स्पर्धककी उत्कृष्ट वर्गणाका वर्ग विषैं अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद हैं। बहुरि जो प्रथम जघन्यवर्गणा विषैं अविभाग प्रतिच्छेद पाइये तासों अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद ताही स्पर्धककी अंतकी उत्कृष्टवर्गणा विषैं पाइये। बहुरि जघन्यस्पर्धक विषैं जो अविभाग-प्रतिच्छेद जितने प्रमाण कूं लियां होय तासों अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद अंतके उत्कृष्टस्पर्धक विषैं पाइये। बहुरि वर्गणावर्गणा प्रति वर्ग जघन्य सों लेय उत्कृष्टपर्यंत चयचयप्रमाण घटताघटता है, एसै स्पर्धकरूप शक्तिकों धरैं कर्म सर्व संसारी जीवनके सत्व विषैं तिष्ठैं हैं, एसा तो पूर्वस्पर्धकका स्वरूप है। बहुरि अपूर्व स्पर्धक इहां करै है चारों संज्वलनकषायनिका युगपत्

अपूर्वस्पर्धक देशघाती जघन्यस्पर्धक तें नीचे अनंतगुणां घटता अनुभागरूप करै है, पूर्वस्पर्धकनि विषैं जघन्यस्पर्धक की ज्यों जघन्यवर्गणा थी ताकै नीचै घटता अनुभागलियें कोई वर्गणा थी नाहीं सो ही अब यहां जघन्यस्पर्धककी जघन्यवर्गणाके नीचे अपूर्वस्पर्धकनकी वर्गणानकी रचना भई, तहां पूर्वस्पर्धकनकी जघन्यवर्गणातेंभी अपूर्वस्पर्धकनकी उत्कृष्टवर्गणा विषैं अनुभागके अविभाग प्रीतच्छेद अनंतवांभागमात्र हैं। एसें अपूर्वस्पर्धक अनंतप्रमाण करै है, जघन्य अपूर्वस्पर्धकतें उत्कृष्टअपूर्वस्पर्धक विषैं अनुभाग (अविभाग) प्रतिच्छेद अनंतगुणे जानने। इति अपूर्वस्पर्धक करण। बहुरि बादर कृष्टिकरण कहिये हैं—यहां अपूर्वस्पर्धकनकों भोगवतां संतां जीव बादरकृष्टि करै है, जहां कर्मनका अनुभाग कृष कहिये हीन करिये सो कृष्टि कहिये पूर्व अपूर्व स्पर्धकनरूप तिष्ठता जो सत्तामें द्रव्य ताकों अपकर्षण भागहारका भाग देई द्रव्य का अपकर्षण करि तांकों पल्य के असंख्यातवें भागका भाग देइ बहुभागमात्र द्रव्य की तो बादर कृष्टि करैं, अर एकभागमात्र द्रव्य पूर्व अपूर्वस्पर्धकरूप परिणमावै है, सो एकस्पर्धक विषैं जो वर्गणानका प्रमाण पाइये ताका घटता एसा अनंतवां भागमात्र कृष्टि करै है सो कृष्टिविषैं द्रव्य चय चय प्रमाण घटता है, अर अनुभाग कृष्टि २ प्रति अनंतगुणा घटता है जो अपूर्वस्पर्धक जघन्य विषैं अनुभाग है ताके अनंतवें भाग कृष्टि अनुभाग उत्कृष्ट बादर कृष्टि विषैं हैं, ताके अनंतवेंभाग अनुभाग जघन्य बादर कृष्टि विषैं है सो कृष्टिनका प्रमाण अनंत जानना। इहां चारों कषायन विषैं एक २ कषायन के विषैं तीन २ तो संग्रहकृष्टि हैं, अर एक २ संग्रहकृष्टि विषैं अंतर कृष्टि अनंतानंत हैं। तहां नीचे ही नीचे लोभकी कृष्टि है, ताके ऊपर मायाकी अर ताके ऊपर मानकी अर ताके ऊपर क्रोधकी कृष्टि पाइये है, एसैं कृष्टि रचना होय है। बहुरि नोकषाय के द्रव्यकी कृष्टि होय है सो क्रोधकी कृष्टिन विषैं जुड़ी हुई है, जातैं नोकषायनका सर्वद्रव्य संज्वलनक्रोधरूप संक्रमण भया है, बहुरि जो जीव क्रोधके उदय सहित श्रेणी मांडै सो तो वारह संग्रहकृष्टि करैं, अर जो मानके उदय सहित श्रेणी चढ़े सो क्रोधकी तीन संग्रहकृष्टि नाहीं करै, नव ही करैं, तातैं क्रोधका पहले ही संक्रमण करि क्षय करै है। बहुरि तैसैं ही जो मायाके उदय सहित श्रेणी चढ़ै ताके क्रोध मानका पहले ही संक्रमण करि क्षय होय जाय है, तातैं दोय कषायनकी छह ही संग्रहकृष्टि

चौदह कर्मनका सत्व अर उदयका अभावभया, बहुरि क्षीणकषायके प्रथम समयतें लगाय शरीरविषैं तिष्ठते निगोदजीव अनन्ते मरें हैं, तातें द्वितीयादि समयन विषैं अधिक अधिक मरें हैं, वा क्षीणकषायके पिछले भागनविषैं असंख्यागुणे क्रमनैं लियां जीव मरें हैं, तहां अन्तके समय सर्वनिगोद जीवनका अभाव होतें केवलीका शरीर निगोद रहित होय है। यहां शुक्ल-ध्यानके बलकरि तिनके निपजनेका निरोध ही है, अर पहली उपजे थे ते स्वयमेव अपने आयुके नाश होतें मरें हैं। यावत् निगोदजीवनका जघन्य आयु मात्र क्षीणकषायका काल अवशेष रहै, तावत् निगोदजीव तहां उपजैं भी हैं अर पूर्व उपजे जीव मरें भी हैं, तहां पीछे फेर उपजैं नाहीं, आयुनाशतें केवल मरें ही हैं, ऐसैं क्षीणकषायके अन्तसमय विषैं घातियाकर्मन का नाश करि ताकै अनन्तर सयोगकेवली जिन ही सर्वज्ञ सर्वदर्शी होंय हैं, घातियाकर्मनका चतुष्टयका नाश होतें अनन्त-चतुष्टयकी उत्पत्ति होय है—

अनन्तज्ञान १, अनन्तदर्शन २, अनन्तसुख ३, अनन्तवीर्य ४ ऐसैं विशेषगुणनकों प्राप्त होंय हैं। ज्ञानावरण १, दर्शनावरण २ इन दोनोंका नाशकरि केवलज्ञान अर केवलदर्शन होय है। सो कैसा है केवलज्ञाल ? इन्द्रिय वा मन वा प्राकाशादिकके सहाय रहित है सूक्ष्म, अन्तरित, दूर आदि सर्व पदार्थनकों प्रत्यक्ष युगपत् जानैं हैं। बहुरि तैसें ही केवल-दर्शनकर देखैं हैं, जैसे चन्द्रबिम्ब विषैं शीतस्पर्श अर शीतवर्णपनौ युगपत है तैसें जिनेंद्र विषैं केवलज्ञान केवलदर्शन युगपत् होय है। बहुरि वीर्यान्तराय कर्मके क्षयकरि अनन्तवीर्य होय है। समस्तज्ञेय पदार्थनकों सदाकाल जाननेतें भी खेद नाहीं उपजे हैं, अर काहू कर घाती न जाय एसी सामर्थ्य ताकों धारैं हैं। बहुरि नव नोकषाय अर दानादि अन्तराय चतुष्कके क्षयतें अनन्तसुख होय हैं। कैसा सुख होय हैं ? जो अन्यत्र एसा न पाइये, तातैं अनोपम्य हैं। बहुरि काहूकर बाधित नाहीं, तातें अव्यबाध हैं। बहुरि आत्माकर उत्पन्न हैं तातें आत्मसमुत्थ हैं। बहुरि इन्द्रिय विषय प्रकाशादिककी अपेक्षा रहित हैं तातें निरपेक्ष हैं। एसा ज्ञान वैराग्य ताकी उत्कृष्टताकों प्राप्त भया जो केवलीजिन, दयालू हैं लक्षण जाका एसा अनन्तसुख प्राप्त होय हैं। यहां नवक्षायिकभाव सम्पूर्ण प्रगट होंय हैं, पहले तो चौथे वा पांचवे वा छटे वा सातवें गुणे-

स्थान विषैं तीन दर्शन मोह और अनंतानुबंधी को चतुष्क इन सप्तप्रकृतिनका निक्षेप (क्षय) करि क्षायिकसम्यक्त्व भाव भया था सो तो यहां परमावगाढको प्राप्त भया होय हैं। बहुरि त्रिकालवर्ती सर्वत्र तिष्ठते एसे द्रव्यगुण पर्याय तिनकों युगपत् जाने ऐसे केवलज्ञान केवलदर्शन ए दोयभाव प्रगट भये। बहुरि इकईस प्रकृतिरूप संपूर्ण चारित्रमोह का अपने स्वभाव विषैं तिरोभुत एसा क्षायिक चारित्रभाव भया, बहुरि पंच क्षायिक लब्धिभाव प्रगट भया दान १ लाभ २ भोग ३ उपभोग ४ वीर्य ५। त्याग दिये हैं परद्रव्य अर परभावस्वभाव जानैं वा अनंतसंसार छूटने का करै हैं उपदेश सो क्षायिकदानलब्धि कहिये १ बहुरि भया है अनंतसुखका लाभ सो क्षायिकलाभलब्धि कहिये २ बहुरि अनुभवै हैं आस्वादैं हैं समय २ स्वाभाविक आत्मजन्य सुख सो क्षायिकभोग लब्धि कहिये ३ बहुरि ताही सुख कों वारंवार निरंतर आस्वादै हैं, धारै हैं सो क्षायिक उपभोगलब्धि कहिये ४ बहुरि अंतरहित शक्ति को धारै हैं सो क्षायिकवीर्य लब्धि कहिये ५ एसैं नव क्षायिक भावप्रगट भया। यहां कोई आशंका करै कि केवली के असातावेदनी के उदय तें क्षुधादि परीषह पाइये हैं, तातैं आहारादि क्रिया संभवै है? ताका उत्तर—नोकषाय अर अन्तरायचतुष्क इनके उदय बल करि दुःख रूप असातावेदनी आदि अशुभप्रकृतिनका उदयकरि उपजा एसा इंद्रियनके द्वारा होय खेद आकुलता ताका नाम दुःख है। सो केवली के नाहीं संभवै है। बहुरि जो नोकषायका उदय अर अंतरायचतुष्कका क्षयोपशमके बल करि सातावेदनी आदि शुभप्रकृतिनके उदय करि उपजा जो इन्द्रियनके संतोष किंचु निराकुलता ताका नाम इन्द्रियजानित सुख हैं। सोभी केवलीके नाहीं संभवै है, जातैं केवली के राग—द्वेष नष्ट भया है। बहुरि इंद्रियजनित ज्ञानभी नष्टभया हैं तातैं साताअसातावेदनीय के उदय करि निपज्या जो इंद्रियजनित एसा सुख—दुःख सो केवली के नाहीं है, इस हेतु तैं यह सिद्ध भया कि जो कारण के सद्भाव तैं केवली के असातावेदनी के उदय तें उपजैं एसे परीसह उपचारमात्र कहिये है, तथापि तिनकें दुःख नाहीं व्यापै किन्तु घातिया कर्मन के उदय के बल तैं वेदनीयके उदय तैं सुख—दुख व्यापै हैं, जैसे अपघात परघात नामा नामकर्म के उदय तैं भी घातिकर्म के उदयबल बिना अपना वा अन्य का घात न होय जो एसैं न होय तो परीसह के निमित्त तैं

केवली कों दुःख होय तब लोभके अर्थ कार्य करै तें जैसे मूल नासै है तैसें एहू कार्य भया, सो असंभव है, तातैं केवली कें आहार है एसा वचन अयुक्त है। बहुरि केवली के एक समयमात्र स्थिति लियें सातावेदनीका बंध होय है, सो उदयरूप ही है, तातैं ताकै असाताका उदय है सोभी साता रूप होय परिणमे है, तातैं यहां परमविशुद्धता कर साताके अनुभागकी बहुत अधिकता पाइये है, तातै असाताजनित क्षुधादि परीसहकी बेदना नाहीं है, वेदना विना ताका प्रतीकार रूप आहार कैसें संभवै? अर केवलीकों आहारक कहिये है, सो औदारिकशरीर संबंधी तो जो समयप्रबद्ध बांधे है, ग्रहण करै है, सो नोकर्मवर्गणाका ग्रहण ही का नाम आहारमार्गणा है। ताका सद्भाव केवली के है, जातैं उज्ज १ लेप २ मानस ३ कवल ४ कर्म ५ नोकर्म ६ भेद तें आहार छह प्रकार हैं। तिन-विषैं कर्म नोकर्म एह दोय प्रकार आहार केवलीकें संभवे है। अब केवलीकें समुद्घात कब होय है सो कहैं हैं——ईर्यापथबंधको कारण एसा योग तिसकर सहित केवली तीर्थंकर भया सो समोशरण विषैं मंडपके मध्य तीन पीठके ऊपर जो सिंहासन तिस विषैं विराजमान अष्ट प्रातिहार्य, चौंतीस अतिसंय सहित हैं, धातु मल रहित, परम औदारिकशरीर सहित, लोक पूज्य है, बहुरि एकयोज्न विषैं तिष्ठते एसै दूर वा निकटवर्ती तिर्यंच वा मनुष्य वा देव तिनकी अठारह महाभाषा, सातसौ क्षुल्लक भाषा, ताकों अकारित परिणमी एसी जो दिव्यध्वनि ताकरि आसन्नभव्य जीवनकों संसारसमुद्र तें पार करै है, जेसें इच्छा चन्द्रमा समुद्रको बढ़ावै है, तैसें अबुद्धिपूर्वकपनैं केवली जगतके हितकों करै है। बहुरि भगवान् बिहार करैं तब आकाश विषैं दोयसौ पचीस २२५ कमलनके ऊपर स्वयमेव गमन करैं हैं, सो या प्रकार उत्कृष्ट तो किंचिदून कोड़िपूर्व अर जघन्य प्रथक्त्ववर्ष प्रमाण तीर्थंकर केवली--सयोग गुणस्थान विषैं जाननी। सामन्यकेवलीके अतिशय आदिक यथासंभव जानने, जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्त जाननी, तहां सयोगीके प्रथमसमय तें लगाय उदयादि अवस्थित गुणश्रेणीनिर्जरा पाइये है। तहां अंतर्मुहूर्त आयु का अवशेष रहै तहांपर्यन्त समय २ समान द्रव्य अपकर्षण करि गुणश्रेणिआयाम तिन विषैं असंख्यातगुण लिये कर्म दीजिये है सो क्षीणकषाय तें असंख्यातगुणे हैं, बहुरि अपना आयुका अंतर्मुहूर्त अवशेष रहैं केवली समुद्घातक्रिया करे है। तहां दंड--

कपाट प्रतर लोकपूर्ण रूप समुद्घात क्रियाकौं करै हैं, दंडसमुद्घात करने के काल के अंतर्मुहूर्त काल पहले आवर्जितनामा-करण होय है, सो जिनेन्द्रदेवके जो समुद्घातक्रिया कौं सन्मुखपना सो ही आवर्जितकरण कहिये है। आवर्जितकरण करनेके पहले जो स्वस्थान तिसविषैं अर आवर्जितकरण विषैं भी सयोगकेवली के कांडकादि विधानकरि स्थिति अनुभागका घात नाहीं है। बहुरि आवर्जितकरण पहले स्वस्थानकेवली करि अपकर्षण किया गुणश्रेणी के द्रव्य तैं आवर्जितकरणयुक्त केवली करि अपकर्षण किया द्रव्य असंख्यात गुणश्रेणी आयाम संख्यातगुणा है। बहुरि आवर्जितकाल के अंतर्मुहूर्तकाल पीछे समुद्घात क्रिया होय है, सो अघातियाकर्मनकी स्थिति समान करने के अर्थ जीवके प्रदेशनका समुद्गमन—फैलना ताका नाम समुद्घात हैं, सो दंड कपाट प्रतर लोकपूरण भेद तैं चार प्रकार है ४ सो समुद्घात करनेवाले जीव दोय प्रकार हैं, पूर्वसन्मुख १ उत्तरसन्मुख २ बहुरि पद्मासन आसनयुक्त वा कायोत्सर्ग आसनयुक्त सो प्रथम समय विषैं दंड समुद्घात करैं हैं तहां कायोत्सर्ग स्थिति उत्कृष्ट अवगाहनायुक्त केवली का शरीर एकसौ आठ १०८ प्रमाणांगुल प्रमाण ऊंचो होय ताके नवमैंभाग चौड़ा होय सो बारह अंगुल चौड़ाईकी सूक्ष्मपरिधि तैंतीस अंगुल अर एक अंगुलका एकसौ तेरहवां भागमें पिच्याणवें भागमात्र होय। बहुरि पद्मासनस्थितकी चौड़ाई का प्रमाण तासौं तिगुणा छत्तिस अंगुल हैं, ताकी सूक्ष्म परिधिका प्रमाण एकसौ तेरह अंगुल अर एक अंगुलका एकसौ तेरहभागमें सत्ताईसभाग मात्र होय है। अर किंचिदून चौदह राजू ऊंचे प्रदेश होय हैं। यहां नचिले ऊंचले वात बलयन विषैं जीवके प्रदेश न फैलें हैं, तातैं किंचिदून कह्या है, एसैं दंड समुद्घात कह्या। बहुरि द्वितीय समय विषैं कपाट समुद्घात करैं है, तहां पूर्वदिशा सन्मुख कायोत्सर्ग आसनयुक्त केवली के प्रदेश किंचिदून चौदह राजू ऊंचे अर सात राजू चौड़े बारह अंगुल मोटे होय हैं। बहुरि पूर्वसन्मुख पद्मासन स्थित केवलीके प्रदेश ऊंचे, चोड़े पूर्वोक्त मोटे, छत्तीसअंगुल होंय हैं। बहुरि उत्तरसन्मुख कायोत्सर्ग स्थित केवलीके प्रदेश किंचिदून चौदहराजू ऊंचे, सातराजू क्रमतें घटि मध्यलोक निकट एकराजू, बहुरि क्रमतें बधि ब्रह्मस्वर्ग निकट पांचराजू, क्रमतें घटि ऊपर एकराजू चौडे अर बारह अंगुलमोटे प्रदेश होंय हैं। बहुरि उत्तरसन्मुख पद्मासनस्थित केवलीके प्रदेश ऊंचे चौड़े

तैसै ही मोटे छत्तीस अंगुल होंय हैं एसैं कपाट समुद्घात कह्या। बहुरि तीसरे समय प्रतर करै है तहां वातवलय विना अवशेष सर्वलोक विषैं आत्माके प्रदेश फैलें हैं। बहुरि याका नाम मथान भी है। बहुरि चतुर्थ समय विषैं लोकपूरण होय है, वातवलय सहित सर्वलोक विषैं आत्माके प्रदेश फैलें हैं। एसैं चार समय विषैं दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण होय हैं। यहां स्थितिकांडकघात अनुभाग कांडकघात होय हैं, ताका आयाम अंतर्मुहूर्तमात्र है, अर यहां समय २ अपवर्तन होय है, समय २ स्थिति अनुभाग घटावै है, बहुरि पांचवें समय लोकपूरणकों समेटि प्रतररूप आत्मप्रदेश करै है। बहुरि छठे समय प्रतर समेटि कपाटरूप आत्मप्रदेश करैं हैं। अर सातवें समय कपाट समेटि दंडरूप आत्मप्रदेश करे है, अर अष्टम समय दंडसमेटि सर्वप्रदेश मूलशरीर विषैं प्रवेश करै हैं, तहां कग्ने समेटने दंडके दोय समयन विषैं औदारिककाययोग है। कपाटके दोय समयन विषैं औदारिकमिश्रकाययोग हैं। अर प्रतरका दोय समय अर लोकपूरणका एक समय इन तीन समय विषैं कार्माणकाययोग हैं। इहां नोकर्मका ग्रहण नाहीं है, तातैं अनाहारक है, एसा जानना। एसैं समुद्घातक्रिया का वर्णन किया।

अब शरीरविषैं प्रवेश हुवा पीछे अन्तर्मुहूर्तकाल तहां विश्राकर तहां संख्यात हजार स्थितिकांडक करै पीछे योगनका निरोध करैं हैं। इहां निरोधनाम नाशका जानना, वादरकाययोग रूप होय वादरमनयोग, वचनयोग, उस्वास काययोग इन चारोंको क्रमतें नष्ट करैं हैं। बहुरि सूक्ष्म काययोग रूप होय तिन चारूं सूक्ष्मनकों क्रमतैं नष्ट करैं हैं, सो ही कहिये है— केवली भगवान वादर काययोगरूप प्रवर्ततो संतो पहले वादर मनोयोगकूं नष्टकरि सूक्ष्म करै है, पीछे वादरकाययोगकों नष्टकरि सूक्ष्म करै हैं। याप्रकार जो वादररूप इनकी शक्ति पूर्वैं थी, ताकों घटाय सूक्ष्मकरि, बहुरि केवली सूक्ष्मकाययोग रूप प्रवर्ततो संतो वचनयोगकों पीछे सूक्ष्म उस्वासकों, पीछे सूक्ष्मकाययोगकों नष्ट करैं हैं। एक २, वादर वा सूक्ष्म मनोयोगादिककों निरोधकरनेका काल प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तमात्र जानना। बहुरि सूक्ष्मकृष्टिरूप काययोगका वेदक जो सयोगी जिनसों इहां तीसरा सूक्ष्मक्रिया प्रतिपातिनामा शुक्लध्यानकों ध्यावैं हैं, इहां सूक्ष्मकृष्टिकों प्राप्त काययोग जनित परिस्पन्दरूप

क्रिया पाइये है, अर अप्रतिपाति कहिये पड़नेतें रहित हैं, तातैं या ध्यानका नाम सार्थक है, या ध्यानका फल योगका निरोध होना ही जानना। यद्यपि प्रत्यक्ष निरंतर केवलज्ञानीकें चिंतानिरोध लक्षण रूप ध्यान संभवे नाहीं, तथापि योगनका निरोध होतें आस्रव निरोध होने रूप ध्यानफलकों देखि उपचारतें केवली के ध्यान कहा है, अथवा छद्मस्थनकें चिंताका कारण योग है, तातें कारण विषैं कार्यका उपचार करैं, योगका भी नाम चिंता है, याका इहां निरोध होय है, तातेंभी ध्यान कहना संभवे है, छद्मस्थनकें चिंता का निरोध का नाम ध्यान है। केवलीकें योगनिरोधका नाम ध्यान है एसा जानना। सयोगी गुणस्थानका अंतर्मुहूर्तमात्रकाल अवशेष रहैं वेदनीय नाम गोत्रका अंतः स्थितिकांडककों ग्रहैं हैं। ताकरि सयोगीका अवशेष काल रहा सो, अर अयोगीका सर्वकाल मिलायें जो प्रमाण होय, तितने निषेकनिको छांडि अवशेष सर्वस्थितिके गुणश्रेणी शीर्ष सहित जे उपरितन स्थितिके निषेक तिनकों लांछित करै हैं—नष्टकरनेको प्रारम्भे है, तहां अंतकांडकका द्रव्यकों अपकर्षणकरि असंख्यातगुणाकरि असंख्यातगुणां क्रम तें उदयनिषेकतें लगाय अंतनिषेक पर्यन्त दीजिये है, ता समय फालिका करि द्रव्यका निक्षेपण करै है। तहां सयोगीके अंतसमय विषैं तिनके अंत फालीका पतन होय है। एसें सयोगीके अन्तसमय विषैं अघातिया कर्मनकी अंतकांडककी अंत फालीकाका पतन अर योगका निरोध अर सयोग गुणस्थानकी समाप्तिता युगपत् होय है, याके ऊपर सयोग गुणस्थानक विषैं गुणश्रेणी अर स्थितिअनुभागका घात नहीं हैं, अधःस्थित गलन करि एक २ समय विषैं एक २ निषेक क्रमतें उदयरूप होय है। इहां अयोगीजिनकी आयु समान तीन घातियानकी स्थिति होय है, सो अयोगीजिन चौथा समुच्छिन्नक्रियानाम शुक्लध्यानकूं ध्यावै है, समुच्छिन्न कहिये उच्छेदभई है मन वचनकायकी क्रिया अर निवृत्ति जो प्रतिपात ताकरि रहित यह ध्यान है तातें याका नाम सार्थक है, यहां भी ध्यानका उपचार पूर्वोक्तप्रकार जानना। इहां भी समस्तआस्रव रहित केवलीके अवशेष कर्म निर्जराका कारण जो स्वात्मविषैं प्रवृत्ति ताहीका नाम ध्यान है। समस्त शील गुणका स्वामीपना होनेतें शैलेश अवस्थाकों प्राप्तभया है। यद्यपि सयोगी जिनके समस्त शीलगुणका स्वामीपना संभवै है। परन्तु योगनका आस्रव पाइये है तातैं सकलसंवरके न संभवनेतैं ताकों शैलेश्य अवस्था

का अभाव है। अयोगीके योगास्रव भी न पाइये है, तातैं सकलसंवरण होने तैं ताकै शैलेश्य अवस्था संभवै है। बहुरि सो अयोगी जिन निरोधे हैं समस्त आस्रव जानैं एसा है। बहुरि कैसा है अयोगी जिन ? कर्मबंधरूपी रजकरि रहित है, अयोगीका काल पंच ह्रस्व अक्षर जेते कालकरि उच्चारण करिये तेता है। तहां एक २ समय विषैं एक २ निषेक गलनरूप जो अधःस्थितिगलन ताकरि क्षीण भई तिसकालके द्विचरम समय विषैं बहत्तर प्रकृति अर अन्तसमय विषैं तेरह प्रकृति शुक्लध्यान रूपी ज्वलन जो अग्नि ताकरि भस्म करै है, वेदनी १ देवगति १ देवगत्यानुपूर्वी १ शरीर ५ बंधन ५ संघात ५ संस्थान ६ अंगोपांग ३ संहनन ६ वर्णादिक २० अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उच्छ्वास १ विहायोगति १, अपर्याप्त १ प्रत्येक १, स्थिर १, अस्थिर १, शुभ १, अशुभ १, सुस्वर १, दुःस्वर १, दुर्भग १, अनादेय १ अयस्कीर्ति १, निर्माण १ नीचगोत्र १, एवं बहत्तर ७२ प्रकृति तौ द्विचरम समय विषैं क्षय भई। वेदनी १, मनुष्यगति १, मनुष्यगत्यानुपूर्वी १ मनुष्यायु १, पंचेंद्रियजाति १, त्रस १, वादर १, पर्याप्त १, सुभग १, आदेय १, यशस्कीर्ति १, तीर्थंकर १, उच्चगोत्र १ ये तेरह प्रकृति अन्तसमय विषैं क्षयभई। एसैं क्षयकरि ताके अनन्तरसमय विषैं सिद्ध होय हैं, जैसें कालिमारहित शुद्ध सुवर्ण निष्पन्न होय है, तैसें सर्व कर्ममलरहित कृतकृत्यदशारूप निष्पन्न आत्मा होय हैं, सो जीव ऊर्ध्वगमन स्वभावकरि तीन लोकके शिखर विषैं ईषत्प्राग्भार नाम जाका ऐसी जो आठवीं पृथ्वी ताके ऊपर एक समय मात्र कालकरि जाय तनुवातवलयका अंतविषैं विराजमान हो हैं। कैसीक है वह पृथ्वी ? मनुष्यपृथ्वीके समान पैंतालीस लाख योजन चौड़ी गोलाकार है, बहुरि आठ योजन ऊंची है, बहुरि स्थिर है, बहुरि छत्रके आकार स्वेतवर्ण है, अर वीचमें मोटी चौहटै छेहड़े पतली एसी मनोहर है, ईषत्प्राग्भार नामा अष्टमी पृथ्वी घनोदधि वातवलयपर्यन्त है, तिस पृथ्वीके बीच पाइये है एसी जो सिद्धशिला ताका एसा स्वरूप है। धर्मास्तिकायके अभावते तहांतैं ऊपर गमन न होय है, तहां ही चरम शरीरतें किंचिदून आकारस्वरूप जीवद्रव्य अनंतज्ञानानंदमय विराजै हैं।

बहुरि कैसेक हैं सिद्धभगवान ? त्रिभुवनकरि पूजित अर बुद्ध कहिये सर्वका ज्ञाता, अर निरंजर कहिये कर्ममलरहित,

अर नित्य कहिये विनाशरहित एसा जो सिद्धभगवान सो मुझकों उत्कृष्टज्ञान दर्शन चारित्रकी शुद्धता, अर समाधि कहि अनुभवदशा वा सन्यासमरण ताकों प्राप्त करो। इहां मोक्ष अवस्था सर्वकर्मका सर्वथा नाशतें सम्पूर्ण आत्मस्वरूपकी प्राप्तिरूप जाननी। याप्रकार नव क्षायिकभावका संक्षेप कथन किया। विशेषकथन क्षपणासार नामा ग्रन्थतें जानना। ये क्षायिकभाव वर्तमान भी परमसुखको कारण है अर आगामी मोक्षका कारण है। बहुरि क्षायिकचारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरण सों ले अयोगकेवली गुणस्थान पर्यन्त छह गुणस्थान विषैं पाइये, अर मार्गणा गति-मनुष्य १ जाति-पंचेन्द्रिय १ काय त्रस १ योग-मनका चार ४ बचनका चार ४ औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण ११, बेद-अविृत्तिकरणगुणस्थान तक तीन, ऊपर वेदकी नास्ति, कषाय--अष्टम नवम गुणस्थान विषै १३ अनिवृत्तिकरण विषैं ७ अर सूक्ष्म साम्परायमें सूक्ष्मलोभ, ऊपर कषायको अभाव, ज्ञान-सुज्ञान ५ संयम - सामयिक छेदोपस्थापना सूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यात ४ दर्शन ४ लेश्या शुकल १ भव्य १ सम्यक्त्व क्षायिक १ सज्ञी १ आहारक अनाहारक २ इन विषैं पाइये हैं। इति श्री भावदीपिकाका क्षायिक भावाधिकार विषैं क्षायिक चारित्र भावाधिकार दूसरा समाप्त भया २। बावनभाव सहित क्षायिकभावाधिकार सातवां पूर्ण भया ७।

अब चूलिका अधिकार लिखिये है—

दोहा—अनादिकालतैं जे थये सिद्ध शिला सिधथोक। सहजानंद जगमुकुटमणि अंतरहित नित धोक ॥१॥

इसप्रकार अनेक विशेषण सहित कहे जे जीवके तिरेपनभाव ते तीन प्रकार हैं, तीनप्रकार पारिणामिकभाव हैं, ते तौ जीवके स्वाभाविकभाव हैं, जातैं ये कर्मकी सापेक्ष्य रहित स्वभाव ही तें उत्पन्न है। बहुरि इकईस औदयिकभाव अर अठारह क्षयोपशमभाव अर दोय उपशमभाव ये इकतालीसभाव हैं, जातैं ये कर्म सापेक्षसहित हैं, सो शुभाशुभभेदकरि दोय प्रकार हैं। उदयभावनविषैं मनुष्यगतिभाव १ देवगतिभाव १ अर पीत १ पद्म १ शुक्ल १ लेश्या तीन ऐसैं पांचभाव अर क्षयोपशमभावन विषैं तीनकुज्ञान विना पंद्रहभाव अर उपशमभाव दोंनो एसें ये बाईस तो शुभभाव हैं अर अवशेष सोलह औदयिकभाव अर क्षायोपशमके तीनकुज्ञान एसैं उगनीस अशुभभाव हैं। बहुरि नव क्षायिकभावतें सुद्धभाव हैं

एसें ये स्वभाव, विभाव, सुद्धभाव तीनप्रकार स्वरूपकों धरें जीवके तिरेपनभाव हैं, तातैं इनकों भलीभांति जानि श्रद्धान करना, त्यजन ग्रहण करना–अशुभभावनकों छोड़ना शुभभावनका ग्रहण करना, जातें इनभावन ही का निमित्तपाय कर्म दश प्रकार अवस्थाकों प्राप्त हौंय हैं, सोही कहिये हैं––बन्ध १ सत्व २ उदय ३ उदीरणा ४ उत्कर्षण ५ अपकर्षण ६ संक्रमण ७ उपशांत ८ निधत्ति ९ निकाचना १० ये कर्मकी दश अवस्था हैं। सो जीवके भावके निमित्ततैं होय हैं।

प्रथमही बंध अवस्था कहिये है––नवीनकर्म परमाणूनकी जीवके प्रदेशनसों एक क्षेत्रावगाहसम्बन्ध होना सो बन्ध कहिये, सो बन्ध चार प्रकार है प्रदेशबंध १ प्रकृतिबंध १ स्थितिबंध ? अनुभागबंध १। जो सिद्धराशिके अनन्तवें भाग अर अभव्यराशितें अनन्तगुणा एसा कर्मरूप होने योग्य पुद्गल परमाणूनका समय २ ग्रहण होय सो समयप्रबद्ध कहिये, ताका ग्रहण होय, आत्मप्रदेशनसों एकक्षेत्र अवगाहसम्बन्ध होना सो प्रदेशबन्ध कहिये १। बहुरि ते पुद्गल कर्म-परमाणू ज्ञानावरणादि मूल उत्तर प्रकृतिरूप होय परणवें सो प्रकृतिबन्ध कहिये २। बहुरि अपनी अपनी जघन्य मध्यम उत्कृष्ट स्थिति धार तिष्ठना सो स्थितिबन्ध कहिये ३। बहुरि अपने अपने कार्यरूप रस देनेकी शक्तिका मध्यम जघन्य उत्कृष्ट अविभाग कहिये अंश ताका उत्पन्न होना सो अनुभागबन्ध कहिये ४। एसा चार प्रकार बन्धका स्वरूप जानना। तहां प्रदेशबन्ध अर प्रकृतिबन्ध तौ योगनतें होय हैं, नामकर्मके उदयतें उत्पन्न भये जीवके द्रव्य, मन, वचन, काय तिनकी चेष्टाका निमित्त पाय आत्माका प्रदेश चंचल होय ताकरि आत्माकें कर्म ग्रहणशक्ति होय ताका नाम योग है, ताकरि पुद्गलकर्म वर्गणानिका ग्रहण होय सो प्रदेशबन्ध कहिये। सो मन, वचन, कायकी चेष्टा कहिये। प्रवृत्ति शुभाशुभ प्रवृत्तिरूप दोय प्रकार हैं, सो आत्माका शुभाशुभ भावनतें होय है। तहां आत्मा शुभलेश्यादि बाईस शुभभावनरूप परणवै, तहां मन, वचन, कायकरि शुभकार्यरूप प्रवृत्ति होय ताका नाम शुभयोग कहिये, अर अशुभ लेश्यादि उगनीस अशुभभावनरूप परणवै तहां मन, वचन, कायकी अशुभ कार्यरूप प्रवृत्ति होय ताका नाम अशुभयोग कहिये। शुभयोग के होतें शुभ कर्मपरमाणूका बंध होय है, तहां शुभ ही सातावेदनी आदि कर्म प्रकृतिनका बन्ध होय है, अर अशुभ

योग होतैं अशुभकर्मपरमाणूका बंध होय है । तहां अशुभही असातावेदनी आदि कर्मप्रकृतिनका बंध होय है । बहुरि स्थितिबंध अनुभागबंध कषाय तें होय है, सो आत्माके शुभाशुभ भावनके अनुसार ही कषायनकी तीव्र मंद प्रवृत्ति होय है। जब आत्मा शुभलेश्यादि शुभभावनरूप परणवै है तहां कषाय मंद होय प्रवर्तैं हैं। तब सातावेदनी आदि पुण्य प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग बहुत बंध होय है, अर ज्ञानावरणादिक चार घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातिया की पापप्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अल्पबंध होय है । बहुरि जब आत्मा अशुभलेश्यादि अशुभभावन रूप परणवै है, बहुरि तहां कषाय तीव्र होय प्रवर्तैं हैं, तब ज्ञानावरणादि चारि घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातियाकी पाप प्रकृतिनकी स्थिति अनुभागबंध बहुत होय है, अर साता वेदनी आदि पुण्य प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अल्पबंध होय है, जैसा २ उत्कृष्ट मध्यम जघन्य अनुभागकों धरैं शुभाशुभभावनरूप आत्मा परणमै है तिनहीके अनुसार उत्कृष्ट मध्यम जघन्य स्थिति अनुभागकों धरैं शुभाशुभ कर्मबंध होय है। अर जहां आत्मा निःकषायभाव रूप होय है, तहां स्थितिबंध अनुभागबंधका अभाव होय है । अर जहां आत्मा योग रहित होय प्रवर्तैं है तहां प्रदेशबन्ध प्रकृतिबंधका अभाव होय है । आत्माके जिस २ भावनका निमित्त पाय जिस २ कर्मका बंध होय है, तहां तिस २ भावनका अभाव होतें तिस २ कर्मके बंधका अभाव होय है, तातैं कर्मबंधकों कारण आत्माके भावही जानना । इति कर्मबन्ध अवस्था ।

आगैं सत्व अवस्था कहिये—

बंध कालतें लगाय अपनी स्थितिका अंत पर्यन्त जावत् कर्मत्वशक्तिकों धरैं पुद्गलपरमाणु (तिष्ठैं) उदयकों न प्राप्त होय हैं, तावत्काल कर्मकी सत्त्व अवस्था कहिये । जिसकाल चार प्रकार विशेषकों धरै कर्मबंध होय हैं, तिसकालसौं लगाय अपनी २ योग्य आबाधाकाल छोड़ि निषेक रचना होय है, जेती २ स्थिति पड़ै ताका जेता २ समय होय तिन समयनप्रति आदिके समयतें लगाय अंतका समयपर्यन्त गुणहानि रचनाका अनुक्रम धरै चय चयप्रमाण घटता द्रव्य अर वर्गणा स्पर्धक गुणहानिका अनुक्रमधरैं अनुभाग समय २ प्रति बढ़तो होय तिष्ठै है, ताका नाम निषेक कहिये । तहां प्रथम

निषेक की स्थिति एकसमय अधिक आबाधा काल प्रमाण है, दूसरा निषेककी स्थिति दोय समय अधिक आबाधाकालप्रमाण है। एसैं ही निषेक २ प्रति एक एक समयकी स्थिति अधिक है, अंतनिषेककी स्थिति अपनी २ आबाधाकाल अधिक सम्पूर्ण स्थितिप्रमाण है, सो जावत् जिस २ कर्मकी स्थिति पूर्ण होय उदयकों प्राप्त न होय, तावत् कर्मका संचयरूप रहना सो सत्व कहिये। सो सत्वभी चार प्रकार है—प्रदेशसत्व १ प्रकृतिसत्व १ उदयसत्व १ अनुभागसत्व १ सो स्थितिसत्व आदि इन चारे प्रकार सत्वकों भी जीवका भाव ही कारण है, जीवभावका निमित्त पाय चारों ही प्रकार सत्व घटैं हैं उत्कृष्ट तें मध्य जघन्य, मध्य तें उत्कृष्ट, जघन्यतें उत्कृष्ट, मध्य नानाप्रकार अवस्थाकों प्राप्त होंय हैं, शुभभाव होतें साता-वेदनी आदि शुभप्रकृतिनका स्थितिअनुभागादि सत्वविषैं वधि जाय है, ज्ञानावरणादि चार घातियाकी अर असातावेदनी आदि अघातियाकी अशुभप्रकृतिनका स्थिति अनुभागादि घटि जाय है, अशुभभाव होतें अशुभप्रकृतिनका स्थिति अनुभा-गादि सत्व वधि जाय है, अर सातावेदनी आदि शुभप्रकृतिनकी स्थिति अनुभागादि सत्व घटि जाय है। इति सत्व अवस्था

आगै उदय अवस्थाको कहिये है—

ज्हां कर्म अपनी स्थिति पूरीकर फलदेय क्षरनेको सन्मुख होय, तहां उदय कहिये। सो उदय भी चार प्रकार है—प्रदेशउदय १, प्रकृतिउदय १ स्थितिउदय १, अनुभागउदय १, तहांभी जीवकें परिणमनिकों निमित्त पाय रस देय वा विना रस दिये ही कर्मपरमाणूनका खिरजाना सो प्रदेशउदय कहिये। अर मूलतें कर्मप्रकृतिनका खिरजाना सो प्रकृतिउदय जानना। अर स्थितिका क्षीण होजाना सो स्थितिउदय कहिये। अर जघन्य, मध्य, उत्कृष्ट अपना अपना रसदेय खिरजाना सो अनुभाग-उदय जानना। एक २ समय विषैं एक २ निषेक अपना अपना रस देय उदयकों प्राप्त होय रसदेय खिरजाना सो ही सविपाक निर्जरा कहिये। वा जो जीव सम्यक्त्व चारित्रादि विशुद्धभावनरूप परणमै तहां एक २ समय विषै असंख्यात २ निषेक उदय होय, विना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिरैं हैं ताको अविपाक निर्जरा कहिये। असंख्यात २ समय प्रबद्धको बांधो द्रव्य एक २ निषैक विषैं भेला होय उदयकों प्राप्त होय ता निषेक विषै सर्व ही शुभ—अशुभ कर्मनका

सत्व है, परन्तु जीवके गत्यादिक भावनके अनुसार मुखता गौणता लियें शुभाशुभ कर्मनका उदय होय हैं। जो जीव नरकगति विषैं तिष्ठैं हैं तहां नरकगतिभावने आदि दे सर्व नरकगति सम्बन्धी अति संक्लेशभावनरूप आत्मा परणमै है। तहां असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनके उदयकी तो मुख्यता है, अर सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव देवगति विषैं तिष्ठैं हैं तहां देवगति भावने आदि दे सर्व देवगति सम्बन्धी मंदकषायादि रूप भावयुक्त आत्मा हैं, तहां सातावेदनी आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता है, अर असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनके उदयकी अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव तिर्यंच गतिविषैं तिष्ठैं हैं, तहां तिर्यंचगति भावने आदिदे सर्व तिर्यंचगतिसंबन्धी भावरूप परणवैं हैं। तहां घनांकाल संबंधी तो असातावेदनी आदि अशुभकर्मनका उदयकी मुख्यता है। अर थोड़ा कालसंबंधी कदाकाल किंचित् अनुभागकों धरैं सातावेदनी आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होयहै। बहुरि जो जीव मनुष्यगतिविषैं तिष्ठैं है तहां मनुष्यगतिभावने आदि दे सर्व मनुष्यगतिसंबंधी भावनरूप परणवै है, तहां उदयने प्राप्त भया जो निषेक ताविषैं अशुभ कर्मनका अनुभाग अधिक होय तो असातावेदनी आदि अशुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होय, अशुभकर्मनका उदय होय, अर शुभकर्मनका प्रदेशउदय होय, अर जो उदयरूप निषेकविषैं शुभकर्मका अनुभाग अधिक होय तो सातावेदनी आदि शुभकर्मनके उदयकी मुख्यता होय, शुभकर्मका उदय होय, अर असाता—वेदनी अघातिया अशुभ कर्मनका प्रदेश उदय अर ज्ञानावरणादिक घातिया—कर्मनका यथायोग्य उदय होय वा शुभलेश्यादि विशुद्ध भावनरूप परणवतां जीवके सातावेदनी आदि शुभकर्मके उदयकी मुख्यताभी होय वा असातावेदनी आदि अशुभकर्मनकी भी अत्यन्त अनुभागका जोरतें मुख्यता होय तो कछु अनुभाग क्षीण होय, उपसमने प्राप्त होई अर सातावेदनीय आदि शुभकर्मनिका अनुभाग अधिक होइ उदयने प्राप्त होय, अर कदाचित् अत्यन्त विशुद्धभावरूप परणमै ताजीवके असातावेदनी आदि अशुभ कर्मनका सातावेदनी आदि सुभकर्मनिरूप होइ ऊपजै हैं वा परदेसउदय होइ खिर जाइ, बहुरि कृष्णादिक अशुभ लेश्यादि अशुभ भावनिरूप परिनवते जीवके असातावेदनी आदि

अशुभ कर्मनिका उदयकी मुख्यता होय वा सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी भी अत्यन्त अनुभागके जोरतैं मुख्यता होय तो कछु अनुभाग क्षीण होय उदयने प्राप्त होय, अर असातावेदनी आदि अशुभकर्मनका अनुभाग अधिक होय उदयनें प्राप्त होय, अर कदाचित् अत्यन्त संक्लेशभावरूप परणवता जीवके सातावेदनी आदि शुभकर्म असातावेदनी आदि अशुभ कर्मन रूप होय उदय होय है वा प्रदेश उदयसौं खिरजाय एसी नानाप्रकार कर्मनकी उदयअवस्था भी जावभावनका निमित्तपाय होय है। इति उदयअवस्था समाप्त हुई।

आगैं कर्मनकी उदीरणा अवस्था कहिये है—

ऊपरके निषेकनका कर्मस्वरूप पुद्गलद्रव्य उदयवाली विषैं आय प्राप्त होय है सो उदीरणा कहिये। जो कर्म घनां कालकी स्थिति धरैं निषेकरूप सत्तामें तिष्ठै था, सो जीवभावका निमित्त पाय उदयरूप निषेक ते आवली प्रमाण निपेक तिनकों उदयावली कहिये। ता विषैं आय प्राप्त होय आवलीकाल पर्यन्त उदयरूप होय सो उदीरणा कहिये। सो कर्मनकी उदीरणा योग्य जीवका भाव दोय प्रकार है—एक तो अंतरंग तीव्र मंद अनुभाग कों धरैं मोहादिक कर्मनका उदय होय, ताके अनुसार मद कषायादिकभाव होय, ताकरि कर्म की उदीरणा होय है। अरु एक बाह्यकर्मनकी उदीरणा योग्य परद्रव्यरूप सामग्री मिलै ताका निमित्त पाय ताहीके अनुसार उदीरणा योग्य जीवका कषायभाव होय, कर्मनकी उदीरणा होय है। तहाँ तीव्रअनुभागकों धरैं मोहादिक मोहकर्मनका उदय होय, तब आत्माका तीव्रकषायरूप संक्लेशभाव होय है, जब आत्मा कृष्णादि अशुभलेश्यादि अशुभभावनरूप प्रवर्तै है तब सातावेदनी आदि शुभकर्मका उदय मिटि अर असातावेदनी आदि अशुभकर्मकी उदीरणा होय उदय होय, जब जैसे दुःखके कारण पदार्थनकों अवलंबन करैं है तब जीव सुखी तैं दुःखी होय जाय है, रागी तैं द्वेपी होयजाय है, द्वेसी तैं रागी होयजाय, ज्ञानी तैं अज्ञानी होयजायहै, संयमी तैं असंयमी होयजाय है, क्रोधी मानी, मायावी, लोभी तैं अन्य २ क्रोधादिकषाय रूप होय जाय है प्रसन्नता तैं शोकी होय जाय है, रतिभाव तैं अतिभाव कों प्राप्त होय, अवेदभाव तैं सवेदभावकों प्राप्त होयजाय, क्षुधातृषादि रहित भाव सों क्षुधातृषादिसहित भाव कों प्राप्त होय, इत्यदि उदरिणा होय, कर्मनकी

पलटन होते ही भावनकी पलटन हो जाय है। अर भावनकी पलटन होतैं कर्मकी पलटन होय जाय, एसा कर्मनका उदय अर जीवभावमें निमित्तनैमित्तिक सम्बन्ध है। बहुरि जहां मन्द अनुभागकों धरैं मोहादिक कर्मनका उदय होय, तब आत्माका मन्दकषायरूप विशुद्धभाव होय हैं, तब आत्मा शुक्लादि शुभलेश्यादि शुभभावनरूप परणवे है, तब असातावेदनी आदि अशुभकर्मको उदय मिटि, अर सातावेदनी आदि शुभकर्मनकी उदीरणा होय उदय होय है जब जैसैं ही सुखके कारण पदार्थनका अवलम्बन करै हैं, तब जीव दुःखी ते सुखी होय है, रागी तें विरागी, अज्ञानी तें ज्ञानी, असंयमी तें संयमी होय जाय है। क्रोधादि अन्य कषाय तें अन्य कषायरूप होय जाय हैं, शोकभाव मिटि प्रसन्नभाव होजाय, अरति-भाव तें रतिभाव, सवेदभाव तें अवेदभाव, क्षुधा–तृषादि सहित भावतें रहितभावकों प्राप्त होय हैं, उदीर्णां होतां ही इत्यादि भावनकी पलटन होय सो ई भांति तो अन्तरंग शुभ अशुभ कर्मके उदय होतैं शुभाशुभ भाव होंय, तिनहीके अनुसार शुभाशुभ कर्मनकी उदीरणा होय है, जो जीवके कर्मकी उदीरणा होय उदय होय, ताहीके अनुसार जीवका भाव होय है। इति। बहुरि शुभाशुभ कर्मकी उदीरणाकों कारण एसे बाह्य शुभाशुभ पदार्थनका निमित्त पाय शुभाशुभ कर्मनकी उदीरणा होय उदय होय ताही अनुसार जीवका भाव होय है। बहुत शास्त्र आप पढ्या है तिनका मद करने थकी, वा अन्य सम्यग्ज्ञानी पंडितनिमें ईर्षा करनेथकी कुपथके ग्रहण करनेथकी, कुपथका ग्रहण करि सम्यग्ज्ञानीन तें विवाद करनेथकी, अन्य कों कुपथका ग्रहण करावने थकी रूठना, जैन आम्नायसो विरुद्ध उपदेश देने थकी, वा मिथ्याशास्त्र, काव्य, श्लोकादि बनावने थकी वा शास्त्रके वेत्ता पुरुष वा अपने शास्त्रके पढ़ावनेहारा उपाध्याय हैं इनका अविनय करनेथकी वा ज्ञान-चारित्रका आच्छादन वा घात करनेथकी वा आपकैं विद्यागुरुकों छिपावने थकी वा यथातत्वतें दोष राखने थकी वा मूर्खन की संगति थकी वा बहुत विकथा प्रलाप करने थकी, बहुत विकथासक्त होने थकी, वा आलसी प्रमादी होने थकी वा बहुत क्रोध, लोभादि कषायनिके अभिनिवेश थकी, अर बहुत हास्य थकी वा रति, अरति, शोक, भय, ग्लानिके बहुत अभिनिवेश थकी वा बहुत कामासक्त होने थकी, बहुत आरम्भ करने थकी वा कामोद्दीपनाहार करने थकी वा अमलयुक्त-

वस्तुके खाने थकी इत्यादि बाह्य कारण थकी ज्ञानावरणी दर्शनावरणी कर्मकी उदीरणा होय उदयने प्राप्त होय है, तत्काल ज्ञानका नाश होय है, वा इन्हीं पूर्वोक्त बाह्यकारणनतें दर्शनावरण कर्मकी उदीरणा होय है, वा अन्य अभिप्रेतथकी अनुभयप्रेतथकी अनुभयप्रेत कहिये उपयोगके जोड़ने थकी, वा दही आदि निद्राके कारण वस्तुनके भखनेथकी, वा निद्राके कारण सुखशय्यादि सामग्री मिलावने थकी, वा निद्राकी इच्छाकरि लंबाहोय सोवने थकी,पंचनिद्रा आदि दर्शनावरणी कर्मकी उदीरणा होय उदयनें प्राप्त होय है, तहां सर्वपदार्थनके सामान्य अवलोकनका अभाव होय है। बहुरि दुःख शोकके कारण पदार्थनके देखने थकी, याद करने थकी, वा दुःख शोकादिकके कारण बाह्यपदार्थनको आपकी बुद्धिपूर्वक आपके संबंध करने थकी, असातावेदनी कर्मकी उदीरणा होय उदयनें प्राप्त होय, तब जीव सुखीतें दुःखी होय है। बहुरि सुखके कारण इष्टपदार्थनके देखने थकी, पवनादि करने थकी, वा असाताका उदय विषैं अपनी बुद्धिपूर्वक आपके सुखके कारण पदार्थनका संबंध करनेथकी वा देवगुरुधर्मादिक सम्बन्ध करनेथकी, वा सुमरण (स्मरण) ध्याने, चिंतवने, जाप आदि करने थकी इत्यादि थकी सातावेदनी कर्मकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय है, तब जीव दुःखीतें सुखी होय है।

बहुरि केवली शास्त्र देव गुरु धर्म चतुर्विध संघ अर जीवादिक इनका स्वरूप जानता थका भी अन्यथा कहने थकी अर कुगुरु कुदेव कुधर्मके धारक तिनकी सराहना करने थकी इत्यादि थकी दर्शनमोह जो मिथ्यात्वकर्म ताकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय है, तब ए जीव तत्काल सम्यग्दृष्टीतें मिथ्यादृष्टी होय है। बहुरि क्रोधादि तेरहकषायके बाह्य कारण पदार्थनके याद करने थकी वा दृष्टी कर देखने थकी तेरहैं प्रकार भेदकों धारें चारित्रमोह नामा कर्म ताका जैसा २ भेद का कारन पदार्थनि का संबंध थकी ताका तैसा २ भेदकी उदीरणा होय उदय नैं प्राप्त होय है तहां तिसही भाव रूप होय आत्मा परणवै है, क्रोध के कारणसूं वा अपने कार्यके विगाड़नेवाला वा अपने मानादिक कषायके भंगकरनेवाला वा अपनी आज्ञाको लोपनहारा इत्यादि आपकों दुःखदायक पदार्थनकों याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होने थकी, वा संबंध करने थकी, तत्काल क्रोधनामा चारित्रमोहकी उदीरणा होय, ताहीसमें जीव क्रोधभावकों प्राप्त होय है। तैसें ही मानके कारण—

पदार्थनके संबंध तें मानके, मायाके कारणपदार्थनतें मायाका, वा लोभके कारण धनादिक इष्टसामग्रीके संबंधादिक होतें लोभका वा हास्यके कारण नकली बहुरूपियादिक वा रतिके कारण इष्ट स्त्री-पुत्र वा इष्ट भोजनादिक वा पांचूं ही इंद्रियनके मनोज्ञ विषमादिक वा अरतिके कारण अनिष्ट स्त्रीपुत्रादिक वा अनिष्ट भोजनादिक वा पांचही इंद्रियनका अनिष्ट विपयादिक वा शोकके कारण पदार्थन तें शोकका, वा भयके कारण पदार्थनतें भयका, वा ग्लानिके कारण दुर्गंधादिक सूंघना विष्ठा आदि द्रव्य वा अप्रिय पदार्थन तें जुगुप्साका, वा रूपवानस्त्रीनके याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होने थकी, वा मनका चलायमान संबंध करने थकी पुरुषवेदका, वा रूपवान रूप वस्त्र भूषणादि मंडित पुरुषकों देखने थकी स्त्रीवेदका, वा स्त्रीपुरुष दोनोंनके संबंधादि थकी नपुंसकवेद का इत्यादि जिसजिस चारित्र मोहकर्मके उदयका कारण पदार्थनका संबंधादिक होय तिस ही कर्मकी उदीरणा होय उदय होय है, ताहीके अनुसार भावनकी उत्त्पत्ति होय है। बहुरि खान पानादिक न मिलने थकी, वा रोगादिक होतें औषधादि प्रति कारनि के मिलने थकी वा अन्यथा मिलने थकी, वा अन्यथा किया वा प्रकृतिविरुद्ध खान पानादि थकी,वा विषादिक खाने थकी, वा शस्त्रादिकके घात थकी वा जल अग्न्यादिकके संबंध थकी इत्यादि अनेक घातके कारण पदार्थनके संबंध होतें वा दृष्टिगोचर होतें वा सुमिरण होतें आयु कर्मकी उदीरणा होय मरणाकों प्राप्त होय हैं, जातैं इन पदार्थनका संबंधादि होतें वा न होतें जीवके वैसेही उदीरणा योग्य भाव होय हैं। तहां आयुकर्मकी उदीरणा होय है। अर जहां नाना प्रकार घातके कारण मिलतें वा घात ही तें जीवके आयुकर्मकी उदीरणा होनेयोग्य भावन न हों तो उदीरणा न हो है, तहां अनेक घातादिक होतैंभी मरण न होय हैं। बहुरि एसें ही नामकर्मकी उदीरणाके बाह्यकारण मिलतें नामकर्मकी वा गोत्रकर्मकी उदीरणाके वाह्यकारण मिलते गोत्रकर्मकी उदीरणा होय है। बहुरि अन्तरायकर्मकी उदीरणाके बाह्यकारण मिलते अंतराय की उदीरणा होय है, दान, लाभ, भोग, उपभोग वीर्यरूप कार्य होत संतें भयादिके कारण पदार्थनका निमित्तपाय दानादिक पंचभावन तें जीवके परिणाम अंहोठा होय तब तिन भावनिका निमित्तपाय दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय इन पंचप्रकार अंतरायकर्मकी उदीरणा होय उदयकों प्राप्त होय, तहां दानादिक कार्यनका अभाव

होय है, जो सुख–दुःखके कारण बाह्यपदार्थ अबुद्धिपूर्वक दुर्निवार आपही आप प्राप्त होय तहां तो अन्तरंग कर्मका उदय जघन्य जानना, अर जहां सुख–दुःखका कारण पदार्थनका बुद्धिपूर्वक संबन्ध होने थकी जो कार्य निपजै सो उदीरणा होय कर्मका उदय जानना, जातैं कर्मका उदय जैसा होय तैसाही बाह्य पदार्थनका सम्बन्ध होय, सो तो कर्मकी स्थिति पूर्ण होय कर्मका उदय जानना। अर जहां पहली बाह्यपदार्थनिका निमित्त होतें कर्मका उदय होय सो कर्मकी उदीरणा होय उदय जानना, जैसें पहली पुरुषवेदकी उदय होतें कामासक्त होय स्त्रीका सम्बन्ध करना, सो तो वेदका उदय ते जानना। अर जो पहली ही स्त्रीकों देखि विकारभाव होना सो उदीरणा होय वेदका उदय है ऐसें सब कर्मनका उदय उदीरणा जानना। बहुरि उदीरणा उदयप्राप्त कर्मनकी होय है जिस गति विषैं जिन कर्मनका उदय पाइये है तिनही कर्मनकी तो उदीरणा होय है, अर जिन कर्मनका उदय न पाइये है तिन कर्मनकी उदीरणा न होय। तहां वेदनी अर आयुकी तो उदीरणा छठा गुणस्थान पर्यन्त ही होय हैं आगै न होय, अर अन्य कर्मकी उदीरणा जहां पर्यन्त अपना उदय होय तहां पर्यन्त ही होय। इति उदीरणावस्था।

आगै उत्कर्षण वा अपकर्षण अवस्था कहिये है—

सत्तामें तिष्ठते जे ज्ञानावरणादिक रूप द्रव्यकर्म तिनका स्थिति वा अनुभाग जीवभावका निमित्त पाय बधिजाना अधिक होयजाना सो उत्कर्षण कहिये, अर घटिजाना–हीन होयजाना, सो अपकर्षण कहिये। जहां पीत, पद्म, शुक्ल लेश्यादि शुभभावनरूप जीव परणवै तहां सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिनका स्थिति व अनुभाग उत्कर्षण करि बहुत होय जाय, बधिजाय अर ज्ञानावरणादिक चार घातियाका वा असातावेदनीय आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनका स्थिति अनुभाग अपकर्षण करि अल्प होजाय--घटजाय। बहुरि जहां कृष्ण लेश्यादि अशुभ भावनरूप जीव परणवै तहां ज्ञाना-वरणादिक चार घातिया वा असातावेदनी आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनका स्थितिअनुभाग उत्कर्षणा करि बधिजाय–बहुत होजाय, अर सातावेदनी आदि शुभ प्रकृतिनका स्थितिअनुभाग अपकर्षण करि अल्प रहिजाय--घटिजाय। नीचले

निषेकनि विषैं जघन्यादि थोड़ी स्थितिअनुभाग धरैं तिष्ठैं थे जे ज्ञानावरणादि कर्मत्व रूप शक्तिको धरैं कर्मस्वरूप पुद्गल तिनकी स्थिति अनुभाग बधि, ऊपर निषेकन विषै उत्कृष्टादि स्थितिअनुभागको धरैं तिष्ठैं हैं जे कर्म तिनके समान बहुत होय जाय सो उत्कर्षण कहिये। बहुरि ऊपरले निषेकन विषैं उत्कृष्टादि बहुत स्थितिअनुभाग धरैं तिष्ठते जे कर्मस्वरूप पुद्गल तिनकी स्थिति अनुभाग घटि नीचले निषेकनि विषैं तिष्ठते जघन्यादिक स्थितिअनुभाग सहित कर्म तिनसमान हीन होय जाय सो अपकर्षण कहिये। एसा उत्कर्षण अपकर्षणका स्वरूप जानना। इति उत्कर्षण अपकर्षण अवस्था समाप्त।

अथ संक्रमण कहिये—

अन्य प्रकृतिनकी परमाणु अन्यप्रकृतिन रूप होय परणवै सो संक्रमण कहिये। जहां मतिज्ञानावरणीकी परमाणु श्रुतज्ञानावरणी रूप होय परणवै, श्रुतज्ञानावरणी की अवधिज्ञानावरणी रूप, अर अवधिज्ञानावरणीकी मनःपर्यय ज्ञानावरणीरूप, व मनःपर्यय ज्ञानावरणीकी केवलज्ञानावरणी रूप, केवलज्ञानावरणीकी मनःपर्यय आदि ज्ञानावरणीरूप होय परस्पर परणवै है, अर मतिज्ञानावरणादिक श्रुतज्ञानावरणादिक होय परणवै, श्रुतज्ञानावरणादिक, मतिज्ञानावरणादिक रूप होय परणावै, जातैं परस्पर सजातीय द्रव्यका सजाती विषैं संक्रमण होय, विजाती विषैं संक्रमण न होय, ऐसैं ही दर्शनमोह की तीन प्रकृतिनका दर्शनमोह की प्रकृतिरूप, चारित्रमोहकी पच्चीस प्रकृतिनका चारित्रमोहकी प्रकृतिरूप अंतरायकी पांच प्रकृतिनका अपनी अन्तरायकी प्रकृतिन रूप, वेदनीकी दोय प्रकृतिनका सातावेदनीको असातावेदनीरूप, असातावेदनीको सातावेदनीरूप, नामकर्मकी तिराणवे प्रकृति, परस्पर नामकर्मकी प्रकृतिरूप, गोत्रकर्मकी नीचगोत्रकी उच्चगोत्ररूप, उच्चगोत्रकी नीचगोत्ररूप होय, अपनी २ सजाती प्रकृतिनरूप होयपरस्पर संक्रमण होय हैं। विजाती प्रकृतिरूप न परिणवें हैं तैसे आयु कर्मके विना सात कर्मनिका परस्पर संक्रमण होय है अर आयु कर्मके संक्रमण करण नहीं है, तातैं आयुकर्मके संक्रमण करण विना नवकरण ही होय हैं। ऐसें सत्तारूप तिष्ठतैं आयुकर्म विना सातकर्म तिनका अपनी २ प्रकृतिनका अपनी २ प्रकृतिन विषैं संक्रमण होय है। सो एसें संक्रमण करणभी आत्माके भावनिके अनुसार ही है। जहां जो जीव

सुभ लेश्यादिक सुभभावनि रूप परिनवै हैं तहां असातावेदनी आदि असुभ प्रकृतिनका द्रव्य सातावेदनी आदि सुभ प्रकृतिन विषैं संक्रमण हो हैं। अर अशुभलेश्यादिक अशुभभावनरूप परणवै है, तहां सातावेदनी आदि शुभप्रकृतिनका द्रव्य असातावेदनी आदि अशुभप्रकृतिरूप होय परणवै है एसा संक्रमण विषैं विधान जानना। इति संक्रमण करण।

अब उपशांत करण कहिये है—सत्ता विषैं तिष्ठता अपनी २ स्थितिकों धरे हैं ज्ञानावरणादिक कर्मनका द्रव्य जा विषैं, जाकी जावत् काल उदीरणा नहोय, तावत्काल उपशांतकरण कहिये। जो शुभाशुभकर्म, आत्माके तीव्रमंदकषा--यनकों अनुभाग सहित शुभाशुभ भावनकरि जघन्य मध्य उत्कृष्ट स्थितिकूं धरैं बंध्या है सो दृढरूप होय तिष्ठैं है ताकी जावत् उदीरणा होने योग्य अधिकहीन अनुभागको धरैं आत्माके भावन होंय तावत् तिसकर्मकी उदीरणा करनेकों समर्थ न होय, तब वैसेही तीव्रमंद अनुभाग धरया। आत्माके उदीरणा योग्य भावहोंय तब तिसकर्मकी उदीरणा करनेंको समर्थ होय, तातैं जावत्काल जिसकर्मकी उदीरणातो नहोय अर और २ कषाय होय तावत्काल उपशांतकरण कहिये है। इति उपशांतकरण अवस्था।

अब निधत्तिकरण कहिये—सत्ता विषैं तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म तिन विषै तिस कर्मका जावत्काल उदीरणा भी होय, अर संक्रमण भी न होय, तावत् काल निधत्तिकरण कहिये। जो कर्म जैसी स्थितिअनुभागकों धरैं आत्माके शुभाशुभ भावनकरि धरया हैं तैसे ही जावत्काल अति दृढ़ होय निधत्तिकरणरूप होय तिष्ठै है, ताकी जावत्काल उदीरणा वा संक्रमण न कारसिकै तावत् तिस कर्मकी निधत्तिअवस्था कहिये है। इति निधत्ति अवस्था।

अब निःकांचित अवस्था कहिये है—सत्तारूप तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म तिन विषैं जिस कर्मके द्रव्यका जावत् काल उदीरणा भी न होय, अर संक्रमण भी न होय, उत्कर्षण अपकर्षण भी न होय तावत् काल तिस कर्मकी निःकांचित अवस्था कहिये, जो कर्म जैसा स्थिति अनुभागकों धरैं आत्माके शुभाशुभ भावनिकरि भरया है--बंध्या है तैसेंही अत्यंतदृढ होय निःकांचित अवस्थाकों धरें तिष्ठें है, ताकी जावत्काल उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण चारों करण करवाने अस-

मर्थ होय, आत्माका परिणाम, तावत्काल तिसकर्मकी निःकांचित अवस्था जाननी । इति निःकांचित अवस्था १० ।

एसैं ए कर्मनकी दश अवस्था होय हैं । सो तिनकों जीवकाभाव ही कारण है । तहां अपूर्वकरण अष्टमगुणस्थान पर्यन्त तो सर्व द ही करण होय हैं ऊपर अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्परायगुणस्थान पर्यन्त उपशांतकरण, निधत्तिकरण, निःकांचितकरण ये तीनकरण न पाइये, तहां सात करण ही हैं, ऊपर संक्रमणकरणका भी अभावभया, तहां छह प्रकार करण ही है । अर 'उपशांतकषाय ग्यारहवें गुणस्थान विषैं संक्रमणकरण करै है, तातैं तहां सातकरण हैं, जातैं तहां मिथ्यात्वको संक्रमण पाइये है । तिसतैं ऊपर अयोगी विषैं सत्त्व अर उदय दोय करण पाइये है । इति कर्म अवस्था वर्णन ।

अब पंच सामान्यभाव अर तिरेपन विशेषभाव, गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं लगावें हैं । प्रथम गुणस्थान पर लिखिये है—

सामान्य पंचभावन विषैं मित्यात्व, सासादन, मिश्र तीनगुणस्थानन विषैं औदयिक, क्षयोपशम, पारिणामक तीनभाव कहैं हैं । बहुरि असंयतादि अप्रमत्तपर्यन्त चार विषैं वा उपशम श्रेणीके अपूर्वकरणादि उपशांतकषायपर्यन्त चार विषैं इन आठ विषैं उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, औदयिक, पारिणामिक ये पांचभाव हैं । बहुरि अपूर्वकरणादि क्षीणकषायपर्यन्त चार गुणस्थान विषैं उपशमभाव विना चार भाव पाइय है सयोगी अयोगी दोय विषैं औदयिक क्षायिक पारिणासिक ए तीनभाव पाइये है इति सामान्यभाव ।

अब गुणस्थानन विषैं विशेषभाव कहिये है—मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं औदयिक २१ पारिणामिक ३ कुमति १ कुश्रुत १ कुअवधि १ एसैं ये ३ तीन चक्षुदर्शन १ अचक्षुदर्शन १ अर क्षयोपशमलब्धि ५ दान १ लाभ १ भोग १ उपभोग १ वीर्य १ एसैं चौंतीस भावपाइये । सासादन विषैंपूर्वोक्त चौंतीस भावविषैं मिथ्यात्व अभव्य दोयभावविना बत्तीस भावपाइये । मिश्रविषैं मिथ्यात्व विना औदयिकका २० अर क्षयोपशमके ११ मति श्रुत अवधि मिश्रज्ञान, चक्षु अचक्षु अवधिदर्शन, क्षयोपशमलब्धि ५ अर जीवत्व भव्यत्व पारिणामिकके २ एसैं तैंतीसभाव पाइये ३ असंयत विषैं मिथ्यात्व

विना औदयिकका २० अर मति श्रुत अवधिज्ञान ३ केवलविना दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ ये बारह क्षयोपशमका अर पूर्वोक्त पारिणामिक का २ उपशमसम्यक्त्व १ अर क्षायिक सम्यक्त्व १ एसैं छत्तीसभाव पाइये। बहुरि देशसंयत विषैं मनुष्यगति–तिर्यंचगति २ कषाय ४ वेद ३ लेश्या पीत-पद्म-शुक्ल ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ए औदयिक का १४ क्षयोपशमका मति-श्रुत-अवधिज्ञान ३ दर्शन केवल विना ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ देशसंयम ए तेरह पारिणामिकका २ अर उपशम सम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतीसभाव पाइये। प्रमत्त विषैं पूर्वोक्त औदयिकका १४ विषैं तिर्यंचगति विना १३ क्षयोपशम विषैं पूर्वोक्त १३ तेरह विषैं देशसंयम विना १२ अर मनःपर्ययज्ञान अर क्षयोपशमचारित्र एसैं १४ पारिणामिकका २ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतीसभाव हैं। अप्रमत्त विषैं प्रमत्त-गुणस्थानवत् अपूर्वकरण विषैं मनुष्यगति १, कषाय ४, वेद ३, लेश्याशुक्ल १, अज्ञान १, असिद्धत्व १ एवं ११ औदयिक के केवलविना सुज्ञान ४ केवल विना दर्शन ३ लब्धि ५ एसैं क्षायोपशमिक के १२ पारिणामिक के २ उपशमके २ उपशम सम्यक्त्व उपशमचारित्र, अर क्षायिकके २ क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिकचारित्र एसैं उनतीस भाव हैं। अनिवृत्तिकरणमें २९ भाव हैं अपूर्वकरण गुणस्थानवत्। सूक्ष्मसाम्पराय विषैं मनुष्यगति १ लोभकषाय १ लेश्या शुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ये औदयिकके ५ क्षयोपशमके पूर्वोक्त १२ पारिणामिक के २ उपशम के २ क्षायिकके २ एसैं तेईस भाव हैं। उपशान्तकषाय विषैं मनुष्यगति १ लेश्या शुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ ये औदयिकके ४ चार क्षयोपशमके पूर्वोक्त बारह १२ पारिणामिक के २ उपशमके २ क्षायिक का १ एसैं इकतीसभाव हैं। क्षीणकषाय गुणस्थान विषैं औदयिकके ४ क्षायोपशमिकके १२ पारिणमिक के २ क्षायिकका २ ऐसें वीस भाव। सयोगकेवली विषैं मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ असिद्धत्व १ एसैं तीन औदयिकका पारिणामिकका २ क्षायिक के ९ एसैं चौदहभाव हैं। अयोग केवली विषैं पूर्वोक्त १४ चौदह विषैं लेश्या विना तेरहभाव हैं। गुणस्थानातीतसिद्ध केवलदर्शन १ केवलज्ञान १ क्षायिकसम्यक्त्व १ अनंतवीर्य १ एसा चार तो क्षायिक का अर जीवत्वपारिणामिक १ एसै पंचभाव पाइये। इति गुणस्थान विषैं भावनका निरूपण समाप्त।

अब मार्गणास्थान चौदह विषैं लगाइये है — मार्गणा विषैं नरकगति विषैं तेतीस भाव हैं — पारिणामिकके ३ औदयिकके १३ गतिनरक १ कषाय ४ नपुंसकवेद १ लेश्याशुभ ३ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ एवं तेरह। क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान, क्षयोपशमचारित्र देशसंयम तीन बिना १५ पन्द्रह, उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं तेतीस भाव हैं। तिर्यंचगति विषैं उनतालीस भाव हैं पारिणामिकके ३ औदयिकके ३ तीन गति बिना १८, क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञान अर क्षयोपशम चारित्रबिना सोलह १६ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं उनतालीस भाव हैं।

मनुष्यगति विषैं तीन गति बिना सर्वभाव हैं। देवगति विषैं सैंतीस भाव हैं। पारिणामिकके तीन ३ औदयिकके तीनगति अर नपुंसकवेद इन चार बिना १७ क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञान, क्षयोपशमचारित्र, देशसंयम बिना १५ उपशम-सम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ यों सैंतीस भाव हैं। इंद्रियमार्गणा विषैं एकेंद्रियकें चौबीस २४ भाव हैं पारिणामिकके ३ औदायिकके १३ तिर्यंचगति १ कषाय ४ नपुंसकवेद १ लेश्या अशुभ ३ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ यों तेरह, क्षायोपशमिकके ८ कुमतिकुश्रुतज्ञान २ अचक्षुदर्शन १ लब्धि ५ यों आठ सर्व चौबीसभाव। बेंद्री तेंद्री कें भी पूर्वोक्त २४। चौंद्रियकें २५ पूर्वोक्त २४ अर चक्षुदर्शन १ असंज्ञीपंचेंद्रियकें २८ पारिणामिकके ३, औदयिकके तीन गति पद्म शुक्ल दोय लेश्या इन पांच बिना १६, क्षयोपशमके ९ कुमतिकुश्रुतज्ञान २ अर चक्षु अचक्षुदर्शन २ लब्धि ५ एवं ९ ऐसैं अठ्ठाईस भाव हैं। संज्ञी पंचेंद्रियके सर्व तिरेपनभाव हैं। इति इंद्रियमार्गणा।

कायमार्गणा विषैं पंचस्थावरकाय विषैं प्रत्येक में २४ भाव हैं एकेंद्रवित्। त्रसकाय विषैं सर्व ५३ भाव हैं। इति काम मार्गणा।

योगमार्गणा विषैं सत्यमन योग अनुभयमनयोग सत्यवचनयोग अनुभयवचनयोग इन चार योगन विषैं प्रत्येक २ सर्व तिरेपनभाव हैं। असत्यमनयोग उभयमनयोग असत्यबचनयोग उंभयबचनयोग इन चार योगनविषैं क्षायिक के

सातभाव विना अर क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र सहित प्रत्येक में ४६ भाव हैं। बहुरि औदारिककाय योग विषैं देव नरक दोयगति विना इक्यावनभाव हैं औदारिकमिश्रकाययोग विषैं ४५ उपशम के २ क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान १ अर अवधिज्ञान १ संयमासंयम १ क्षयोपशम चारित्र १ एवं ४ एसें पूर्वोक्त ५१ विषैं छह विना पैंतालीसभाव हैं ४५। वैक्रियक काय विषैं ३९ भाव हैं पारिणामिक के ३ औदयिक के मनुष्य १ तिर्यंच १ दोयगति विना १९ क्षयोपशम के मनःपर्ययज्ञान १ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ तीनविना १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ यों गुणतालीस ३९। वैक्रियकमिश्र में विभंग विना ३८ भाव हैं। आहारक आहारकमिश्र विषैं प्रत्येक में २७ पारिणामिक के अभव्यभाव विना २ औदयिक के ११ मनुष्यगति १ चारकषाय ४ पुरुषवेद १ शुभलेश्या ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ और ११ ग्यारह अर क्षयोपशम के तेरह १३ सुज्ञान ३ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ और तेरह अर क्षायिक सम्यक्त्व १ यों सत्ताईस २७। कार्माणयोग विषैं ४८ भाव हैं। पारिणामिकके ३ औदयिकके २१ क्षयोपशमके १४ मनःपर्याय और विभंग दोय बिना ज्ञान ५ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ और १४ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकके ९ यों अड़तालीस भाव हैं। इति योगमार्गणा।

अब वेदमार्गणा विषैं कहिये हैं—पुरुषवेद विषैं ४३ पारिणामिकके तीन ३ औदयिकके नरकगति १ स्त्री नपुंसक दोय वेद इन तीन बिना १८ क्षयोपशमके १८ उपशमके दोय २ क्षायिकके २ यों तियालीस। स्त्रीवेद विषैं बयालीस ४२ पारिणामिकके ३ औदयिकके नरकगति १ पुरुष नपुंसकवेद २ इन तीन बिना अठारह क्षयोपशमके मनःपर्ययज्ञानबिना १७ उपशमके २ क्षायिकके २ यों बयालीस ४२। नपुंसकवेद विषैं ४२। पारिणामिकके ३ औदयिकके देवगति १ स्त्री--पुरुष दोय २ वेद इन तीन विना १८ क्षयोपशमके मनःपर्यायज्ञान बिना १७ उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं बयालीस ४२। इति वेदमार्गणा।

कषाय मार्गणा विषैं क्रोध मानमायालोभ विषैं प्रत्येक ४३ पारिणामिकके ३ औदायिकके स्वकीय रहित तीनकषाय

विना १८ क्षयोपशमके १८ उपशमके २ क्षायिकके २ एसें तेतालीस । इति कषायमार्गणा ।

ज्ञानमार्गणा विषैं कुमति कुश्रुत विभंगविषैं प्रत्येक २ चौंतीसभाव हैं मिथ्यात्व गुणास्थानवत्, पारिणामिकके ३ औदयिकके २१ क्षयोपशमके १०—कुज्ञान ३ दर्शन २ लब्धि ५ एसैं ३४ । मतिश्रुत अवधि तीन सुज्ञान विषैं ४१ पारिणामिकके २ अभव्यविना, औदयिकके मिथ्यात्वविना २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञान विना १५ उपशमके २ क्षाकिके २ एसैं इकतालीस ४१ । मनःपर्ययज्ञान विषैं इकतीस ३१ पारिणामिकके २ औदयिकके ग्यारह ११ मनुष्यगति १ कषाय ४ पुरुषवेद १ लेश्याशुभ ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एसें ग्यारह क्षयोपशमके १४ चौदह ज्ञान ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशम चारित्र १ एवं चौदह १४ उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं इकतीस । केवल ज्ञानविषैं चौदह १४ पारिणामिकके २ औदयिकके मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ असिद्धत्व १ एवं तीन क्षायिकके ९ एसैं चौदह १४ ।

संयम मार्गणाविषै सामायिक छेदोपस्थापना विषैं ३३ पारिणामिका २ औदयिकके १३ मनुष्यगति १ कषाय ४ वेद ३ लेश्या शुभ ३ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं तेरह क्षयोपशमके १४ ज्ञान केवलविना ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशम सम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ एवं चौदह उपशमके २ क्षायिकके २ एसैं तेतीस, परिहार विशुद्धिविषैं २७ पारिणामिकके २ औदयिकके ११ मनुष्यगति १ कषाय ४ पुरुषवेद १ लेश्याशुक्ल १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं ग्यारह, क्षयोपशम के तेरह १३ सुज्ञान आदि का ३ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमचारित्र १ एवं तेरह, क्षायिकसम्यक्त्व १ एवं सत्ताईस । सूक्ष्मसांपराय विषै तेईस २३ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवत । यथाख्यात विषैं २९ पारणामिक के २ औदयिक के ४ मनुष्यगति १ शुक्ललेश्या १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एवं चार क्षयोपशम के १२ केवल विना ज्ञानचार ४ दर्शन ३ लब्धि ५ एवं बारह उपशम २ क्षायिक ९ एसैं उनतीस । संयमासंयम विषैं इकतीस ३१ देशसंयतगुणस्थानवत् । असंयम विषैं ४१ पारिणामिक के तीन ३ औदयिक के २१ क्षयोपशमके पद्रंह १५ मनः पर्ययज्ञान १ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ इन तीन बिना पन्द्रह १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसैं इकतालीस ४१ । इति संयममार्गणा ।

दर्शनमार्गणा विषैं चक्षुदर्शनविषैं क्षायिक के सात विना ४६। अचक्षुदर्शन विषैंभी छ्यालीस ४६। अवधिदर्शन विषैं मतिश्रुतअवधिज्ञानवत् ४१। केवलदर्शन विषैं केवलीज्ञानवत् १४। इति दर्शनमार्गणा।

लेश्या मार्गणा विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या विषैं प्रत्येक प्रत्येक ३६ पारिणामिकके २ औदयिक पांच लेश्या बिना १६ क्षयोपशम मनःपर्ययज्ञान क्षयोपशमचारित्र देशसंयत इन तीन बिना १५ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिक-सम्यक्त्व १ एसें ३६। पीत, पद्म दोय लेश्या विषैं प्रत्येक प्रत्येक ३८ पारिणामिकके ३ औदयिकके नरकगति अर पांच लेश्या एसैं ६ बिना १५, क्षयोपशमके १८ अठारह, उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकसम्यक्त्व १ एसें अड़तीस। शुक्लेश्या विषैं नरकगति १ पांच लेश्या एसें छह औदयिकका बिना ४७। इति लेश्या मार्गणा।

भव्यमार्गणा विषैं भव्यके अभव्यबिना ५२ अभव्यके भव्य भावबिना ३३ मिथ्यात्वगुणस्थानवत्। इति भव्यमार्गणा।

सम्यक्त्वमार्गणा विषैं उपशमसम्यक्त्व विषैं ३८ पारिणामिकके २ औदयिकके मिथ्यात्वबिना २० क्षयोपशमके १४ चौदह केवलबिना सुज्ञान ४ दर्शन ३ लब्धि ५ क्षयोपशमचारित्र १ देशसंयम १ एव चौदह उपशम २ एसैं अड़तीस। क्षयोपशमसम्यक्त्व विषैं ३७ पारिणामिकके २ औदयिकके मिथ्यात्वबिना २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञानबिना १५ एसैं सैंतीस ३७। क्षायिक विषैं ४६ पारिणामिकके २ औदयिकके मिथ्यात्व विना वीस २० क्षयोपशमके तीन कुज्ञान अर क्षयोशमसम्यक्त्व विना १४ उपशमचारित्र १ क्षायिकके ९ एसैं छियालीस। मिथ्यात्वमें ३४ मिथ्यात्वगुणस्थानवत्। सासादनमें ३२ सासादनगुणस्थानवत्। मिश्रमें ३३ मिश्रगुणस्थानवत्। इति सम्यक्त्वमार्गणा।

संज्ञी विषैं सर्व तिरेपन ५३ असंज्ञी विषैं २८ पारिणामिकके तीन ३ क्षयोपशमका ९ कुज्ञान २ दर्शन २ लब्धि ५ एवं नौ, औदयिकक मनुष्य नरके देव तीन गति अर पद्म, शुक्ल, दोय लेश्या इन पांच विना सोलह १६ एसैं अट्ठाईस २८।

आहारकमार्गणा विषैं आहारक विषैं सर्व ५३। अनाहारक विषैं ४८, विभंग १ मनःपर्यय १ दोय ज्ञान अर क्षयोपशमचारित्र अर देशसंयम इन चार विना क्षयोपशमके १४ उपशमसम्यक्त्व १ क्षायिकके ९ पारिणामिकके ३ औदयिक

के २१ यों अड़तालीस। इति आहारमार्गणा।

एसैं गुणस्थान मार्गणास्थान विषैं संभवते भाव कहे। अब एकैंकाल एकजीव के अठारह भाव पाइये—तीन पारिणामिकभाव विषै दोय भाव पाइये जीवत्व १ भव्यत्व १, वा जीवत्व १ अभव्यत्व १, औदायिकभाव विषैं ७ पाइये चार गति विषैं एक गति १ चार कषाय विषैं कषाय १ तीनवेद विषैं वेद १ छह लेश्या विषैं लेश्या १ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ एसैं सात। बहुरि पांच संयम विषैं असंयम १ देशसंयम १ क्षयोपशम चारित्र १ उपशमचारित्र १ क्षायिकचारित्र १ ईर्यापथ एक होय, अर आठ ज्ञान विषैं एकज्ञान होय १ चारदर्शनमें एकदर्शन होय १, उपशम क्षयोपशम क्षायिक तीन सम्यक्त्व विषैं सम्यक्त्व १, लब्धि ५ एसैं अठारह होंय। तहां नरकगति विषैं सत्तरह १७—पारिणामिक के २ तीन कुज्ञान विषैं १ तीनसुज्ञान विषैं १ तीन दर्शन विषैं १ गति नरक १ कषाय १ वेद नपुंमक १ तीन अशुभलेश्या विषैं १ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १ लब्धि ५ तीन सम्यक्त्व विषैं १ एसैं सत्तरहभाव पाइये १७। तहां मिथ्यात्वगुणस्थान विषैं सोलह १६ सम्यक्त्व विना। सासादन मिश्र विषैं मिथ्यात्व विना १५। असंयत विषैं सुज्ञान तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्वसहित १६ ही पाइये। तिर्यंचगति विषैं १७—पारिणामिक के २ तिर्यंचगति १, तीनवेद विषैं १, कषाय १, छहलेश्या विषैं १, मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असिद्धत्व १ संयम असंयम देशसंयम विषैं १, छहज्ञान विषैं २ दर्शनविषैं १ लब्धि ५ तीन सम्यक्त्व विषैं १, एसै सत्तरह १७। तिन विषैं मिथ्यात्वमें सम्यक्त्व विना असंयमसहित १६. सासादनमें मिथ्यात्व विना १५ मिश्रमें पन्द्रह १५ असंयममें तीन सम्यक्त्वमें एक सम्याक्त्व सहित, सुज्ञान सहित १६ देशसंयत विषैं—देशसंयमसहित तीन शुभलेश्या में एक लेश्या सहित १६ इति। मनुष्यगति विषैं—मनुष्यगतिसहित सर्व १७ भाव पाइये। मिथ्यात्वगुणस्थानमे—सम्यक्त्व विना सोलह १६, सासादनमें मिथ्यात्व विना १५, मिश्रमें १५, असंयत मे सुज्ञान सहित अर तीनसम्यक्त्व मे एक सम्यक्त्वसहित १६ देशसंयतमें असंयमरहित देशसंयम सहित अर तीन शुभलेश्या में एक लेश्या सहित १६। प्रमत्त अप्रमत्त में चारज्ञान तीनदर्शनमें एक क्षयोपशमचारित्र सहित १६। अपूर्वकरण

अनिवृत्तिकरण उपशमश्रेणिमें उपशमसम्यक्त्व वा क्षायिक सम्यक्त्व दोय विषैं एक, उपशमचारित्र शुक्लेश्यासहित १६, अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण क्षपकश्रेणिमें--क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्रभाव १६ पाइये। बहुरि सूक्ष्मसांपराय उपशमश्रेणि में एक वेद रहित १५ भाव पाइये। बहुरि उपशांतकषाय विषैं एककषाय विना १४ भावपाइये। बहुरि सूक्ष्मसांपराय क्षपक श्रेणीमें वेदविना १५ भाव पाइये, क्षीणकषाय विषैं कषाय विना १४ भाव पाइये। सयोगकेवलीके मनुष्यगति १ शुक्ल-लेश्या १ असिद्धत्व १ केवलज्ञान १ केवलदर्शन १ क्षायिकसम्यक्त्व १ क्षायिकचारित्र १ अर पांच क्षायिक लब्धि ५ पारिणामिक के २ एसें चौदहभाव पाइये। अयोगकेवलीके लेश्या विना १३ भाव पाइये इति। देवगति विषैं--देवगति--सहित अर पुरुष स्त्री दोय वेद विषैं एकवेद सहित १७ भाव पाइये, तहां मिथ्यात्वगुणस्थान विषैं सम्यक्त्व विना १६, सासादन में मिथ्यात्वविना पन्द्रह १५, मिश्र विषै १५, असंयत विषैं सुज्ञान सहित अर तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्व एसें सोलहभाव पाइये, एसैं एकै काल एकै जीव के चारों गति विषैं भावसंभवनेका निरूपण किया।

या प्रकार सर्वभावनके अन्तर्यामी सर्वदर्शी सर्वज्ञ एसें जिनेन्द्र तिनने जीवनके संसारतें उद्धार करनेके अर्थ जीवनके भावनकी संख्या, भावनका स्वरूप, भावनकी प्रवृत्ति, भावनका कार्य, भावनका फल, हेय उपादेयसहित दिखाया सो एसा भगवन्त वाक्य, मुनि जे सुधी पुरुष हैं तिनको तजन करना ग्रहणकरना, जे भाव हेय हैं तिनका तजन करना, जे भाव उपादेय हैं तिनका ग्रहण करना।

इहां शिष्य प्रश्न करै है--हे स्वामी ! इनविषैं हेयभाव कौनसे हैं? अर उपादेयभाव कौनसे हैं ? अर इनका तजनं ग्रहण, हमसे अशक्त जीवन ते कौंन मार्गतें बनै, सो कृपा करि संक्षेपतें उपदेश कीजिये ? एसा प्रश्न होतें गुरु उत्तर करैं हैं---एक ही जीवके तिरेपनभाव, तिनविषैं पारिणामिक भावका तो ग्रहण करना जातैं ये जीव के कर्मन की सापेक्षा रहित स्वभाव भाव हैं, कर्मजन्य-उत्पन्न भये जे विभावभाव तिनही रूप होय अनादिकालको प्रवृत्यो ताकरि इनकी भावन-की गौनता होय, इनरूप प्रवृत्ति अनादि हीतें छूट गई, इनरूप अवस्था कदे भई नही, ताहीते संसार समुद्र विषैं डूबा नाना

प्रकारके दुःखहिं सहतो नहिं दीखे पार जाको । बहुरि तहां तिष्ठता नानाप्रकार कर्म बांधि तिनके फलको नानाप्रकार भोगता संता पारिणामिक भाव अतिक्षीण भये तापरभी नाशको प्राप्त न भया एसा जो तूं स्वयमेवही कर्मकी उलट पलट होतें इस मनुष्यभवकों प्राप्त भया, उपदेश धारणेंकों योग्य भया, जातें चेतना तीन प्रकार है-कर्मफलचेतना १ कर्मचेतना २ ज्ञानचेतना ३ अपने शुभाशुभ परिणामनकरि बांधे पूर्वे शुभाशुभकर्मनतैं सत्तारूपथे ते अपनी स्थितिके क्षीण होतें इस उदय मनुष्य-भवको प्राप्त भया शुभाशुभकर्म ताकरि सुखदुःखके कारण पदार्थनका संबंध भया ताकरि उत्पन्न भया सुखदुःखरूप कर्म(उदय)का फल ताको पुरुषार्थरहित अनुभवता जीवका ज्ञान सो कर्मफलचेतना कहिये १, सो कर्मफलचेतनाके धारक एकेन्द्री है, नही है सुखदुखके कारण पदार्थनके जानने रूप ज्ञान जिनकै, अर नहीं है सुखके कारन पदार्थके मिलावने की इच्छा अर शक्ति जिनकै अर नही है दुखके कारण पदार्थनकों परिहार करने कों वा भाज (ग) ज्ानेकी इच्छा अर शक्ति जिनकें एसे एकेन्द्री जीव कर्मके उदयकरि उत्पन्न भया सुख अर दुःखरूप फल ताको आ (अ) शक्त हुवा भोगवै है, तातें इनके कर्मफल चेतना कहिये । बहुरि शुभाशुभकर्मके उदयते संबंध रूप भये वा उत्पन्न भये सुखदुखके कारण शुभाशुभपदार्थ तिनके मिलावनेकी वा परिहार करनेकी भाज जानेकी इच्छा व शक्ति सहित ज्ञान सो कर्मचेतना कहिये, सो कर्मचेतनाके धारक वेंद्रि आदी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त त्रस जीव है, जातैं सुखके कारण पदार्थनकों मिलावने अर सुखी होने की इच्छा करै हैं।

बहुरि शक्तिको धरै हैं ताकरि परिहार करै हैं भाजी जाय है तातें इनको कर्मचेतना कहिये२ बहुरि जिनके शक्ति रहित भये हैं अर नाशकों प्रासभये है सुखदुखके कारण शुभाशुभ अघातिया कर्म, अर क्षयकों प्रास भये हैं मोह आदी घातिया कर्म, ताकरि सर्वज्ञ सर्वदर्शी रागद्वेष रहित अनंत शक्तिको धरै ज्ञाता दृष्टा भावकों प्रास भया तिनका ज्ञान सो ज्ञान चेतना कहिये । जातै ज्ञानचेतनाके धारक संसार विषैं तिष्ठते एसे सयोगी अयोगी भगवान हैं । एसा तीन प्रकार चेतनाका स्वरूप है । सो कर्मफलचेतनाके धारक एसे एकेन्द्रि जीव, ते तो सर्व प्रकार असमर्थ हैं तातें उपदेश योग्य ही नाहीं । बहुरि कर्मचेतनाके धारक एसे वेद्री तेद्री चौइन्द्री असज्ञीपंचेन्द्रीय तिनके मन आदिका रहितपमा थकी सुखी होने थकी,

चौवीस भावन का तौ तजन करना बहुरि उगनीस भावनका ग्रहण करना प्रथम ही मति ज्ञान वा श्रुतज्ञान कौं पुष्टकरना, तिनकी पुष्टताका कारण अर क्षयोपशम चारित्रभावरूपमुनिपद का कारणभूत सम्यक्त्वसहित देशसंयमका ग्रहण करना, बहुरि मतिज्ञानकी श्रुतज्ञानकी अत्यंत पुष्टता का कारण अर चक्षु अचक्षु अवधि तीन दर्शनकी पुष्टताका वा उत्पत्तिका कारण एसा क्षयोपशमचारित्रभावरूपमनिपद ताका ग्रहण करना बहुरि क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र का कारणभूत उपशमसम्यक्त्व अर उपशमचारित्रभावका ग्रहण करना, बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र केवलज्ञान केवलदर्शन अर पंच क्षायिक लब्धि ए सप्तकार्य रूपभावनि को कारण एसे क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र तिनकूं ग्रहण करना इन भावन पर्यन्त जीव अंतरात्मा है बहुरि क्षायिकचारित्र का बल करि चार घातियाकर्मन को नाश करि केवलज्ञान १ केवलदर्शन १ लब्धि ५ इन सप्तभावन का प्रगट होना तहां ए जीव परमात्मा होय है जहांपर्यन्त या जीवकें मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधीचतुष्क का उदयपाइये हैं तहांपर्यंत तो यह पर्यायद्दष्टी है उदयका कर्मजन्य सेतीं उदयपावै है वा जैसी अन्य जीव पुद्गलादिक की पर्याय का संबंध मिलै है ताही रूप होय प्रवर्तें हैं तातैं जाके वाह्यद्दष्टि हैं अंतरद्दष्टि दिव्य नाहीं मिथ्याज्ञान है सम्यक्ज्ञान नाहीं मिथ्यादर्शन है सम्यक् श्रद्धान नाहीं मिथ्याप्रवृत्ति नै सम्यक् प्रवृत्ति नाहीं तहांपर्यंत बहिरात्मा कहिये १ बहुरि जिसकाल तैं याकैं तत्वज्ञानभया सम्यग् दर्शन की प्राप्तिभई ताही बल तें बाह्यपर्यायद्दष्टि छूटी अर अंतरद्रव्यद्दष्टि भया यथाश्रद्धान यथाज्ञान यथाप्रवृत्ति होताभया यथा अयथादेवगुरुधर्म आप्त आगमपदार्थ विषैं सांचा जानताभया ताहीकालतें चतुर्थगुणस्थानतें ले क्षिणकषाय बारमा गुणस्थानपर्यंत ये अंतरात्माकहिये ।

बहुरि मलरूप चारघातियाकर्मनका नाशहोतें अपने अनंतचतुष्टयरूप स्वस्वभावप्रगट भया तहां तें ले सिद्धभगवान पर्यंत परमात्मा कहिये एसा परमकल्याणका कारण शिष्यप्रति उपदेश होताभया । या प्रकार जीवके स्वभावभाव १ विभावभाव १ शुद्धभाव इन तीनभावनका अर परभाव जेवर्णादिकका पुद्गल भावनका प्रकाशरूप एसाये सार्थक नामका धारक "भावदीप" नामाग्रन्थ ताकी रचनाभई । सो ये कपोल कल्पित नाहीं है सर्वभावनके अंतरजामी एसे श्री वर्धमानदेवाधिदेव तिनके मुख-

रूप चन्द्रमा थकी उत्पन्नभई सोये कपोलकल्पितनाहीं हैं दिव्यध्वनिरूप चांदनी करि प्रकाशितभये जीवके शुद्धभावपरम कल्याण के कारण रूप रत्न, तिनकों सर्वसंघ के नायक एसे श्री गौतमगणधर देव ते द्वादशांगरचना विषैं मुख्यपनैं धरते-भये जातें सर्वमोक्षमार्ग विषैं भाव ही प्रधानरूप है जातैं स्वपर का भाव ही तें विभाग होय है भावविना स्वपरका जानना होता नाहीं स्वपर कों जाने विना स्वभाव परभाव का ज्ञाता होय नाहीं । स्वभाव परभाव का ज्ञान विना परभाव कों त्याग करि अपने स्वभान विषैं स्थिरीभुत होय केसे तिष्ठै बहुरि स्वभावविषैं थिरीभूतभये विना रागादिकविभावभाव अर ज्ञानावरणा-दिकपरभाव का रुकना कैसें होय । बहुरि कर्म की निर्जरा न होय तव मोक्ष कहां ते होय । तातैं भावन के जानने ही कों परमकारणपना संभवै है ताही तें मोक्ष के कारणजीवादिक सप्ततत्वन विषैं जीव अजीव ही दोय तो द्रव्यरूप मूलतत्व कहे अर आस्रवादि पंच, भाव तत्व कहे हैं बहुरि मोक्ष के कारण बाह्यदेवगुरुधर्म आप्त आगमपदार्थ तिनका यथा अय-था का जानना वा तिनविषैं यथाश्रद्धान वा तिनविषै यथावत् प्रवृत्ति भावन के जानने ही तें होय हैं बहुरि पूजा दान शील तप संयम जप सर्वधर्म अंग, भावन के ज्ञान विना अयथा होंय हैं सर्व ही धर्म अंग स्वभावभावसहित होतसंते स्वर्ग मोक्ष के कारण होंय सुफल होंय परभाव सहित होत ऐसे निष्फल होंय हैं विभावभाव सहित होतसंते नरकनिगोदरूप खोटे फल के दाता होंय हैं तातैं भावका जानना प्रधानभुत जानि गणधरस्वमी द्वादशांग विषैं इनकी प्रधानरचनाकरि ताके अनु-सार सम्यक्ज्ञानी बड़े २ आचार्य ग्रंथन विषैं रचना करते आए तिनही अनुसार आचार्य श्री नेमिचन्द्रादिकन करि रचित चार अनुयोग रूप जिनकी अवार प्रवृत्ति पाइये एसे गोम्मटसारादिक शास्त्र तिनके अनुसार रचना करी है सो या विषैं कोई मेरी बुद्धि की मंदता के वश तें अन्यथाभी रचनाभई होसी सो मैं कषायन तैं अन्य रचना नहीं करी है मेरी अज्ञा-नता का दोष जानि सम्यक् ज्ञानी पंडितजन हैं ते मेरे पर अनुग्रह करि शुद्ध कर लैना अज्ञानी जान रोष न करना जे महंत बड़े पुरुष हैं ते बालकन की नानाप्रकार कुचेष्टा होतें भी तिनपर रोप नाहीं करैं हैं ।

इस "भावदीपक" ग्रन्थकी भाषा वचनिका करि रचना करी सो हम सारिखे अल्पबुदीन के पड़ने अर्थि वा

इसतैं सम्यक्‌ज्ञान करने के अर्थि वा सुगमता तैं धारण रहने कै अर्थि वा अर्थ विस्मरण होतसंतैं शीघ्र यादकरने के अर्थि करी है कोई क्रोध मान माया लोभ जग बड़ाई आदि कषायपोषने के अर्थि नाहीं करी है बहुरि मूर्खनके अर्थि नाही करी है सम्यमक्‌ज्ञानी पंडितनके अर्थि करी है वा भद्रपरिणामी अपने कल्याण के अर्थि अज्ञानीन के ज्ञान करने के अर्थिं करी है। कैसे हैं मूरख, नाहीं जानैं हैं जैनमत का रहस्य आम्नाय अर किंचित् शब्दज्ञानकरने तें दग्धभये हैं—पंडिताई के अभिमान विषैं, क्रूर हैं स्वभाव जिनका नाहीं देख सकैं है परायेगुणरूपभाव, अर दोष ही का ग्रहण है जिनकें, नाहीं सुहावै है पराया कर्त्तव्य जिनकों बिना देखे, बिना विचारे दूरही तजें हैं पराये गुणरूप कार्यमें लगावे है दोष जिनको ऐसे ए सकषाय स्वपरके अकल्याण के कारण तिनके अर्थि भावदीप की रचना नाहीं करी है १ बहुरि कैसे हैं मूर्ष, मिथ्यादृष्टि कुबुद्धिपंडितन करि ग्रहण कराया अर्थ ताकों अनेकप्रकार पंडितनकरि शीख दीजिये है अर बातन पर ही धरैं हैं दृष्टि अर ताहीं कों सत्यमानें हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है २ बहुरि कैसे हैं मूर्ख, आयगये है कुबुद्धि मिथ्यादृष्टि विषयिन विषैं, नहीं है गुणदोप का ज्ञान जिनको तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ३ बहुरि कैसे हैं ? मूर्ख, खोटे अर्थ का ग्रहण जानते थकी भी हठ करना ही है पक्ष जिनकी तिनके अर्थ भी भावदीपक की रचना नाहीं करी है ४ बहुरि कैसे हैं ? मूर्ख, नहीं हैं आप विषैं ज्ञानादि गुण का लेश तौभी आपको गुणवानमाने हैं आपकों गुणवान जनावने के अर्थ मूरखन सों चर्चा करते फिरैं हैं झगड़ते फिरैं हैं ज्ञानीन सों लड़ते फिरैं हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ५ बहुरि कैसे हैं ? मूरख नाहीं है परभवकी आस्था जिनके इसही भव के कार्यन विषैं संतुष्ट हैं नाहीं सुनैं हैं सन्मुख होय सिद्धान्त का बचन, तिनके अर्थ भी भावदीपक की रचना नाहीं ६ बहुरि कैसे हैं ? मूरख, ज्ञानकर हीन हैं अनेकप्रकार उपदेश होतेंभी रंचमात्रभी नाहीं समझैं हैं तिनके अर्थ भावदीपक की रचना नाहीं करी है ७

बहुरि कैसे है ? मूरख, मान महंतता वा पेटभरनेके अर्थ धऱ्या हैं खोटा भेषजिन वा अयथा जिनमततें जोड़ी है आजी-

विकाजिन ताके अर्थ आप महंतबन आप खोटाउपदेशदेय भोलेजविनका तन, धन, मन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान घोटे धर्म विषैं प्रवर्तावैं हैं ताकरि तिनका अकल्याण करैं हैं एसे कुबुद्धि मूरखनके अर्थ या भावदीपक की रचना नाही करी है ८ इत्यादि इन अष्टप्रकारादि मूरखन कें सत्यधर्म का ग्रहण सर्वथा होय नाहीं । इति तो कौन के अर्थ करी हैं ? जे सम्यक्ज्ञानी, गुणदोष के जानन हारे, नहीं हैं पुरुपनसों राग–द्वेष जिनके, जिनमत की रहस्य आम्नाय जाननहारे पंडितपुरुष तिनके अर्थ करी है वा जे भद्रपरिणामीमंदकषाय अपने अकल्याण के अर्थिभये हैं जिनमतके सन्मुख, तिनके ज्ञान होने के अर्थ भावदीपक की रचना करी है । इहां प्रश्न जो तुमकरि तो इन भावन की रचना करी नाहीं तो इनकी रचना सम्यक्ज्ञानीपंडितन करि किये संस्कृतप्राकृरूपमहानग्रन्थ तिनविपैं तो थी ही अब इनकों भाषा वचनिका विषैं काहे को करी वा और महंत ग्रन्थन की अन्यजीवनकरि करी देशभाषा ताका प्रयोजन कहा (क्या ?) संस्कृत प्राकृतरूप भाषा तीन लोक विपैं प्रसिद्ध ताकूंछेडि अपरभ्रमरूप देशभाषा विषैं शास्त्ररचना काहे को करिये ताका समाधान काल दोषतैं सम्यक्ज्ञानी वीतरागप्रवृत्तिके धारक यथार्थवक्तानकातो अभावभया अर अवसर्पिणी कालका निमित्त जिनमत विषैं कुलिंगके धारक, प्रचंड हैं क्रोध मान माया लोभादिक कषाय जिनके अर पंच इंद्रियनके विषयमें हैं आसक्तभाव जिनके साक्षात् गृहीत मिथ्यात्वके पोसने तें जिनमतके विषैं वक्ताभये अधिष्ठाता भये, जिनसूत्रके अर्थ अन्यथा करनेलगे ताकरि भोले जीव तिनकी बताईप्रवृत्ति ताही विषैंप्रवर्तते भये, नहीं है सत्यसूत्रका ज्ञान जिनकों ताकरि महंतशास्त्रनका ज्ञान तिनतैं अगोचरभया ताकरि मूढताप्राप्तभये हीनशक्तिभये सत्यवक्ता सांचोंजिनोक्तसूत्रके अर्थग्रहणकरावनेहारा कोई रहा नाहीं तातैं सत्य जिनमतका तो अभावभया तब धर्मतें परान्मुखभये तब कोई कोई गृहस्थ सुबुद्धि संस्कृतप्राकृतका वेत्ता भया ताकरि जिनसूत्रनको अवगाहा तब एमा प्रतिभासता भया जो सूत्रके अनुसार एकभी श्रद्धान ज्ञान आचरणनकी प्रवृत्ति न करैं हैं अर बहुतकाल गया मिथ्याश्रद्धान ज्ञान आचरणकी प्रवृत्तिकों, ताकरि अतिगाढ़तानें प्राप्तभई तातैं मुख करि कही मानें नहीं तब जीवनका अकल्याण होता जानि करुणाबुद्धि करि देशभाषाविपैं शास्त्ररचना करि तब केई

सुबुद्धीनिके साचा बोध भया। बहुरि अब इस अवसर विषैं ज्ञानकी वा शक्तिही ऐसी हीनता भई जो भाषाशास्त्रनतैं भी ज्ञान कर सकै नाहीं तातैं तिन महंतशास्त्रननैं प्रयोजनभूतकछु काढि काढि छोटे प्रकरण करि एकत्र कीजिये है तातैं ऐसे अवसर विषैं सम्यक्ज्ञानके कारण भाषाशास्त्र ही है। बहुरि भाषाशास्त्रन तैं सम्यक्ज्ञानकरि शब्दविद्या न्यायविद्या अवगाह तिनसंस्कृत प्राकृतरूपमहंत शास्त्रन का अभ्यास करना युक्त ही है परन्तु सम्यक्ज्ञानका अर्थी हुवा थका शब्दविद्या न्यायविद्या का वा संस्कृत प्राकृतरूपशास्त्रन का अभ्यास करना शब्दविद्या न्यायविद्या ही विषै आसक्त होय काल न खोवना जाते शब्दविद्या न्यायविद्या कारणरूप है तातैं अर्थ तैसे ही नाहीं करना परन्तु भाषाग्रन्थनका अभ्यास तैं सम्यग्ज्ञान की सिद्धिकरि पीछे संस्कृतप्राकृतरूप शास्त्रन का अभ्यास सुगम होय है बहुरि पर्याय का भरोसा नाहीं है शास्त्रन का थोड़ा माही अभ्यास तैं सम्यक्ज्ञानकी तो सिद्धि होय है तातैं जे संस्कृत प्राकृत शास्त्रन विषैं भेद माने हैं ते दुर्बुद्धि हैं संस्कृत प्राकृतभाषारूप सर्व शास्त्र ही सम्यग्ज्ञानके कारण हैं।

अब अंत विषैं सर्व मंगलरूप ऐसे सिद्धभगवान तिनकूं नमस्कार करि ग्रंथ की पूर्णता करिये है कैसे हैं सिद्ध भगवान, चवदहगुणस्थान तिनतैं पारंगतभये हैं बहुरि मार्गणा विषैं नारगतिके परिभ्रमण का अभाव करि पंचम गति को प्राप्तभये हैं १ बहुरि छूटगया है इंद्रिन का आधीनपना ताकरि स्वाधीन ज्ञान स्वभाया है ज्ञानजिनका २ बहुरि छह ही काय का छूटिगया है संस्थान जिनका ३ बहुरि सर्व योग तैं रहित अयोगी भये हैं ४ बहुरि नहीं है वेदविकार जिनके, अपने स्वभाव विषैं थिरीभूतभये हैं ५ बहुरि दूर भये हैं कषायादिक मोहभाव ताकरि संपूर्णभाव की सिद्धिभई है ६ बहुरि मतिज्ञानादि खंडज्ञानके अभावकरि युगपतदर्शी केवलज्ञान प्रगटभया है ७ बहुरि संयममार्ग का अंत करि मोक्षरूप मान्दिर विषैं तिष्ठे हैं ८ बहुरि किंचितदर्शन का अभावकरि केवलदर्शनको पाय सर्व दर्शी भये हैं ९ बहुरि सर्वलेश्याभावन का नाश करि अलेश्याभाव को धारे हैं १० बहुरि भव्य अभव्यभावको मेटि भव्यअभव्य रहित भावको प्राप्तभये हैं ११ बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का है ग्रहण जाके १२ संज्ञी असंज्ञीपना ते रहितभये हैं १३ बहुरि

सदा अनाहारक है अवस्था जिनकी १४ एसे सर्वकर्मरहित होय अविनाशी कृतकृत्य दशा कों प्राप्तभये अपने स्वभाव--सुख विषैं मग्न निरंतर सिध्दभगवान तिनकूं नमस्कार करूं हूं।

दोहा–स्वपरभावविभाव कों शुध्दभावजुत सोय। करि प्रकाश प्रगट किया भावदीप ५ दोय ॥१॥

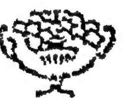
सवैया–भ्रमको भजय्या ज्ञानदीपको जगय्या मोक्षमारगको सधय्या
जाको सांचोपरकास है, निजपरको दिखय्या मोक्षघरको दिवय्या
निजरसको मलय्या तेरे जगवास है पापको भवय्या जगजालको
भनय्या राग—द्वेषको हरय्या याके स्वर्गादिकदास हैं
विवेकको करय्या स्वश्रध्दाके दिढ्या सवसिध्दिको करय्या धारो जो की आस है २

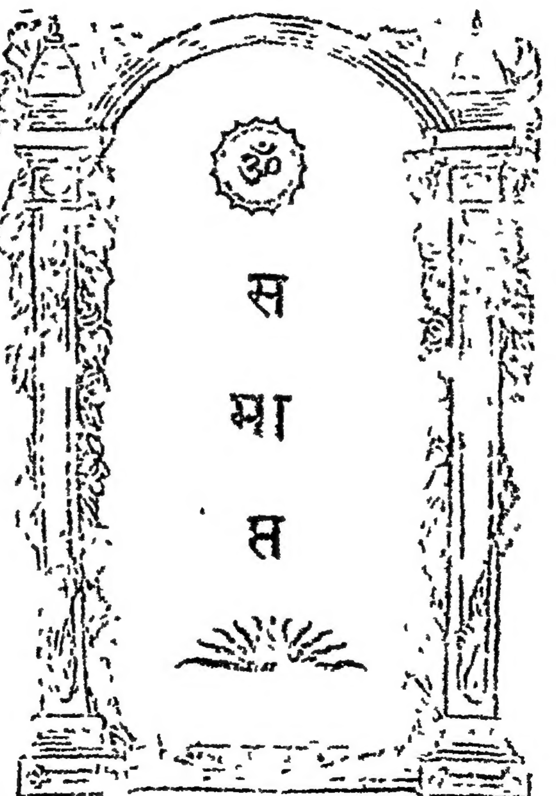
छप्पय छन्द—सुनतभावदीपके बढ़त आनंद पयोधर भनत भावदीपक लहत गुणरत्न मानो कर मिथ्यातिमिर निवार
भानसम है किरनोधर जग अटवी ते काढ़ि डारै निरखेद स्वयोधर महिमा अपार नहीं मुख रटंत
स्वर्गमोक्षको बीज ए करि प्रतीतियाकों भजो पाप जलांजलि दीजिये ३

दोहा–भावदीको शरण ले ज्ञानखड़ग गहि धीर, कर्मशत्रुको क्षयकरैं जे जोधा बरबीर ४
अष्ट अध्याय जा ग्रन्थ में पद पद अर्थ रसाल, बालबुध्दि अर बहुमती सवकों करत निहाल ५
नांदो विरधो जगत में जिनोउक्त (जिनेशोक्त) गुणधाम, पूरण कियो प्रमोद तें कर करि पंचप्रणाम ६
पढ़ो पढ़ावो सुवुधिजन करहु सुमनमें ध्यान, बालवुध्दि पर मोदियो करि दियो भक्तिमहान ७

इति श्रीभावदीपका ग्रन्थभाषा वचनिकामय समाप्त समाप्तोऽयं ग्रन्थः श्लोकसंख्या ५५००।






ॐ
समाप्त



